भगवती सूत्र

चतुर्थ भाग

शतक ९-१२

प्रकाशक
श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन
संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर
शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-305901
(01462) 251216, 257699, 250328

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ साहित्य रत्न माला का २४ वाँ रत्न

गणधर भगवान् सुधर्मस्वामि प्रणीत

भगवती सूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्ति सूत्र)

चतुर्थ भाग

(शतक ९-१०-११-१२)

सम्पादक

पं. श्री घेवरचन्दजी बांठिया "वीरपुत्र"

(स्वर्गीय पंडित श्री वीरपुत्र जी महाराज)

न्याय व्याकरणतीर्थ, जैन सिद्धांत शास्त्री

प्रकाशक

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

शाखा-नेहरू गेट बाहर, ब्यावर-305901

☎ (01462) 251216, 257699 Fax No. 250328

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

द्रव्य सहायक

उदारमना श्रीमान् सेठ जशवंतलाल भाई शाह, बम्बई

प्राप्ति स्थान

१. श्री अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, सिटी पुलिस, **जोधपुर** ☏ 2626145

२. शाखा-अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, नेहरू गेट बाहर, **ब्यावर** ☏ 251216

३. महाराष्ट्र शाखा-माणके कंपाउंड, दूसरी मंजिल आंबेड़कर पुतले के बाजू में, **मनमाड़**

४. श्री जशवन्तभाई शाह एदुन बिल्डिंग पहली धोबी तलावलेन पो० बॉ० नं० 2217, **बम्बई-2**

५. श्रीमान् हस्तीमल जी किशनलालजी जैन प्रीतम हाऊ० कॉ० सोसा० ब्लॉक नं० १० स्टेट बैंक के सामने, **मालेगांव (नासिक)** ☏ 252097

६. श्री एच. आर. डोशी जी-३९ बस्ती नारनौल अजमेरी गेट, **दिल्ली-६** ☏ 23233521

७. श्री अशोकजी एस. छाजेड़, १२१ महावीर क्लॉथ मार्केट, **अहमदाबाद** ☏ 5461234

८. श्री सुधर्म सेवा समिति भगवान् महावीर मार्ग, **बुलडाणा**

९. श्री श्रुतज्ञान स्वाध्याय समिति सांगानेरी गेट, **भीलवाड़ा** ☏ 236108

१०. श्री सुधर्म जैन आराधना भवन २४ ग्रीन पार्क कॉलोनी साउथ तुकोगंज, **इन्दौर**

११. श्री विद्या प्रकाशन मन्दिर, ट्रांसपोर्ट नगर, **मेरठ** (उ. प्र.)

१२. श्री अमरचन्दजी छाजेड़, १०३ वाल टेक्स रोड़, **चैन्नई** ☏ 25357775

१३. श्री संतोषकुमार बोथरा वर्द्धमान स्वर्ण अलंकार ३९४, शांपिग सेन्टर, **कोटा** ☏ 2360950

सम्पूर्ण सेट मूल्य : ३००-००

चतुर्थ आवृत्ति
१०००

वीर संवत् २५३२
विक्रम संवत् २०६३
अप्रेल २००६

मुद्रक - स्वास्तिक प्रिन्टर्स प्रेम भवन हाथी भाटा, अजमेर ☏ 2423295

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निवेदन

सम्पूर्ण जैन आगम साहित्य में भगवती सूत्र विशाल रत्नाकर है, जिसमें विविध रत्न समाये हुए हैं। जिनकी चर्चा प्रश्नोत्तर के माध्यम से इसमें की गई है। प्रस्तुत चतुर्थ भाग में नौ, दस, ग्यारह और बारह शतक का निरूपण हुआ है। प्रत्येक शतक के कितने उद्देशक हैं और उनकी विषय सामग्री क्या है? इसका संक्षेप में यहाँ वर्णन किया गया है -

शतक ९ - नौवें शतक में ३४ उद्देशक हैं, जम्बूद्वीप के विषय में प्रथम उद्देशक है ज्योतिषी देवों के सम्बन्ध में दूसरा उद्देशक है, तीसरे से तीसवें उद्देशक तक २८ उद्देशकों में अन्तरद्वीपों का वर्णन है। ३१वें उद्देशक में असोच्चा केवली का वर्णन है। ३२वें उद्देशक में गांगेय अनगार के प्रश्न हैं। ३३वें उद्देशक में ब्राह्मण कुण्ड ग्राम विषयक वर्णन है। ३४वें उद्देशक में पुरुष घातक आदि का वर्णन है।

शतक १० - दसवें शतक में ३४ उद्देशक इस प्रकार हैं - १. दिशा के सम्बन्ध में पहला उद्देशक है २. संवृत अनगारादि के विषय में दूसरा उद्देशक है ३. देवावासों को उल्लंघन करने में देवों की आत्मऋद्धि (स्वशक्ति) के विषय में तीसरा उद्देशक है ४. श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के श्याम हस्ती नामक शिष्य के प्रश्नों के सम्बन्ध में चौथा उद्देशक है ५. चमर आदि इन्द्रों की अग्रमहिषियों के सम्बन्ध में पाँचवां उद्देशक है ६. सुधर्मा सभा के विषय में छठा उद्देशक है। ७ से ३४. उत्तर दिशा के अट्ठाईस अन्तरद्वीपों के विषय में सातवें से लेकर चौतीसवें तक अट्ठाईस उद्देशक है।

शतक ११ - ग्यारहवें शतक में १२ उद्देशक हैं - १. उत्पल २. शालूक ३. पलाश ४. कुम्भी ५. नाडीक ६ पद्म ७. कर्णिका ८. नलिन ९. शिवराजर्षि १०. लोक ११ काल और १२ आलभिका।

शतक १२ - बारहवें शतक में १० उद्देशक हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं - १ शंख २. जयन्ती ३. पृथ्वी ४. पुद्गल ५. अतिपात ६. राहु ७. लोक ८. नाग ९. देव और १०. आत्मा।

उक्त चारों शतक एवं उद्देशकों की विशेष जानकारी के लिए पाठक बंधुओं को इस पुस्तक का पूर्ण रूपेण पारायण करना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

****

संघ की आगम बत्तीसी प्रकाशन में आदरणीय ***श्री जशवंतभाई शाह, मुम्बई*** निवासी का मुख्य सहयोग रहा है। आप एवं आपकी धर्म सहायिका ***श्रीमती मंगलाबेनशाह*** की सम्यग्ज्ञान के प्रचार-प्रसार में गहरी रुचि है। आपकी भावना है कि संघ द्वारा प्रकाशित सभी आगम **अर्द्ध मूल्य** में पाठकों को उपलब्ध हो तदनुसार आप इस योजना के अंतर्गत सहयोग प्रदान करते रहे हैं। अतः संघ आपका आभारी है।

आदरणीय शाह साहब तत्त्वज्ञ एवं आगमों के अच्छे ज्ञाता हैं। आप का अधिकांश समय धर्म साधना, आराधना में बीतता है। प्रसन्नता एवं गर्व तो इस बात का है कि आप स्वयं तो आगमों का पठन-पाठन करते ही हैं, साथ ही आपके सम्पर्क में आने वाले चतुर्विध संघ के सदस्यों को भी आगम की वाचनादि देकर जिनशासन की खूब प्रभावना करते हैं। आज के इस हीयमान युग में आप जैसे तत्त्वज्ञ श्रावक रत्न का मिलना जिनशासन के लिए गौरव की बात है। आपके पुत्र रत्न ***मयंकभाई शाह एवं श्रेयांसभाई शाह*** भी आपके पद चिह्नों पर चलने वाले हैं। आप सभी को आगमों एवं थोकड़ों का गहन अभ्यास है। आपके धार्मिक जीवन को देख कर प्रमोद होता है। आप चिरायु हों एवं शासन की प्रभावना करते रहें, इसी शुभ भावना के साथ।

इसके प्रकाशन में जो कागज काम में लिया गया है वह उच्च कोटि का मेफलिथो है साथ ही पक्की सेक्शन बाईडिंग है बावजूद *आदरणीय शाह साहब* के आर्थिक सहयोग के कारण **अर्द्ध मूल्य** ही रखा गया है। जो अन्य संस्थानों के प्रकाशनों की अपेक्षा अल्प है।

संघ की आगम बत्तीसी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत भगवती सूत्र भाग ४ की यह चतुर्थ आवृत्ति **श्रीमान् जशवंतलाल भाई शाह, मुम्बई** निवासी के अर्थ सहयोग से ही प्रकाशित हो रही है। आपके अर्थ सहयोग के कारण इस आवृत्ति के मूल्य में किसी प्रकार की वृद्धि नहीं की गयी है। संघ आपका आभारी है। पाठक बन्धुओं से निवेदन है कि वे इस चतुर्थ आवृत्ति का अधिक से अधिक लाभ उठावें।

ब्यावर (राज.)
दिनांक: ४-४-२००६

संघ सेवक
नेमीचन्द बांठिया
अ. भा. सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ, जोधपुर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१५७२	१२	पश्चिम	पश्चिम सहित
१५७२	२१	पश्चिम	पश्चिम में मिला कर
१५७४	१०	सोभा	शोभा
१५७६	६	तिण्णि	तिण्णि
१५७७	१४	तरह	तरफ
१५७७	१५	तीसरो	तीसरी
१६०४	११	मोहनीय क्षय	मोहनीयक्षये
१६०६	११	लेसासु	लेस्सासु
१६२५	१८	बालुकप्राभा	बालुकाप्रभा
१६७६	७	वाणव्यन्तर	वाणव्यंतर
१६७७	१३	गांयेय	गांगेय
१६९८	३	भंगवं	भगवं
१६९४	१३	संपरिबुडे	संपरिवुडे
१७०६	१४	ययायोग्य	यथायोग्य
१७३०	१३	पण्णवणाहि य	पण्णवणाहि य ४
१७३६	१२	चउंगुलवज्जे	चउरंगुलवज्जे
१७५५	७	सेज्जासंथारगंम	सेज्जासंथारगं
१७६४	२	णाहिं	वणाहिं
१७७०	१६	देबलोक	देवलोक से
१७८८	३	बहुत	बहुत
१७९५	२४	ढआ	ढका हुआ
१७९६	३	योनि	योनि
१७९६	९	चक्रवती	चक्रवर्ती
१७९८	१	अराहणा	आराहणा
१८०४	२	तीण्ण	तिण्णि
१८०७	३	सहस्समो	सहस्सामो
१८०७	१६	बोयडमब्बोयडा	बोयडमब्बोयडा
१८१८	१	देवभाज	देवराज

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८७४	१५	नामक	नामक नगर
१८८२	३	दिक्रप्रोक्षक	दिक्प्रोंक्षक
१९१८	७	वारा ईए	वा राईए
१९२९	१३	रोमञ्चित	रोमांञ्चित
१९६६	अंतिम	परिव्वायए	परिव्वायए
२०२१	४	एगयआ	एगंयओ
२०३८	७	वेमानिक	वेमांनिक
२०६९	६	किती	किसी
२०७४	६	पणपुवे	वणंपुव्वे
२१०८	१५	कसायाओ	कसायायाओ
२११२	८	उमके	उसके
२१७२	२०	आया य	आयाइ य
२१२२	अंतिम	णो आया	णो आयाइ

नोंध–(१) पृष्ठ २०१४ पंक्ति १८ का पाठ पं. भगवानदासजी दोषी संपादित भाग ३ पृ. २६६ के अनुसार है और ऐसा ही पाठ सूरतवाली प्रति पृ. १०३४ में भी है, किंतु अन्य प्रतियों में–"**अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ।**"–पाठ है। यह पाठ होना आवश्यक भी है। इसका अर्थ पृ. २०१५ पं. ७ में–'होता है' के आगे–"अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर पंच प्रदेशी स्कन्ध होता है"–होना चाहिए।

(२) पृ. २०१५ पंक्ति १९ में–"**अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति**"–पाठ पं. भगवानदास दोषी सम्पादित भाग ३ पृ. २६६ में हैं, और उसीसे लिया है, किंतु अन्य प्रतियों में देखने में नहीं आया।

(३) पृ. २०९० पंक्ति २ में "**णो उववाओ**" पाठ पं. भगवानदास दोषी सम्पादित भाग ३ पृ. २९० में है और उसीसे लिया है, किन्तु अन्य प्रतियों में नहीं है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विषयानुक्रमणिका—

शतक ९

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
	उद्देशक १	
३४३	जम्बूद्वीप	१५७२
	उद्देशक २	
३४४	जम्बूद्वीपादि में चन्द्रमा	१५७३
	उद्देशक ३ से ३०	
३४५	अन्तर्द्वीपक मनुष्य	१५७६
	उद्देशक ३१	
३४६	असोच्चा केवली	१५७९
३४७	असोच्चा-मिथ्यादृष्टि से सम्यग्दृष्टि	१५८२
३४८	असोच्चा-लेश्या ज्ञान योगादि	१५९५
३४९	सोच्चा केवली	१६०५
	उद्देशक ३२	
३५०	गांगेय प्रश्न—सान्तरनिरन्तर उत्पत्ति आदि	१६१४
३५१	गांगेय प्रश्न—प्रवेशनक	१६१८
३५२	संख्यात नैरयिक प्रवेशनक	१६५५
३५३	असंख्यात नैरयिक प्रवेशनक	१६६१
३५४	उत्कृष्ट नैरयिक प्रवेशनक	१६६२
३५५	नैरयिक प्रवेशनक का अल्प बहुत्व	१६६६
३५६	तिर्यंच योनिक प्रवेशनक	१६६७
३५७	मनुष्य प्रवेशनक	१६७०
३५८	देव प्रवेशनक	१६७४
३५९	प्रवेशनकों का अल्प-बहुत्व	१६७७
३६०	सांतरादि उत्पाद और उद्वर्तन	१६७८
३६१	केवली सर्वज्ञ होते हैं	१६८२
३६२	स्वयं उत्पन्न होते हैं	१६८४
३६३	गांगेय को श्रद्धा	१६८८
	उद्देशक ३३	
३६४	ऋषभदत्त और देवानन्दा	१६९०
३६५	जमाली चरित्र	१७०५
३६६	जमाली का पृथक् विहार	१७५२
३६७	जमाली के मिथ्यात्व का उदय	१७५४
३६८	सर्वज्ञता का झूठा दावा	१७५८
३६९	किल्विषी देवों का स्वरूप	१७६४
३७०	जमाली का भविष्य	१७६८
	उद्देशक ३४	
३७१	पुरुष और नोपुरुष का घातक	१७७१
३७२	ऋषि घातक अनन्त जीवों का घातक	१७७४
३७३	एकेंद्रिय जीव और श्वासोच्छ्वास	१७७७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १०

क्रमांक विषय	पृष्ठ
उद्देशक १	
३७४ दिशाओं का स्वरूप	१७८३
३७५ शरीर	१७९०
उद्देशक २	
३७६ कषायभाव में सांपरायिकी क्रिया	१७९१
३७७ योनि और वेदना	१७९३
३७८ भिक्षुप्रतिमा और आराधना	१७९७
उद्देशक ३	
३७९ देव की उल्लंघन शक्ति	१८००
३८० देवों के मध्य में होकर निकलने की क्षमता	१८०१
३८१ अश्व की खु-खु ध्वनि और भाषा के भेद	१८०६
उद्देशक ४	
३८२ चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव	१८०९
३८३ बलिन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव	१८१४
३८४ शक्रेन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव	१८१६
उद्देशक ५	
३८५ चमरेन्द्र का परिवार	१८१९
३८६ बलींद्र का परिवार	१८२५
३८७ व्यन्तरेन्द्रों का परिवार	१८३०
३८८ ज्योतिषेन्द्र का परिवार	१८३५
उद्देशक ६	
३८९ शक्रेन्द्र की सभा एवं ऋद्धि	१८३९
उद्देशक ७ से ३४	
३९० एकोरुक आदि अन्तरद्वीप	१८४१

शतक ११

क्रमांक विषय	पृष्ठ
उद्देशक १	
३९१ उत्पल के जीव	१८४३
उद्देशक २	
३९२ शालूक के जीव	१८६६
उद्देशक ३	
३९३ पलास के जीव	१८६७
उद्देशक ४	
३९४ कुंभिक के जीव	१८६९
उद्देशक ५	
३९५ नालिक के जीव	१८७०
उद्देशक ६	
३९६ पद्म के जीव	१८७१
उद्देशक ७	
३९७ कर्णिका के जीव	१८७१
उद्देशक ८	
३९८ नलिन के जीव	१८७२

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
	उद्देशक ९	
३९९	राजर्षि शिव का वृत्तांत	१८७४
	उद्देशक १०	
४००	लोक के द्रव्यादि भेद	१८९६
४०१	लोक की विशालता	१९०६
४०२	अलोक की विशालता	१९०६
४०३	आकाश के एक प्रदेश पर जीव-प्रदेश नर्तकी का दृष्टान्त	१९११
	उद्देशक ११	
४०४	सुदर्शन सेठ के काल विषयक प्रश्नोत्तर	१९१५
४०५	महाबल चरित्र	१९२३
	उद्देशक १२	
४०६	श्रमणोपासक ऋषिभद्र पुत्र की की धर्मचर्चा	१९६०
४०७	पुद्गल परिव्राजक	१९६६

शतक १२

क्रमांक	विषय	पृष्ठ
	उद्देशक १	
४०८	श्रमणोपासक शंख पुष्कली	१९७१
	उद्देशक २	
४०९	जयन्ती श्रमणोपासिका	१९८६
४१०	जयन्ती श्रमणोपासिका के प्रश्न	१९८९
	उद्देशक ३	
४११	सात पृथ्वियाँ	१९९८
	उद्देशक ४	
४१२	परमाणु और स्कन्ध के विभाग	२०००
४१३	पुद्गल परिवर्तन के भेद	२०३१
	उद्देशक ५	
४१४	पापकर्म के वर्णादि पर्याय	२०४६
४१५	विरति आदि आत्म-परिणाम	२०५१
४१६	अवकाशान्तरादि में वर्णादि	२०५३
४१७	कर्म परिणाम से जीव के विविध रूप	२०५९
	उद्देशक ६	
४१८	चन्द्रमा को राहु ग्रसता है ?	२०६०
४१९	नित्य राहु पर्व पाहु	२०६४
४२०	चन्द्र सूर्य के भोग	२०६७
	उद्देशक ७	
४२१	बकरियों के बाड़े का दृष्टान्त	२०७०
४२२	जीवों का अनन्त जन्म-मरण	२०७३
	उद्देशक ८	
४२३	देव का नाग आदि में उपपात	२०८२
	उद्देशक ९	
४२४	भव्यद्रव्यादि पांच प्रकार के देव	२०८६
	उद्देशक १०	
४२५	आत्मा के आठ भेद और उनका सम्बन्ध	२१०५
४२६	आत्मा का ज्ञान अज्ञान और दर्शन	२११५
४२७	पृथ्वी आत्मरूप है ?	२११७
४२८	परमाणु आदि की सद्रूपता	२१२०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अस्वाध्याय

निम्नलिखित बत्तीस कारण टालकर स्वाध्याय करना चाहिये।

आकाश सम्बन्धी १० अस्वाध्याय	काल मर्यादा
१. बड़ा तारा टूटे तो-	एक प्रहर
२. दिशा-दाह *	जब तक रहे
३. अकाल में मेघ गर्जना हो तो-	दो प्रहर
४. अकाल में बिजली चमके तो-	एक प्रहर
५. बिजली कड़के तो-	आठ प्रहर
६. शुक्ल पक्ष की १, २, ३ की रात-	प्रहर रात्रि तक
७. आकाश में यक्ष का चिह्न हो-	जब तक दिखाई दे
८-९. काली और सफेद धूंअर-	जब तक रहे
१०. आकाश मंडल धूलि से आच्छादित हो-	जब तक रहे

औदारिक सम्बन्धी १० अस्वाध्याय

११-१३. हड्डी, रक्त और मांस,	ये तिर्यंच के ६० हाथ के भीतर हो। मनुष्य के हो, तो १०० हाथ के भीतर हो। मनुष्य की हड्डी यदि जली या धुली न हो, तो १२ वर्ष तक।
१४. अशुचि की दुर्गंध आवे या दिखाई दे-	तब तक
१५. श्मशान भूमि-	सौ हाथ से कम दूर हो, तो।

---

* आकाश में किसी दिशा में नगर जलने या अग्नि की लपटें उठने जैसा दिखाई दे और प्रकाश हो तथा नीचे अंधकार हो, वह दिशा-दाह है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६. चन्द्र ग्रहण-	खंड ग्रहण में ८ प्रहर, पूर्ण हो तो १२ प्रहर

(चन्द्र ग्रहण जिस रात्रि में लगा हो उस रात्रि के प्रारम्भ से ही अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

१७. सूर्य ग्रहण-	खंड ग्रहण में १२ प्रहर, पूर्ण हो तो १६ प्रहर

(सूर्य ग्रहण जिस दिन में कभी भी लगे उस दिन के प्रारंभ से ही उसका अस्वाध्याय गिनना चाहिये।)

१८. राजा का अवसान होने पर,	जब तक नया राजा घोषित न हो
१९. युद्ध स्थान के निकट	जब तक युद्ध चले
२०. उपाश्रय में पंचेन्द्रिय का शव पड़ा हो,	जब तक पड़ा रहे

(सीमा तिर्यंच पंचेन्द्रिय के लिए ६० हाथ, मनुष्य के लिए १०० हाथ। उपाश्रय बड़ा होने पर इतनी सीमा के बाद उपाश्रय में भी अस्वाध्याय नहीं होता। उपाश्रय की सीमा के बाहर हो तो यदि दुर्गन्ध न आवे या दिखाई न देवे तो अस्वाध्याय नहीं होता।)

२१-२४. आषाढ़, आश्विन, कार्तिक और चैत्र की पूर्णिमा	दिन रात
२५-२८. इन पूर्णिमाओं के बाद की प्रतिपदा-	दिन रात
२९-३२. प्रातः, मध्याह्न, संध्या और अर्द्ध रात्रि- इन चार सन्धिकालों में-	१-१ मुहूर्त्त

उपरोक्त अस्वाध्याय को टालकर स्वाध्याय करना चाहिए। खुले मुंह नहीं बोलना तथा सामायिक, पौषध में दीपक के उजाले में नहीं वांचना चाहिए।

नोट - नक्षत्र २८ होते हैं उनमें से आर्द्रा नक्षत्र से स्वाति नक्षत्र तक नौ नक्षत्र वर्षा के गिने गये हैं। इनमें होने वाली मेघ की गर्जना और बिजली का चमकना स्वाभाविक है। अतः इसका अस्वाध्याय नहीं गिना गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अ० भा० सुधर्म जैन सं० रक्षक संघ, जोधपुर आगम बत्तीसी प्रकाशन योजना के अन्तर्गत प्रकाशित आगम

अंग सूत्र

क्रं.	नाम आगम	मूल्य
१.	आचारांग सूत्र भाग-१-२	५५-००
२.	सूयगडांग सूत्र भाग-१,२	६०-००
३.	स्थानांग सूत्र भाग-१, २	६०-००
४.	समवायांग सूत्र	२५-००
५.	भगवती सूत्र भाग १-७	३००-००
६.	ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र भाग-१, २	८०-००
७.	उपासकदशांग सूत्र	२०-००
८.	अन्तकृतदशा सूत्र	२५-००
९.	अनुत्तरोपपातिक दशा सूत्र	१५-००
१०.	प्रश्नव्याकरण सूत्र	३५-००
११.	विपाक सूत्र	३०-००

उपांग सूत्र

१.	उववाइय सुत्त	२५-००
२.	राजप्रश्नीय सूत्र	२५-००
३.	जीवाजीवाभिगम सूत्र भाग-१,२	८०-००
४.	प्रज्ञापना सूत्र भाग-१,२,३,४	१६०-००
५.	जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति	५०-००
६-७.	चन्द्रप्रज्ञप्ति-सूर्यप्रज्ञप्ति	२०-००
८-१२.	निरयावलिका (कल्पिका, कल्पवतंसिका, पुष्पिका, पुष्पचूलिका, वृष्णिदशा)	२०-००

मूल सूत्र

१.	दशवैकालिक सूत्र	३०-००
२.	उत्तराध्ययन सूत्र भाग-१, २	८०-००
३.	नंदी सूत्र	२५-००
४.	अनुयोगद्वार सूत्र	५०-००

छेद सूत्र

१-३.	त्रीणिछेदसुत्ताणि सूत्र (दशाश्रुतस्कन्ध, बृहत्कल्प, व्यवहार)	५०-००
४.	निशीथ सूत्र	५०-००
१.	आवश्यक सूत्र	३०-००

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संघ के अन्य प्रकाशन

क्रं. नाम	मूल्य
१. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १	१४-००
२. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २	४०-००
३. अंगपविट्ठसुत्ताणि भाग ३	३०-००
४. अंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त	८०-००
५. अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग १	३५-००
६. अनंगपविट्ठसुत्ताणि भाग २	४०-००
७. अनंगपविट्ठसुत्ताणि संयुक्त	८०-००
८. अनुत्तरोववाइय सूत्र	३-५०
९. आयारो	८-००
१०. सूयगडो	६-००
११. उत्तरज्झयणाणि(गुटका)	१०-००
१२. दसवेयालियं सुत्तं (गुटका)	५-००
१३. णंदी सुत्तं (गुटका)	अप्राप्य
१४. चउछेयसुत्ताइं	१५-००
१५. आचारांग सूत्र भाग १	२५-००
१६. अंतगडदसा सूत्र	१०-००
१७-१९. उत्तराध्ययनसूत्र भाग १,२,३	४५-००
२०. आवश्यक सूत्र (सार्थ)	१०-००
२१. दशवैकालिक सूत्र	१०-००
२२. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग १	१०-००
२३. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग २	१०-००
२४. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग ३	१०-००
२५. जैन सिद्धांत थोक संग्रह भाग ४	१०-००
२६. जैन सिद्धांत थोक संग्रह संयुक्त	१५-००
२७. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग १	८-००
२८. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग २	१०-००
२९. पन्नवणा सूत्र के थोकड़े भाग ३	१०-००
३०-३२. तीर्थंकर चरित्र भाग १,२,३	१४०-००
३३. मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग १	३५-००
३४. मोक्ष मार्ग ग्रन्थ भाग २	३०-००
३५-३७. समर्थ समाधान भाग १,२,३	५७-००
३८. सम्यक्त्व विमर्श	१५-००
३९. आत्म साधना संग्रह	२०-००
४०. आत्म शुद्धि का मूल तत्वत्रयी	२०-००
४१. नवतत्वों का स्वरूप	१३-००
४२. अगार-धर्म	१०-००
४३. Saarth Saamaayik Sootra	१०-००
४४. तत्त्व-पृच्छा	१०-००
४५. तेतली-पुत्र	४५-००
४६. शिविर व्याख्यान	१२-००
४७. जैन स्वाध्याय माला	१८-००
४८. सुधर्म स्तवन संग्रह भाग १	२२-००

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

****

क्रं.	नाम	मूल्य
४९.	सुधर्म स्तवन संग्रह भाग २	१५-००
५०.	सुधर्म चरित्र संग्रह	१०-००
५१.	लोंकाशाह मत समर्थन	१०-००
५२.	जिनागम विरुद्ध मूर्त्ति पूजा	१५-००
५३.	बड़ी साधु वंदना	१०-००
५४.	तीर्थंकर पद प्राप्ति के उपाय	५-००
५५.	स्वाध्याय सुधा	७-००
५६.	आनुपूर्वी	१-००
५७.	सुखविपाक सूत्र	२-००
५८.	भक्तामर स्तोत्र	२-००
५९.	जैन स्तुति	६-००
६०.	सिद्ध स्तुति	३-००
६१.	संसार तरणिका	७-००
६२.	आलोचना पंचक	२-००
६३.	विनयचन्द चौबीसी	१-००
६४.	भवनाशिनी भावना	२-००
६५.	स्तवन तरंगिणी	५-००
६६.	सामायिक सूत्र	१-००
६७.	सार्थ सामायिक सूत्र	३-००
६८.	प्रतिक्रमण सूत्र	३-००
६९.	जैन सिद्धांत परिचय	३-००
७०.	जैन सिद्धांत प्रवेशिका	४-००
७१.	जैन सिद्धांत प्रथमा	४-००

क्रं.	नाम	मूल्य
७२.	जैन सिद्धांत कोविद	३-००
७३.	जैन सिद्धांत प्रवीण	४-००
७४.	तीर्थंकरों का लेखा	१-००
७५.	जीव-धड़ा	२-००
७६.	१०२ बोल का बासठिया	०-५०
७७.	लघुदण्डक	३-००
७८.	महादण्डक	१-००
७९.	तेतीस बोल	२-००
८०.	गुणस्थान स्वरूप	३-००
८१.	गति-आगति	१-००
८२.	कर्म-प्रकृति	१-००
८३.	समिति-गुप्ति	२-००
८४.	समकित के ६७ बोल	२-००
८५.	पच्चीस बोल	३-००
८६.	नव-तत्त्व	६-००
८७.	सामायिक संस्कार बोध	४-००
८८.	मुखवस्त्रिका सिद्धि	३-००
८९.	विद्युत् सचित्त तेऊकाय है	३-००
९०.	धर्म का प्राण यतना	२-००
९१.	सामण्ण सड्डिधम्मो	अप्राप्य
९२.	मंगल प्रभातिका	१.२५
९३.	कुगुरु गुर्वाभास स्वरूप	४-००

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णमोत्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स

गणधर भगवत्सुधर्मस्वामि प्रणीत

भगवती सूत्र

शतक ९

१ जंबुद्दीवे २ जोइस ३–३० अंतरदीवा ३१ असोच्च ३२ गंगेय।
३३ कुंडग्गामे ३४ पुरिसे णवमम्मि सतंमि चोत्तीसा॥

भावार्थ–नौवें शतक में चौतीस उद्देशक हैं। यथा–जम्बूद्वीप के विषय में प्रथम उद्देशक है। ज्योतिषी देवों के सम्बन्ध में दूसरा उद्देशक है। तीसरे से तीसवें उद्देशक तक अट्ठाईस उद्देशकों में अन्तर्द्वीपों का वर्णन है। इकत्तीसवें उद्देशक में 'असोच्चा केवली' का वर्णन है। बत्तीसवें उद्देशक में गांगेय अनगार के प्रश्न हैं। तेतीसवां उद्देशक ब्राह्मणकुण्ड ग्राम विषयक है। चौतीसवें उद्देशक में पुरुषघातक पुरुष आदि का वर्णन है।

विवेचन–उपरोक्त संग्रह-गाथा में नौवें शतक में प्ररूपित ३४ उद्देशक का नाम निर्देश किया गया है। तीसरे उद्देशक से तीसवें तक अट्ठाईस उद्देशक, अट्ठाईस अन्तर्द्वीपों के मनुष्यों के विषय में है। इसलिए तीसरे से लगाकर तीसवें तक के उद्देशक का वर्णन एक साथ ही हुआ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ९ उद्देशक १

जम्बूद्वीप

२ प्रश्न–तेणं कालेणं तेणं समएणं मिहिला णामं णयरी होत्था । वण्णओ । माणिभद्दे चेइए । वण्णओ । सामी समोसढे, परिसा णिग्गया, जाव भगवं गोयमे पज्जुवासमाणे एवं वयासी–कहि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे, किंसंठिए णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे ?

२ उत्तर–एवं जंबुद्दीवपण्णत्ती भाणियव्वा, जाव एवामेव सपुव्वावरेणं जंबुद्दीवे दीवे चोद्दस सलिला सयसहस्सा छप्पण्णं च सहस्सा भवंतीति मक्खाया ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ इति णवमसए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ–किंसंठिए–किस आकार में, **सपुव्वावरेणं**–पूर्व और पश्चिम, **सलिला**–नदी ।

भावार्थ–२ प्रश्न–उस काल उस समय में मिथिला नाम की नगरी थी । वर्णन । वहां मणिभद्र नामका चैत्य (उद्यान) था । वर्णन । वहां श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे । परिषद् वन्दन के लिये निकली और धर्मोपदेश सुनकर वापिस लौट गई, यावत् पर्युपासना करते हुए गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा–

हे भगवन् ! जम्बूद्वीप कहां है ? हे भगवन् ! जम्बूद्वीप का आकार कैसा है ?

उत्तर–हे गौतम ! इस विषय में जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में कहे अनुसार सारा वर्णन जानना चाहिये, यावत् इस जम्बूद्वीप में पूर्व और पश्चिम चौदह लाख छप्पन हजार नदियां हैं–वहां तक कहना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-जम्बूद्वीप के वर्णन के विषय में जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र का अतिदेश किया गया है । जम्बूद्वीप सब द्वीपों के मध्य में है । यह सब से छोटा द्वीप है और इसका आकार 'तेल अपूप' (तेल का मालपूआ) रथचक्र और पुष्करकर्णिका तथा पूर्णचन्द्र के समान गोल है । यह एक लाख योजन लम्बा और चौड़ा है, यावत् इसमें चौदह लाख छप्पन हजार नदियाँ पूर्व समुद्र और पश्चिम समुद्र में जाकर गिरती हैं । इत्यादि सारा वर्णन जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र के अनुसार जानना चाहिये ।

॥ इति नौवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ९ उद्देशक २

जम्बूद्वीपादि में चन्द्रमा

१ प्रश्न-रायगिहे जाव एवं वयासी-जंबुद्दीवे णं भंते ! दीवे केवइया चंदा पभासिंसु वा, पभासेंति वा, पभासिस्संति वा ?

१ उत्तर-एवं जहा जीवाभिगमे, जाव-"एगं च सयसहस्सं तेत्तीसं खलु भवे सहस्साइं । णव य सया पण्णासा तारागणकोडाकोडीणं" । सोभं सोभिंसु, सोभिंति, सोभिस्संति ।

२ प्रश्न-लवणे णं भंते ! समुद्दे केवइया चन्दा पभासिंसु वा, पभासिंति वा, पभासिस्संति वा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-एवं जहा जीवाभिगमे जाव ताराओ। धायइसंडे, कालोदे, पुक्खरवरे, अब्भिंतरपुक्खरद्धे, मणुस्सखेत्ते-एएसु सव्वेसु जहा जीवाभिगमे, जाव-"एगससीपरिवारो तारागणकोडिकोडीणं"।

३ प्रश्न-पुक्खरोदे णं भंते ! समुद्दे केवइया चंदा पभासिंसु वा ०?

३ उत्तर-एवं सव्वेसु दीव-समुद्देसु जोइसियाणं भाणियव्वं, जाव सयंभूरमणे, जाव सोभं सोभिंसु वा, सोभंति वा, सोभिस्संति वा।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ णवमसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-केवइया-कितने, **पभासिसु**-प्रकाश किया, **सोभं**-सोभा को, **ससी**-चन्द्रमा, **पुक्खरोदे**-पुष्करोद (पुष्कर समुद्र)।

भावार्थ-१ प्रश्न-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-

हे भगवन् ! जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में कितने चन्द्रमाओं ने प्रकाश किया, प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

१ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के दूसरे उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार जानना चाहिये। यावत् 'एक लाख तेतीस हजार नौ सौ पचास कोड़ाकोडी ताराओं के समूह शोभित हुए, शोभित होते हैं और शोभित होंगे-यहां तक जानना चाहिये।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! लवण समुद्र में कितने चन्द्रमाओं ने प्रकाश किया,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

२ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के दूसरे उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार ताराओं के वर्णन तक जानना चाहिये। धातकीखण्ड, कालोदधि, पुष्करवर द्वीप, आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध और मनुष्य क्षेत्र, इन सब में जीवाभिगम सूत्र के अनुसार जानना चाहिये। यावत् 'एक चन्द्र का परिवार यावत् कोड़ाकोडी तारागण हैं'--वहां तक जानना चाहिये।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! पुष्करोद समुद्र में कितने चन्द्रमाओं ने प्रकाश किया, प्रकाश करते हैं और प्रकाश करेंगे ?

३ उत्तर-हे गौतम ! जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के दूसरे उद्देशक में सब द्वीप और समुद्रों में ज्योतिषी देवों का जो वर्णन कहा है, उसी प्रकार यावत् 'स्वयम्भूरमण समुद्र में यावत् शोभित हुए, शोभते हैं और शोभेंगे।' वहाँ तक जानना चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन—जम्बूद्वीप, लवण समुद्र, धातकीखण्ड द्वीप, कालोद समुद्र और पुष्करवर द्वीप आदि सभी द्वीप समुद्रों में चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा के विषय में प्रश्न किये गये हैं। उत्तर में जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के दूसरे उद्देशक का अतिदेश किया गया है। ढाई द्वीप (जम्बूद्वीप, धातकीखण्ड द्वीप और आभ्यन्तर पुष्करार्द्ध द्वीप) और दो समुद्र (लवण समुद्र और कालोद समुद्र) परिमाण मनुष्य क्षेत्र में चन्द्र सूर्य आदि जो ज्योतिषी देव हैं, वे सब चर हैं। मनुष्य क्षेत्र के बाहर के सब द्वीप समुद्रों में चन्द्र, सूर्य आदि ज्योतिषी देव हैं, वे सब अचर (स्थिर) हैं। इनकी संख्या आदि का सभी वर्णन जीवाभिगम सूत्र से जान लेना चाहिये।

॥ इति नौवें शतक का दूसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ९ उद्देशक ३ से ३०

अन्तर्द्वीपक मनुष्य

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–कहि णं भंते ! दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पण्णत्ते ?

१ उत्तर–गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वयस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ लवणसमुद्दं उत्तरपुरत्थिमेणं तिण्णि जोयणसयाइं ओगाहित्ता एत्थ णं दाहिणिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पण्णत्ते । गोयमा ! तिण्णि जोयणसयाइं आयाम-विक्खंभेणं णव-एगूणवण्णे जोयणसए किंचिविसेसूणे परिक्खेवेणं पण्णत्ते । से णं एगाए पउमवरवेइयाए एगेण य वणसंडेणं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ते, दोण्ह वि पमाणं वण्णओ य एवं एएणं कमेणं एवं जहा–जीवाभिगमे जाव 'सुद्धदंतदीवे,' जाव 'देवलोगपरिग्गहा णं ते मणुया पण्णत्ता' समणाउसो ! एवं अट्ठावीसंपि अंतरदीवा सएणं सएणं आयाम-विक्खंभेणं भाणियव्वा, णवरं दीवे दीवे उद्देसओ, एवं सव्वे वि अट्ठावीसं उद्देसगा ।

※ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ※

॥ इति णवमसयस्स तीसइमो उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ—**दाहिणिल्लाणं**—दक्षिण दिशा के, **चरिमंताओ**—अन्तिम किनारे से, **उत्तरपुरत्थिमेणं**—उत्तर पूर्व (ईशान कोन में), **ओगाहित्ता**—जाने पर, **एगूणवण्णं**—उनपचास, **किंचिविसेसूणे**—किंचित् कम, **परिक्खेवेणं**—परिक्षेप (परिधि), **सव्वओ समंता**—चारों ओर, **संपरिक्खित्ते**—लिपटा हुआ (घिरा हुआ), **सएणं**—अपने।

भावार्थ-१ प्रश्न-राजगृह नगर में यावत् गौतमस्वामी ने इस प्रकार पूछा-हे भगवन् ! दक्षिण दिशा का 'एकोरुक' मनुष्यों का 'एकोरुक' नामक द्वीप कहां है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! जम्बूद्वीप नाम के द्वीप के मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा में चुल्लहिमवन्त नामक वर्षधर पर्वत के पूर्व के चरमान्त (किनारे) से ईशान कोण में तीन सौ योजन लवण समुद्र में जाने पर वहाँ दक्षिण दिशा के 'एकोरुक' मनुष्यों का 'एकोरुक' नामक द्वीप है। हे गौतम ! उस द्वीप की लम्बाई चौड़ाई तीन सौ योजन है और उसका परिक्षेप (परिधि) नव सौ उनचास योजन से कुछ कम है। वह द्वीप एक पद्मवर वेदिका और एकवन खण्ड द्वारा चारों तरह से वेष्टित है। इन दोनों का प्रमाण और वर्णन जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के पहले उद्देशक के अनुसार जानना चाहिये। इसी क्रम से यावत् शुद्धदन्त द्वीप तक का वर्णन वहां से जान लेना चाहिये। 'इन द्वीपों के मनुष्य मरकर देव गति में उत्पन्न होते हैं'-यहां तक का वर्णन जानना चाहिये। इस प्रकार इन अट्ठाईस अन्तरद्वीपों की अपनी अपनी लम्बाई चौड़ाई भी जान लेनी चाहिये। परन्तु यहां एक एक द्वीप के विषय में एक एक उद्देशक कहना चाहिये। इस प्रकार इन अट्ठाईस अन्तरद्वीपों के अट्ठाईस उद्देशक होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कहकर गौतमस्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन—लवण समुद्र के भीतर होने से इनको 'अन्तरद्वीप' कहते हैं। उनमें रहने वाले मनुष्यों को 'अन्तरद्वीपक' कहते हैं। जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र और हैमवत क्षेत्र की मर्यादा करने वाला 'चुल्लहिमवान्' पर्वत है। वह पर्वत पूर्व और पश्चिम में लवणसमुद्र को स्पर्श करता है। उस पर्वत के पूर्व और पश्चिम के चरमान्त से चारों विदिशाओं (ईशान,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आग्नेय, नैऋत्य और वायव्य) में लवण समुद्र में प्रत्येक विदिशा में तीन तीन सौ योजन जाने पर प्रत्येक दिशा में एकोरुक आदि एक एक द्वीप आता है। वे द्वीप गोल हैं। उनकी लम्बाई चौड़ाई तीन तीन सौ योजन की है। परिधि प्रत्येक की ९४९ योजन से कुछ कम है। इन द्वीपों से चार चार सौ योजन लवण समुद्र में जाने पर क्रमशः पाँचवाँ, छठा, सातवां आठवां, द्वीप आते हैं। इनकी लम्बाई चोड़ाई चार चार सौ योजन की है। ये भी गोल हैं। इनकी प्रत्येक की परिधि १२६५ योजन से कुछ कम है। इसी प्रकार इनसे आगे क्रमशः पांच सौ, छह सौ, सात सौ, आठ सौ, नवसौ, योजन जाने पर क्रमशः चार चार द्वीप आते जाते हैं। उनकी लम्बाई चौड़ाई पांचसौ से लेकर नवसौ योजन तक क्रमशः जाननी चाहिये। सभी गोल हैं। तिगुनी से कुछ अधिक परिधि है। इसी प्रकार चुल्लहिमवान् पर्वत की चारों विदिशाओं में अट्ठाईस अन्तरद्वीप हैं।

जिस प्रकार चुल्लहिमवान् पर्वत के चारों विदिशाओं में अट्ठाईस अन्तरद्वीप कहे गये हैं। उसी प्रकार शिखरी पर्वत की चारों विदिशाओं में भी अट्ठाईस अन्तरद्वीप हैं। जिनका वर्णन दसवें शतक के ७ वें उद्देशक से लेकर ३४ वें उद्देशक तक २८ उद्देशकों में किया गया है। उनके नाम आदि सभी समान हैं।

जीवाभिगम और प्रज्ञापना आदि सूत्रों की टीका में चुल्लहिमवान् और शिखरी पर्वत की चारों विदिशाओं में चार चार दाढ़ाएं बतलाई गई हैं और उन दाढ़ाओं पर अन्तरद्वीपों का होना बतलाया गया है। किंतु यह बात सूत्र के मूलपाठ से मिलती नहीं है, क्योंकि इन दोनों पर्वतों की लम्बाई आदि जो बतलाई गई है, वह पर्वत की सीमा तक ही आई है उसमें दाढ़ाओं की लम्बाई आदि नहीं बतलाई गई। यदि इन पर्वतों की दाढ़ाएँ होती, तो उन पर्वतों की हद लवण समुद्र में भी बतलाई जाती। लवण समुद्र में भी दाढ़ाओं का वर्णन नहीं है। इसी प्रकार यहाँ भगवती सूत्र के मूलपाठ में तथा टीका में भी दाढ़ाओं का वर्णन नहीं है। ये द्वीप विदिशाओं में टेढ़े टेढ़े आये हुए हैं, इसलिये दाढ़ाओं की कल्पना करली गई मालूम होती है। सूत्र का वर्णन देखने से दाढ़ाएँ किसी भी प्रकार से सिद्ध नहीं होती।

॥ इति नौवें शतक के तीन से तीस तक के उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ९ उद्देशक ३१

असोच्चा केवली

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा, केवलिसावगस्स वा, केवलिसावियाए वा, केवलिउवासगस्स वा, केवलिउवासियाए वा, तप्पक्खियस्स वा, तप्पक्खियसावगस्स वा, तप्पक्खियसावियाए वा, तप्पक्खियउवासगस्स वा, तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?

१ उत्तर–गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं णो लभेज्जा सवणयाए ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'असोच्चा णं जाव णो लभेज्जा सवणयाए' ?

उत्तर–गोयमा ! जस्स णं णाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा, जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्ज सवणयाए; जस्स णं णाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव तप्पक्खियउवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं णो लभेज्ज सवणयाए । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–तं चेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव 'णो लभेज्ज सवणयाए'।

कठिन शब्दार्थ--असोच्चा--अश्रुत्वा (किसी के पास सुने बिना ही), **तप्पक्खिय-याए**—उसके पक्षवाले से, **लभेज्जा**—प्राप्त होता है, **सवणयाए**—सुनने के लिए, **अ ं-गइए**—किसी जीव को, **खओवसमे**—क्षयोपशम, **कडे**—किया हो।

भावार्थ-१ प्रश्न-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! केवली, केवली के श्रावक, केवली की श्राविका, केवली के उपासक, केवली की उपासिका, केवलीपाक्षिक (स्वयं बुद्ध), केवलीपाक्षिक के श्रावक, केवलिपाक्षिक की श्राविका, केवलिपाक्षिक के उपासक, केवलिपाक्षिक की उपासिका, इनमें से किसी के पास बिना सुने ही किसी जीव को केवलि-प्ररूपित धर्म श्रवण का लाभ होता है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! केवली यावत् केवलीपाक्षिक की उपासिका (इन दस) के पास सुने बिना ही किसी जीव को केवलिप्ररूपित धर्मश्रवण का लाभ होता है (धर्म का बोध होता है) और किसी जीव को नहीं होता।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण कहा गया कि-किसी के पास सुने बिना भी किसी जीव को केवलिप्ररूपित धर्म का बोध होता है और किसी को नहीं होता ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव के ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया हुआ है, उसको केवली यावत् केवलिपाक्षिक उपासिका-इनमें से किसी के पास सुने बिना ही केवलिप्ररूपित धर्म श्रवण का लाभ होता है और जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, उसको केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका के पास सुने बिना केवलिप्ररूपित धर्म श्रवण का लाभ नहीं होता। हे गौतम ! इस कारण ऐसा कहा कि 'यावत् किसी को धर्म श्रवण का लाभ होता है और किसी को नहीं होता।'

२ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खिय-

उवासियाए वा केवलं बोहिं बुज्झेज्जा ?

२ उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, अत्थेगइए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! जाव णो बुज्झेज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं बुज्झेज्जा; जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा; से तेणट्ठेणं जाव णो बुज्झेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-बोहि बुज्झेज्जा-बोधि (समझ-सम्यग्दर्शन) प्राप्त करे-अनुभव करे ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका से सुने बिना ही कोई जीव शुद्धबोधि (सम्यग्दर्शन) प्राप्त करता है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! केवली आदि के पास सुने बिना कुछ जीव शुद्धबोधि प्राप्त करते हैं और कितनेक जीव शुद्धबोधि प्राप्त नहीं करते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण कहा गया कि यावत् शुद्धबोधि को प्राप्त नहीं करते ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव ने दर्शनावरणीय (दर्शनमोहनीय) कर्म का क्षयोपशम किया है, उस जीव को केवली आदि के पास सुने बिना ही शुद्धबोधि का लाभ होता और जिस जीव ने दर्शनावरणीय का क्षयोपशम नहीं किया, उस जीव को केवली आदि के पास सुने बिना शुद्धबोधि का लाभ नहीं

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

होता। इसलिये हे गौतम ! यावत् सुने बिना शुद्ध बोधि प्राप्त नहीं करते।

३ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा, जाव तप्पक्खिय-उवासियाए वा केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ?

३ उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा; अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं णो पव्वएज्जा।

प्रश्न-से केणट्ठेणं जाव णो पव्वएज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा; जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव मुंडे भवित्ता जाव णो पव्वएज्जा, से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव णो पव्वएज्जा।

कठिन शब्दार्थ-मुंडे भवित्ता-मुंडित (दीक्षित) होकर, **अगाराओ अणगारियं**-गृहस्थवास से अनगार (साधु) पन को, **पव्वएज्जा**-प्रव्रज्या स्वीकार करे, **धम्मंतराइयाणं**-धर्म में बाधक होने वाले।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास सुने बिना क्या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोई जीव अगारवास छोड़कर और मुण्डित होकर अनगारिकपन (प्रव्रज्या) स्वीकार करता है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! कोई जीव स्वीकार करता है और कोई स्वीकार नहीं करता ?

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर--हे गौतम ! जिस जीव के धर्मान्तरायिक कर्म का अर्थात् चारित्र धर्म में अन्तरायभूत चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया हुआ है, वह जीव केवली आदि के पास सुने बिना ही मुंडित होकर अनगारपने को स्वीकार करता है, परन्तु जिस जीव के धर्मान्तरायिक कर्मों का क्षयोपशम नहीं हुआ, वह प्रव्रज्या स्वीकार नहीं करता, इसलिए पूर्वोक्त कथन है।

४ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा ?

४ उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं णो आवसेज्जा ?

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'जाव णो आवसेज्जा' ?

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं चरित्तावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा; जस्स णं चरित्तावरणिजाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव णो आवसेज्जा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से तेणट्ठेणं जाव णो आवसेज्जा ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास सुने बिना क्या कोई जीव शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण करता है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! कोई जीव शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण करता है और कोई नहीं करता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव ने चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है, वह केवली आदि के पास सुने बिना ही शुद्ध ब्रह्मचर्यवास को धारण करता है, परन्तु जिसने चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, वह जीव यावत् 'ब्रह्मचर्यवास को धारण नहीं करता,' इसलिये पूर्वोक्त प्रकार से कहा गया है ।

५ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा ?

५ उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा; अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं णो संजमेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं जाव णो संजमेज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव केवलेणं संजमेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संजमेज्जा; जस्स णं जयणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव णो संजमेज्जा; से तेणट्ठेणं गोयमा ! जाव अत्थेगइए णो संजमेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-जयणावरणिज्जाणं-यतनावरणीय ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास सुने बिना भी क्या कोई जीव, शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है ?

५ उत्तर-हे गौतम ! कोई जीव करता है और कोई नहीं करता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव ने यतनावरणीय (वीर्यान्तराय) कर्म का क्षयोपशम किया है, वह केवली आदि किसी के पास सुने बिना भी शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है और जिसने यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, वह यावत् 'शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना नहीं करता ।' इसलिये हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा है ।

६ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा ?

६ उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, अत्थेगइए केवलेणं जाव णो संवरेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं जाव णो संवरेज्जा ।

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संवरेणं संवरेज्जा; जस्स णं अज्झवसाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव णो संवरेज्जा, से तेणट्ठेणं जाव णो संवरेज्जा।

कठिन शब्दार्थ—अज्झवसाणावरणिज्जाणं-अध्यवसानावरणीय (भाव चारित्र के आवरक)।

भावार्थ—६ प्रश्न—हे भगवन् ! केवली आदि के पास से धर्म श्रवण किये बिना ही क्या कोई जीव शुद्ध संवर द्वारा संवृत्त होता है (आश्रव निरोध करता है) ?

६ उत्तर—हे गौतम ! कोई करता है और कोई नहीं भी करता।

प्रश्न—हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर—हे गौतम ! जिस जीव ने अध्यवसानावरणीय (भाव चारित्रावरणीय) कर्म का क्षयोपशम किया है, वह यावत् सुने बिना भी शुद्ध संवर द्वारा आश्रव का निरोध करता है और जिस ने अध्यवसानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, वह शुद्ध संवर द्वारा आश्रव का निरोध नहीं करता। इसलिये हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा है।

७ प्रश्न—असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा ?

७ उत्तर—गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियणाणं णो उप्पाडेज्जा।

प्रश्न—से केणट्ठेणं जाव णो उप्पाडेज्जा ?

उत्तर—गोयमा ! जस्स णं आभिणिबोहियणाणावरणिज्जाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कम्माणं खओवसमे कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलं आभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा; जस्स णं आभिणिबोहियणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ, से णं असोच्चा केवलिस्स वा, जाव केवलं आभिणिबोहियणाणं णो उप्पाडेज्जा; से तेणट्ठेणं जाव णो उप्पाडेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-उप्पाडेज्जा-उत्पन्न करे ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास से सुने बिना ही कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिकज्ञान उत्पन्न करता है ?

७ उत्तर-हे गौतम ! कोई करता है और कोई नहीं करता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव ने आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है, वह यावत् सुने बिना ही आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करता है और जिस जीव ने आभिनिबोधिक ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया वह यावत् आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न नहीं करता । इसलिये हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा गया है ।

८ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलि० जाव केवलं सुयणाणं उप्पाडेज्जा ?

८ उत्तर-एवं जहा आभिणिबोहियणाणस्स वत्तव्वया भणिया तहा सुयणाणस्स वि भाणियव्वा; णवरं सुयणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे । एवं चेव केवलं ओहिणाणं भाणि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यव्वं, णवरं ओहिणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे। एवं केवलं मणपज्जवणाणं उप्पाडेज्जा, णवरं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे भाणियव्वे।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास से सुने बिना ही कोई जीव शुद्ध श्रुतज्ञान उत्पन्न करता है ?

८ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार आभिनिबोधिक ज्ञान का कथन किया गया, उसी प्रकार शुद्ध श्रुतज्ञान, शुद्ध अवधिज्ञान और शुद्ध मनःपर्ययज्ञान के विषय में भी कहना चाहिये, परन्तु श्रुतज्ञान में श्रुत-ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम, अवधिज्ञान में अवधिज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम और मनःपर्यय ज्ञान में मनःपर्ययज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम कहना चाहिये।

९ प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खिय-उवासियाए वा केवलणाणं उप्पाडेज्जा ?

९ उत्तर-एवं चेव, णवरं केवलणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए भाणियव्वे, सेसं तं चेव; से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-जाव केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा।

कठिन शब्दार्थ-खए-क्षय से।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! केवली आदि के पास सुने बिना ही कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न करता है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! कोई करता है और कोई नहीं करता।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस जीव ने केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, वह जीव केवलज्ञान उत्पन्न करता है और जिस जीव ने केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं किया, वह केवलज्ञान उत्पन्न नहीं करता । इसलिये हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से कहा गया है ।

१० प्रश्न-असोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा जाव तप्पक्खिय-उवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा, केवलेणं संवरेणं संवरेज्जा, केवलं आभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा; जाव केवलं मणपज्जवणाणं उप्पाडेज्जा, केवलणाणं उप्पाडेज्जा ?

१० उत्तर-गोयमा ! असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव उवासियाए वा अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं णो लभेज्जा सवणयाए; अत्थेगइए केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, अत्थेगइए केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा; अत्थेगइए केवलं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा, अत्थेगइए जाव णो पव्वएज्जा; अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं आवसेज्जा, अत्थेगइए केवलं बंभचेरवासं णो आवसेज्जा; अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं संजमेज्जा, अत्थेगइए केवलेणं संजमेणं णो संजमेज्जा; एवं संवरेणं वि; अत्थेगइए केवलं आभिणिबोहियणाणं उप्पाडेज्जा; अत्थेगइए जाव णो उप्पाडेज्जा; एवं जाव मणपज्जवणाणं, अत्थे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गइए केवलणाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-असोच्चा णं तं चेव जाव अत्थेगइए केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा ?

उत्तर-गोयमा ! जस्स णं णाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ, जस्स णं धम्मंतराइयाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ, एवं चरित्तावरणिज्जाणं, जयणावरणिज्जाणं, अज्झवसाणावरणिज्जाणं, आभिणिबोहियणाणावरणिज्जाणं, जाव मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे णो कडे भवइ; जस्स णं केवलणाणावरणिज्जाणं जाव खए णो कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलिपण्णत्तं धम्मं णो लभेज्जा सवणयाए, केवलं बोहिं णो बुज्झेज्जा, जाव केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा । जस्स णं णाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ, जस्स णं दरिसणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ, जस्स णं धम्मंतराइयाणं, एवं जाव जस्स णं केवलणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं असोच्चा केवलिस्स वा जाव केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, जाव केवलणाणं उप्पाडेज्जा ।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिका, इन दस के पास केवली प्ररूपित धर्म सुने बिना भी क्या कोई जीव केवली प्ररूपित धर्म का श्रवण-बोध (श्रुत सम्यक्त्व का अनुभव) करता है, मुण्डित होकर अगारवास से अनगारवास को स्वीकार करता है, शुद्ध ब्रह्मचर्यवास धारण करता है, शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है, शुद्ध संवर द्वारा आश्रव का निरोध करता है, शुद्ध आभिनिबोधिक ज्ञान उत्पन्न करता है, यावत् शुद्ध मनःपर्यय ज्ञान तथा केवलज्ञान उत्पन्न करता है ?

१० उत्तर--हे गौतम ! केवली आदि के पास से सुने बिना भी कोई जीव बोध प्राप्त करता है और कोई जीव नहीं करता । कोई जीव शुद्ध सम्यक्त्व का अनुभव करता है और कोई नहीं करता । कोई जीव मुण्डित होकर अगार-वास से अनगारपन स्वीकार करता है और कोई नहीं करता । कोई जीव शुद्ध ब्रह्मचर्य वास धारण करता है और कोई नहीं करता । कोई जीव शुद्ध संयम द्वारा संयम-यतना करता है और कोई नहीं करता । कोई जीव शुद्ध संवर द्वारा आश्रव का निरोध करता है और कोई नहीं करता । कोई जीव शुद्ध आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान और केवलज्ञान उत्पन्न करता है और कोई जीव नहीं करता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा कहने का कारण क्या है ?

उत्तर-हे गौतम ! (१) जिस जीव ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया । (२) दर्शनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (३) धर्मान्त-रायिक कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (४) चारित्रावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (५) यतनावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (६) अध्य-वसानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (७) आभिनिबोधिक ज्ञानावर-णीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (८ से १०) इसी प्रकार श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय और मनःपर्यय ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम नहीं किया, (११! केवल ज्ञानावरणीय कर्म का क्षय नहीं किया, वे जीव केवलज्ञानी आदि के पास केवलिप्ररूपित धर्म को सुने बिना धर्म का बोध प्राप्त नहीं करते, शुद्ध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्यक्त्व का अनुभव नहीं करते, यावत् केवलज्ञान को उत्पन्न नहीं करते। जिन जीवों ने ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है, दर्शनावरणीय कर्म का क्षयोपशम किया है, धर्मान्तरायिक कर्म का क्षयोपशम किया है, यावत् केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया है, वे जीव, केवली आदि के पास सुने बिना ही धर्म का बोध प्राप्त करते हैं, शुद्ध सम्यक्त्व का अनुभव करते हैं यावत् केवलज्ञान उत्पन्न करते हैं।

विवेचन-केवलज्ञान, केवलदर्शन के धारक को केवली कहते हैं। जिसने स्वयं केवलज्ञानी से पूछा है, अथवा उनके समीप सुना है, उसे-'केवलिश्रावक' और 'केवलिश्राविका' कहते हैं। केवलज्ञानी की उपासना करते हुए, केवली के द्वारा दूसरे को कहा जाने पर जिसने सुना हो उसे-'केवलिउपासक' और 'केवलिउपासिका' कहते हैं। केवलिपाक्षिक का अर्थ है-'स्वयं बुद्ध'। उसके श्रावक, श्राविका, उपासक, उपासिका क्रमशः केवलि-पाक्षिक श्रावक, केवलिपाक्षिक श्राविका, केवलिपाक्षिक उपासक और केवलिपाक्षिक उपासिका कहते हैं। 'असोच्चा' का अर्थ है-'धर्मफलादि प्रतिपादक वचन सुने बिना ही पूर्वकृत धर्मानुराग से।' इन दस के पास केवलि प्ररूपित धर्मफलादि प्रतिपादक वचन सुने बिना ही कोई जीव धर्म का बोध × प्राप्त करता है और कोई जीव नहीं करता। इसी प्रकार शुद्ध सम्यक्त्व, मुण्डित होकर अगारवास से अनगारपन, शुद्ध ब्रह्मचर्यवास, शुद्ध संयम द्वारा संयमयतना, शुद्ध संवर द्वारा आश्रवनिरोध, आभिनिबोधिक ज्ञान यावत् केवलज्ञान को तदावरणीय कर्मों के क्षयोपशम और क्षय से प्राप्त करता है और जिस जीव के तदावरणीय कर्मों का क्षयोपशम और क्षय नहीं हुआ, वह जीव धर्म-बोध यावत् केवलज्ञान प्राप्त नहीं करता।

असोच्चा-मिथ्यादृष्टि से सम्यग्दृष्टि

११-तस्स णं भंते ! छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं

× मूल पाठ में 'सवणयाए' शब्द है, जिसका सीधा अर्थ होता है 'सुनना' किन्तु यहाँ श्रवण का अर्थ श्रुतज्ञानरूप बोध (धर्म का बोध) लेना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय सूराभिमुहस्स आयावणभूमीए आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए, पगइउवसंतयाए, पगइपयणुकोह-माण-माया-लोभयाए, मिउमद्दवसंपण्णयाए, अल्लीणयाए, भद्दयाए, विणीययाए, अण्णया कयाइ सुभेणं अज्झवसाणेणं, सुभेणं परिणामेणं, लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहा-ऽपोह-मग्गणगवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे णामं अण्णाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं विब्भंगणाणेणं समुप्पण्णेणं जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं असंखेज्जाइं जोयण-सहस्साइं जाणइ पासइ; से णं तेणं विब्भंगणाणेणं समुप्पण्णेणं जीवे वि जाणइ, अजीवे वि जाणइ, पासंडत्थे, सारंभे, सपरिग्गहे, संकिलिस्समाणे वि जाणइ, विसुज्झमाणे वि जाणइ, से णं पुव्वामेव सम्मत्तं पडिवज्जइ, सम्मत्तं पडिवज्जित्ता समणधम्मं रोएइ, समणधम्मं रोएत्ता चरित्तं पडिवज्जइ, चरित्तं पडिवज्जित्ता लिंगं पडिवज्जइ, तस्स णं तेहिं मिच्छत्तपज्जवेहिं परिहायमाणेहिं परिहायमाणेहिं सम्मदंसण-पज्जवेहिं परिवड्ढमाणेहिं परिवड्ढमाणेहिं से विब्भंगे अण्णाणे सम्मत्त-परिग्गहिए खिप्पामेव ओही परावत्तइ ।

कठिन शब्दार्थ–अणिक्खित्तेणं–निरन्तर, **पगिज्झिय**–रखकर, **आयावणभूमीए**–आतापना भूमि में, **पगइभद्दयाए**–प्रकृति (स्वभाव) की भद्रता से, **पगइउवसंतयाए**–स्वभाव से ही क्रोधादि कषायों की उपशांतता से, **पगइपयणुकोह**–स्वभाव से ही पतले क्रोध, **मिउमद्दवसंपण्णयाए**–अत्यंत मृदुता (नम्रता से युक्त होने से), **अल्लीणयाए**–अलीनता (गृद्धि रहित)

होने से, **भद्दयाए**–भद्रता से, **अण्णयाकयाइ**–अन्य किसी दिन, **विसुज्झमाणीहिं**–विशुद्धयमान होने के कारण, **ईहाऽपोहमग्गणगवेसणं**–ईहा, अपोह, मार्गणा गवेषणा (विचार धारा में संलग्न हो ऊहापोह में बढ़ते हुए), **पासंडत्थे**–पाखंड में रहे, **सारंभे**–आरंभवाले, **संकिलिस्समाणे**-संक्लेश को प्राप्त हुए, **रोएइ**–रुचि करते हैं, **परिहायमाणेहिं**–क्षीण होते हुए, **परिवड्ढमाणेहिं**–बढ़ते हुए, **खिप्पामेव**–शीघ्र ही, **परावत्तइ**–परिवर्तन होता है।

भावार्थ–११–निरन्तर छठ-छठ का (बेले, बेले का) तप करते हुए सूर्य के संमुख ऊँचे हाथ करके, आतापना भूमि में आतापना लेते हुए, उस जीव के प्रकृति की भद्रता, प्रकृति की उपशांतता, स्वभाव से ही क्रोध-मान-माया-लोभ के अत्यन्त अल्प होने, अत्यन्त मार्दव--नम्रता, अर्थात् प्रकृति की कोमलता, कामभोगों में आसक्ति नहीं होने, भद्रता और विनीतता से, किसी दिन शुभ अध्यवसाय, शुभपरिणाम, विशुद्ध लेश्या एवं तदावरणीय (विभंगज्ञानावरणीय) कर्मों के क्षयोपशम से ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए 'विभंग' नामक अज्ञान उत्पन्न होता है। उस उत्पन्न हुए विभंगज्ञान द्वारा वह जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट असंख्यात हजार योजन तक जानता और देखता है। उस उत्पन्न हुए विभंगज्ञान द्वारा वह जीवों को भी जानता है और अजीवों को भी जानता है। वह पाखण्डी, आरम्भी, परिग्रही और संक्लेश को प्राप्त हुए जीवों को भी जानता है और विशुद्ध जीवों को भी जानता है। इसके बाद वह विभंगज्ञानी, सर्व प्रथम सम्यक्त्व प्राप्त करता है। उसके बाद श्रमण-धर्म पर रुचि करता है, रुचि करके चारित्र अंगीकार करता है। फिर लिंग (साधुवेश) स्वीकार करता है। तब उस विभंगज्ञानी के मिथ्यात्व के पर्याय क्रमशः क्षीण होते-होते और सम्यग्दर्शन के पर्याय क्रमशः बढ़ते-बढ़ते वह 'विभंग' नामक अज्ञान, सम्यक्त्व युक्त होता है और शीघ्र ही अवधिरूप में परिवर्तित हो जाता है।

विवेचन–मूल पाठ में-'छट्ठंछट्ठेणं' कहा है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रायः बेले-बेले की तपस्या करने वाले बाल तपस्वी अज्ञानी जीवों को विभंगज्ञान उत्पन्न होता है।

यद्यपि यहाँ मूलपाठ में चारित्र प्राप्ति के बाद 'सम्मत्तपरिग्गहिए' आदि पाठ आया है, तथापि उस पाठ का सम्बन्ध–'सम्मत्तं पडिवज्जइ, सम्मत्तं पडिवज्जित्ता' के साथ है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिसका सीधा अर्थ यह होगा कि चारित्र प्राप्ति के पहले ही वह सम्यक्त्व प्राप्त करता है और सम्यक्त्व परिगृहीत होने पर पर उसका विभंगज्ञान अवधिज्ञान रूप में परिणत हो जाता है। फिर श्रमण-धर्म पर रुचि करके चारित्र-धर्म को अंगीकार करता है। अंगीकार करके लिंग स्वीकार करता है।

विद्यमान पदार्थों के प्रति ज्ञान-चेष्टा को 'ईहा' कहते हैं। 'यह घट है, पट नहीं।' इस प्रकार विपक्ष के निराकरणपूर्वक वस्तु-तत्त्व के विचार को 'अपोह' कहते हैं। अन्वय व्याप्तिपूर्वक पदार्थ के विचार को 'मार्गण' कहते हैं। व्यतिरेक व्याप्तिपूर्वक पदार्थ के विचार को 'गवेषण' कहते हैं। ईहा, अपोह, मार्गण और गवेषण करते हुए आतापनाभूमि में आतापना लेते हुए, उस बाल-तपस्वी को शुभ अध्यवसाय आदि कारणों से विभंगज्ञानावरणीय कर्मों का क्षयोपशम होकर विभंगज्ञान उत्पन्न होता है। इसके पश्चात् परिणाम अध्यवसाय और लेश्या की विशुद्धि से सम्यक्त्व उत्पन्न होता है। सम्यक्त्व प्राप्ति के साथ ही वह विभंगज्ञान अवधिज्ञान हो जाता है। इसके पश्चात् वह चारित्र स्वीकार कर साधु-वेष को अंगीकार करता है।

असोच्चा-लेश्या ज्ञान योगादि

१२ प्रश्न-से णं भंते ! कइसु लेस्सासु होज्जा ?

१२ उत्तर-गोयमा ! तिसु विसुद्धलेस्सासु होज्जा, तं जहा-तेउलेस्साए, पम्हलेस्साए, सुक्कलेस्साए।

१३ प्रश्न-से णं भंते ! कइसु णाणेसु होज्जा ?

१३ उत्तर-गोयमा ! तिसु आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-ओहिणाणेसु होज्जा।

१४ प्रश्न-से णं भंते ! किं सजोगी होज्जा, अजोगी होज्जा ?

१४ उत्तर-गोयमा ! सजोगी होज्जा, णो अजोगी होज्जा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५ प्रश्न-जइ सयोगी होज्जा, किं मणजोगी होज्जा, वइजोगी होज्जा, कायजोगी होज्जा ?

१५ उत्तर-गोयमा ! मणजोगी वा होज्जा, वइजोगी वा होज्जा, कायजोगी वा होज्जा ।

१६ प्रश्न-से णं भंते ! किं सागारोवउत्ते होज्जा, अणागारोवउत्ते वा होज्जा ?

१६ उत्तर-गोयमा ! सागारोवउत्ते वा होज्जा, अणागारोवउत्ते वा होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-सागारोवउत्ते-साकार (ज्ञान) उपयोगवाला, **अणागारोवउत्ते**-अनाकार (दर्शन) उपयोगवाला ।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी, कितनी लेश्याओं में होता है ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! तीन विशुद्ध लेश्याओं में होता है । यथा-१ तेजोलेश्या, २ पद्मलेश्या और ३ शुक्ललेश्या ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी, कितने ज्ञान में होता है ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! १ आभिनिबोधिकज्ञान, २ श्रुतज्ञान और ३ अवधिज्ञान, इन तीन ज्ञानों में होता है ।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी, सयोगी होता है, या अयोगी ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! वह सयोगी होता है, अयोगी नहीं होता ।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वह सयोगी होता है, तो क्या मनयोगी होता है, वचनयोगी होता है, या काययोगी होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५ उत्तर-हे गौतम ! वह मनयोगी होता है, वचनयोगी होता है और काययोगी भी होता है।

१६ प्रश्न-हे भगवन् ! वह साकार उपयोग वाला होता है या अनाकार उपयोग वाला ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! वह साकार (ज्ञान) उपयोगवाला भी होता है और अनाकार (दर्शन) उपयोग वाला भी होता है।

१७ प्रश्न-से णं भंते ! कयरम्मि संघयणे होज्जा ?

१७ उत्तर-गोयमा ! वइरोसहणारायसंघयणे होज्जा।

१८ प्रश्न-से णं भंते ! कयरम्मि संठाणे होज्जा ?

१८ उत्तर-गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अण्णयरे संठाणे होज्जा।

१९ प्रश्न-से णं भंते ! कयरम्मि उच्चत्ते होज्जा ?

१९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं सत्तरयणीए, उक्कोसेणं पंचधणुसइए होज्जा।

२० प्रश्न-से णं भंते ! कयरम्मि आउए होज्जा ?

२० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं साइरेगट्ठवासाउए, उक्कोसेणं पुव्वकोडीआउए होज्जा।

२१ प्रश्न-से णं भंते ! किं सवेदए होज्जा, अवेदए होज्जा ?

२१ उत्तर-गोयमा ! सवेदए होज्जा, णो अवेदए होज्जा।

२२ प्रश्न-जइ सवेदए होज्जा किं इत्थिवेदए होज्जा, पुरिस-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेदए होज्जा, पुरिस-णपुंसगवेदए होज्जा; णपुंसगवेदए होज्जा ?

२२ उत्तर–गोयमा ! णो इत्थिवेदए होज्जा, पुरिसवेदए वा होज्जा, णो णपुंसगवेदए होज्जा, पुरिस-णपुंसगवेदए वा होज्जा।

२३ प्रश्न–से णं भंते ! किं सकसाई होज्जा, अकसाई होज्जा ?

२३ उत्तर–गोयमा ! सकसाई होज्जा, णो अकसाई होज्जा।

२४ प्रश्न–जइ सकसाई होज्जा, से णं भंते ! कइसु कसाएसु होज्जा ?

२४ उत्तर–गोयमा ! चउसु संजलणकोह-माण-माया-लोभेसु होज्जा।

२५ प्रश्न–तस्स णं भंते ! केवइया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?

२५ उत्तर–गोयमा ! असंखेज्जा अज्झवसाणा पण्णत्ता।

२६ प्रश्न–ते णं भंते ! किं पसत्था, अप्पसत्था ?

२६ उत्तर–गोयमा ! पसत्था, णो अप्पसत्था।

कठिन शब्दार्थ–**कयरम्मि**–किस, **वइरोसहणारायसंघयणे**–वज्रऋषभनाराच संहनन, **संठाणे**–आकार में, **उच्चत्ते**–उच्चत्व–ऊँचाई, **सत्तरयणीए**–सात हाथ, **पसत्था**–प्रशस्त (अच्छे)।

भावार्थ–१७ प्रश्न–हे भगवन् ! वह किस संहनन में होता है ?

१७ उत्तर–हे गौतम ! वह वज्रऋषभनाराच संहनन वाला होता है।

१८ प्रश्न–हे भगवन् ! वह किस संस्थान में होता है ?

१८ उत्तर–हे गौतम ! वह छह संस्थानों में से किसी भी संस्थान में होता है।

१९ प्रश्न–हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी कितनी ऊँचाई वाला होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१९ उत्तर--हे गौतम ! वह जघन्य सात हाथ और उत्कृष्ट पांच सौ धनुष की ऊँचाई वाला होता है।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! वह कितनी आयुष्य वाला होता है ?

२० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य साधिक आठ वर्ष और उत्कृष्ट पूर्व कोटि आयुष्य वाला होता है

२१ प्रश्न-हे भगवन् ! वह सवेदी होता है, या अवेदी ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! वह सवेदी होता है, अवेदी नहीं होता।

२२ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वह सवेदी होता है, तो क्या स्त्री-वेदी होता है, पुरुष-वेदी होता है, नपुंसक-वेदी होता है, या पुरुषनपुंसक-वेदी होता है ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! स्त्रीवेदी नहीं होता, पुरुषवेदी होता है, नपुंसक-वेदी नहीं होता, किन्तु पुरुषनपुंसकवेदी होता है।

२३ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सकषायी होता है, या अकषायी ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! वह सकषायी होता है, अकषायी नहीं होता।

२४ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है, तो वह कितने कषाय वाला होता है ?

२४ उत्तर--हे गौतम ! वह संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ-इन चार कषायों वाला होता है।

२५ प्रश्न-हे भगवन् ! उसके कितने अध्यवसाय होते हैं ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! उसके असंख्यात अध्यवसाय होते हैं।

२६ प्रश्न-हे भगवन् ! वे अध्यवसाय प्रशस्त होते हैं, या अप्रशस्त ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! प्रशस्त होते हैं, अप्रशस्त नहीं होते।

२७ से णं भंते ! तेहिं पसत्थेहिं अज्झवसाणेहिं वड्ढमाणेहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणंतेहिं णेरइयभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, अणंतेहिं तिरिक्खजोणिय-जाव विसंजोएइ, अणंतेहिं मणुस्सभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ, अणंतेहिं देवभवग्गहणेहिंतो अप्पाणं विसंजोएइ; जाओ वि य से इमाओ णेरइय-तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवगइणामाओ चत्तारि उत्तरपयडीओ, तासिं च णं उवग्गहिए अणंताणुबंधी कोह-माण-माया-लोभे खवेइ, अणं० खवेइत्ता अपच्च-क्खाणकसाए कोह-माण-माया-लोभे खवेइ, अपच्च० खवेइत्ता पच्चक्खाणावरण कोह-माण-माया-लोभे खवेइ, पच्च० खवेइत्ता संजलणकोह-माण-माया-लोभे खवेइ, संज० खवेइत्ता पंचविहं णाणा-वरणिज्जं, णवविहं दरिसणावरणिज्जं, पंचविहं अंतराइयं, तालमत्था-कडं च णं मोहणिज्जं कट्टु कम्मरयविकिरणकरं अपुव्वकरणं अणु-पविट्ठस्स अणंते अणुत्तरे णिव्वाघाए णिरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवलवरणाण-दंसणे समुप्पण्णे ।

२८ प्रश्न-से णं भंते ! केवलिपण्णत्तं धम्मं आघवेज्ज वा, पण्णवेज्ज वा, परूवेज्ज वा ?

२८ उत्तर-णो इणट्ठे, समट्ठे, णण्णत्थ एगणाएण वा, एग-वागरणेण वा ।

२९ प्रश्न-से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ?

२९ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे, उवएसं पुण करेज्जा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० प्रश्न–से णं भंते ! सिज्झइ जाव अंतं करेइ ?

३० उत्तर–हंता सिज्झइ, जाव अंतं करेइ ।

कठिन शब्दार्थ–विसंजोएइ–विमुक्त करते हैं, उवग्गहिए आधारभूत, तालमत्थाकडं–तालवृक्ष के मस्तक के समान क्षीग करके, कम्मरयविकिरणकरं–कर्म रूपी रज को झटककर, अपुव्वकरणं–अपूर्वकरण में, अणुपविट्ठस्स–प्रवेश करके, णिव्वाघाए–व्याघात रहित, णिरावरणे–आवरण रहित, कसिणं–सम्पूर्ण, पडिपुण्णे–प्रतिपूर्ण, समुप्पण्णे–उत्पन्न होता है, एगणाएण–एक उदाहरण, एगवागरणेण–एक प्रश्न का उत्तर ।

भावार्थ–२७–वह अवधिज्ञानी, बढ़ते हुए प्रशस्त अध्यवसायों से, अनन्त नैरयिक-भावों से अपनी आत्मा को विमुक्त करता है, अनन्त तिर्यंच-भवों से अपनी आत्मा को विमुक्त करता है, अनन्त मनुष्य-भवों से अपनी आत्मा को विमुक्त करता है और अनन्त देव-भवों से अपनी आत्मा को विमुक्त करता है । जो ये नरक-गति, तिर्यंच गति, मनुष्य-गति और देव-गति नामक चार उत्तर प्रकृतियां हैं, उनके तथा दूसरी प्रकृतियों के आधारभूत अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, और लोभ का क्षय करता है, उनका क्षय करके अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है, उनका क्षय करके प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है, उनका क्षय करके संज्वलन क्रोध, मान, माया और लोभ का क्षय करता है । इसके बाद पाँच प्रकार का ज्ञानावरणीय कर्म, नौ प्रकार का दर्शनावरणीय कर्म, पाँच प्रकार का अन्तराय कर्म तथा कटे हुए मस्तक वाले ताड़-वृक्ष के समान मोहनीय कर्म को बनाकर, कर्म-रज को बिखेर देने वाले अपूर्वकरण में प्रवेश किये हुए उस जीव के अनन्त, अनुत्तर, व्याघात रहित, आवरण रहित, कृत्स्न (संपूर्ण) प्रतिपूर्ण एवं श्रेष्ठ केवलज्ञान और केवल-दर्शन उत्पन्न होता है ।

२८ प्रश्न–हे भगवन् ! वे असोच्चाकेवली, केवलिप्ररूपित धर्म कहते हैं, बतलाते हैं और प्ररूपणा करते हैं ?

२८ उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । वे एक ज्ञात (उदाहरण)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और एक प्रश्न के उत्तर के सिवाय धर्म का उपदेश नहीं करते ।

२९ प्रश्न-हे भगवन् ! वे असोच्चाकेवली किसी को प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, किन्तु (अमुक के पास तुम प्रव्रज्या ग्रहण करो-) ऐसा उपदेश करते (कहते) हैं ।

३० प्रश्न-हे भगवन् ! वे असोच्चाकेवली सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ?

३० उत्तर-हाँ, गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अंत करते हैं ।

३१ प्रश्न-से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा, अहे होज्जा, तिरियं होज्जा ?

३१ उत्तर-गोयमा ! उड्ढं वा होज्जा, अहे वा होज्जा, तिरियं वा होज्जा; उड्ढं होज्जमाणे सद्दावइ-वियडावइ-गंधावइ-मालवंत-परियाएसु वट्टवेयड्ढपव्वएसु होज्जा; साहरणं पडुच्च सोमणसवणे वा पंडगवणे वा होज्जा; अहे होज्जमाणे गड्डाए वा, दरीए वा होज्जा; साहरणं पडुच्च पायाले वा, भवणे वा होज्जा; तिरियं होज्जमाणे पण्णरससु कम्मभूमीसु होज्जा; साहरणं पडुच्च अड्ढाइज्जदीव-समुद्द-तदेक्कदेसभाए होज्जा ।

३२ प्रश्न-ते णं भंते ! एगसमए णं केवइया होज्जा ?

३२ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा;

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उक्कोसेणं दस, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-'असोच्चा णं केवलिस्स वा जाव अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, अत्थेगइए असोच्चा णं केवलि० जाव णो लभेज्जा सवणयाए, जाव अत्थेगइए केवलणाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा' ।

कठिन शब्दार्थ-अहे-नीचे, पायाले-पाताल में ।

भावार्थ-३१ प्रश्न-हे भगवन् ! वे असोच्चाकेवली क्या ऊर्ध्वलोक में होते हैं, अधोलोक में होते हैं, या तिर्यग्-लोक में होते हैं ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! ऊर्ध्वलोक में भी होते हैं, अधोलोक में भी होते हैं और तिर्यग्-लोक में भी होते हैं । यदि ऊर्ध्व-लोक में हैं, तो शब्दापाती, विकटापाती, गन्धापाती और माल्यवन्त नामक वृत्त वैताढच पर्वतों में होते हैं । तथा संहरण की अपेक्षा सौमनस वन में अथवा पाण्डुक वन में होते हैं । यदि अधोलोक में होता है, तो गर्त्ता (अधोलोक ग्रामादि) में अथवा गुफा में होते हैं । तथा संहरण की अपेक्षा पाताल-कलशों में अथवा भवनवासी देवों के भवनों में होते हैं । यदि तिर्यग्-लोक में होते हैं, तो पन्द्रह कर्मभूमि में होते हैं । तथा संहरण की अपेक्षा ढाई द्वीप और समुद्रों के एक भाग में होते हैं ।

३२ प्रश्न-हे भगवन् ! वे असोच्चा केवली, एक समय में कितने होते हैं ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट दस होते हैं । इसलिये हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूं कि केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका के पास, केवली प्ररूपित धर्म सुने बिना ही किसी जीव को केवलि-प्ररूपित धर्म का बोध होता है और किसी को नहीं होता, यावत् कोई जीव केवलज्ञान उत्पन्न कर लेता है और कोई उत्पन्न नहीं करता ।

विवेचन-उपर्युक्त अवधिज्ञानी के विषय में जो कहा गया है, वह सब उस अवधिज्ञानी के लिये समझना चाहिये, जो विभंगज्ञानी से अवधिज्ञानी बना है । वह प्रशस्त भाव-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लेश्याओं में ही होता है, अप्रशस्त भाव-लेश्याओं में नहीं । सम्यक्त्व प्राप्त होते ही उसका मति-अज्ञान, श्रुतअज्ञान और विभंगज्ञान-ये तीनों अज्ञान, ज्ञानरूप में परिणत हो जाते हैं। अवधिज्ञानी के लिये जो वज्रऋषभनाराच संहनन का कथन किया गया है, वह आगे प्राप्त होनेवाले केवलज्ञान की अपेक्षा समझना चाहिये । क्योंकि केवलज्ञान की प्राप्ति वज्रऋषभ-नाराच संहनन वालों को ही होती है । अवधिज्ञानी दशा में वह सवेदी होता है । सवेदी में भी पुरुषवेदी और पुरुष-नपुंसक वेदी होता है । वह संज्वलन कषायवाला होता है । इसके पश्चात् भावों की विशुद्धता से नरकादि चारों गतियों के कारणभूत कषाय का क्षय करता है । पश्चात् जिस प्रकार तालवृक्ष की मस्तक-शूचि के भिन्न होने पर, तालवृक्ष नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार मोहनीय कर्म का क्षय करता है । जैसा कि कहा है-

मस्तकसूचिविनाशे तालस्य यथा ध्रुवो भवति नाशः ।
तद्वत्कर्मविनाशोऽपि मोहनीयक्षये नित्यम् ।।

अर्थ-जिस प्रकार तालवृक्ष की मस्तकशूचि का विनाश होने पर तालवृक्ष का नाश हो जाता है, उसी प्रकार मोहनीय कर्म का क्षय होने पर शेष कर्मों का भी नाश हो जाता है । अतः मोहनीय कर्म की शेष प्रकृतियों का क्षय करके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय और अन्तराय-इन तीनों कर्मों की सभी प्रकृतियों का क्षय कर देता है । इनका क्षय होते ही केवलज्ञान, केवलदर्शन उत्पन्न हो जाते हैं । केवलज्ञान के लिये शास्त्रकार ने विशेषण दिये हैं । यथा-अनन्त-विषय की अनन्तता के कारण केवलज्ञान अनन्त है। वह अनुत्तर है अर्थात् केवलज्ञान से बढ़कर दूसरा कोई ज्ञान नहीं है, अर्थात् वह सर्वोत्तम ज्ञान है । फिर वह निर्व्याघात होता है अर्थात् भींत आदि के द्वारा वह प्रतिहत (स्खलित) नहीं होता । वह सम्पूर्ण आवरणों के क्षय हो जाते से 'निरावरण' होता है । सकल पदार्थों का ग्राहक होने से 'कृत्स्न' होता है । अपने सम्पूर्ण अंशों से युक्त उत्पन्न होने से 'प्रतिपूर्ण' होता है । इसी तरह केवल-दर्शन के लिये भी ये ही विशेषण समझ लेने चाहिये ।

वे असोच्चा केवली किसी के द्वारा प्रश्न पूछने पर उत्तर देते हैं तथा एक उदाहरण देते हैं । इसके अतिरिक्त वे किसी प्रकार का उपदेशादि नहीं देते । किसी को अपना शिष्य नहीं बनाते, किन्तु किसी दीक्षार्थी के उपस्थित होने पर वे केवल इतना कहते हैं कि 'अमुक के पास दीक्षा लो ।'

इस प्रकार के असोच्चा केवली ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और तिरछा लोक-इन तीनों लोकों में होते हैं । संहरण आदि का कथन मूल पाठ में ही कर दिया गया है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोच्चा केवली

३३ प्रश्न—सोच्चा णं भंते ! केवलिस्स वा, जाव तप्पक्खिय-उवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए ?

३३ उत्तर—गोयमा ! सोच्चा णं केवलिस्स वा, जाव अत्थेगइए केवलिपण्णत्तं धम्मं, एवं जा चेव असोच्चाए, वत्तव्वया सा चेव सोच्चाए वि भाणियव्वा, णवरं अभिलावो 'सोच्चे' त्ति, सेसं तं चेव णिरवसेसं, जाव जस्स णं मणपज्जवणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमे कडे भवइ, जस्स णं केवलणाणावरणिज्जाणं कम्माणं खए कडे भवइ से णं सोच्चा केवलिस्स वा, जाव उवासियाए वा केवलिपण्णत्तं धम्मं लभेज्जा सवणयाए, केवलं बोहिं बुज्झेज्जा, जाव केवलणाणं उप्पाडेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ—सोच्चाणं—सुनकर, **सवणयाए**—श्रुतज्ञानरूप बोध ।

भावार्थ—३३ प्रश्न—हे भगवन् ! केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका के पास धर्म-प्रतिपादक वचन सुनकर कोई जीव, केवलिप्ररूपित धर्म का बोध प्राप्त कर सकता है ?

३३ उत्तर—हे गौतम ! केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका में से किसी के पास धर्मप्रतिपादक वचन सुनकर कोई जीव केवलिप्ररूपित धर्म का बोध प्राप्त करता है और कोई नहीं करता । इस विषय में जिस प्रकार 'असोच्चा' की वक्तव्यता कही, उसी प्रकार 'सोच्चा' की भी कहनी चाहिये, परन्तु यहां 'सोच्चा' ऐसा पाठ कहना चाहिये । शेष सभी पूर्वोक्त वक्तव्यता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहनी चाहिये। यावत् जिस के मनःपर्यय ज्ञानावरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ है और जिस जीव ने केवलज्ञानावरणीय कर्म का क्षय किया है, उस जीव को केवली आदि के पास से सुनकर केवलिप्ररूपित धर्म का बोध होता है, शुद्ध सम्यक्त्व का बोध होता है यावत् केवलज्ञान की प्राप्ति होती है।

३४-तस्स णं अट्ठमंअट्ठमेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स पगइभद्दयाए, तहेव जाव गवेसणं करेमाणस्स ओहिणाणे समुप्पज्जइ, से णं तेणं ओहिणाणेणं समुप्पण्णेणं जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं असंखेज्जाइं अलोए लोयप्पमाणमेत्ताइं खंडाइं जाणइ पासइ।

३५ प्रश्न-से णं भंते! कइसु लेस्सासु होज्जा?

३५ उत्तर-गोयमा! छसु लेसासु होज्जा, तं जहा-कण्हलेस्साए, जाव सुक्कलेस्साए।

३६ प्रश्न-से णं भंते! कइसु णाणेसु होज्जा?

३६ उत्तर-गोयमा! तिसु वा, चउसु वा होज्जा; तिसु होज्जमाणे तिसु आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-ओहिणाणेसु होज्जा, चउसु होज्जमाणे आभिणिबोहियणाण-सुयणाण-ओहिणाण-मणपज्जवणाणेसु होज्जा।

कठिन शब्दार्थ-अट्ठमंअट्ठमेणं-अष्टम-अष्टम (तेले-तेले की तपस्या), **अणिक्खित्तेणं**-निरन्तर, **अलोए लोयप्पमाणमेत्ताइं**-अलोक में लोक प्रमाण।

भावार्थ-३४ केवली आदि के पास से धर्मप्रतिपादक वचन सुनकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्यग्दर्शनादि प्राप्त जीव को निरन्तर तेले-तेले की तपस्या द्वारा आत्मा को भावित करते हुए, प्रकृति की भद्रता आदि गुणों से यावत् ईहा, अपोह, मार्गण गवेषण करते हुए अवधिज्ञान उत्पन्न होता है। उस उत्पन्न हुए अवधिज्ञान के द्वारा वह जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट अलोक में लोक प्रमाण असंख्य खण्डों को जानता और देखता है।

३५ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी जीव, कितनी लेश्याओं में होता है ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! वह छहों लेश्याओं में होता है। यथा-कृष्ण लेश्या यावत् शुक्ल लेश्या।

३६ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी कितने ज्ञान में होता है ?

३६ उत्तर-हे गौतम ! वह तीन ज्ञान अथवा चार ज्ञान में होता है। यदि तीन ज्ञान में होता है, तो आभिनिबोधिक ज्ञान, श्रुतज्ञान और अवधिज्ञान में होता है, यदि चार ज्ञान में होता है, तो आभिनिबोधिकज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधि-ज्ञान और मनःपर्ययज्ञान में होता है।

३७ प्रश्न-से णं भंते ! किं सजोगी होज्जा, अजोगी होज्जा ?

३७ उत्तर-एवं जोगो, उवओगो, संघयणं, संठाणं, उच्चत्तं, आउयं च एयाणि सव्वाणि जहा असोच्चाए तहेव भाणियव्वाणि।

३८ प्रश्न-से णं भंते ! किं सवेदए-पुच्छा ?

३८ उत्तर-गोयमा ! सवेदए वा होज्जा, अवेदए वा होज्जा।

३९ प्रश्न-जइ अवेदए होज्जा किं उवसंतवेदए होज्जा, खीण-वेदए होज्जा ?

३९ उत्तर-गोयमा ! णो उवसंतवेदए होज्जा, खीणवेदए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होज्जा ।

४० प्रश्न-जइ सवेदए होज्जा किं इत्थीवेदए होज्जा, पुरिसवेदए होज्जा, णपुंसगवेदए होज्जा, पुरिस-णपुंसगवेदए होज्जा-पुच्छा ?

४० उत्तर-गोयमा ! इत्थीवेदए वा होज्जा, पुरिसवेदए वा होज्जा, पुरिस-णपुंसगवेदए वा होज्जा ।

४१ प्रश्न-से णं भंते ! किं सकसाई होज्जा, अकसाई होज्जा ?

४१ उत्तर-गोयमा ! सकसाई वा होज्जा, अकसाई वा होज्जा ।

४२ प्रश्न-जइ अकसाई होज्जा किं उवसंतकसाई होज्जा, खीणकसाई होज्जा ?

४२ उत्तर-गोयमा ! णो उवसंतकसाई होज्जा, खीणकसाई होज्जा ।

४३ प्रश्न-जइ सकसाई होज्जा से णं भंते ! कइसु कसाएसु होज्जा ?

४३ उत्तर-गोयमा ! चउसु वा तिसु वा दोसु वा एक्कम्मि वा होज्जा । चउसु होज्जमाणे चउसु संजलणकोह-माण-माया-लोभेसु होज्जा, तिसु होज्जमाणे तिसु-संजलणमाण-माया-लोभेसु होज्जा, दोसु होज्जमाणे दोसु-संजलणमाया-लोभेसु होज्जा, एगम्मि होज्जमाणे एगम्मि संजलणलोभे होज्जा ।

भावार्थ-३७ प्रश्न-हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सयोगी होता है, या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अयोगी होता है ?

३७ उत्तर–हे गौतम ! जिस प्रकार 'असोच्चा' के विषय में कहा, उसी प्रकार यहाँ भी योग, उपयोग, संहनन, संस्थान, ऊँचाई और आयुष्य, इन सभी के विषय में कहना चाहिये ।

३८ प्रश्न–हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सवेदी होता है, या अवेदी ?

३८ उत्तर–हे गौतम ! वह अवधिज्ञानी सवेदी होता है अथवा अवेदी होता है ।

३९ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वह अवेदी होता है, तो क्या उपशांत वेदी होता है, या क्षीण वेदी होता है ?

३९ उत्तर–हे गौतम ! वह उपशांत वेदी नहीं होता, किन्तु क्षीण वेदी होता है ।

४० प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वह सवेदी होता है, तो क्या स्त्री-वेदी होता है, पुरुष-वेदी होता है, नपुंसक-वेदी होता है, या पुरुषनपुंसक-वेदी होता है ?

४० उत्तर–हे गौतम ! वह स्त्री-वेदी होता है अथवा पुरुष-वेदी होता है अथवा पुरुषनपुंसक-वेदी होता है ।

४१ प्रश्न–हे भगवन् ! वह अवधिज्ञानी सकषायी होता है, या अकषायी ?

४१ उत्तर–हे गौतम ! वह सकषायी होता है अथवा अकषायी होता है ।

४२ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वह अकषायी होता है, तो क्या उपशांत कषायी होता है, या क्षीण कषायी ?

४२ उत्तर–हे गौतम ! वह उपशांत कषायी नहीं होता, किन्तु क्षीण-कषायी होता है ।

४३ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि वह सकषायी होता है, तो कितने कषायों में होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४३ उत्तर-हे गौतम ! वह चार कषाय में, तीन कषाय में, दो कषाय में, या एक कषाय में होता है । यदि चार कषायों में होता है, तो संज्वलन-क्रोध मान, माया और लोभ में होता है । यदि तीन कषायों में होता है, तो संज्वलन मान, माया और लोभ में होता है । यदि दो कषायों में होता है, तो संज्वलन माया और लोभ में होता है । यदि एक कषाय में होता है, तो एक संज्वलन लोभ में होता है ।

४४ प्रश्न-तस्स णं भंते ! केवइया अज्झवसाणा पण्णत्ता ?

४४ उत्तर-गोयमा ! असंखेज्जा; एवं जहा असोच्चाए तहेव जाव केवलवरणाण-दंसणे समुप्पज्जइ ।

४५ प्रश्न-से णं भंते ! केवलिपण्णत्तं धम्मं आघवेज्ज वा, पण्णवेज्ज वा, परूवेज्ज वा ?

४५ उत्तर-हंता, आघवेज्ज वा, पण्णवेज्ज वा, परूवेज्ज वा ।

४६ प्रश्न-से णं भंते ! पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ?

४६ उत्तर-हंता, गोयमा ! पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ।

४७ प्रश्न-तस्स णं भंते ! सिस्सा वि पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ?

४७ उत्तर-हंता, पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ।

४८ प्रश्न-तस्स णं भंते ! पसिस्सा वि पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४८ उत्तर-- हंता, पव्वावेज्ज वा, मुंडावेज्ज वा ।

४९ प्रश्न-से णं भंते ! सिज्झइ बुज्झइ जाव अंतं करेइ ?

४९ उत्तर-हंता, सिज्झइ जाव अंतं करेइ ?

५० प्रश्न-तस्स णं भंते ! सिस्सा वि सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

५० उत्तर-हंता, सिज्झंति जाव अंतं करेंति ।

५१ प्रश्न-तस्स णं भंते ! पसिस्सा वि सिज्झंति जाव अंतं करेंति ?

५१ उत्तर-एवं चेव जाव अंतं करेंति ।

५२ प्रश्न-से णं भंते ! किं उड्ढं होज्जा ?

५२ उत्तर-जहेव असोच्चाए जाव तदेक्कदेसभाए होज्जा ।

५३ प्रश्न-ते णं भंते ! एगसमए णं केवइया होज्जा ?

५३ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं अट्ठसयं, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-'सोच्चा णं केवलिस्स वा, जाव केवलिउवासियाए वा, जाव अत्थेगइए केवलणाणं उप्पाडेज्जा, अत्थेगइए केवलणाणं णो उप्पाडेज्जा ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ णवमसए एगतीसइमो उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ—सिस्सा—शिष्य, **पसिस्सा**—प्रशिष्य (शिष्यों के शिष्य), **अट्ठसयं**—एक सौ आठ।

भावार्थ—४४ प्रश्न—हे भगवन् ! उस अवधिज्ञानी के कितने अध्यवसाय होते हैं ?

४४ उत्तर—हे गौतम ! उसके असंख्यात अध्यवसाय होते हैं। 'असोच्चा केवली' में कहे अनुसार यावत् 'उसे केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न होता है'। वहाँ तक कहना चाहिये।

४५ प्रश्न—हे भगवन् ! वे 'सोच्चा केवली' केवली-प्ररूपित धर्म कहते हैं, जतलाते हैं, प्ररूपित करते हैं ?

४५ उत्तर—हाँ, गौतम ! वे केवलीप्ररूपित धर्म कहते हैं, जतलाते हैं और प्ररूपित करते हैं।

४६ प्रश्न—हे भगवन् ! वे किसी को प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं ?

४६ उत्तर—हां, गौतम ! वे प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं।

४७ प्रश्न—हे भगवन् ! उन सोच्चा केवली के शिष्य भी किसी को प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं ?

४७ उत्तर—हाँ, गौतम ! उनके शिष्य भी प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं।

४८ प्रश्न—हे भगवन् ! उन सोच्चा केवली के प्रशिष्य भी प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं ?

४८ उत्तर—हां, गौतम ! उनके प्रशिष्य भी प्रव्रजित करते हैं, मुण्डित करते हैं।

४९ प्रश्न—हे भगवन् ! वे सोच्चा केवली सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ?

४९ उत्तर—हां, गौतम ! वे सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५० प्रश्न-हे भगवन् ! उनके शिष्य भी सिद्ध होते हैं, यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं ?

५० उत्तर-हां, गौतम ! सिद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ।

५१ प्रश्न-हे भगवन् ! उनके प्रशिष्य भी सिद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ?

५१ उत्तर-हां, गौतम ! सिद्ध होते हैं, यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ।

५२ प्रश्न—हे भगवन् ! वे 'सोच्चा केवली' ऊर्ध्वलोक में होते हैं-इत्यादि प्रश्न ?

५२ उत्तर—हे गौतम ! 'असोच्चा' केवली के विषय में कहे अनुसार जानना चाहिये यावत् 'वे ढ़ाई द्वीप समुद्र के एक भाग में होते हैं'-वहां तक कहना चाहिये ।

५३ प्रश्न-हे भगवन् ! वे सोच्चा केवली एक समय में कितने होते है ?

५३ उत्तर-हे गौतम ! वे एक समय में जघन्य एक, दो, या तीन होते हैं और उत्कृष्ट एक सौ आठ होते हैं । इसलिये हे गौतम ! ऐसा कहा गया है कि 'केवली यावत् केवलिपाक्षिक की उपासिका से धर्म-प्रतिपादक वचन सुनकर यावत् कोई जीव केवलज्ञान केवलदर्शन उत्पन्न करता है और कोई उत्पन्न नहीं करता ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतमस्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन--जिस प्रकार केवली आदि के पास धर्म सुने बिना ही जीव को सम्यग् बोध से लेकर यावत् केवलज्ञान होता है, उसी प्रकार धर्म का श्रवण करने वाले जीव को भी सम्यग् बोध से लेकर यावत् केवलज्ञान उत्पन्न होता है। यही बात उपर्युक्त सभी प्रकरण में बतलाई गई है ।

तेले-तेले की विकट तपस्या करने वाले साधु को अवधिज्ञान उत्पन्न होता है और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वह इतना विस्तृत हो सकता है कि अलोक में भी लोक प्रमाण असंख्यात खण्ड जानने की उसकी शक्ति होती है, किन्तु वहां ज्ञेय पदार्थ न होने से वह जानता-देखता नहीं।

सवेदी को अवधिज्ञान होता है, तो वह पुरुषवेदी, स्त्रीवेदी, पुरुष-नपुसकवेदी को होता है और अवेदी को होता है, तो क्षीणवेदी को होता है, किन्तु उपशान्तवेदी को नहीं होता, क्योंकि आगे इसी अवधिज्ञानी के केवलज्ञान उत्पत्ति का कथन विवक्षित है। इस पाठ से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि चरम शरीरी जीव उस भव में उपशम श्रेणी नहीं करता है। अर्थात् सैद्धान्तिक मान्यता से एक भव में दोनों श्रेणियां नहीं होती है। कर्मग्रन्थ, एक भव में दोनों श्रेणियां मानता है।

सकषायी अकषायी के विषय में भी उपरोक्त प्रकार से स्वयं घटित कर लेना चाहिये।

॥ इति नौवें शतक का इकत्तीसवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ९ उद्देशक ३२

गांगेय प्रश्न—सान्तर निरन्तर उत्पत्ति आदि

१—तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे णामं णयरे होत्था। वण्णओ। दूइपलासए चेइए। सामी समोसढे। परिसा णिग्गया। धम्मो कहिओ। परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं पासावच्चिज्जे गंगेए णामं अणगारे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी—

२ प्रश्न—संतरं भंते ! णेरइया उववज्जंति, णिरंतरं णेरइया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववज्जंति ?

२ उत्तर-गंगेया ! संतरं पि णेरइया उववज्जंति, णिरंतरं पि णेरइया उववज्जंति।

३ प्रश्न-संतरं भंते ! असुरकुमारा उववज्जंति, णिरंतरं असुरकुमारा उववज्जंति ?

३ उत्तर-गंगेया ! संतरं पि असुरकुमारा उववज्जंति, णिरंतरं पि असुरकुमारा उववज्जंति, एवं जाव थणियकुमारा ।

कठिन शब्दार्थ-पासावच्चिज्जे-पार्श्वापत्य-भगवान् पार्श्वनाथ के संतानिये (शिष्यानुशिष्य), **अदूरसामंते**-थोड़ी दूर (अति दूर व अति निकट नहीं), **ठिच्चा**-खड़े रहकर संतरं-अन्तर सहित ।

भावार्थ-१ उस काल उस समय में वाणिज्य-ग्राम नामक नगर था । (वर्णन) वहाँ द्युतिपलाश नामक चैत्य (उद्यान) था । वहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी पधारे। परिषद् वन्दन के लिये निकली । भगवान् ने धर्मोपदेश दिया । परिषद् वापिस चली गई। उस काल उस समय में पुरुषादानीय भगवान् पार्श्वनाथ के शिष्यानुशिष्य गांगेय नामक अनगार थे । वे जहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी थे, वहाँ आये और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के न अति समीप न अति दूर खड़े रहकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से इस प्रकार पूछा-

२ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या नैरयिक सान्तर (अन्तर सहित) उत्पन्न होते हैं, या निरन्तर उत्पन्न होते हैं ?

२ उत्तर-हे गांगेय ! नैरयिक, सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! असुरकुमार सान्तर उत्पन्न होते हैं, या निरन्तर ?

३ उत्तर-हे गांगेय ! वे सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी । इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक जानना चाहिये ।

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

४ प्रश्न-संतरं भंते ! पुढविक्काइया उववज्जंति, णिरंतरं पुढविकाइया उववज्जंति ?

४ उत्तर-गंगेया ! णो संतरं पुढविक्काइया उववज्जंति, णिरंतरं पुढविक्काइया उववज्जंति, एवं जाव वणस्सइकाइया, बेइंदिया जाव वेमाणिया एए जहा णेरइया ।

५ प्रश्न-संतरं भंते ! णेरइया उव्वट्टंति, णिरंतरं णेरइया उव्वट्टंति ?

५ उत्तर-गंगेया ! संतरं पि णेरइया उव्वट्टंति; णिरंतरं पि णेरइया उव्वट्टंति, एवं जाव थणियकुमारा ।

६ प्रश्न-संतरं भंते ! पुढविक्काइया उव्वट्टंति-पुच्छा ।

६ उत्तर-गंगेया ! णो संतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, णिरंतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, एवं जाव वणस्सइकाइया णो संतरं, णिरंतरं उव्वट्टंति ।

७ प्रश्न-संतरं भंते ! बेइंदिया उव्वट्टंति, णिरंतरं बेइंदिया उव्वट्टंति ?

७ उत्तर-गंगेया ! संतरं पि बेइंदिया उव्वट्टंति, णिरंतरं पि बेइंदिया उव्वट्टंति, एवं जाव वाणमंतरा ।

८ प्रश्न-संतरं भंते ! जोइसिया चयंति-पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ उत्तर-गंगेया ! संतरं पि जोइसिया चयंति, णिरंतरं पि जोइसिया चयंति; एवं जाव वेमाणिया वि।

कठिन शब्दार्थ—उव्वट्टंति--निकलते।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, सान्तर उत्पन्न होते हैं, या निरन्तर ?

४ उत्तर-हे गांगेय ! पृथ्वीकायिक जीव, सान्तर उत्पन्न नहीं होते, निरन्तर उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक जानना चाहिये। बेइंद्रिय जीवों से लेकर यावत् वैमानिक देवों तक, नैरयिकों के समान जानना चाहिये।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीव, सान्तर उद्वर्तते (मरते) हैं, या निरन्तर ?

५ उत्तर-हे गांगेय ! नैरयिक जीव, सान्तर भी उद्वर्तते हैं और निरन्तर भी। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिये।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव,सान्तर उद्वर्तते हैं,या निरन्तर?

६ उत्तर-हे गांगेय ! पृथ्वीकायिक जीव, सान्तर नहीं उद्वर्तते, किन्तु निरन्तर उद्वर्तते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक जानना चाहिये-ये सान्तर नहीं, निरन्तर उद्वर्तते हैं

७ प्रश्न-हे भगवन् ! बेइंद्रिय जीव, सान्तर उद्वर्तते हैं, या निरन्तर ?

७ उत्तर-हे गांगेय ! बेइंद्रिय जीव, सान्तर भी उद्वर्तते है और निरन्तर भी। इसी प्रकार यावत् वाणव्यन्तर तक जानना चाहिये।

८ प्रश्न--हे भगवन् ! ज्योतिषी देव, सान्तर चवते हैं, या निरन्तर ?

८ उत्तर-हे गांगेय ! ज्योतिषी देव, सान्तर भी चवते हैं और निरन्तर भी। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये।

विवेचन--जीवों की उत्पत्ति आदि में समयादि काल का जो अन्तर (व्यवधान) होता है, वह 'सान्तर' कहलाता है। एकेन्द्रिय जीव प्रति-समय उत्पन्न होते है और मरते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। इसलिये उनकी उत्पत्ति और उद्वर्तन सान्तर नहीं, निरन्तर होता है। एकेंद्रियों के सिवाय शेष सभी जीवों की उत्पत्ति और मरण में अन्तर संभव है, इसलिये वे सान्तर और निरन्तर दोनों प्रकार से उत्पन्न होते हैं और मरते हैं।

गांगेय प्रश्न-प्रवेशनक

९ प्रश्न-कइविहे णं भंते ! पवेसणए पण्णत्ते ।

९ उत्तर-गंगेया ! चउव्विहे पवेसणए पण्णत्ते, तं जहा-णेरइय-पवेसणए, तिरिक्खजोणियपवेसणए, मणुस्सपवेसणए, देवपवेसणए ।

१० प्रश्न-णेरइयपवेसणए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

१० उत्तर-गंगेया ! सत्तविहे पण्णत्ते, तं जहा-रयणप्पभा-पुढविणेरइयपवेसणए, जाव अहेसत्तमापुढविणेरइयपवेसणए ।

११ प्रश्न-एगे णं भंते ! णेरइए णेरइयपवेसणएणं पविसमाणे किं रयणप्पभाए होज्जा, सक्करप्पभाए होज्जा, जाव अहे सत्तमाए होज्जा ?

११ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्त-माए वा होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-पवेसणए-प्रवेशनक (एक गति से दूसरी गति में प्रवेश करना-जाना)।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रवेशनक (उत्पाद-उत्पत्ति) कितने प्रकार का कहा गया है ?

उत्तर-हे गांगेय ! प्रवेशनक चार प्रकार का कहा गया है। यथा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक प्रवेशनक, तिर्यञ्चयोनिक प्रवेशनक, मनुष्य प्रवेशनक और देव प्रवेशनक।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

१० उत्तर-हे गांगेय ! सात प्रकार का कहा गया है। यथा-रत्नप्रभा-पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक यावत् अधःसप्तम पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! एक नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ क्या रत्नप्रभा पृथ्वी में होता है, या शर्कराप्रभा पृथ्वी अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होता है ?

११ उत्तर-हे गांगेय ! वह रत्नप्रभा पृथ्वी में होता है, या यावत् अधः-सप्तम पृथ्वी में होता है।

विवेचन-एक गति से मरकर दूसरी गति में उत्पन्न होना-'प्रवेशनक' कहलाता है। एक नैरयिक जीव रत्नप्रभा आदि नरकों में उत्पन्न हो, तो उसके सात विकल्प होते हैं। यथा-(१) या तो वह रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होता है, (२) या शर्कराप्रभा में। इसी प्रकार आगे एक-एक पृथ्वी में यावत् अथवा अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होता है। इस प्रकार सात विकल्प होते हैं और ये सात ही भंग होते हैं। उत्कृष्ट प्रवेशनक को छोड़कर सभी नरक स्थान में असंयोगी सात विकल्प हैं; इसलिए सात ही भंग होते हैं।

२

१२ प्रश्न-दो भंते ! णेरइया णेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा, जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?

१२ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा, जाव एगे रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा, जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। एवं एक्केक्का पुढवी छड्डेयव्वा, जाव अहवा एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

कठिन शब्दार्थ-छड्डेयव्वा-छोड़ देना चाहिये, **अहवा**-अथवा।

भावार्थ-१२ प्रश्न- हे भगवन् ! दो नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में ?

१२ उत्तर-हे गांगेय ! वे दोनों (१) रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं, अथवा (२-७) यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं अथवा (८) एक रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होता है और एक शर्कराप्रभा पृथ्वी में, (९) अथवा एक रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होता है और एक वालुकाप्रभा पृथ्वी में। (१०-१४) अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में उत्पन्न होता है और एक अधःसप्तम पृथ्वी में। (एक रत्नप्रभा में उत्पन्न होता है और एक पंकप्रभा में, या एक रत्नप्रभा में और एक धूमप्रभा में, या एक रत्नप्रभा में और एक तमःप्रभा में या एक रत्नप्रभा में और एक तमस्तमः प्रभा में उत्पन्न होता है। इस प्रकार रत्न-प्रभा के साथ छह विकल्प होते हैं)।

अथवा एक शर्कराप्रभा पृथ्वी में होता है और एक वालुकाप्रभा में, अथवा यावत् एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होता है, (एक शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में, या एक शर्कराप्रभा में और एक पंकप्रभा में, या एक शर्कराप्रभा में और एक धूमप्रभा में, या एक शर्करा-प्रभा में और एक तमःप्रभा में, या एक शर्कराप्रभा में और एक तमःतमःप्रभा में उत्पन्न होता है। इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ पांच विकल्प होते हैं।)। अथवा एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में। (अथवा एक वालुकाप्रभा में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और एक धूमप्रभा में। या एक वालुकाप्रभा में और एक तमःप्रभा में।) इस प्रकार यावत् एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होता है।

इस प्रकार पूर्व पूर्व की एक एक पृथ्वी छोड़ देनी चाहिये यावत् एक तमःप्रभा में, और एक अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होता है। (वालुकाप्रभा के साथ चार विकल्प, पंकप्रभा के साथ तीन विकल्प और धूमप्रभा के साथ दो विकल्प होते हैं।

विवेचन-दो नैरयिक-जीवों के अट्ठाईस विकल्प होते हैं। उनमें से एक एक नरक में दोनों नैरयिक साथ उत्पन्न होने की अपेक्षा सात भंग होते हैं। नरकों में एक एक नैरयिक की उत्पत्ति की अपेक्षा द्विक-संयोगी इक्कीस भंग होते हैं। जिनमें रत्नप्रभा के साथ छह शर्कराप्रभा के साथ पांच, वालुकाप्रभा के साथ चार, पंकप्रभा के साथ तीन, धूमप्रभा के साथ दो और तमःप्रभा के साथ एक विकल्प होता है। इस प्रकार द्विक संयोगी कुल इक्कीस विकल्प तथा भंग होते हैं। असंयोगी (अकेले) सात भंग होते हैं। ये सभी मिलाकर दो जीव की अपेक्षा अट्ठाईस (२१ + ७ = २८) भंग होते हैं।

३

१३-प्रश्न-तिण्णि भंते ! णेरइया णेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा, जाव अहेसत्तमाए होज्जा ?

१३ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहवा दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा दो सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। एवं जहा सक्करप्पभाए वत्तव्वया भणिया, तहा सव्वपुढवीणं भाणियव्वं, जाव अहवा दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे

सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा, जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा; अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

भावार्थ–१३ प्रश्न—हे भगवन् ! नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए तीन नैरयिक क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं ?

१३ उत्तर–हे गांगेय ! वे तीन नैरयिक रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में दो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शर्कराप्रभा में। अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार १–२ का रत्नप्रभा के साथ अनुक्रम से दूसरी नरकों के साथ संयोग करने से छह भंग होते है।)

अथवा दो नैरयिक रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में उत्पन्न होता है। अथवा यावत् दो जीव रत्नप्रभा में और एक जीव अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार २–१ के भी पूर्ववत् छह भंग होते हैं) अथवा एक शर्कराप्रभा में दो वालुकाप्रभा में होते हैं। अथवा यावत् एक शर्कराप्रभा में और दो अधः-सप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ १–२ के पांच भंग होते हैं।) अथवा दो शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है। अथवा यावत् दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तमपृथ्वी में उत्पन्न होता है। (इस प्रकार २–१ के पूर्ववत् पांच भंग होते हैं।) जिस प्रकार शर्कराप्रभा की वक्त-व्यता कही, उसी प्रकार सातों नरकों की वक्तव्यता जाननी चाहिये। अथवा यावत् दो तमःप्रभा में और एक तमस्तमः प्रभा में होता है। यहाँ तक जानना चाहिये। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है, अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार रत्नप्रभा के और शर्कराप्रभा के साथ पांच विकल्प होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। इस प्रकार यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार शर्कराप्रभा को छोड़ देने पर चार विकल्प होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है, अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार वालुकाप्रभा को छोड़ देने पर तीन विकल्प होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। अथवा एक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है (इस प्रकार पंकप्रभा को छोड़ देने पर दो विकल्प होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (धूमप्रभा को छोड़ने पर यह एक विकल्प होता है। इस प्रकार रत्नप्रभा के ५-४-३-२-१ = १५ विकल्प होते हैं) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है। अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। अथवा यावत् एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है (इस प्रकार शर्कराप्रभा और वालुकाप्रभा के साथ चार विकल्प होते हैं।) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता ह। अथवा यावत् एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार वालुकाप्रभा को छोड़ने पर तीन विकल्प होते हैं।) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा को छोड़ देने पर दो विकल्प बनते हैं।) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार धूमप्रभा को छोड़ देने पर एक विकल्प बनता है। इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ ४-३-२-१ = ये १० विकल्प होते हैं।) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। अथवा एक वालुकप्राभा में एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार वालुकाप्रभा और पंकप्रभा के साथ तीन विकल्प होते हैं।) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा को छोड़ने पर दो विकल्प बनते हैं। (अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार धूमप्रभा को छोड़ने पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक विकल्प बनता है। इस प्रकार वालुकाप्रभा के साथ ३-२-१ = ये ६ विकल्प होते हैं।) अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा और धूमप्रभा के साथ दो विकल्प होते हैं।) अथवा एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार पंकप्रभा के साथ २-१ = ये ३ विकल्प होते हैं।) अथवा एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार धूम-प्रभा पृथ्वी के साथ एक विकल्प होता है। (१५-१०-६-३-१ ये सब मिलकर त्रिक-संयोगी पैंतीस विकल्प तथा पैंतीस ही भंग होते हैं।

विवेचन-यदि तीन जीव नरक में उत्पन्न होवें तो उनके असंयोगी (एक-एक) ७, द्विक संयोगी ४२ और त्रिक संयोगी ३५, ये सब ८४ भंग होते हैं। जो ऊपर बतला दिये गये हैं।

४

१४ प्रश्न-चत्तारि भंते ! णेरइया णेरइयपवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा-पुच्छा।

१४ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा।

अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए होज्जा, अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयण-प्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे सक्करप्प-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाए होज्जा; एवं जाव अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे अहेसत्त-माए होज्जा । अहवा एगे सक्करप्पभाए तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जहेव रयणप्पभाए उवरिमाहिं समं चारियं तहा सक्क-रप्पभाए वि उवरिमाहिं समं चारेयव्वं; एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वं, जाव अहवा तिण्णि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६३ ।

कठिन शब्दार्थ-पविसमाणा-प्रवेश करते हुए ।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए चार नैरयिक जीव रत्नप्रभा में उत्पन्न होते है, इत्यादि प्रश्न ।

१४ उत्तर-हे गांगेय ! वे चार जीव, रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं । (इस प्रकार असंयोगी सात विकल्प और सात ही भंग होते हैं ।)

(द्विक संयोगी त्रेसठ भंग)-अथवा एक रत्नप्रभा में और तीन शर्कराप्रभा होते हैं । अथवा एक रत्नप्रभा में और तीन वालुकाप्रभा में होते हैं । इस प्रकार अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में और तीन अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं । (इस प्रकार १-३ के छह भंग हुए) अथवा दो रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में होते है । इस प्रकार अथवा यावत् दो रत्नप्रभा में और दो अधः-सप्तम पृथ्वी में होते हैं । (इस प्रकार २-२ के छह भंग होते हैं ।) अथवा तीन रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में होता है । इस प्रकार अथवा यावत् तीन रत्नप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है । (इस प्रकार ३-१ के छह भंग होते हैं । इस प्रकार रत्नप्रभा के साथ अठारह भंग होते हैं ।) अथवा एक शर्कराप्रभा में और तीन वालुकाप्रभा में होते है । जिस प्रकार रत्नप्रभा का आगे की नरकों के साथ संचार (योग) किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा का भी उसके आगे की नरकों के साथ संचार करना चाहिये । इस प्रकार एक एक नरक के साथ योग करना चाहिये अथवा यावत् तीन तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी में होता है। (इस तरह ये द्विक संयोगी त्रेसठ भंग हुए।)

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए दो पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। एवं एएणं गमएणं जहा तिण्हं तियसंजोगो तहा भाणियव्वो; जाव अहवा दो धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०५।

कठिन शब्दार्थ-एएणं-इस प्रकार, गमएणं-गमक (पाठ) से, तिय संजोगो-त्रिक संयोग।

(त्रिक संयोगी १०५ भंग-) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो वालुकाप्रभा में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार १-१-२ के पांच

भंग होते हैं ।) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है । इस प्रकार एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार १-२-१ के पांच भंग होते हैं।) अथवा दो रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है । इसी प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार २-१-१ के पांच भंग होते हैं। तीनों को मिलाकर पन्द्रह भंग होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। इसी अभिलाप द्वारा जिस प्रकार तीन नैरयिकों के त्रिक संयोगी भंग कहे, उसी प्रकार चार नैरयिकों के भी त्रिक संयोगी भंग जानना चाहिये यावत् दो धूमप्रभा में एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये त्रिक संयोगी १०५ भंग हुए।)

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा १; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए होज्जा ३; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ४; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा ५; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा ६; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ७; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ८; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा ११; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा १२; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा १४; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १६; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा १७; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा २०; अहवा एगे सक्क-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा २१। एवं जहा रयणप्पभाए उवरिमाओ पुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाए वि उवरिमाओ चारियव्वाओ; जाव अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३०। अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ३१; अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३२, अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३३, अहवा एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३४, अहवा एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३५।

(चतुः संयोगी पैंतीस भंग)-(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये चार भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(ये तीन भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये दो भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है (यह एक भंग होता है।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये तीन भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये दो भंग होते हैं।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग होता है।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये दो भंग होते हैं) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग होता है।) (१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (यह एक भंग होता है। इस प्रकार रत्नप्रभा के संयोग वाले ४-३-२-१ ३-२-१-२-१-१ = २० भंग होते हैं।) (१) अथवा शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। जिस प्रकार रत्नप्रभा का आगे की पृथ्वियों के साथ संचार (योग) किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा का उसके आगे की पृथ्वियों के साथ योग करना चाहिये यावत् अथवा एक शर्करा प्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। (शर्कराप्रभा के संयोग वाले दस भंग होते हैं।) (१) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (३) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (४) अथवा एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार वालुकाप्रभा के संयोग वाले चार भंग होते हैं।) (१) अथवा एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार यह एक भंग होता है। ये २०-१०-४-१-ये चतुःसंयोगी ३५ भंग होते हैं। सब मिलकर चार नैरयिक आश्रयी असंयोगी ७, द्विक संयोगी ६३, त्रिक संयोगी १०५ और चतुःसंयोगी ३५, ये सब २१० भंग होते हैं।)

विवेचन—चार नैरयिक जीवों के १-३, २-२, ३-१, इस प्रकार एक विकल्प के द्विक संयोगी तीन भंग होते हैं। उनमें से रत्नप्रभा के साथ शेष पृथ्वियों का संयोग करने से १-३ के छह भंग होते हैं। इसी प्रकार २-२ के छह भंग और ३-१ के छह भंग होते हैं। इस प्रकार ये अठारह भंग होते हैं। शर्कराप्रभा के साथ उसी प्रकार तीन विकल्प के ५-५-५ ये पन्द्रह भंग होते हैं। इस प्रकार वालुकाप्रभा के साथ ४-४-४-ये बारह भंग होते हैं। इसी प्रकार पंकप्रभा के साथ ३-३-३-ये नौ, धूमप्रभा के साथ २-२-२-ये छह, और तमःप्रभा के साथ १-१-१-ये तीन भंग होते हैं। सभी मिलकर द्विकसंयोगी त्रेसठ भंग होते हैं। उनमें से रत्नप्रभा के अठारह भंग ऊपर मूल अनुवाद में बतला दिये गये है। इसी प्रकार शर्कराप्रभा के साथ आगे की पृथ्वियों का योग करने से १-३ के पांच भंग होते हैं। यथा—एक शर्कराप्रभा में और तीन वालुकाप्रभा आदि में होते हैं। इसी तरह २-२ के भी पांच भंग होते हैं। यथा—दो शर्कराप्रभा में और दो वालुकाप्रभा आदि में होते हैं। इसी प्रकार ३-१ के भी पांच भंग होते हैं। यथा—तीन शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा आदि में होता है। इस प्रकार शर्कराप्रभा के साथ पन्द्रह भंग होते हैं। वालुकाप्रभा के साथ आगे की पृथ्वियों का संयोग करने से चार विकल्प होते हैं। उनको पूर्वोक्त तीन भंगों से गुणा करने पर बारह भंग होते हैं। इसी प्रकार पंकप्रभा के साथ आगे की पृथ्वियों का योग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करने पर एवं तीन विकल्पों से गुणा करने पर नव भंग होते हैं। इसी प्रकार धूमप्रभा के साथ छह भंग और तमःप्रभा के साथ तीन भंग होते हैं। इस प्रकार आगे की पृथ्वियों के साथ योग करने पर ऊपर कहे अनुसार रत्नप्रभा के १८, शर्कराप्रभा के १५, बालुकाप्रभा के १२, पंकप्रभा के ९, धूमप्रभा के ६ और तमःप्रभा के ३-ये सभी मिलकर चार नैरयिकों के द्विकसंयोगी ६३ (त्रेसठ) भंग होते हैं।

चार नैरयिकों के त्रिकसंयोगी एक सौ पांच भंग होते हैं। यथा-चार नैरयिकों के १-१-२, १-२-१ और २-१-१-ये तीन भंग एक विकल्प के होते हैं। इनको रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा के साथ बालुकाप्रभादि आगे की पृथ्वियों का योग करने पर पांच विकल्प होते हैं। पूर्वोक्त तीन भंगों के साथ गुणा करने से पन्द्रह भंग होते हैं। इसी प्रकार इन तीन भंगों द्वारा रत्नप्रभा और बालुकाप्रभा-इन दोनों का आगे की पृथ्वियों के साथ संयोग करने पर कुल बारह भंग होते हैं। रत्नप्रभा और पंकप्रभा के साथ शेष पृथ्वियों का संयोग करने पर कुल नौ भंग होते हैं। रत्नप्रभा और धूमप्रभा के साथ संयोग करने पर छह, तथा रत्नप्रभा और तमःप्रभा के साथ संयोग करने पर तीन भंग होते हैं। इस प्रकार रत्नप्रभा के संयोग वाले १५, १२, ९, ६ और ३-ये कुल ४५ भंग होते हैं। पूर्वोक्त तीन भंगों द्वारा शर्कराप्रभा और बालुकाप्रभा के साथ संयोग करने पर बारह, शर्कराप्रभा और पंकप्रभा के साथ संयोग करने पर नौ, शर्कराप्रभा और धूमप्रभा के साथ संयोग करने पर छह, शर्कराप्रभा और तमःप्रभा के साथ संयोग करने पर तीन भंग होते हैं। इस प्रकार शर्कराप्रभा के संयोग वाले १२, ९, ६, ३-ये सब तीस भंग होते हैं। पूर्वोक्त तीन भंगों द्वारा बालुकाप्रभा और पंकप्रभा का शेष पृथ्वियों के साथ संयोग करने पर नौ, बालुकाप्रभा और धूमप्रभा के साथ छह, बालुकाप्रभा और तमःप्रभा के साथ संयोग करने पर तीन भंग होते हैं। इस प्रकार बालुकाप्रभा के संयोग वाले नौ, छह, तीन-ये अठारह भंग होते हैं। पूर्वोक्त तीन भंगों द्वारा पंकप्रभा और धूमप्रभा के साथ शेष का संयोग करने पर छह तथा पंकप्रभा और तमःप्रभा के साथ संयोग करने पर तीन भंग होते हैं। इस प्रकार पंकप्रभा के संयोग वाले छह और तीन ये नौ भंग होते हैं। पूर्वोक्त तीन भंगों द्वारा धूमप्रभा और तमःप्रभा के साथ संयोग करने पर तीन भंग होते हैं। इस प्रकार ४५, ३०, १८, ९ और ३, ये सभी मिलकर त्रिकसंयोगी १०५ भंग होते हैं।

उपर्युक्त रीति के अनुसार चार नैरयिकों के चतुःसंयोगी पैंतीस भंग होते हैं। इस प्रकार असंयोगी ७ द्विकसंयोगी ६३, त्रिकसंयोगी १०५ और चतुःसंयोगी ३५ (जो कि भावार्थ में बतला दिये हैं) ये सभी मिलकर चार नैरयिक की अपेक्षा २१० भंग होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५

१५ प्रश्न-पंच भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा-पुच्छा ।

१५ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ।

अहवा एगे रयणप्पभाए चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा दो रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए तिण्णि अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा तिण्णि रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा चत्तारि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा चत्तारि रयणप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे सक्करप्पभाए चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा । एवं जहा रयणप्पभाए समं उवरिमपुढवीओ चारियाओ तहा सक्करप्पभाए वि समं चारेयव्वाओ, जाव अहवा चत्तारि सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; एवं एक्केक्काए समं चारेयव्वाओ, जाव अहवा चत्तारि तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-चारियाओ-संयोग किया है, चारियव्वाओ-संयोग करना चाहिये ।

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! पांच नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक

द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं,—इत्यादि प्रश्न।

१५ उत्तर—हे गांगेय! रत्नप्रभा में होते हैं अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार—असंयोगी सात भंग होते हैं।)

(द्विक संयोगी ८४ भंग)—अथवा एक रत्नप्रभा में और चार शर्कराप्रभा में होते हैं। अथवा यावत् एक रत्नप्रभा में और चार अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार 'एक और चार' से रत्नप्रभा के साथ शेष पृथ्वियों का योग करने पर छह भंग होते हैं।) (१) अथवा दो रत्नप्रभा में और तीन शर्कराप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में और तीन अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार 'दो और तीन' के छह भंग होते हैं।) अथवा तीन रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् तीन रत्नप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं (इस प्रकार 'तीन और दो' से छह भंग होते हैं।) अथवा चार रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में होता हैं। यावत् चार रत्नप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार 'चार और एक' से छह भंग होते हैं। रत्नप्रभा के संयोग से ये कुल चौबीस भंग होते हैं।) अथवा एक शर्कराप्रभा में और चार वालुकाप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा के साथ आगे की पृथ्वियों का संयोग किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा के साथ संयोग करने से बीस भंग होते हैं। अथवा यावत् चार शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। इस प्रकार वालुकाप्रभा आदि एक एक पृथ्वी के साथ योग करना चाहिये। यावत् चार तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये द्विक संयोगी के चौरासी भंग होते हैं।)

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए तिण्णि अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्क-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहेसत्तमाए। अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए तिण्णि पंकप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं जहा चउण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा पंचण्ह वि तियासंजोगो भाणियव्वो; णवरं तत्थ एगो संचारिज्जइ इह दोण्णि, सेसं तं चेव, जाव अहवा तिण्णि धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

(त्रिक संयोगी २१० भंग) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और तीन वालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और तीन अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार 'एक, एक, तीन' के पांच भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और दो वालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा

में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार 'एक, दो, दो' के पांच भंग होते हैं।) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो वालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और दो अधः-सप्तम पृथ्वी में होते हैं। (इस प्रकार 'दो, एक, दो' के पांच भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है। इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार 'एक, तीन, एक' के पांच भंग होते हैं।) अथवा दो रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है। इस प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार 'दो, दो, एक' के पांच भंग होते हैं।) अथवा तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है। इस प्रकार यावत् तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (इस प्रकार 'तीन, एक, एक' के पांच भंग होते हैं) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और तीन पंकप्रभा में होते हैं। इस क्रम से जिस प्रकार चार नैरयिक जीवों के त्रिक संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार पांच नैरयिकों के भी त्रिक संयोगी भंग जानना चाहिये। परन्तु यहां 'एक' के स्थान में 'दो' का संचार करना चाहिये। शेष सभी पूर्वोक्त जान लेना चाहिये यावत् तीन धूमप्रभा में एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। यहां तक कहना चाहिये। (ये त्रिक संयोगी २१० भंग होते हैं।)

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए दो पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए दो अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए दो वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होज्जा; एवं जाव अहेसत्तमाए । अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए दो धूमप्पभाए होज्जा; एवं जहा चउण्हं चउक्कसंजोगो भणिओ तहा पंचण्ह वि चउक्कसंजोगो भाणियव्वो, णवरं अब्भहियं एगो संचारेयव्वो, एवं जाव अहवा दो पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

(चतुःसंयोगी १४० भंग)—अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और दो पंकप्रभा में होते हैं । इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और दो अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं । (ये चार भंग होते हैं ।) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, दो वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है । इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, दो वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है । (ये चार भंग होते हैं ।) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है । इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है । (ये चार भंग होते हैं ।) अथवा दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक पंकप्रभा में होता है । इस प्रकार यावत् दो रत्न-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (ये चार भंग होते हैं।) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में और दो धूमप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार चार नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार पांच नैरयिक जीवों के भी चतुःसंयोगी भंग कहना चाहिये, परन्तु यहां एक अधिक का संचार (संयोग) करना चाहिये। इस प्रकार यावत् दो पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। यहाँ तक कहना चाहिये। (ये चतुःसंयोगी १४० भंग होते हैं।)

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए होज्जा १; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए होज्जा २; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव एगे पंकप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ३; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ४; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ५; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ६; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ७; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ८;

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ९, अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १०; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए धूमप्पभाए एगे तमाए होज्जा ११; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १२; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे तमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १३; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १४; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे पंकप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा १५, अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे तमाए होज्जा १६; अहवा एगे सक्करप्पभाए जाव एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १७; अहवा एगे सक्करप्पभाए जाव एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १८; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा १९; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २०; अहवा एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा २१।

(पंच संयोगी इक्कीस भंग) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक धूमप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में यावत् एक पंकप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता हैं। (६) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (७) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक तमःप्रभा में होता है। (८) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (९) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१०) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (११) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, और एक तमःप्रभा में होता है। (१२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१३) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१४) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक पंकप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१६) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, यावत् एक तमःप्रभा में होता हैं। (१७) अथवा एक शर्कराप्रभा में, यावत् एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (१८) अथवा एक शर्कराप्रभा में, यावत् एक पंकप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। (१९) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (२०) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में, यावत् एक अधः सप्तम पृथ्वी में होता है। (२१) अथवा एक वालुकाप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है।

विवेचन–पांच नैरयिक जीवों के द्विक संयोगी १-४। २-३। ३-२। ४-१। इस प्रकार एक विकल्प के स्थान में चार भंग होते हैं। रत्नप्रभा के द्विक संयोगी छह भंगों के साथ चार से गुणा करने पर चौबीस भंग होते हैं। शर्कराप्रभा के साथ पूर्वोक्त रीति से द्विक संयोगी बीस भंग होते हैं। बालुकाप्रभा के साथ १६, पंकप्रभा के साथ १२, धूमप्रभा के साथ ८ भंग और तमःप्रभा के साथ ४ भंग होते हैं। इस प्रकार २४, २०, १६, १२, ८, ४–ये सभी मिलकर द्विक संयोगी ८४ भंग होते हैं।

पांच नैरयिक जीवों के त्रिक संयोगी एक विकल्प के छह भंग होते हैं। यथा–१-१-३। १-२-२। २-१-२। १-३-१। २-२-१। ३-१-१। सात नरकों के त्रिक-संयोगी पैंतीस विकल्प होते हैं। उन प्रत्येक को छह भंगों से गुणा करने पर पांच नैरयिक जीवों आश्रयी त्रिक-संयोगी २१० भंग होते हैं। इनमें से रत्नप्रभा के संयोग वाले ९०, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ६०, वालुकाप्रभा के संयोग वाले ३६, पंकप्रभा के संयोग वाले १८ और धूमप्रभा के संयोग वाले ६ भंग होते हैं—ये सभी मिलकर २१० भंग होते हैं।

पांच नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी १-१-१-२। १-१-२-१। १-२-१-१। २-१-१-१। ये एक विकल्प के चार भंग होते हैं। सात नरकों के चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्प होते हैं। इन पैंतीस को चार से गुणा करने पर १४० भंग होते हैं। यथा–रत्नप्रभा के संयोग वाले ८०, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ४०, बालुकाप्रभा के संयोग वाले १६ और पंकप्रभा के संयोग वाले ४। ये सभी मिलकर पांच नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी १४० भंग होते हैं। पांच नैरयिकों के पांच संयोगी १-१-१-१-१। इस प्रकार एक विकल्प का एक ही भंग होता है। इसके द्वारा सात नरकों के पांच संयोगी २१ ही विकल्प और इक्कीस ही भंग होते हैं। जिनमें से रत्नप्रभा के संयोग वाले १५, शर्कराप्रभा के संयोग वाले ५ और बालुकाप्रभा के संयोग वाला १ भंग होता है। ये सभी मिलकर पांच संयोगी २१ भंग होते हैं। असंयोगी ७, द्विक-संयोगी ८४, त्रिक-संयोगी २१०, चतुःसंयोगी १४० और पंचसंयोगी २१। ये सभी मिलकर पांच नैरयिक जीवों के कुल ४६२ (७+८४+२१०+१४०+२१=४६२) भंग होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६

१६ प्रश्न- छब्भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं रयणप्पभाए होज्जा-पुच्छा ।

१६ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा ।

अहवा एगे रयणप्पभाए पंच सक्करप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए पंच वालुयप्पभाए होज्जा, जाव अहवा एगे रयणप्पभाए पंच अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा दो रयणप्पभाए चत्तारि सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा दो रयणप्पभाए चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा तिण्णि रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए, एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं दुयासंजोगो तहा छण्ह वि भाणियव्वो, णवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, जाव अहवा पंच तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-अब्भहिओ-अधिक, संचारेयव्वो-गिनना चाहिए ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! छह नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ।

१६ उत्तर-हे गांगेय ! वे रत्नप्रभा में होते हैं अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं । (ये असंयोगी सात भंग होते हैं ।)

(द्विक संयोगी १०५ भंग)-(१) अथवा एक रत्नप्रभा में और पांच शर्कराप्रभा में होते हैं । (२) अथवा एक रत्नप्रभा में और पांच वालुकाप्रभा में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं। अथवा यावत् (६) एक रत्नप्रभा में और पांच अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा दो रत्नप्रभा में और चार शर्कराप्रभा में होते है। अथवा यावत् (६) दो रत्नप्रभा में और चार अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा तीन रत्नप्रभा में और तीन शर्कराप्रभा में होते हैं। इस क्रम द्वारा जिस प्रकार पांच नैरयिक जीवों के द्विक-संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार छह नैरयिकों के भी कहना चाहिये, परन्तु यहां एक अधिक का संचार करना चाहिये यावत् (१०५) अथवा पांच तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है।

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए चत्तारि वालुयप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए चत्तारि पंकप्पभाए होज्जा, एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए चत्तारि अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए तिण्णि वालुयप्पभाए होज्जा, एवं एएणं कमेणं जहा पंचण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा छण्ह वि भाणियव्वो, णवरं एक्को अहिओ उच्चारेयव्वो, सेसं तं चेव। चउक्कसंजोगो वि तहेव, पंचगसंजोगो वि तहेव, णवरं एक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, जाव पच्छिमो भंगो, अहवा दो वालुयप्पभाए एगे पंकप्पभाए एगे धूमप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

(त्रिक संयोगी ३५० भंग)-(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और चार वालुकाप्रभा में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और चार पंकप्रभा में होते हं। इस प्रकार यावत् (५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और चार अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और तीन वालुकाप्रभा में होते हैं। इस क्रम से जिस प्रकार पांच नैरयिक जीवों के त्रिक-संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार छह नैरयिक जीवों के भी त्रिक-संयोगी भंग कहना चाहिये, परन्तु यहां एक का संचार अधिक करना चाहिये। शेष सभी पूर्ववत् कहना चाहिये। (इस प्रकार ये ३५० भंग होते हैं।)

(पंच संयोगी १०५ भंग)—जिस प्रकार पांच नैरयिकों के भंग कहे गये, उसी प्रकार छह नैरयिकों के चतुःसंयोगी और पंच-संयोगी भंग जान लेने चाहिये, परन्तु इनमें एक नैरयिक का सचार अधिक करना चाहिये। यावत् अन्तिम भंग इस प्रकार है—दो वालुकाप्रभा में, एक पंकप्रभा में, एक धूमप्रभा में, एक तमःप्रभा में और एक तमस्तमःप्रभा में होता है।

अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए जाव एगे तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव एगे धूमप्पभाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव एगे पंकप्पभाए एगे तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव एगे वालुयप्पभाए एगे धूमप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे पंकप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए, जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

(छह संयोगी सात भंग)—(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक तमःप्रभा में होता है। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, यावत्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक धूमप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (३) अथवा एक रत्नप्रभा में यावत् एक पंकप्रभा में एक तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (४) अथवा एक रत्नप्रभा में यावत् एक वालुकाप्रभा में, एक धूमप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (५) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक पंकप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (६) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। (७) अथवा एक शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है।

विवेचन-छह नैरयिकों के द्विक-संयोगी विकल्प के पांच भंग होते हैं। यथा-१-५। २-४। ३-३। ४-२। ५-१। इन पाँच भंगों द्वारा सात नरकों के द्विक-संयोगी २१ विकल्पों को गुणा करने से १०५ भंग होते हैं। यथा-रत्नप्रभा के संयोग वाले ३०, शर्कराप्रभा के संयोग वाले २५, वालुकाप्रभा के संयोग वाले २०, पंकप्रभा के संयोग वाले १५, धूमप्रभा के संयोग वाले १०, तमःप्रभा के संयोग वाले ५ भंग होते हैं। ये सभी मिलकर १०५ (३०+२५+२०+१५+१०+५=१०५) भंग होते हैं। छह नैरयिकों के त्रिक-संयोगी एक विकल्प के १० भंग होते हैं। यथा-१-१-४। १-२-३। २-१-३। १-३-२। २-२-२। ३-१-२। १-४-१। २-३-१। ३-२-१। ४-१-१। सात नरकों के त्रिक-संयोगी ३५ विकल्प पूर्वोक्त प्रकार से होते हैं, जो कि पांच नैरयिकों के त्रिक-संयोगी भंगों के प्रसंग में वतला दिये गये हैं। उन पैंतीस को दस भंगों से गुणा करने पर तीन सौ पचास भंग होते हैं।

छह नैरयिकों के चतुःसंयोगी एक विकल्प के दस भंग होते हैं। यथा-१-१-१-३। १-१-२-२। १-२-१-२। २-१-१-२। १-१-३-१। १-२-२-१। २-१-२-१। १-३-१-१। २-२-१-१। ३-१-१-१। इन दस भंगों द्वारा चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से तीन सौ पचास भंग होते हैं।

छह नैरयिक जीवों के पंचसंयोगी एक विकल्प के पांच भंग होते हैं। यथा-१-१-१-१-२। १-१-१-२-१। १-१-२-१-१। १-२-१-१-१। २-१-१-१-१। इन पांच भंगों द्वारा सात नरकों के पंच संयोगी इक्कीस विकल्पों को गुणा करने से एक सौ पांच भंग बनते हैं।

छह नैरयिक जीवों का छह संयोगी एक ही विकल्प होता है। उसके द्वारा सात नरकों के छह संयोगी सात भंग होते हैं। इस प्रकार छह नैरयिकों के असंयोगी ७, द्विक-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संयोगी १०५ त्रिक-संयोगी ३५०, चतुःसंयोगी ३५०, पंचसंयोगी १०५ और छह संयोगी ७। ये सभी मिलकर ९२४ भंग होते हैं।

७

१७ प्रश्न-सत्त भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा० पुच्छा।

१७ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए छ सक्करप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं जहा छण्हं दुयासंजोगो तहा सत्तण्ह वि भाणियव्वं; णवरं एगो अब्भहिओ संचारिज्जइ, सेसं तं चेव। तियासंजोगो, चउक्कसंजोगो, पंचसंजोगो, छक्कसंजोगो य छण्हं जहा तहा सत्तण्ह वि भाणियव्वं, णवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, जाव छक्कगसंजोगो। अहवा दो सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा।

कठिन शब्दार्थ--दुयासंजोगो--द्विक-संयोग।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! सात नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न।

१७ उत्तर-हे गांगेय ! वे सातों नैरयिक रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं-ये असंयोगी सात विकल्प होते हैं।

अथवा एक रत्नप्रभा में और छह शर्कराप्रभा में होते हैं। इस क्रम से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जिस प्रकार छह नैरयिक जीवों के द्विक-संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार सात नैरयिकों के भी जानने चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि यहां एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये। शेष सभी पूर्ववत् जानना चाहिये। जिस प्रकार छह नैरयिक जीवों के त्रिक संयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी और षट्संयोगी भंग कहे, उसी प्रकार सात नैरयिकों के विषय में भी जानना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि यहां एक एक नैरयिक जीव का अधिक संचार करना चाहिये। यावत् षट्संयोगी का अन्तिम भंग इस प्रकार कहना चाहिये। अथवा दो शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है। यहां तक जानना चाहिये। (सात संयोगी एक भंग।) अथवा एक रत्नप्रभा में एक शर्कराप्रभा में, यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है।

विवेचन-सात नैरयिकों के द्विक संयोगी एक विकल्प के छह भंग होते हैं। यथा-१-६। २-५। ३-४। ४-३। ५-२। ६-१। इन छह भंगों द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के द्विकसंयोगी २१ विकल्पों को गुणा करने से सात नैरयिक सम्बन्धी द्विकसंयोगी १२६ भंग होते हैं।

सात नैरयिकों के त्रिक संयोगी एक विकल्प के १५ भंग होते हैं। यथा-१-१-५। १-२-४। २-१-४। १-३-३। २-२-३। ३-१-३। १-४-२। २-३-२। ३-२-२। ४-१-२। १-५-१। २-४-१। ३-३-१। ४-२-१। ५-१-१। इन पन्द्रह भंगों द्वारा पूर्वोक्त त्रिकसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से ५२५ भंग होते हैं।

सात नैरयिकों के चतुस्संयोगी-१-१-१-४ इत्यादि एक विकल्प के बीस भंग होते हैं। इनके द्वारा पूर्वोक्त चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से ७०० भंग होते हैं।

सात नैरयिकों के पंचसंयोगी १-१-१-१-३। इत्यादि एक विकल्प के १५ भंग होते हैं। उनके द्वारा पूर्वोक्त पंचसंयोगी इक्कीस विकल्पों को गुणा करने से ३१५ भंग होते हैं।

सात नैरयिकों के षट्संयोगी १-१-१-१-१-२। इत्यादि एक विकल्प के छह भंग होते हैं। उनके द्वारा पूर्वोक्त छह संयोगी सात विकल्पों को गुणा करने से बयालीस भंग होते हैं।

सात संयोगी एक विकल्प और एक ही भंग होता है। इस प्रकार (७+१२६+५२५+७००+३१५+४२+१=१७१६) कुल मिलाकर सात नैरयिकों के १७१६ भंग होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८

१८ प्रश्न—अट्ठ भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा० पुच्छा ।

१८ उत्तर—गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए सत्त सक्करप्पभाए होज्जा । एवं दुयासंजोगो, जाव छक्कसंजोगो य जहा सत्तण्हं भणिओ तहा अट्ठण्ह वि भाणियव्वो, णवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, सेसं तं चेव, जाव छक्कसंजोगस्स । अहवा तिण्णि सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव एगे तमाए दो अहेसत्तमाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए जाव दो तमाए एगे अहेसत्तमाए होज्जा । एवं संचारेयव्वं; जाव अहवा दो रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

भावार्थ—१८ प्रश्न-हे भगवन् ! आठ नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ।

१८ उत्तर—हे गांगेय ! रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ।

अथवा एक रत्नप्रभा में और सात शर्कराप्रभा में होते हैं । जिस प्रकार सात नैरयिकों के द्विक-संयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी और षट्-संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार आठ नैरयिकों के भी कहना चाहिये । परन्तु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इतनी विशेषता है कि एक एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये । शेष सभी छह संयोगी तक पूर्वोक्त प्रकार से कहना चाहिये । अन्तिम भंग यह है– अथवा तीन शर्कराप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है । (१) अथवा एक रत्नप्रभा में यावत् एक तमःप्रभा में और दो अधः-सप्तम पृथ्वी में होते हैं (२) अथवा एक रत्नप्रभा में यावत् दो तमःप्रभा में और एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है । इसी प्रकार सभी स्थानों पर संचार करना चाहिये । अथवा यावत् दो रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है ।

विवेचन–आठ नैरयिकों के असंयोगी ७ भंग होते हैं । द्विकसंयोगी एक विकल्प के सात भंग होते हैं । उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के द्विकसंयोगी इक्कीस विकल्पों को गुणा करने से १४७ भंग होते हैं ।

आठ नैरयिकों के १-१-६ इत्यादि त्रिकसंयोगी एक विकल्प के इक्कीस भंग होते हैं । उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के त्रिकसंयोगी पैंतीस विकल्पों के साथ गुणा करने से ७३५ भंग होते हैं ।

आठ नैरयिकों के १-१-१-५ इत्यादि चतुःसंयोगी एक विकल्प के पैंतीस भंग होते हैं । उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से १२२५ भंग होते हैं ।

आठ नैरयिकों के १-१-१-१-४ इत्यादि पंचसंयोगी एक विकल्प के पैंतीस भंग होते हैं । उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के पंचसंयोगी इक्कीस विकल्पों को गुणा करने से ७३५ भंग होते हैं ।

आठ नैरयिकों के १-१-१-१-१-३ इत्यादि षट्संयोगी एक विकल्प के इक्कीस भंग होते हैं । उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के षट्संयोगी सात विकल्पों को गुणा करने से १४७ भंग होते हैं ।

आठ नैरयिकों के सात संयोगी १-१-१-१-१-१-२ इत्यादि एक विकल्प के ७ भंग होते हैं । इस प्रकार आठ नैरयिकों के कुल ३००३ (७+१४७+७३५+१२२५+७३५+१४७+७ = ३००३) भंग होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९

१९ प्रश्न-णव भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा किं० पुच्छा ।

१९ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए अट्ठ सक्करप्पभाए होज्जा । एवं दुयासंजोगो, जाव सत्तगसंजोगो य जहा अट्ठण्हं भणियं तहा णवण्हं पि भाणियव्वं; णवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, सेसं तं चेव । पच्छिमो आलावगो-अहवा तिण्णि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए एगे वालुयप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-पच्छिमो-पीछे का, बाद का (अंत का) **आलावगो**-आलापक ।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! नौ नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ।

१९ उत्तर-हे गांगेय ! वे नौ नैरयिक जीव, रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ।

अथवा एक रत्नप्रभा में और आठ शर्कराप्रभा में होते हैं । इत्यादि जिस प्रकार आठ नैरयिकों के द्विक-संयोगी, त्रिक-संयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी, षट्संयोगी और सप्तसंयोगी भंग कहे, उसी प्रकार नौ नैरयिकों के विषय में भी कहना चाहिये । परन्तु विशेषता यह है कि एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये । शेष सभी पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिये । अन्तिम भंग इस प्रकार है-अथवा तीन रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में, एक बालुकाप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन-नौ नैरयिक जीवों आश्रयी असंयोगी सात भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के द्विकसंयोगी एक विकल्प के आठ भंग होते हैं उनके द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के द्विकसंयोगी इक्कीस विकल्पों को गुणा करने से १६८ भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के १-१-७ इत्यादि त्रिकसंयोगी एक विकल्प के अट्ठाईस भंग होते हैं, उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त त्रिकसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से ९८० भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के १-१-१-६ इत्यादि चतुःसंयोगी एक विकल्प के ५६ भंग होते हैं। उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्पों के साथ गुणा करने से १९६० भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के १-१-१-१-५ इत्यादि पंचसंयोगी एक विकल्प के ७० भंग होते हैं, उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त पंचसंयोगी इक्कीस विकल्पों के साथ गुणा करने से १४७० भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के १-१-१-१-१-४ इत्यादि षट्संयोगी एक विकल्प के ५६ भंग होते है, उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त षट्संयोगी सात विकल्पों के साथ गुणा करने से ३९२ भंग होते हैं।

नौ नैरयिक जीवों के १-१-१-१-१-१-३ इत्यादि सप्तसंयोगी एक विकल्प के २८ भंग होते हैं। उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त सप्तसंयोगी एक विकल्प के साथ गुणा करने पर अट्ठाईस भंग होते हैं। इस प्रकार सभी मिलकर ५००५ (७+१६८+९८०+१९६०+१४७०+३९२+२८=५००५) भंग होते हैं।

१०

२० प्रश्न-दस भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा० पुच्छा।

२० उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा; जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए णव सक्करप्पभाए होज्जा। एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुयासंजोगो जाव सत्तसंजोगो य जहा णवण्हं; णवरं एक्केक्को अब्भहिओ संचारेयव्वो, सेसं तं चेव । अपच्छिमआलावगो-अहवा चत्तारि रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए जाव एगे अहेसत्तमाए होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-अपच्छिमआलावगो-अन्तिम आलापक ।

भावार्थ-२० प्रश्न-हे भगवन् ! दस नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ?

२० उत्तर-हे गांगेय ! वे दस नैरयिक जीव, रत्नप्रभा में होते हैं अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ।

अथवा एक रत्नप्रभा में और नौ शर्कराप्रभा में होते हैं । इत्यादि द्विक-संयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी, पंचसंयोगी, षट्संयोगी और सप्तसंयोगी भंग जिस प्रकार नौ नैरयिक जीवों के कहे गये हैं, उसी प्रकार दस नैरयिक जीवों के विषय में भी जानना चाहिये । परन्तु विशेषता यह है कि एक एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये । शेष सभी पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । उनका अन्तिम भंग इस प्रकार है-अथवा चार रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में यावत् एक अधःसप्तम पृथ्वी में होता है ।

विवेचन-दस नैरयिक जीवों के असंयोगी सात भंग होते हैं ।

दस नैरयिक जीवों के १-९ इत्यादि द्विकसंयोगी एक विकल्प के ९ भंग होते हैं । उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त द्विकसंयोगी इक्कीस विकल्पों के साथ गुणा करने से १८९ भंग होते हैं ।

दस नैरयिक जीवों के १-१-८ इत्यादि त्रिकसंयोगी एक विकल्प के ३६ भंग होते है । उनके द्वारा सात नरकों के पूर्वोक्त त्रिकसंयोगी पैंतीस विकल्पों के साथ गुणा करने से १२६० भंग होते हैं ।

दस नैरयिक जीवों के १-१-१-७ इत्यादि चतुःसंयोगी एक विकल्प के ८४ भंग होते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। उनके साथ सात नरकों के पूर्वोक्त पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से २१४० भंग होते हैं।

दस नैरयिक जीवों के १-१-१-१-६ इत्यादि पञ्चसंयोगी एक विकल्प के १२६ भंग होते हैं, उनके द्वारा सात नरकों के पंचसंयोगी इक्कीस विकल्पों के साथ गुणा करने से २६४६ भंग होते हैं।

दस नैरयिक जीवों के १-१-१-१-१-५ इत्यादि षट्संयोगी एक विकल्प के १२६ भंग होते हैं। उनके द्वारा सात नरकों के षट्संयोगी सात विकल्पों के साथ गुणा करने से ८८२ भंग होते हैं।

दस नैरयिक जीवों के १-१-१-१-१-१-४ इत्यादि एक विकल्प के ८४ भंग होते हैं। उनके द्वारा सात नरकों के सप्तसंयोगी एक विकल्प को गुणा करने से ८४ भंग होते हैं। इस प्रकार सभी मिलकर दस नैरयिक जीवों के ८००८ (७+१८९+१२६०+२९४०+२६४६+८८२+८४=८००८) भंग होते हैं।

संख्यात नैरयिक प्रवेशनक

२१ प्रश्न-संखेज्जा भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं पविसमाणा० पुच्छा।

२१ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा एगे रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा; एवं जाव अहवा दो रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा तिण्णि रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा। एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो, जाव अहवा दस रयणप्पभाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा । एवं जाव अहवा दस रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा; जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, एवं जहा रयणप्पभा उवरिमपुढवीहिं समं चारिया एवं सक्करप्पभा वि उवरिमपुढवीहिं समं चारेयव्वा, एवं एक्केक्का पुढवी उवरिमपुढवीहिं समं चारेयव्वा; जाव अहवा संखेज्जा तमाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे सक्करप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा, जाव अहवा एगे रयणप्पभाए दो सक्करप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए तिण्णि सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; एवं एएणं कमेणं एक्केक्को संचारेयव्वो (सक्करप्पभाए जाव;) अहवा एगे रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा। अहवा दो रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा दो रयण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा तिण्णि रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; एवं एएणं कमेणं एक्केक्को रयणप्पभाए संचारेयव्वो; जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा वालुयप्पभाए होज्जा; जाव अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा; जाव अहवा एगे रयणप्पभाए एगे वालुयप्पभाए संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा । अहवा एगे रयणप्पभाए दो वालुयप्पभाए संखेज्जा पंकप्पभाए होज्जा; एवं एएणं कमेणं तियासंजोगो, चउक्कसंजोगो; जाव सत्तगसंजोगो य जहा दसण्हं तहेव भाणियव्वो । पच्छिमो आलावगो सत्तसंजोगस्स-अहवा संखेज्जा रयणप्पभाए संखेज्जा सक्करप्पभाए जाव संखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा ।

कठिन शब्दार्थ--कमेणं--क्रम से, उवरिमपुढविहिं--ऊपर की पृथ्वी के ।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! संख्यात नैरयिक जीव, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ।

२१ उत्तर-हे गांगेय ! संख्यात नैरयिक रत्नप्रभा में उत्पन्न होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में उत्पन्न होते हैं । (ये असंयोगी सात भंग होते हैं ।)

(१) अथवा एक रत्नप्रभा में होता है और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं । (२-६) इसी प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी

में होते हैं। (ये छह भंग होते हैं।)

(१) अथवा दो रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। (२-६) इस प्रकार यावत् दो रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (ये छह भंग होते हैं।)

(१) अथवा तीन रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। इसी प्रकार इसी क्रम से एक-एक नैरयिक का संचार करना चाहिये। अथवा यावत् दस रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् दस रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा संख्यात रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् संख्यात रत्नप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा एक शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथ्वी का शेष पृथ्वियों के साथ संयोग किया, उसी प्रकार शर्कराप्रभा पृथ्वी का भी आगे की सभी पृथ्वियों के साथ संयोग करना चाहिये। इस प्रकार एक-एक पृथ्वी का आगे की पृथ्वियों के साथ संयोग करना चाहिये। यावत् अथवा संख्यात तमःप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते है। (ये द्विक-संयोगी २३१ भंग होते है।)

(१) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। (२) अथवा एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। इस प्रकार यावत् एक रत्नप्रभा में, एक शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, दो शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, तीन शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। इस प्रकार इस क्रम से एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये। अथवा एक रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, संख्यात वालुकाप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। अथवा दो रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं, यावत् अथवा दो रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात अधः-सप्तम पृथ्वी में होते हैं, अथवा तीन रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं। इस क्रम से रत्नप्रभा में एक-एक नैरयिक का अधिक संचार करना चाहिये, यावत् अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्करा-प्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं, यावत् अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। यावत् अथवा एक रत्नप्रभा में, एक वालुकाप्रभा में और संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। अथवा एक रत्नप्रभा में, दो वालुकाप्रभा में और संख्यात पंकप्रभा में होते हैं। इस क्रम से त्रिक-संयोगी, चतुःसंयोगी यावत् सप्तसंयोगी भंगों का कथन, दस नैरयिक सम्बन्धी भंगों के समान कहना चाहिये। अन्तिम भंग यह है-अथवा संख्यात रत्नप्रभा में, संख्यात शर्कराप्रभा में और यावत् संख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

विवेचन-यहां ग्यारह से लेकर शीर्ष-प्रहेलिका तक की संख्या को-'संख्यात' कहा गया है। उसमें असंयोगी सात भंग होते हैं। द्विक-संयोगी में संख्याता के दो विभाग करने पर-एक और संख्यात, दो और संख्यात यावत् दस और संख्यात तथा 'संख्यात और संख्यात' इस एक विकल्प के ग्यारह भंग होते हैं। ये विकल्प रत्नप्रभादि पृथ्वियों के साथ आगे की पृथ्वियों का संयोग करने पर एक से लेकर संख्यात तक ग्यारह पदों का संयोग करने से और शर्कराप्रभादि पृथ्वियों के साथ केवल संख्यात पद का संयोग करने से बनते हैं। इनसे विपरीत रत्नप्रभादि पूर्व पूर्व की पृथ्वियों के साथ 'संख्यात' पद का संयोग और आगे आगे की पृथ्वियों के साथ एकादि पदों का संयोग करने से जो भंग होते हैं, उनकी विवक्षा यहां नहीं की गई है अर्थात् एक रत्नप्रभा में और संख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं, एक रत्नप्रभा में और संख्यात वालुकाप्रभा में होते हैं, इत्यादि भंग करने चाहिये। परन्तु 'संख्यात रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में, संख्यात रत्नप्रभा में और एक वालुकाप्रभा में होता है,'-इत्यादि भंग नहीं करने चाहिये। क्योंकि इससे पूर्व सूत्रों में ये ही क्रम विवक्षित है। पूर्व सूत्रों में दस आदि संख्याओं के दो भाग करके एकादि लघु संख्याओं को पहले दिया है और नौ आदि बड़ी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संख्याओं के पीछे दिया है अर्थात् 'एक रत्नप्रभा में और नौ शर्कराप्रभा में'-इस प्रकार कहा है, परन्तु 'नौ रत्नप्रभा में और एक शर्कराप्रभा में,' 'आठ रत्नप्रभा में और दो शर्कराप्रभा में' इस प्रकार पहले की पृथ्वियों में संख्या को घटाते हुए और आगे की पृथ्वियों में संख्या बढ़ाते हुए भंग नहीं बतलाये गये हैं। इस प्रकार यहां भी पहले की नरक पृथ्वियों के साथ एकादि संख्या का और आगे आगे की नरक पृथ्वियों के साथ 'संख्यात' राशि का संयोग करना चाहिये। इनमें आगे आगे नरक पृथ्वियों के साथ वाली 'संख्यात' राशि में से एकादि संख्या को कम करने पर भी 'संख्यात' राशि का संख्यातपन कायम रहता है। इनमें से रत्नप्रभा के साथ एक से लेकर संख्यात तक ग्यारह पदों का और शेष पृथ्वियों के साथ अनुक्रम से 'संख्यात' पद का संयोग करने से ६६ भंग होते हैं। शर्कराप्रभा का शेष नरक पृथ्वियों के साथ संयोग करने से पाँच विकल्प होते हैं। उन पांच विकल्पों को एकादि ग्यारह पदों से गुणा करने पर शर्कराप्रभा के संयोग वाले ५५ भंग होते हैं। इसी प्रकार वालुका-प्रभा के संयोग वाले ४४, पंकप्रभा के संयोग वाले ३३, धूमप्रभा के संयोग वाले २२ और तमःप्रभा के संयोग वाले ११ भंग होते हैं। इस प्रकार सभी मिलकर द्विकसंयोगी २३१ ६६+५५+४४+३३+२२+११=२३१) भंग होते हैं।

त्रिकसंयोगी में 'रत्नप्रभा' 'शर्कराप्रभा' और वालुकाप्रभा' यह प्रथम त्रिकसंयोग है और इसमें 'एक, एक और संख्यात' यह प्रथम भंग है। 'पहली नरक में एक जीव और तीसरी नरक में संख्यात जीव' इस पद को कायम रख कर दूसरी नरक में अनुक्रम से संख्या का विन्यास किया जाता है अर्थात् दो से लेकर दस तक की संख्या का तथा 'संख्यात' पद का योग करने से कुल ग्यारह भंग होते हैं। इसके बाद दूसरी और तीसरी पृथ्वी में 'संख्यात' पद को कायम रखकर पहली पृथ्वी में दो से लेकर दस तक एवं संख्यात पद का संयोग करने पर दस भंग होते हैं। वे सब मिलकर इक्कीस भंग होते हैं। इन इक्कीस भंगों के साथ पूर्वोक्त सात नरक के त्रिक-संयोगी पैंतीस पदों को गुणा करने से त्रिकसंयोगी भंग ७३५ होते हैं।

पहले की चार नरकों के साथ प्रथम चतुःसंयोगी भंग होता है। उसमें पहले की तीन नरकों में 'एक, एक, एक और चौथी नरक में संख्यात' इस प्रकार प्रथम भंग होता है। इसके बाद पूर्वोक्त क्रम से तीसरी नरक में, दो से लेकर 'संख्यात' पद तक का संयोग करने से दूसरे दस भंग बनते हैं। इसी प्रकार दूसरी नरक में और पहली नरक में भी दो से लेकर संख्यात पद तक का संयोग करने से बीस भंग होते हैं। ये सब मिलकर इकतीस भंग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होते हैं। इन इकतीस भंगों द्वारा पूर्वोक्त सात नरकों के चतुःसंयोगी पैंतीस विकल्पों को गुणा करने से चतुःसंयोगी १०८५ भंग होते हैं।

पहले की पांच नरकों के साथ प्रथम पञ्चसंयोगी भंग होता है। इसमें पहले की चार नरकों में 'एक, एक, एक, एक, और पांचवी नरक में संख्यात' यह प्रथम भंग होता है। इसके बाद पूर्वोक्त क्रम से चौथी नरक में अनुक्रम से लेकर संख्यात पद तक का संयोग करना चाहिये। इसी प्रकार तीसरी, दूसरी और पहली नरक में भी दो से लेकर संख्यात पद तक का संयोग करना चाहिये। इस प्रकार सब मिलकर पञ्च-संयोगी ४१ भंग होते हैं। उनके साथ पूर्वोक्त सात नरक सम्बन्धी पञ्चसंयोगी २१ पदों को गुणा करने से ८६१ भंग होते हैं।

षट्संयोग में पूर्वोक्त क्रम से ५१ भंग होते हैं और उनके साथ पूर्वोक्त सात नरकों के षट्संयोगी सात पदों को गुणा करने से ३५७ भंग होते हैं।

सप्तसंयोग में पूर्वोक्त प्रकार से ६१ भंग होते हैं। इस प्रकार संख्यात नैरयिक जीवों आश्रयी ३३३७ (७+२३१+७३५+१०८५+८६१+३५७+६१ = ३३३७) भंग होते हैं।

असंख्यात नैरयिक प्रवेशनक

२२ प्रश्न-असंखेज्जा भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं० पुच्छा।

२२ उत्तर-गंगेया ! रयणप्पभाए वा होज्जा, जाव अहेसत्तमाए वा होज्जा। अहवा एगे रयणप्पभाए असंखेज्जा सक्करप्पभाए होज्जा; एवं दुयासंजोगो, जाव सत्तगसंजोगो य जहा संखेज्जाणं भणिओ तहा असंखेज्जाण वि भाणियव्वो, णवरं 'असंखेज्जाओ' अब्भहिओ भाणियव्वो, सेसं तं चेव, जाव सत्तगसंजो-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गस्स पच्छिमो आलावगो—अहवा असंखेज्जा रयणप्पभाए असंखेज्जा सक्करप्पभाए जाव असंखेज्जा अहेसत्तमाए होज्जा।

भावार्थ—२२ प्रश्न—हे भगवन् ! असंख्यात नैरयिक, नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या रत्नप्रभा में होते हैं, इत्यादि प्रश्न ?

२२ उत्तर—हे गांगेय ! रत्नप्रभा में होते हैं, अथवा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं, अथवा एक रत्नप्रभा में और असंख्यात शर्कराप्रभा में होते हैं। जिस प्रकार संख्यात नैरयिकों के द्विकसंयोगी यावत् सप्तसंयोगी भंग कहे, उसी प्रकार असंख्यात के भी कहना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि यहाँ 'असंख्यात' का पद अधिक कहना चाहिये अर्थात् बारहवां 'असंख्यात पद' कहना चाहिये। शेष सभी पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिये, यावत् अन्तिम आलापक यह है—अथवा असंख्यात रत्नप्रभा में, असंख्यात शर्कराप्रभा में यावत् असंख्यात अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

उत्कृष्ट नैरयिक प्रवेशनक

२३ प्रश्न—उक्कोसेणं भंते ! णेरइया णेरइयप्पवेसणएणं० पुच्छा।

२३ उत्तर—गंगेया ! सव्वे वि ताव रयणप्पभाए होज्जा; अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा; जाव अहवा रयणप्पभाए य अहेसत्तमाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य वालुयप्पभाए य होज्जा; एवं जाव अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहेसत्तमाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए वालुयप्पभाए पंकप्पभाए य होज्जा; जाव अहवा रयणप्पभाए वालुयप्पभाए अहेसत्तमाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए पंकप्पभाए धूमाए होज्जा, एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा तिण्हं तियासंजोगो भणिओ तहा भाणियव्वं जाव अहवा रयणप्पभाए तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा। अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए पंकप्पभाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए धूमप्पभाए य होज्जा; जाव अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए अहेसत्तमाए य होज्जा; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए पंकप्पभाए धूमप्पभाए य होज्जा; एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा चउण्हं चउक्कगसंजोगो भणिओ तहा भाणियव्वं, जाव अहवा रयणप्पभाए धूमप्पभाए तमाए अहेसत्तमाए य होज्जा। अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए पंकप्पभाए धूमप्पभाए य होज्जा १; अहवा रयणप्पभाए जाव पंकप्पभाए तमाए य होज्जा २; अहवा रयणप्पभाए जाव पंकप्पभाए अहेसत्तमाए य होज्जा ३; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए धूमप्पभाए तमाए य होज्जा ४; एवं रयणप्पभं अमुयंतेसु जहा पंचण्हं पंचगसंजोगो तहा भाणियव्वं; जाव अहवा रयणप्पभाए पंकप्पभाए जाव अहेसत्तमाए य होज्जा;

अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए जाव धूमप्पभाए तमाए य होज्जा १; अहवा रयणप्पभाए जाव धूमप्पभाए अहेसत्तमाए य होज्जा २; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए जाव पंकप्पभाए तमाए य अहेसत्तमाए य होज्जा ३; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए वालुयप्पभाए धूमप्पभाए तमाए अहेसत्तमाए य होज्जा ४; अहवा रयणप्पभाए सक्करप्पभाए पंकप्पभाए जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ५; अहवा रयणप्पभाए वालुयप्पभाए जाव अहेसत्तमाए होज्जा ६; अहवा रयणप्पभाए य सक्करप्पभाए य जाव अहेसत्तमाए य होज्जा ७ ।

कठिन शब्दार्थ--उक्कोसेणं--उत्कृष्टता से, अमुयंतेसु--न छोड़ते हुए ।

भावार्थ-२३ प्रश्न--हे भगवन् ! नैरयिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए नैरयिक उत्कृष्ट पद में क्या रत्नप्रभा में होते हैं, इत्यादि प्रश्न ?

२३ उत्तर-हे गांगेय ! उत्कृष्ट पद में सभी नैरयिक रत्नप्रभा में होते है । १ अथवा रत्नप्रभा और शर्कराप्रभा में होते हैं । २ अथवा रत्नप्रभा और वालुकाप्रभा में होते हैं । इस प्रकार यावत् रत्नप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं । (त्रिकसंयोगी पन्द्रह विकल्प) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा और वालुकाप्रभा में होते हैं । इस प्रकार यावत् (५) रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ।(६)अथवा रत्नप्रभा, वालुकाप्रभा और पंकप्रभा में होते हैं।(७-९)अथवा यावत् रत्नप्रभा, वालुकाप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं ।(१०)अथवा रत्नप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं । जिस प्रकार रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए तीन नैरयिक जीवों के त्रिकसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ पर भी कहना चाहिये । यावत् (१५) अथवा रत्नप्रभा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

(चतुःसंयोगी बीस भंग) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा और पंकप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। यावत् (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (५) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए जिस प्रकार चार नैरयिक जीवों के चतुःसंयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिये। यावत् (२०) अथवा रत्नप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

(पंच संयोगी पन्द्रह भंग) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, पंकप्रभा और धूमप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा यावत् पंकप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। (३) अथवा रत्नप्रभा यावत् पंकप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, धूमप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। रत्नप्रभा को न छोड़ते हुए जिस प्रकार पांच नैरयिक जीवों के पंच संयोगी भंग कहे हैं, उसी प्रकार कहना चाहिये, अथवा यावत् (१५) रत्नप्रभा, पंकप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

(षट्संयोगी छह भंग) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, यावत् धूमप्रभा और तमःप्रभा में होते हैं। (२) अथवा रत्नप्रभा, यावत् धूमप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (३) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा यावत् पंकप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (४) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, वालुकाप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (५) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, पंकप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। (६) अथवा रत्नप्रभा, वालुकाप्रभा, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं।

(सप्तसंयोगी एक भंग) (१) अथवा रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी में होते हैं। इस प्रकार उत्कृष्ट पद के सभी मिलकर चौसठ (१+६+१५+२०+१५+६+१=६४) भंग होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन—संख्यात प्रवेशनक के समान असंख्यात प्रवेशनक का भी कथन करना चाहिये। किन्तु यहाँ 'असंख्यात' का पद अधिक कहना चाहिये। असंख्यात नैरयिक जीवों सम्बन्धी एक संयोगादि भंग क्रमशः इस प्रकार होते है–७+२५२+८०५+११९०+९४५+३९२+६७=ये सभी मिलकर ३६५८ भंग होते हैं।

उत्कृष्ट प्रवेशनक के भंग ऊपर बतला दिये गये हैं।

नैरयिक प्रवेशनक का अल्प बहुत्व

२४ प्रश्न–एयस्स णं भंते ! रयणप्पभापुढविणेरइयप्पवेसणगस्स सक्करप्पभापुढवि–जाव अहे सत्तमापुढविणेरइयप्पवेसणगस्स कयरे-कयरे जाव विसेसाहिया वा ?

२४ उत्तर–गंगेया ! सव्वत्थोवे अहेसत्तमापुढविणेरइयपवेसणए, तमापुढविणेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे; एवं पडिलोमगं जाव रयण-प्पभापुढविणेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे।

कठिन शब्दार्थ—एयस्सणं—इनमें से, पडिलोमगं—प्रतिलोम (विपरीतक्रम)।

भावार्थ–२४ प्रश्न–हे भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक, शर्कराप्रभा पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक, यावत् अधःसप्तम पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक, इनमें कौन प्रवेशनक किस प्रवेशनक से अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है ?

२४ उत्तर–हे गांगेय ! सब से अल्प अधःसप्तम पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक है, उससे तमःप्रभा पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक असंख्यात गुण है, इस प्रकार उलटे क्रम से यावत् रत्नप्रभा पृथ्वी नैरयिक प्रवेशनक असंख्यात गुण है।

विवेचन—अधःसप्तम पृथ्वी में जाने वाले जीव सब से थोड़े हैं। उसकी अपेक्षा तमःप्रभा में जाने वाले असंख्यात गुण हैं। इस प्रकार उलटे क्रम से एक-एक से आगे असंख्यात गुण हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तिर्यंच योनिक प्रवेशनक

२५ प्रश्न-तिरिक्खजोणियपवेसणए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

२५ उत्तर-गंगेया ! पंचविहे पण्णत्ते, तं जहा-एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए, जाव पंचिंदियतिरिक्खजोणियप्पवेसणए ।

२६ प्रश्न-एगे भंते ! तिरिक्खजोणिए तिरिक्खजोणियप्पवेसणएणं पविसमाणे किं एगिंदिएसु होज्जा, जाव पंचिंदिएसु होज्जा ?

२६ उत्तर-गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा; जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा ।

२७ प्रश्न-दो भंते ! तिरिक्खजोणिया० पुच्छा ।

२७ उत्तर-गंगेया ! एगिंदिएसु वा होज्जा, जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा । अहवा एगे एगिंदिएसु होज्जा एगे बेइंदिएसु होज्जा, एवं जहा णेरइयप्पवेसणए तहा तिरिक्खजोणियप्पवेसणए वि भाणियव्वे, जाव असंखेज्जा ।

२८ प्रश्न-उक्कोसा भंते ! तिरिक्खजोणिया० पुच्छा ।

२८ उत्तर-गंगेया ! सव्वे वि ताव एगिंदिएसु होज्जा, अहवा एगिंदिएसु वा बेइंदिएसु वा होज्जा । एवं जहा णेरइया चारिया तहा तिरिक्खजोणिया वि चारेयव्वा । एगिंदिया अमुयंतेसु दुयासंजोगो, तियासंजोगो, चउक्कसंजोगो, पंचसंजोगो उवउंजिऊण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भाणियव्वो, जाव अहवा एगिंदिएसु वा, बेइंदिय० जाव पंचिंदिएसु वा होज्जा ।

२९ प्रश्न—एयस्स णं भंते ! एगिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणगस्स, जाव पंचिंदिय-तिरिक्खजोणियपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

२९ उत्तर—गंगेया ! सव्वत्थोवे पंचिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए, चउरिंदियतिरिक्खजोणियपवेसणए विसेसाहिए, तेइंदिय० विसेसाहिए, बेइंदिय० विसेसाहिए, एगिंदियतिरिक्ख० विसेसाहिए ।

कठिन शब्दार्थ—उवउंजिऊण—उपयोग लगाकर ।

भावार्थ—२५ प्रश्न—हे भगवन् ! तिर्यंचयोनिक प्रवेशक कितने प्रकार का कहा गया है ?

२५ उत्तर—हे गांगेय ! वह पांच प्रकार का कहा गया है । यथा—एकेंद्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक यावत् पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक ।

२६ प्रश्न—हे भगवन् ! एक तिर्यंच-योनिक जीव, तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ क्या एकेंद्रियों में उत्पन्न होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रियों में उत्पन्न होता है ?

२६ उत्तर—हे गांगेय ! एक तिर्यंच-योनिक जीव, एकेन्द्रियों में उत्पन्न होता है, अथवा यावत् पंचेन्द्रियों में उत्पन्न होता है ।

२७ प्रश्न—हे भगवन् ! दो तिर्यंच-योनिक जीव, तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या एकेन्द्रियों में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ?

२७ उत्तर—हे गांगेय ! एकेन्द्रियों में होते हैं अथवा यावत् पंचेन्द्रियों में होते हैं । अथवा एक एकेन्द्रिय में और एक बेइन्द्रिय में होता है । जिस प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नैरयिक जीवों के विषय में कहा, उसी प्रकार तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक के विषय में भी कहना चाहिये । यावत् असंख्य तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक तक कहना चाहिय ।

२८ प्रश्न-हे भगवन् ! उत्कृष्ट तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक विषयक प्रश्न ?

२८ उत्तर-हे गांगेय ! वे सभी एकेन्द्रियों में होते हैं । अथवा एकेन्द्रिय और बेइन्द्रियों में होते हैं, जिस प्रकार नैरयिक जीवों में संचार किया गया है, उसी प्रकार तिर्यंचयोनिक प्रवेशनक के विषय में भी संचार करना चाहिये । एकेन्द्रिय जीवों को न छोड़ते हुए द्विकसंयोगी, त्रिकसंयोगी, चतुःसंयोगी और पच-संयोगी भंग उपयोगपूर्वक कहना चाहिये । यावत् अथवा एकेन्द्रिय जीवों में, बेइन्द्रियों में यावत् पंचेन्द्रियों में होते हैं ।

२९ प्रश्न-हे भगवन् ! एकेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक यावत् पंचेंद्रिय-तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक, इनमें कौन किससे यावत् विशेषाधिक हैं ?

२९ उत्तर-हे गांगेय ! सब से थोड़े पंचेन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक हैं, उनसे चतुरिन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक विशेषाधिक हैं, उनसे तेइन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक विशेषाधिक हैं, उनसे द्वीन्द्रिय तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक विशेषाधिक हैं और उनसे एकेन्द्रिय तिर्यञ्च-योनिक प्रवेशनक विशेषाधिक हैं ।

विवेचन-एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तक तिर्यंच होते हैं । उनका प्रवेशनक ऊपर बतलाया गया है ।

शङ्का-ऊपर जो यह बतलाया गया है कि 'एक जीव एकेन्द्रियों में उत्पन्न होता है,' यह कैसे ? क्योंकि एकेन्द्रियों में एक जीव कदापि उत्पन्न नहीं होता, वहाँ प्रति-समय अनन्त जीव उत्पन्न होते हैं ।

समाधान-इस शंका का समाधान यह है कि सबसे पहले 'प्रवेशनक' शब्द का अर्थ जानना आवश्यक है । उसका अर्थ यह है ' विजातीय देवादि भव से निकल कर एकेन्द्रि-यादि में उत्पन्न होना'-'प्रवेशनक' कहलाता है । इस अपेक्षा से एक जीव भी मिल सकता है । क्योंकि प्रवेशनक का यह अर्थ है कि विजातीय भव से आकर विजातीय भव में उत्पन्न होना । सजातीय जीव, सजातीय में उत्पन्न हों, यह प्रवेशनक नहीं कहलाता । क्योंकि वह तो एकेन्द्रिय जाति में प्रविष्ट है ही । अर्थात् एकेन्द्रिय मरकर एकेन्द्रिय में उत्पन्न हो, वह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रवेशनक की गणना में नहीं आता; जो अनन्त उत्पन्न होते हैं, वे तो एकेन्द्रिय में से ही हैं।

एक जीव अनुक्रम से एकेन्द्रियादि पांच स्थानों में उत्पन्न हो, तब उसके पांच भंग होते हैं। दो जीव भी एक एक स्थल में साथ उत्पन्न हों तो पांच ही भंग होते हैं और द्विक-संयोगी दस भंग होते हैं। तीन से लेकर असंख्यात तिर्यंच-योनिक जीवों का प्रवेशनक नैरयिक प्रवेशनक के समान जानना चाहिये, परन्तु नैरयिक जीव, सात नरक पृथ्वियों में उत्पन्न होते हैं और तिर्यंच जीव, एकेन्द्रियादि पांच स्थानों में उत्पन्न होते हैं। इसलिये भंगों की संख्या में भिन्नता है, वह बुद्धिमानों को स्वयं विचार कर जान लेनी चाहिये।

यद्यपि अनन्त एकेन्द्रिय जीव उत्पन्न होते हैं, परन्तु ऊपर बतलाया हुआ प्रवेशनक का लक्षण असंख्यात जीवों में ही घटित हो सकता है। इसलिये असंख्यात तक ही प्रवेशनक कहा गया है।

मनुष्य प्रवेशनक

३० प्रश्न-मणुस्सप्पवेसणए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

३० उत्तर-गंगेया ! दुविहे पण्णत्ते तं जहा-संमुच्छिममणुस्सप्पवेसणए, गब्भवक्कंतियमणुस्सप्पवेसणए य।

३१ प्रश्न-एगे भंते ! मणुस्से मणुस्सप्पवेसगएणं पविसमाणे किं संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा ?

३१ उत्तर-गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा।

३२ प्रश्न-दो भंते ! मणुस्सा० पुच्छा।

३२ उत्तर-गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा; एवं एएणं कमेणं जहा णेरइयपवेसणए तहा मणुस्सपवेसणए वि भाणियव्वे, जाव दस।

३३ प्रश्न-संखेज्जा भंते ! मणुस्सा० पुच्छा।

३३ उत्तर-गंगेया ! संमुच्छिममणुस्सेसु वा होज्जा, गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा। अहवा एगे संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु वा होज्जा; अहवा दो संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा; एवं एक्केक्कं उस्सारिंतेसु जाव अहवा संखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा।

३४ प्रश्न-असंखेज्जा भंते ! मणुस्सा० पुच्छा।

३४ उत्तर-गंगेया ! सव्वे वि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा। अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु, एगे गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा; अहवा असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु दो गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा; एवं जाव असंखेज्जा संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा संखेज्जा गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु होज्जा।

३५ प्रश्न-उक्कोसा भंते ! मणुस्सा ० पुच्छा।

३५ उत्तर-गंगेया ! सव्वे वि ताव संमुच्छिममणुस्सेसु होज्जा अहवा संमुच्छिममणुस्सेसु य गब्भवक्कंतियमणुस्सेसु य होज्जा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३६ प्रश्न-एयस्स णं भंते ! संमुच्छिममणुस्सपवेसणगस्स गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणगस्स य कयरे-जाव विसेसाहिया वा ?

३६ उत्तर-गंगेया ! सव्वत्थोवे गब्भवक्कंतियमणुस्सपवेसणए, संमुच्छिममणुस्सपवेसणए असंखेज्जगुणे ।

कठिन शब्दार्थ-उस्सारितेसु-बढ़ाते हुए ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! मनुष्य-प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

३० उत्तर-हे गांगेय ! दो प्रकार का कहा गया है । यथा-सम्मूच्छिम मनुष्य-प्रवेशनक और गर्भज मनुष्य प्रवेशनक ।

३१ प्रश्न-हे भगवन् ! मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ एक मनुष्य क्या सम्मूच्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होता है, या गर्भज मनुष्यों में उत्पन्न होता है ?

३१ उत्तर-हे गांगेय ! वह सम्मूच्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होता है, अथवा गर्भज मनुष्यों में उत्पन्न होता है ।

३२ प्रश्न-हे भगवन् ! दो मनुष्य, मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए क्या सम्मूच्छिम मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं, इत्यादि प्रश्न ।

३२ उत्तर-हे गांगेय ! दो मनुष्य सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं, अथवा गर्भज मनुष्यों में होते हैं । अथवा एक सम्मूच्छिम मनुष्यों में और एक गर्भज मनुष्यों में होते हैं । इस क्रम से जिस प्रकार नैरयिक-प्रवेशनक कहा, उसी प्रकार मनुष्य-प्रवेशनक भी कहना चाहिये । यावत् दस मनुष्यों तक कहना चाहिये ।

३३ प्रश्न-हे भगवन् ! संख्यात मनुष्य, मनुष्यप्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए, इत्यादि प्रश्न ।

३३ उत्तर-हे गांगेय ! वे सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं, अथवा गर्भज

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मनुष्यों में होते हैं। अथवा एक सम्मूच्छिम मनुष्यों में होता है और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा दो सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं। इस प्रकार एक-एक बढ़ाते हुए यावत् अथवा संख्यात सम्मूच्छिम मनुष्यों में और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

३४ प्रश्न—हे भगवन् ! असंख्यात मनुष्य, मनुष्य-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करने के सम्बन्ध में प्रश्न।

३४ उत्तर–हे गांगेय ! वे सभी सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं। अथवा असंख्यात सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं और एक गर्भज मनुष्यों में होता है। अथवा असंख्यात सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं और दो गर्भज मनुष्यों में होते हैं। अथवा इस प्रकार यावत् असंख्यात सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं और संख्यात गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

३५ प्रश्न—हे भगवन् ! मनुष्य, उत्कृष्ट रूप से किस प्रवेशनक में होते हैं ? इत्यादि प्रश्न।

३५ उत्तर–हे गांगेय ! वे सभी सम्मूच्छिम मनुष्यों में होते हैं। अथवा सम्मूच्छिम मनुष्यों में और गर्भज मनुष्यों में होते हैं।

३६ प्रश्न-हे भगवन् ! सम्मूच्छिम मनुष्य प्रवेशनक और गर्भज मनुष्य प्रवेशनक, इनमें कौन प्रवेशनक किस प्रवेशनक से यावत् विशेषाधिक है।

३६ उत्तर–हे गांगेय ! सब से अल्प गर्भज मनुष्य प्रवेशनक है, उससे सम्मूच्छिम मनुष्य-प्रवेशनक असंख्यात गुण हैं।

विवेचन–मनुष्य प्रवेशनक में दो स्थान हैं। यथा–सम्मूच्छिम मनुष्य-प्रवेशनक और गर्भज मनुष्य प्रवेशनक। इन दोनों की अपेक्षा एक से लेकर संख्यात तक विकल्प पूर्ववत् समझना चाहिये। संख्यात पद में द्विक-संयोग में पूर्ववत् ग्यारह विकल्प होते हैं। असंख्यात पद में पहले बारह विकल्प बतलाये गये हैं, किन्तु यहां ग्यारह विकल्प ही होते हैं। क्योंकि यदि सम्मूच्छिम मनुष्यों में असंख्यातपन और गर्भजमनुष्यों में भी असंख्यातपन हो, तभी बारहवां विकल्प बन सकता है, किन्तु यह संगत नहीं। क्योंकि गर्भज मनुष्य असंख्यात नहीं हैं, अतएव उनके प्रवेशनक में असंख्यातपन नहीं हो सकता। अतः असंख्यात पद में भी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ग्यारह विकल्प ही होते हैं।

उत्कृष्ट पद में सम्मूच्छिम मनुष्य प्रवेशनक कहा गया है। क्योंकि सम्मूच्छिम मनुष्य ही असंख्यात हैं, इसलिये उनका प्रवेशनक भी असंख्यात हो सकता है। अतएव अल्प-बहुत्व में भी गर्भज मनुष्य प्रवेशनक से सम्मूच्छिम मनुष्य प्रवेशनक असंख्यात गुण बतलाया गया है।

देव प्रवेशनक

३७ प्रश्न—देवपवेसणए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

३७ उत्तर—गंगेया ! चउव्विहे पण्णत्ते, तं जहा—भवणवासि-देवपवेसणए, जाव वेमाणियदेवपवेसणए।

३८ प्रश्न—एगे भंते ! देवे देवपवेसणएणं पविसमाणे किं भवण-वासीसु होज्जा, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिएसु होज्जा ?

३८ उत्तर—गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा, वाणमंतर-जोइ-सिय-वेमाणिएसु वा होज्जा।

३९ प्रश्न—दो भंते ! देवा देवपवेसणएणं० पुच्छा।

३९ उत्तर—गंगेया ! भवणवासीसु वा होज्जा, वाणमंतर-जोइ-सिय-वेमाणिएसु वा होज्जा। अहवा एगे भवणवासीसु एगे वाण-मंतरेसु होज्जा, एवं जहा तिरिक्खजोणियपवेसणए तहा देवपवेसणए वि भाणियव्वे, जाव असंखेज्ज त्ति।

४० प्रश्न—उक्कोसा भंते ! पुच्छा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४० उत्तर--गंगेया ! सव्वे वि ताव जोइसिएसु होज्जा, अहवा जोइसिय-भवणवासिसु य होज्जा, अहवा जोइसिय-वाणमंतरेसु य होज्जा, अहवा जोइसिय-वेमाणिएसु य होज्जा, अहवा जोइसिएसु य भवणवासिसु य वाणमंतरेसु य होज्जा, अहवा जोइसिएसु य भवणवासिसु य वेमाणिएसु य होज्जा, अहवा जोइसिएसु य वाण-मंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा, अहवा जोइसिएसु य भवणवासिसु य वाणमंतरेसु य वेमाणिएसु य होज्जा ।

४१ प्रश्न--एयस्स णं भंते ! भवणवासिदेवपवेसणगस्स, वाण-मंतरदेवपवेसणगस्स, जोइसियदेवपवेसणगस्स, वेमाणियदेवपवेसण-गस्स य कयरे कयरेहिंतो--जाव विसेसाहिया वा ?

४१ उत्तर--गंगेया ! सव्वत्थोवे वेमाणियदेवपवेसणए, भवण-वासिदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे, वाणमंतरदेवपवेसणए असंखेज्जगुणे, जोइसियदेवपवेसणए संखेज्जगुणे ।

कठिन शब्दार्थ--कयरे कयरेहिंतो--कौन किससे ।

भावार्थ ३७ प्रश्न--हे भगवन् ! देव-प्रवेशनक कितने प्रकार का कहा गया है ?

३७ उत्तर--हे गांगेय ! चार प्रकार का कहा गया है । यथा--भवनवासी देव-प्रवेशनक, वाणव्यन्तर देव-प्रवेशनक, ज्योतिषीदेव-प्रवेशनक और वैमानिक देव-प्रवेशनक ।

३८ प्रश्न--हे भगवन् ! एक देव, देव-प्रवेशनक द्वारा प्रवेश करता हुआ क्या भवनवासी देवों में होता है, वाणव्यन्तर देवों में होता है, ज्योतिषी देवों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में होता है, अथवा वैमानिक देवों में होता है ?

३८ उत्तर-हे गांगेय ! वह भवनवासी देवों में होता है, अथवा वाणव्यन्तर देवों में, अथवा ज्योतिषी देवों में, अथवा वैमानिक देवों में होता है।

३९ प्रश्न—हे भगवन् ! दो देव, देवप्रवेशनक द्वारा प्रवेश करते हुए—इत्यादि प्रश्न।

उत्तर—हे गांगेय ! वे दो देव, भवनवासी देवों में होते हैं, अथवा वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी देवों में होते हैं अथवा वैमानिक देवों में होते हैं। अथवा एक भवनवासी देवों में होता है और एक वाणव्यन्तर देवों में होता है। जिस प्रकार तिर्यंच-योनिक प्रवेशनक कहा, उसी प्रकार देव-प्रवेशनक भी कहना चाहिये। यावत् असंख्यात देव प्रवेशनक तक कहना चाहिये।

४० प्रश्न—हे भगवन् ! देव उत्कृष्टपने किस प्रवेशनक में होते हैं इत्यादि प्रश्न।

४० उत्तर—हे गांगेय ! वे सभी ज्योतिषी देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी और भवनवासी देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी और वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी और वैमानिक देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी, भवनवासी और वाणव्यन्तर देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी, भवनवासी और वैमानिक देवों में होते हैं, अथवा ज्योतिषी, वाणव्यन्तर और वैमानिक देवों में होते हैं। अथवा ज्योतिषी, भवनवासी, वाणव्यन्तर और वैमानिक देवों में होते हैं।

४१ प्रश्न—हे भगवन् ! भवनवासी देवप्रवेशनक, वाणव्यन्तर देव-प्रवेशनक, ज्योतिषी-देवप्रवेशनक और वैमानिक देव-प्रवेशनक, इनमें कौन प्रवेशनक किस प्रवेशनक से यावत् विशेषाधिक है ?

४१ उत्तर—हे गांगेय ! वैमानिक देव-प्रवेशनक सबसे अल्प है, उससे भवनवासी देव-प्रवेशनक असंख्यात गुण है, उससे वाणव्यन्तर देव-प्रवेशनक असंख्यात गुण हैं और उससे ज्योतिषी-देवप्रवेशनक संख्यातगुण हैं।

विवेचन—ज्योतिषी देवों में जाने वाले जीव बहुत होते हैं। इसलिये उत्कृष्ट पद में कहा गया है कि वे सभी ज्योतिषी देवों में होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वैमानिक देव सबसे थोड़े हैं और उनमें जाने वाले भी सब से थोड़े हैं, इसीलिये अल्प-बहुत्व में यह कहा गया है कि वैमानिक देव-प्रवेशनक सबसे अल्प हैं।

प्रवेशनकों का अल्प-बहुत्व

४२ प्रश्न-एयस्स णं भंते ! णेरइयपवेसणगस्स तिरिक्खजोणिय० मणुस्स० देवपवेसणगस्स य कयरे कयरेहिंतो-जाव विसेसाहिए वा ?

४२ उत्तर-गंगेया ! सव्वत्थोवे मणुस्सपवेसणए; णेरइयपवेसणए असंखेज्जगुणे, देवपवेसणए असंखेज्जगुणे, तिरिक्खजोणियप्पवेसणए असंखेज्जगुणे।

भावार्थ-४२ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिकप्रवेशनक, तिर्यंचयोनिकप्रवेशनक, मनुष्यप्रवेशनक और देव-प्रवेशनक, इनमें कौन प्रवेशनक, किस प्रवेशनक से यावत् विशेषाधिक है ?

४२ उत्तर-हे गांगेय ! सबसे अल्प मनुष्य प्रवेशनक हैं, उससे नैरयिक-प्रवेशनक असंख्यात गुण हैं, उससे देव-प्रवेशनक असंख्यात गुण हैं और उससे तिर्यंचयोनिक प्रवेशनक असंख्यात गुण है।

विवेचन-मनुष्य, मनुष्य क्षेत्र में ही होते हैं। इसलिये मनुष्य-प्रवेशनक सबसे अल्प है, क्योंकि मनुष्य क्षेत्र अल्प है। उससे नैरयिक-प्रवेशनक असंख्यात गुण हैं, क्योंकि नरक में जाने वाले जीव असंख्यात गुण हैं, इसी प्रकार देव-प्रवेशनक और तिर्यंचयोनिक प्रवेशनक के विषय में भी समझना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सान्तरादि उत्पाद और उद्वर्तन

४३ प्रश्न—संतरं भंते ! णेरइया उववज्जंति णिरंतरं णेरइया उववज्जंति, संतरं असुरकुमारा उववज्जंति णिरंतरं असुरकुमारा उववज्जंति, जाव संतरं वेमाणिया उववज्जंति णिरंतरं वेमाणिया उववज्जंति, संतरं णेरइया उव्वट्टंति णिरंतरं णेरइया उव्वट्टंति, जाव संतरं वाणमंतरा उव्वट्टंति णिरंतरं वाणमंतरा उव्वट्टंति, संतरं जोइसिया चयंति णिरंतरं जोइसिया चयंति, संतरं वेमाणिया चयंति णिरंतरं वेमाणिया चयंति ?

४३ उत्तर—गंगेया ! संतरं पि णेरइया उववज्जंति णिरंतरं पि णेरइया उववज्जंति, जाव संतरं पि थणियकुमारा उववज्जंति णिरंतरं पि थणियकुमारा उववज्जंति; णो संतरं पुढविक्काइया उववज्जंति णिरंतरं पुढविक्काइया उववज्जंति, एवं जाव वणस्सइकाइया, सेसा जहा णेरइया, जाव संतरं पि वेमाणिया उववज्जंति णिरंतरं पि वेमाणिया उववज्जंति; संतरं पि णेरइया उव्वट्टंति णिरंतरं पि णेरइया उव्वट्टंति, एवं जाव थणियकुमारा। णो संतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति णिरंतरं पुढविक्काइया उव्वट्टंति, एवं जाव वणस्सइकाइया, सेसा जहा णेरइया, णवरं जोइसिय-वेमाणिया चयंति अभिलावो, जाव संतरं पि वेमाणिया चयंति णिरंतरं पि वेमाणिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चयंति ।

कठिन शब्दार्थ-संतरं-सान्तर-अन्तर-व्यवधान सहित, **चयंति**-च्यवते-नीचे गिरते (मरकर नीचे आते)।

भावार्थ-४३ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक सान्तर (अन्तर सहित) उत्पन्न होते हैं अथवा निरन्तर उत्पन्न होते हैं, असुरकुमार सान्तर उत्पन्न होते हैं अथवा निरन्तर, यावत् वैमानिक देव सान्तर उत्पन्न होते हैं, या निरन्तर। नैरयिक सान्तर उद्वर्तते हैं, या निरन्तर, यावत् वाणव्यन्तर सान्तर उद्वर्तते हैं, या निरन्तर। ज्योतिषी देव सान्तर चवते हैं, या निरन्तर। वैमानिक देव सान्तर चवते हैं या निरन्तर?

४३ उत्तर-हे गांगेय ! नैरयिक सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी, यावत् स्तनिकुमार सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी उत्पन्न होते हैं। पृथ्वीकायिक सान्तर उत्पन्न नहीं होते, परन्तु निरन्तर उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीव सान्तर उत्पन्न नहीं होते, निरन्तर उत्पन्न होते हैं। शेष सभी जीव, नैरयिक जीवों के समान सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी, यावत् वैमानिक देव सान्तर भी उत्पन्न होते हैं और निरन्तर भी। नैरयिक जीव सान्तर भी उद्वर्तते हैं और निरन्तर भी। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिये। पृथ्वीकायिक जीव, सान्तर नहीं उद्वर्तते, निरन्तर उद्वर्तते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों तक कहना चाहिये। शेष सभी जीवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिये। किंतु इतनी विशेषता है कि 'ज्योतिषी और वैमानिक देव चवते हैं'-ऐसा पाठ कहना चाहिये, यावत् वैमानिक देव सान्तर भी चवते हैं और निरन्तर भी चवते हैं।

४४ प्रश्न-सओ भंते ! णेरइया उववज्जंति, असओ भंते ! णेरइया उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४४ उत्तर-गंगेया ! सओ णेरइया उववज्जंति, णो असओ णेरइया उववज्जंति; एवं जाव वेमाणिया ।

४५ प्रश्न-सओ भंते ! णेरइया उव्वट्टंति, असओ णेरइया उव्वट्टंति ?

४५ उत्तर-गंगेया ! सओ णेरइया उव्वट्टंति, णो असओ णेरइया उव्वट्टंति; एवं जाव वेमाणिया, णवरं जोइसिय-वेमाणिएसु चयंति भाणियव्वं ।

४६ प्रश्न-सओ भंते ! णेरइया उववज्जंति, असओ भंते ! णेरइया उववज्जंति; सओ असुरकुमारा उववज्जंति, जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति, असओ वेमाणिया उववज्जंति । सओ णेरइया उव्वट्टंति, असओ णेरइया उव्वट्टंति; सओ असुरकुमारा उव्वट्टंति, जाव सओ वेमाणिया चयंति, असओ वेमाणिया चयंति ?

४६ उत्तर-गंगेया ! सओ णेरइया उववज्जंति, णो असओ णेरइया उववज्जंति; सओ असुरकुमारा उववज्जंति, णो असओ असुरकुमारा उववज्जंति, जाव सओ वेमाणिया उववज्जंति, णो असओ वेमाणिया उववज्जंति, सओ णेरइया उव्वट्टंति, णो असओ णेरइया उव्वट्टंति; जाव सओ वेमाणिया चयंति, णो असओ वेमाणिया चयंति ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-सओ णेरइया उववज्जंति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णो असओ णेरइया उववज्जंति; जाव सओ वेमाणिया चयंति, णो असओ वेमाणिया चयंति।

उत्तर-से णूणं गंगेया ! पासेणं अरहया पुरिसादाणीएणं सासए लोए बुइए अणाईए अणवयग्गे, जहा पंचमसए, जाव 'जे लोक्कइ से लोए,' से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ-जाव सओ वेमाणिया चयंति, णो असओ वेमाणिया चयंति।

कठिन शब्दार्थ-सओ-सत् (विद्यमान), सासए-शाश्वत, बुइए-कहा है, अणवयग्गे-अनन्त (अन्त रहित)।

भावार्थ-४४ प्रश्न-हे भगवन् ! सत् (विद्यमान) नैरयिक उत्पन्न होते हैं, या असत् (अविद्यमान) नैरयिक उत्पन्न होते हैं ?

४४ उत्तर-हे गांगेय ! सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक उत्पन्न नहीं होते। इसी प्रकार वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिये।

४५ प्रश्न-हे भगवन् ! सत् नैरयिक उद्वर्तते हैं, या असत् नैरयिक ?

४५ उत्तर-हे गांगेय ! सत् नैरयिक उद्वर्तते हैं, असत् नैरयिक नहीं उद्वर्तते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि 'ज्योतिषी और वैमानिक देव चवते हैं'-ऐसा कहना चाहिए।

४६ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीव, सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, या असत् नैरयिकों में। असुरकुमार देव, सत् असुरकुमार देवों में उत्पन्न होते हैं, या असत् असुरकुमार देवों में, इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों में उत्पन्न होते हैं, या असत् वैमानिकों में। सत् नैरयिकों में से उद्वर्तते हैं, या असत् नैरयिकों में से। सत् असुरकुमारों में से उद्वर्तते हैं, या असत् असुरकुमारों में से। इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों में से चवते हैं, या असत् वैमानिकों में से ?

४६ उत्तर-हे गांगेय ! नैरयिक जीव, सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, परन्तु असत् नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होते। सत् असुरकुमारों में उत्पन्न होते हैं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

असत् असुरकुमारों में नहीं । इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों में उत्पन्न होते हैं, असत् वैमानिकों में नहीं । सत् नैरयिकों में से उद्वर्तते हैं, असत् नैरयिकों में से नहीं, यावत् सत् वैमानिकों में से चवते हैं, असत् वैमानिकों में से नहीं ।

प्रश्न–हे भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि सत् नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिकों में नहीं, इसी प्रकार यावत् सत् वैमानिकों से चवते हैं, असत् वैमानिकों से नहीं ?

उत्तर–हे गांगेय ! पुरुषादानीय अरिहन्त श्री पार्श्वनाथ ने 'लोक को शाश्वत, अनादि और अनन्त कहा है ।' इत्यादि पांचवें शतक के नौवें उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये । यावत् "जो अवलोकन किया जाय, उसे 'लोक' कहते हैं," इस कारण हे गांगेय ! ऐसा कहा गया है कि यावत् सत् वैमानिकों से चवते हैं, असत् वैमानिकों से नहीं ।

केवली सर्वज्ञ होते है

४७ प्रश्न–सयं भंते ! एवं जाणह, उदाहु असयं, असोच्चा एए एवं जाणह, उदाहु सोच्चा; सओ णेरइया उववज्जंति, णो असओ णेरइया उववज्जंति; जाव सओ वेमाणिया चयंति णो असओ वेमाणिया चयंति ?

४७ उत्तर–गंगेया ! सयं एए एवं जाणामि, णो असयं; असोच्चा एए एवं जाणामि, णो सोच्चा सओ णेरइया उववज्जंति, णो असओ णेरइया उववज्जंति, जाव सओ वेमाणिया चयंति, णो असओ वेमाणिया चयंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-तं चेव, जाव 'णो असओ वेमाणिया चयंति' ?

उत्तर-गंगेया ! केवली णं पुरत्थिमेणं मियं पि जाणइ, अमियं पि जाणइ; दाहिणेणं एवं जहा सद्दुद्देसए, जाव णिव्वुडे णाणे केवलिस्स; से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ 'तं चेव जाव णो असओ वेमाणिया चयंति'।

कठिन शब्दार्थ-सयं-स्वयं, अमियं-अपरिमित (निःसीम = जिसकी कोई सीमा नहीं) णिव्वुडे-निर्वृत हुए।

भावार्थ-४७ प्रश्न-हे भगवन् ! आप स्वयं इस प्रकार जानते हैं, अथवा अस्वयं जानते हैं, बिना सुने ही इस प्रकार जानते हैं अथवा सुनकर जानते हैं कि 'सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक नहीं, यावत् सत् वैमानिकों से चवते हैं, असत् वैमानिकों से नहीं ?'

४७ उत्तर-हे गांगेय ! ये सभी बातें मैं स्वयं जानता हूं, अस्वयं नहीं, बिना सुने ही जानता हूं, सुनकर ऐसा नहीं जानता कि 'सत् नैरयिक उत्पन्न होते हैं, असत् नैरयिक नहीं, यावत् सत् वैमानिकों से चवते हैं, असत् वैमानिकों से नहीं।'

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है कि 'मैं स्वयं जानता हूं,' इत्यादि पूर्वोक्त यावत् सत् वैमानिकों से चवते हैं, असत् वैमानिकों से नहीं ?

उत्तर-हे गांगेय ! केवलज्ञानी पूर्व में मित (मर्यादित) भी जानते हैं और अमित (अमर्यादित) भी जानते हैं, इसी प्रकार दक्षिण में भी जानते हैं। इस प्रकार शब्द उद्देशक (छठे शतक के चौथे उद्देशक) में कहे अनुसार जानना चाहिये। यावत् केवली का ज्ञान निरावरण होता है। इसलिए हे गांगेय ! इस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कारण मैं कहता हूँ कि 'मैं स्वयं जानता हूँ। इत्यादि यावत् असत् वैमानिकों से नहीं चवते।'

स्वयं उत्पन्न होते हैं

४८ प्रश्न-सयं भंते ! णेरइया णेरइएसु उववज्जंति, असयं णेरइया णेरइएसु उववज्जंति ?

४८ उत्तर-गंगेया ! सयं णेरइया णेरइएसु उववज्जंति, णो असयं णेरइया णेरइएसु उववज्जंति।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-जाव उववज्जंति ?

उत्तर-गंगेया ! कम्मोदएणं, कम्मगुरुयत्ताए, कम्मभारियत्ताए, कम्मगुरुसंभारियत्ताए; असुभाणं कम्माणं उदएणं, असुभाणं कम्माणं विवागेणं, असुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं णेरइया णेरइएसु उववज्जंति, णो असयं णेरइया णेरइएसु उववज्जंति; से तेणट्ठेणं गंगेया ! जाव उववज्जंति।

४९ प्रश्न-सयं भंते ! असुरकुमारा० पुच्छा ?

४९ उत्तर-गंगेया ! सयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति, णो असयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति।

प्रश्न-से केणट्ठेणं तं चेव जाव उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर—गंगेया ! कम्मोदएणं, कम्मोवसमेणं, कम्मविगईए, कम्म-विसोहीए, कम्मविसुद्धीए; सुभाणं कम्माणं उदएणं, सुभाणं कम्माणं विवागेणं, सुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं असुरकुमारा असुर-कुमारत्ताए उववज्जंति णो असयं असुरकुमारा जाव उववज्जंति; से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति, एवं जाव थणियकुमारा।

५० प्रश्न—सयं भंते ! पुढविक्काइया० पुच्छा ?

५० उत्तर—गंगेया ! सयं पुढविक्काइया जाव उववज्जंति, णो असयं पुढविक्काइया जाव उववज्जंति।

प्रश्न—से केणट्ठेणं जाव उववज्जंति ?

उत्तर—गंगेया ! कम्मोदएणं, कम्मगुरुयत्ताए, कम्मभारियत्ताए, कम्मगुरुसंभारियत्ताए सुभा-सुभाणं कम्माणं उदएणं, सुभा-सुभाणं कम्माणं विवागेणं, सुभा-सुभाणं कम्माणं फलविवागेणं सयं पुढवि-क्काइया जाव उववज्जंति, णो असयं पुढविक्काइया जाव उववज्जंति, से तेणट्ठेणं जाव उववज्जंति। एवं जाव मणुस्सा। वाणमंतर-जोइ-सिय-वेमाणिया जहा असुरकुमारा। से तेणट्ठेणं गंगेया ! एवं वुच्चइ—सयं वेमाणिया जाव उववज्जंति, णो असयं जाव उववज्जंति।

कठिन शब्दार्थ—कम्मोदएणं—कर्मोदय से, **कम्मगुरुयत्ताए**—कर्म की गुरुता से, **विवा-गेणं**-विपाक से, **कम्मोवसमेणं**—कर्म उपशांत होने पर, **कम्मविगईए**—कर्म के अभाव से।

भावार्थ—४८ प्रश्न—हे भगवन् ! क्या नैरयिक नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, या अस्वयं उत्पन्न होते हैं ?

४८ उत्तर-हे गांगेय ! नैरयिक नैरयिकों, में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहते है ?

उत्तर-हे गांगेय ! कर्म के उदय से, कर्म के गुरुपन से, कर्म के भारीपन से, कर्मों के अत्यन्त गुरुत्व और भारीपन से, अशुभ कर्मों के उदय से, अशुभ कर्मों के विपाक से और अशुभ कर्मों के फल-विपाक से नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं नहीं होते । इस कारण हे गांगेय ! यह कहा गया है कि नैरयिक, नैरयिकों में स्वयं उत्पन्न होते है, अस्वय उत्पन्न नहीं होते ।

४९ प्रश्न—हे भगवन् ! क्या असुरकुमार, असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, या अस्वयं ?

४९ उत्तर-हे गांगेय ! असुरकुमार, असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है ?

उत्तर-हे गांगेय ! कर्म के उदय से, अशुभ कर्म के उपशम से, अशुभ कर्म के अभाव से, कर्म की विशोधि से, कर्मों की विशुद्धि से, शुभ कर्मों के उदय से, शुभ कर्मों के विपाक से और शुभ कर्मों के फल-विपाक से असुरकुमार असुरकुमारों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते । इसलिये हे गांगेय ! पूर्वोक्त रूप से कहा गया है । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक जानना चाहिये ।

५० प्रश्न-हे भगवन् ! क्या पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, या अस्वयं उत्पन्न होते हैं ?

५० उत्तर-हे गांगेय ! पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण कहते है कि 'पृथ्वीकायिक स्वयं उत्पन्न होते हैं,' इत्यादि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तर—हे गांगेय ! कर्म के उदय से, कर्म के गुरुपन से, कर्म के भारीपन से, कर्म के अत्यन्त गुरुत्व और भारीपन से, शुभ और अशुभ कर्मों के उदय से, शुभ और अशुभ कर्मों के विपाक से और शुभाशुभ कर्मों के फल-विपाक से पृथ्वीकायिक, पृथ्वीकायिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते। इसलिये हे गांगेय ! पूर्वोक्त रूप से कहा गया है। इसी प्रकार यावत् मनुष्य तक जानना चाहिये। जिस प्रकार असुरकुमारों के विषय में कहा, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिकों के विषय में भी जानना चाहिये। इसलिये हे गांगेय ! इस कारण ऐसा कहता हूँ कि 'यावत् वैमानिक, वैमानिकों में स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते।'

विवेचन—यद्यपि 'प्रवेशनक' से पूर्व नैरयिक आदि जीवों के उत्पाद आदि का तथा सान्तरादि का कथन किया गया है, तथापि यहां जो पुनः कथन किया जाता है, इसका कारण यह है कि पहले नैरयिक आदि के प्रत्येक का उत्पाद और उद्वर्तना का सान्तरादि कथन किया गया है। यहाँ नैरयिक आदि सभी जीवों के उत्पाद और उद्वर्तना का समुदित (सम्मिलित) रूप से कथन किया जाता है।

सत् अर्थात् 'द्रव्य रूप से विद्यमान' नैरयिक ही नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, असत् (अविद्यमान) उत्पन्न नहीं होते। क्योंकि सर्वथा असत् द्रव्य कोई भी उत्पन्न नहीं होता। वह तो 'खरविषाण' (गधे के सींग) के समान असत् है। इन जीवों में 'सत्त्व' जीव द्रव्य की अपेक्षा, अथवा नैरयिक पर्याय की अपेक्षा समझना चाहिये, क्योंकि भावी नैरयिक पर्याय की अपेक्षा द्रव्य से नैरयिक ही नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं। अथवा यहाँ से मरकर नरक में जाते समय विग्रह गति में नरकायु का उदय हो जाता है, इसलिये वे भाव-नारक हैं और भाव-नारक होकर ही नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं।

जो जीव, नरक में उत्पन्न होता है, वह पहले से उत्पन्न हुए नैरयिकों में उत्पन्न होता है, किन्तु असत् नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होता, क्योंकि लोक शाश्वत है। इसलिये नैरयिक आदि का सदा सद्भाव रहता है।

"लोक शाश्वत है, ऐसा पुरुषादानीय भगवान् पार्श्वनाथ ने भी फरमाया है,"—ऐसा कहकर भगवान् महावीर ने गांगेय सम्मत सिद्धान्त के द्वारा अपने कथन की पुष्टि की है।

गांगेय के प्रश्न के उत्तर में भगवान् ने कहा कि इन सब बातों को मैं किसी अनु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मान के द्वारा नहीं, किन्तु स्वयं आत्मा द्वारा जानता हूँ तथा किसी दूसरे पुरुषों के वचनों को सुनकर नहीं जानता, अपितु पारमार्थिक प्रत्यक्ष स्वरूप केवलज्ञान के द्वारा मैं स्वयं जानता हूं।

'नैरयिक स्वयं उत्पन्न होते हैं, अस्वयं उत्पन्न नहीं होते'-यह कथन कर के जीव के लिये 'ईश्वर परतन्त्रता' का खण्डन किया गया है। जैसा कि किन्हीं मतावलम्बियों ने कहा है-

अज्ञो जन्तुरनीशोऽयमात्मनः सुखदुःखयोः ।
ईश्वरप्रेरितो गच्छेत्, स्वर्गं वा स्वभ्रमेव वा ॥

अर्थ—यह जीव अज्ञ है और अपने लिये सुख-दुःख उत्पन्न करने में असमर्थ है। ईश्वर की प्रेरणा से यह स्वर्ग में चला जाता है, अथवा नरक में चला जाता है।

यह मान्यता जैन सिद्धान्त से विपरीत है। क्योंकि जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। फिर कर्मों के वश वह स्वर्ग या नरक में जाता है, ईश्वर की प्रेरणा से नहीं जाता।

जीवों की उत्पत्ति के लिये मूल में 'कर्मोदय' आदि शब्द दिये गये हैं, उनका अर्थ इस प्रकार है। यथा-कर्मोदय-कर्मों का उदय। कर्मगुरुता-कर्मों का गुरुत्व। कर्मभारिता-कर्मों का भारीपन। कर्मगुरुसंभारिता-कर्मों के गुरुत्व और भारीपन की अति प्रकृष्ट अवस्था। विपाक-यथाबद्ध रसानुभूति। फलविपाक-रसप्रकर्षता। कर्मविगति-कर्मों का अभाव। कर्म विशोधि-कर्मों के रस की विशुद्धि। कर्मविशुद्धि—कर्मों के प्रदेशों की विशुद्धि। उपरोक्त शब्दों में किंचित् अर्थ भेद है अथवा ये सभी शब्द एकार्थक ही हैं। अर्थ प्रकर्ष को बतलाने के लिये दिये गये हैं।

गांगेय की श्रद्धा

५१ प्रश्न-तप्पभिइं च णं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं पच्चभिजाणइ सव्वण्णुं, सव्वदरिसिं। तएणं से गंगेये अणगारे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करेत्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं भंते ! तुब्भं अंतियं चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं, एवं जहा कालासवेसियपुत्तो तहेव भाणियव्वं, जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।

॥ णवमसए गंगेयो बत्तीसइमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ—तप्पभिइं-तब से लेकर, पच्चभिजाणइ—विश्वास पूर्वक जाना ।

भावार्थ-५१ प्रश्न-इसके बाद गांगेय अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को सर्वज्ञ और सर्वदर्शी जाना । पश्चात् गांगेय अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा की, वन्दना नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया-"हे भगवन् ! मैं आपके पास चार यामरूप धर्म से पांच महाव्रत रूप धर्म को अंगीकार करना चाहता हूँ ।" इस प्रकार सारा वर्णन पहले शतक के नौवें उद्देशक में कथित कालास्यवेषिकपुत्र अनगार के समान जानना चाहिये । यावत् गांगेय अनगार सिद्ध, बुद्ध, मुक्त यावत् समस्त दुःखों से रहित बने ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है ।

विवेचन-पूर्वोक्त प्रश्नोत्तरों से जब गांगेय अनगार को यह विश्वास हो गया कि श्रमण भगवान् महावीर स्वामी सर्वज्ञ, सर्वदर्शी हैं, तब उन्होंने चतुर्याम धर्म से पञ्चयाम धर्म को स्वीकार किया और क्रमशः कालान्तर में मोक्ष पधारे ।

॥ इति नौवें शतक का बत्तीसवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ९ उद्देशक ३३

ऋषभदत्त और देवानन्दा

१—तेणं कालेणं, तेणं समएणं माहणकुंडग्गामे णयरे होत्था। वण्णओ। बहुसालए चेइए। वण्णओ। तत्थ णं माहणकुंडग्गामे णयरे उसभदत्ते णामं माहणे परिवसइ; अड्ढे, दित्ते, वित्ते, जाव अपरिभूए, रिउव्वेद-जजुव्वेद-सामवेद-अथव्वणवेद जहा खंदओ, जाव अण्णेसु य बहुसु बंभण्णएसु नएसु सुपरिणिट्ठिए समणोवासए अभिगयजीवाऽजीवे, उवलद्धपुण्ण-पावे, जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तस्स णं उसभदत्तस्स माहणस्स देवाणंदा णामं माहणी होत्था, सुकुमालपाणि-पाया, जाव पियदंसणा, सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा, उवलद्धपुण्ण-पावा जाव विहरइ। तेणं कालेणं, तेणं समएणं सामी समोसढे। परिसा जाव पज्जुवासइ।

कठिन शब्दार्थ—परिवसइ—वसता (रहता) था, **अड्ढे**—समृद्ध, **दित्ते**—दीप्त (तेजस्वी) **वित्ते**—प्रसिद्ध, **अपरिभूए**—अपरिभूत (किसी से भी नहीं दबने वाला), **बंभण्णएसु**—ब्राह्मणों के शास्त्रों में, **सुपरिणिट्ठिए**—कुशल था, **सुकुमालपाणि-पाया**—जिसके हाथ पाँव बहुत सुकुमार (कोमल) थे, **पियदंसणा**—प्रियदर्शना (देखने में प्रिय)।

भावार्थ—१ उस काल उस समय में 'ब्राह्मण-कुण्डग्राम' नाम का नगर था। (वर्णन) बहुशालक नाम का चैत्य (उद्यान) था। उस ब्राह्मणकुण्ड ग्राम नामक नगर में 'ऋषभदत्त' नाम का ब्राह्मण रहता था। वह आढ्य (धनवान्) तेजस्वी, प्रसिद्ध यावत् अपरिभूत था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वणवेद में निपुण था। (शतक दो उद्देशक एक में कथित) स्कन्दक तापस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की तरह वह भी ब्राह्मणों के दूसरे बहुत से नयों (शास्त्रों) में कुशल था। वह श्रमणों का उपासक, जीवाजीवादि तत्त्वों का जानकार, पुण्य पाप को पहिचानने वाला, यावत् आत्मा को भावित करता हुआ रहता था †। उस ऋषभदत्त ब्राह्मण के 'देवानन्दा' नाम की स्त्री थी। उसके हाथ पैर सुकुमाल थे, यावत् उसका दर्शन भी प्रिय था। उसका रूप सुन्दर था। वह श्रमणोपासिका थी। वह जीवाजीवादि तत्त्वों की जानकार तथा पुण्य पाप को पहिचाननेवाली थी।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। जनता यावत् पर्युपासना करने लगी।

तएणं से उसभदत्ते माहणे इमीसे कहाए उवलद्धट्ठे समाणे हट्ठ जाव हियए, जेणेव देवाणंदा माहणी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता देवाणंदं माहणिं एवं वयासी--एवं खलु देवाणुप्पिए! समणे भगवं महावीरे आइगरे, जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी, आगासगएणं चक्केणं जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ। तं महाफलं खलु देवाणुप्पिए! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोयस्स वि सवणयाए, किमंग पुण अभिगमण-वंदण-णमंसण-पडिपुच्छण-पज्जुवासणयाए, एगस्स वि आरियस्स धम्मियस्स सुवयणस्स सवणयाए, किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए; तं गच्छामो णं देवाणुप्पिए! समणं भगवं महावीरं

† श्री ऋषभदत्तजी पहले तो वैदिक मतावलम्बी रहे होंगे, किंतु बाद में भ. पार्श्वनाथजी के सन्तानिक मुनिवरों के सम्पर्क से श्रमणोपासक बने होंगे—डोशी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वंदामो णमंसामो जाव पज्जुवासामो; एयं णं इहभवे य, परभवे य हियाए सुहाए खमाए णिस्सेसाए आणुगामियत्ताए भविस्सइ। तएणं सा देवाणंदा माहणी उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणी हट्ठ जाव हियया, करयल जाव कट्टु उसभदत्तस्स माहणस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेइ।

कठिन शब्दार्थ-इमीसे कहाए-यह कथा (बात), **उवलद्धे**-प्राप्त (ज्ञान) कर, **हट्ठ**-हृष्ट, **आगासगएण चक्केणं**-आकाशगत चक्र, **अहापडिरूवं**-यथाप्रतिरूप (कल्प के अनुसार), **विउलस्स**-विपुल, **अट्ठस्स**-अर्थ का, **हियाए**-हितकारी, **सुहाए**-सुखकारी, **खमाए**-क्षेमकारी, **णिस्सेसाए**-निःश्रेयसकारी, **आणुगामियत्ताए**-अनुगमन करने, (शुभ बन्ध करने) वाली।

भावार्थ-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन की बात सुनकर वह ऋषभदत्त ब्राह्मण बड़ा प्रसन्न हुआ। यावत् उल्लसित हृदय वाला हुआ। वह अपनी पत्नी देवानन्दा ब्राह्मणी के पास आया और इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रिये! तीर्थ की आदि के करने वाले यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी, आकाश में रहे हुए चक्र से युक्त यावत् सुखपूर्वक विहार करते हुए यहां पधारे और बहुशालक नामक उद्यान में यथायोग्य अवग्रह ग्रहण कर के यावत् विचरते हैं। हे देवानुप्रिये! तथारूप के अरिहन्त भगवान् के नाम-गोत्र के श्रवण का भी महान् फल है, तो उनके सम्मुख जाने, वन्दन नमस्कार करने, प्रश्न पूछने और पर्युपासना करने आदि से होनेवाले फल के विषय में तो कहना ही क्या है। तथा एक भी आर्य और धार्मिक सुवचन के श्रवण से महाफल होता है, तो फिर विपुल अर्थ को ग्रहण करने से महाफल हो, इसमें तो कहना ही क्या है। इसलिये हे देवानुप्रिये! अपन चलें और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दन नमस्कार करें यावत् उनकी पर्युपासना करें। यह कार्य अपने लिये इस भव में और परभव में हित, सुख, संगतता, निःश्रेयस और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शुभ अनुबन्ध के लिये होगा।' ऋषभदत्त से यह बात सुनकर देवानन्दा बडी प्रसन्न यावत् उल्लसित हृदय वाली हुई और दोनों हाथ जोड़, मस्तक पर अंजली करके ऋषभदत्त ब्राह्मण के इस कथन को विनय पूर्वक स्वीकार किया।

२-तएणं से उसभदत्ते माहणे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ. कोडुंबियपुरिसे सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! लहुकरणजुत्त-जोइय-समखुरवालिहाण-समलिहियसिंगेहिं, जंबूणयामयकलावजुत्त-परिविसिट्ठेहिं, रययामयघंटा-सुत्तरज्जुयपवरकंचणणत्थ-पग्गहोग्गहियएहिं, णीलुप्पलकयामेलएहिं, पवरगोणजुवाणएहिं णाणामणि-रयण-घंटियाजाल-परिगयं, सुजायजुग-जोत्तरज्जुयजुग-पसत्थसुविरचियणिमियं, पवरलक्खणोववेयं धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा उसभदत्तेणं माहणेणं एवं वुत्ता समाणा हट्ठ जाव हियया, करयल एवं सामी! तहत्ताणाए विणएणं वयणं जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव लहुकरणजुत्त जाव धम्मियं जाणप्पवरं जुत्तामेव उवट्ठवेत्ता जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति।

कठिन शब्दार्थ-कोडुंबियपुरिसे-कौटुम्बिक (कर्मचारी) पुरुष, **सद्दावेइ**-बुलाये, **खिप्पामेव**-क्षिप्र-शीघ्रता से, **लहुकरणजुत्ता**-शीघ्र गतिवाले साधन युक्त, **समखुरवालिहाण**-समान खुरी और पूंछ वाले, **समलिहियसिंगेहिं**-समान सिंग वाले, **जंबूणयामयकलावजुत्त**-स्वर्ण के कलाप-कंठाभरण युक्त, **सुत्तरज्जुयपवरकंचणणत्थपग्गहोग्गहियएहिं**-स्वर्णमय सूत की नाथ से बंधे हुए, **णीलुप्पलकयामेलएहिं**-नील कमल के सिरपेच युक्त, **पवरगोणजुवाणएहिं**-उत्तम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यौवन वाले बैलों से, **सुजायजुगजोत्तरज्जुयजुगपसत्थसुविरचियणिमियं**–उत्तम काष्ठ के जूए और जोत्र की युगल रस्सियों से सुनियोजित, **पवरलक्खणोववेयं**-उत्तम लक्षण युक्त, **जाणप्पवरं**–श्रेष्ठ यान–रथ, **जुत्तामेव**–जोतकर, **उवट्ठवेह**–उपस्थित करो, **एयमाणत्तियं**–यह आज्ञा, **पच्चप्पिणह**–प्रत्यर्पण करो (पीछी अर्पण करो) **तहत्ताणाए**–आज्ञा मान्यकर।

भावार्थ–२–इसके बाद ऋषभदत्त ब्राह्मण ने अपने कौटुम्बिक (सेवक) पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा–'हे देवानुप्रियो ! जल्दी चलने वाले सुन्दर और समान रूप वाले, समान खुर और पूंछ वाले, समान सींग वाले, स्वर्ण निर्मित कण्ठ के आभूषणों से युक्त, उत्तम गति (चाल) वाले चाँदी की घण्टियों से युक्त, स्वर्णमय नासारज्जु (नाथ) द्वारा बांधे हुए, नील-कमल के सिरपेच वाले दो उत्तम युवा बैलों से युक्त, अनेक प्रकार की मणिमय घण्टियों के समूह से व्याप्त, उत्तम काष्ठमय धोंसरा (जुआ) और जोत की दो उत्तम डोरियों से युक्त, प्रवर (श्रेष्ठ) लक्षण युक्त धार्मिक श्रेष्ठ यान (रथ) तैयार करके यहां उपस्थित करो और आज्ञा का पालन कर निवेदन करो (अर्थात् कार्य सम्पूर्ण होजाने की सूचना दो)। ऋषभदत्त ब्राह्मण की इस प्रकार आज्ञा होने पर वे सेवक पुरुष प्रसन्न यावत् आनन्दित हृदय वाले हुए और मस्तक पर अंजली करके इस प्रकार कहा–'हे स्वामिन् ! यह आपकी आज्ञा हमें मान्य है'–ऐसा कहकर विनय पूर्वक उसके वचनों को स्वीकार किया और आज्ञानुसार शीघ्र चलने वाले दो बैलों से युक्त यावत् धार्मिक श्रेष्ठ रथ को शीघ्र उपस्थित किया, यावत् आज्ञा पालन कर निवेदन किया।

३–तएणं से उसभदत्ते माहणे ण्हाए जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे साओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे। तएणं सा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवाणंदा माहणी अंतो अंतेउरंसि ण्हाया; कयवलिकम्मा, कय-कोउय-मंगल-पायच्छित्ता, किंच वरपायपत्तणेउर-मणिमेहला - हार-रचिय - उचियकडग - खुड्डाग - एगावली - कंठसुत्त - उरत्थगेवेज्ज - सोणि-सुत्तग-णाणामणि- रयणभूसणविराइयंगी, चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया, दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा, सव्वोउयसुरभिकुसुमवरियसिरया, वरचंदण-वंदिया, वराभरणभूसियंगी, कालागरुधूवधूविया, सिरिसमाणवेसा, जाव अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरा, वहूहिं खुज्जाहिं, चिलाइयाहिं, णाणादेस-विदेसपरिपिंडियाहिं, सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं, इंगिय-चिंतिय-पत्थियवियाणियाहिं, कुसलाहिं, विणीयाहिं, चेडियाचक्कवाल-वरिसधर-थेरकंचुइज्ज-महत्तरगवंदपरिक्खित्ता अंतेउराओ णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव धम्मिए जाण-प्पवरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता जाव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा।

कठिन शब्दार्थ—ण्हाए—स्नान किया, **अप्पमहग्घाभरणालंकियसरीरे**–अल्प किंतु महामूल्यवान् आभरणों से शरीर को अलंकृत करके, **साओ**—स्वयं के, **गिहाओ**—घर से, **पडिणिक्खमइ**–निकला, **बाहिरिया**–बाहर की, **उवट्ठाणसाला**–उपस्थानशाला, **उवागच्छइ**–उपागच्छति–आया, **दुरूढे**–आरूढ (सवार) हुआ, **अंतो**–भीतर के, **अंतेउरंसि**—अन्तःपुर के, **कयबलिकम्मा**—कृतबलिकर्म अर्थात् स्नान के समय करने योग्य कार्य (यह शब्द जहाँ स्नान का अर्थ संक्षिप्त में बतलाना होता है, वहां प्रयुक्त होता है), **कयकोउय**–कौतुक किया, **मंगल-पायच्छित्ता**—मंगल और प्रायश्चित्त किया, **वरपायपत्तणेउर**—पाँवों में उत्तम नूपुर पहने, **मणिमेहला**—मणि जड़ित मेखला (कन्दोरा), **हाररचिय**–हार (माला) से सुशोभित, **उचिय-कडग**—उचित कड़े, **खुड्डाग**—अंगुठियाँ, **एकावली-कंठसुत्त**–एक लड़ीवाला कंठसूत्र (माला,)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उरत्थगेवेज्ज-हृदय पर रहे हुए ग्रैवेयक (आभूषण), **सोणिसुत्तग**-कटिसूत्र, **णाणामणिरयण-भूसण-विराइयंगी**-जिसके अंग (शरीर) पर विविध प्रकार के मणि एवं रत्नों के आभूषण विराज रहे (शोभित हो रहे) हैं, **चीणंसुयवत्थपवरपरिहिया**-चीनांशुक (रेशमी) उत्तम वस्त्र को पहिनकर, **दुगुल्लसुकुमालउत्तरिज्जा**-ऊपर सुकोमल वस्त्र ओढ़कर, **सव्वोउयसुरभि-कुसुमवरियसिरया**-सभी ऋतुओं के उत्तम पुष्पों से अपने केशों को गूंथ कर, **वरचंदणवंदिया**-ललाट पर उत्तम चन्दन लगाकर, **वराभरणभूसियंगी**-उत्तम आभूषणों से शरीर को शृंगारित करके, **कालागरुधूवधूविया**-कालागरु के धूप से धूपित होकर, **सिरिसमाणवेसा**-श्री--लक्ष्मी के समान वेशवाली, **खुज्जाहिं**-दासियों के साथ, **चिलाइयाहिं**-चिलात देश की, **परिपिंडियाहिं**-एकत्रित हुई, **सदेसणेवत्थगहियवेसाहिं**-अपने देश की विभूषानुसार वेश पहिनी हुई, **इंगिय-चिंतियपत्थियवियाणियाहिं**-संकेत से ही मन-चिंतित एवं इच्छित इष्ट विषय को जानने वाली, **कुसलाहिं**-कुशलता युक्त, **विणीयाहिं**-विनय करने वाली, **चेडियाचक्कवाल**-दासियों से घिरी हुई, **वरिसधर**-वर्षधर (नपुंसक बनाये हुए अन्तःपुर रक्षक), **थेरकंचुइज्ज**-वृद्ध कंचुकी (अंतःपुर के कार्य का निवेदन करने वाला, प्रतिहारी), **महत्तरगवंदपरि-क्खित्ता**-मान्य पुरुषों के वृन्द सहित, **णिग्गच्छइ**-निकली।

भावार्थ-३ तब ऋषभदत्त ब्राह्मण ने स्नान किया यावत् अल्प भार और महामूल्य वाले आभूषणों से अपने शरीर को अलंकृत किया और घर से बाहर निकल कर जहां बाहरी उपस्थान शाला है और जहां धार्मिक श्रेष्ठ रथ है वहां आया, आकर रथ पर चढ़ा।

तब देवानन्दा ब्राह्मणी ने अंतःपुर में स्नान किया, बलिकर्म किया (स्नान संबंधी कार्य किये) कौतुक (मषि-तिलक), मंगल और प्रायश्चित्त किया (अनिष्ट निवारण के लिए योग्य कार्य किया) फिर पैरों में पहनने के सुन्दर नूपुर, मणि युक्त मेखला (कन्दोरा), हार, उत्तम कङ्कण अंगुठियां, विचित्र मणिमय एकावली (एक लड़ा) हार कण्ठ-सूत्र, ग्रैवेयक (वक्षस्थल पर रहा हुआ गले का लम्बा हार), कटिसूत्र और विचित्र मणि तथा रत्नों के आभूषण, इन सब से शरीर को सुशोभित करके, उत्तम चीनांशुक (वस्त्र) पहनकर शरीर पर सुकुमाल रेशमी वस्त्र ओढ़कर, सब ऋतुओं के सुगन्धित फूलों से अपने केशों को गूंथकर, कपाल पर चन्दन लगाकर, उत्तम आभूषणों से शरीर को अलंकृत कर, काला-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुरु के धूप से सुगन्धित होकर, लक्ष्मी के समान वेषवाली यावत् अल्पभार और बहुमूल्यवाले आभरणों से शरीर को अलंकृत करके, बहुतसी कुब्जा दासियां, अपने देश की दासियां यावत् अनेक देश-विदेशों से आकर एकत्रित हुई दासियां अपने देश के वेष धारण करनेवाली, इंगित–आकृति द्वारा चिन्तित और इष्ट अर्थ को जाननेवाली कुशल और विनम्र सम्पन्न दासियों के परिवार सहित तथा स्वदेश की दासियां, खोजा पुरुष, वृद्ध कंचुकी और मान्य पुरुषों के समूह के साथ वह देवानन्दा अपने अन्तःपुर से निकली और जहां बाहर की उपस्थान शाला है और जहां धार्मिक श्रेष्ठ रथ खड़ा है वहां आई और उस धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर चढ़ी।

तएणं से उसभदत्ते माहणे देवाणंदाए माहणीए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढे समाणे णियगपरियालसंपरिवुडे माहणकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता छत्ताईए तित्थगराइसए पासइ, पासित्ता धम्मियं जाणप्पवरं ठवेइ, ठवित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ पच्चोरुहित्ता समणं भगवं महावीरं पंच-विहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ; तं जहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउ-सरणयाए, एवं जहा बिइयसए जाव तिविहाए पज्जुवासणयाए पज्जुवासइ। तएणं सा देवाणंदा माहणी धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता बहूहिं खुज्जाहिं, जाव महत्तरगवंद-परिक्खित्ता समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गच्छइ, तं जहा–सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए, अचित्ताणं दव्वाणं अविमोयणयाए, विणयोणयाए गायलट्ठीए, चक्खुप्फासे अंजलिपग्गहेणं, मणस्स एगत्तीभावकरणेणं; जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता उसभदत्तं माहणं पुरओ कट्टु ट्ठिया चेव सपरिवारा सुस्सूसमाणी, णमंसमाणी, अभिमुहा विणएणं पंजलिउडा जाव पज्जुवासइ।

४–तएणं सा देवाणंदा माहणी आगयपण्हाया, पप्फुयलोयणा संवरियवलयबाहा, कंचुयपरिक्खित्तिया धाराहयकलंबगं पिव समूसवियरोमकूवा समणं भगवं महावीरं अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी+ चिट्ठइ।

कठिन शब्दार्थ–**सद्धिं**–साथ, **णियगपरियाल संपरिवुडे**–अपने परिवार से घिरी हुई, **तित्थगराइसए**–तीर्थङ्कर के अतिशय, **ठवेइ**–स्थिर किया- खड़ा रखखा, **पच्चोरुहइ**-नीचे उतरे, **अभिगमेणं अभिगच्छइ**–धर्म सभा में जाने योग्य अभिगम (नियम) से गये, **सचित्ताणं दव्वाणं विउसरणयाए**–सचित्त द्रव्य का त्यागना, **अचित्ताणं दव्वाणं अविउसरणयाए**–अचित्त द्रव्य मर्यादित करना, **एगसाडिएणं उत्तरासंगकरणेणं**–एक (विना सिये) वस्त्र का उत्तरासंग करना, **चक्खुप्फासे अंजलिप्पग्गहेणं**–भगवान् के दृष्टि गोचर होते ही हाथ जोड़कर मस्तक पर लगाना, **मणस्स एगत्तीभावकरणेणं**–मन को एकाग्र करना, **पुरओ कट्टु**–आगे करके, **ट्ठिया**–ठहरी, **आगय पण्हाया**–आयात प्रश्रवा (स्तन में दूध आया) **पप्फुयलोयणा**–प्रफुल्ल-लोचना (नयन

+ "देहमाणी" पाठ कई प्रतियों में है। इसीसे मिलता हुआ पाठ अंतगडदसा वर्ग ३ अ० ८ में है, वहां 'पेहमाणी' है। अर्थ दोनों का समान ही है—डोशी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हर्षित हुए) **संवरियवलय बाहा**– हर्ष से फूलती हुई भुजाओं को कड़ों ने रोकी, **कंचुयपरिक्खित्ता**–कंचुकी विस्तृत हुई, **धाराहयकलंबगं**–मेघधारा से विकसित कदम्ब पुष्प की तरह, **समूसवियरोमकूवा**–रोमकूप विकसित हुए, **अणिमिसाए**–अनिमेष दृष्टि से, **पेहमाणी**–देखती हुई।

भावार्थ–इसके बाद वह ऋषभदत्त ब्राह्मण देवानन्दा ब्राह्मणी के साथ धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर चढ़ा हुआ और अपने परिवार से परिवृत, ब्राह्मणकुण्ड ग्राम नामक नगर के मध्य में होता हुआ निकला और बहुशालक उद्यान में आया। तीर्थङ्कर भगवान् के छत्र आदि अतिशयों को देख कर उसने धार्मिक श्रेष्ठ रथ को खड़ा रखा और नीचे उतरा। रथ पर से उतर कर वह श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास पाँच प्रकार के अभिगम से जाने लगा। वे अभिगम इस प्रकार हैं। यथा:–'सचित्त द्रव्यों का त्याग करना,' इत्यादि दूसरे शतक के पाँचवें उद्देशक में कहे अनुसार यावत् तीन प्रकार की उपासना करने लगा। देवानन्दा ब्राह्मणी भी धार्मिक रथ से नीचे उतरी और अपनी दासियाँ आदि के परिवार से परिवृत होकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास पांच प्रकार के अभिगम युक्त जाने लगी। वे अभिगम इस प्रकार हैं;–(१) सचित्त द्रव्य का त्याग करना, (२) अचित्त द्रव्य का त्याग नहीं करना अर्थात् वस्त्रादिक को समेट कर व्यवस्थित करना, (३) विनय से शरीर को अवनत करना (नीचे की ओर झुका देना), (४) भगवान् के दृष्टिगोचर होते ही दोनों हाथ जोड़ना और (५) मन को एकाग्र करना। इन पांच अभिगम द्वारा जहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हैं, वहाँ आई और भगवान् को तीन बार आदक्षिण-प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार के बाद ऋषभदत्त ब्राह्मण को आगे कर अपने परिवार सहित शुश्रूषा करती हुई और नत बन कर सन्मुख स्थित रही हुई, विनय पूर्वक हाथ जोड़ कर उपासना करने लगी।

(४) इसके बाद उस देवानन्दा ब्राह्मणी के पाना चढ़ा अर्थात् उसके स्तनों में दूध आया। उसके नेत्र आनन्दाश्रुओं से भीग गये। हर्ष से प्रफुल्लित होती हुई उसकी भुजाओं को वलयों ने रोका (उसकी भुजाओं के कडे तंग हो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गये) हर्ष से उसका शरीर प्रफुल्लित हो गया। उसकी कंचुकी विस्तीर्ण हो गई। मेघ की धारा से विकसित कदम्ब पुष्प के समान उसका सारा शरीर रोमाञ्चित हो गया। वह श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की ओर अनिमेष दृष्टि से देखने लगी।

विवेचन-ऋषभदत्त ब्राह्मण और देवानन्दा ब्राह्मणी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर चढ़कर भगवान् के दर्शन करने के लिये गये। भगवान् को वन्दनार्थ जाते हुए उन्होंने पाँच अभिगम किये। यथा-(१) सचित्त द्रव्य, जैसे-पुष्प, ताम्बूल आदि का त्याग करना। (२) अचित्त द्रव्य,-वस्त्र आदि को मर्यादित करना (३) एक पटवाले दुपट्टे का उत्तरासंग करना। (४) मुनिराज के दृष्टिगोचर होते ही हाथ जोड़ना और (५) मन को एकाग्र करना। साधु-साध्वियों के पास जाते समय श्रावक-श्राविकाओं को पांच अभिगमों का पालन करना चाहिये। साधु साध्वियों के सन्मुख जाते समय पाले जाने वाले नियमों को 'अभिगम' कहते हैं। श्राविका के अभिगमों में थोड़ा सा अन्तर है। वह यह हैं-तीसरे अभिगम के स्थान पर 'विनय से शरीर को झुका देना'-कहना चाहिये।

भगवान् को देखते ही देवानन्दा के नेत्र आनन्दाश्रुओं से भर गये। मेघधारा से विकसित कदम्ब पुष्प के समान उसका सारा शरीर रोमाञ्चित हो उठा। उसकी कञ्चुकी तंग हो गई और स्तनों में दूध आ गया।

५ प्रश्न-भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-किं णं भंते ! एसा देवाणंदा माहणी आगयपण्हया, तं चेव जाव रोमकूवा देवाणुप्पियं अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी चिट्ठइ ?

५ उत्तर-गोयमाइ ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी-एवं खलु गोयमा ! देवाणंदा माहणी ममं अम्मगा, अहं णं देवाणंदाए माहणीए अत्तए; तएणं सा देवाणंदा माहणी तेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुव्वपुत्तसिणेहरागेणं आगयपण्हया, जाव समूसवियरोमकूवा ममं अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी चिट्ठइ। तएणं समणे भगवं महावीरे उसभदत्तस्स माहणस्स देवाणंदाए माहणीए तीसे य महति-महालियाए इसिपरिसाए जाव परिसा पडिगया।

कठिन शब्दार्थ-अम्मगा-माता, अत्तए-आत्मज, पुव्वपुत्तसिणेहरागेणं-पूर्व के पुत्र-स्नेहानुराग से, इसिपरिसाए-ऋषियों की परिषद को।

भावार्थ-५ प्रश्न-इसके पश्चात् 'हे भगवन् !' ऐसा कहकर गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार किया। वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-'हे भगवन् ! इस देवानन्दा ब्राह्मणी को किस प्रकार पाना चाढ़ा (इसके स्तनों में से दूध कैसे आगया) यावत् उसको रोमाञ्च किस प्रकार हुआ ? और आप देवानुप्रिय की ओर अनिमेष दृष्टि से देखती हुई क्यों खडी है ?

५ उत्तर-'हे गौतम !'-ऐसा कहकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने गौतम स्वामी से इस प्रकार कहा-"हे गौतम ! यह देवानन्दा मेरी माता है, मैं देवानन्दा का आत्मज (पुत्र) हूँ। इसलिये देवानन्दा को पूर्व के पुत्र-स्नेहानुराग से पाना चढ़ा यावत् रोमाञ्च हुआ और यह मेरी ओर अनिमेष दृष्टि से देखती हुई खडी है।"

इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने ऋषभदत्त ब्राह्मण, देवानन्दा ब्राह्मणी और उस बडी ऋषिपरिषद् आदि को धर्म-कथा कही, यावत् परिषद् वापिस चली गई।

६-तएणं से उसभदत्ते माहणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता एवं वयासी—एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! जहा खंदओ जाव से जहेयं तुब्भे वदह त्ति कट्टु उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरण-मल्ला-ऽलंकारं ओमुयइ, सयमेव०ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं, जाव णमंसित्ता एवं वयासी—आलित्ते णं भंते ! लोए, पलित्ते णं भंते ! लोए, आलित्तपलित्ते णं भंते ! लोए जराए मरणेण य, एवं एएणं कमेणं जहा खंदओ तहेव पव्वइओ, जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, जाव बहूहिं चउत्थ-छट्ठ-ट्ठम-दसम-जाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ, झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव तमट्ठं आराहेइ, आराहेत्ता जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।

कठिन शब्दार्थ—**एवमेयं**—इसी प्रकार, **तहमेयं**—उसी प्रकार, **अवक्कमइ**—जाकर, **लोयं**—लोच, **आलित्ते**—जल रहा है, **पलित्ते**—प्रज्वलित हो रहा है, **जस्सट्ठाए**—जिसके लिए ।

भावार्थ—६—श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्म श्रवण कर और हृदय में धारण कर के ऋषभदत्त ब्राह्मग बड़ा प्रसन्न हुआ, तुष्ट हुआ । उसने खडे होकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की तीन बार प्रदक्षिणा की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यावत् नमस्कार किया और इस प्रकार निवेदन किया कि 'हे भगवन् ! आपका कथन यथार्थ है,' 'हे भगवन् ! आपका कथन यथार्थ है।' इत्यादि दूसरे शतक के पहले उद्देशक में स्कन्दक तापस के प्रकरण में कहे अनुसार यावत् 'जो आप कहते हैं वह उसी प्रकार है।' इस प्रकार कह कर ऋषभदत्त ब्राह्मण ईशानकोण की ओर गया और स्वयमेव आभरण, माला और अलंकारों को उतार दिया। फिर स्वयमेव पञ्चमुष्टि लोच किया और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आया। भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा की यावत् नमस्कार करके इस प्रकार कहा—"हे भगवन् ! जरा और मरण से यह लोक चारों ओर प्रज्वलित है, हे भगवन् ! यह लोक चारों ओर अत्यन्त प्रज्वलित है।" इस प्रकार कहकर स्कन्दक तापस की तरह प्रव्रज्या अंगीकार की, यावत् सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और बहुत से उपवास, बेला, तेला, चौला आदि विचित्र तप-कर्म से आत्मा को भावित करते हुए बहुत वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया और एक मास की संलेखना से आत्मा को संलिखित करके साठ भक्तों के अनशनों का छेदन किया और जिसके लिये नग्न-भाव (निर्ग्रंथपन—संयम) स्वीकार किया था यावत् उस निर्वाण रूप अर्थ की आराधना करली यावत् वे सर्व दुःखों से मुक्त हुए।

७—तएणं सा देवाणंदा माहणी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठा तुट्ठा समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं, जाव णमंसित्ता एवं वयासी—एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! एवं जहा उसभदत्तो तहेव जाव धम्मं आइक्खियं। तएणं समणे भगवं महावीरे देवाणंदं माहणिं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव पव्वावित्ता सयमेव अज्जचंदणाए अज्जाए सीसिणित्ताए दल-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यइ। तएणं सा अज्जचंदणा अज्जा देवाणंदामाहणिं सयमेव पव्वावेइ, सयमेव मुंडावेइ, सयमेव सेहावेइ, एवं जहेव उसभदत्तो तहेव अज्जचंदणाए अज्जाए इमं एयारूवं धम्मियं च उवएसं संमं संपडिवज्जइ, तमाणाए तहा गच्छइ, जाव संजमेणं संजमइ। तएणं सा देवाणंदा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतियं सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, सेसं तं चेव, जाव सव्वदुक्खप्पहीणा।

कठिन शब्दार्थ-आइक्खियं-कहा, दलयइ-देते हैं, सेहावेइ-शिक्षित करती है, सव्वदुक्खप्पहीणा-समस्त दुःखों को नष्ट कर मुक्त हुई।

भावार्थ-७-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्म सुनकर और हृदय में धारण करके देवानन्दा ब्राह्मणी* हृष्ट (आनन्दित) और तुष्ट हुई। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार प्रदक्षिणा कर यावत् नमस्कार कर इस प्रकार बोली-'हे भगवन् ! आपका कथन यथार्थ है।' इस प्रकार ऋषभदत्त ब्राह्मण के समान कहकर निवेदन किया कि-हे भगवान् ! मैं प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहती हूँ। तब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने देवानन्दा को स्वयमेव दीक्षा दी। दीक्षा देकर आर्यचन्दना आर्या को शिष्या रूप में दिया। इसके पश्चात् आर्या चन्दना ने आर्या देवानन्दा को स्वयमेव प्रव्रजित किया, स्वयमेव मुण्डित किया, स्वयमेव शिक्षा दी। देवानन्दा ने भी ऋषभदत्त ब्राह्मण के समान आर्याचन्दना के वचनों को स्वीकार किया और उनकी आज्ञानुसार पालन करने लगी यावत् संयम में प्रवृत्ति करने लगी। देवानन्दा आर्या ने आर्यचन्दना आर्या के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। शेष वर्णन पूर्ववत् है यावत् वह देवानन्दा आर्या सभी दुःखों से मुक्त हुई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमाली चरित्र

८—तस्स णं माहणकुंडग्गामस्स णयरस्स पच्चत्थिमेणं एत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे णामं णयरे होत्था। वण्णओ। तत्थ णं खत्तियकुंडग्गामे णयरे जमाली णामं खत्तियकुमारे परिवसइ, अड्ढे दित्ते, जाव अपरिभूए उप्पिं पासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंगमत्थएहिं बत्तीसइबद्धेहिं णाडएहिं णाणाविहवरतरुणीसंपउत्तेहिं उवणच्चिज्जमाणे-उवणच्चिज्जमाणे, उवगिज्जमाणे-उवगिज्जमाणे, उवलालिज्जमाणे-उवलालिज्जमाणे, पाउस-वासारत्त-सरय-हेमंत वसंत-गिम्हपज्जंते छप्पि उऊ जहाविभवेणं माणमाणे, कालं गालेमाणे, इट्ठे सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरइ। तएणं खत्तियकुंडग्गामे णयरे सिंघाडग-तिक-चउक्क-चच्चर-जाव बहुजणसद्दे इ वा जहा उववाइए जाव एवं पण्णवेइ, एवं परूवेइ, एवं खलु देवाणुप्पिया! समणे भगवं महावीरे आइगरे, जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स णयरस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं जाव विहरइ। तं महप्फलं खलु देवाणुप्पिया! तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं जहा उववाइए जाव एगाभिमुहे खत्तियकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे णयरे जेणेव बहुसालए चेइए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं जहा उववाइए, जाव तिविहाए पज्जुवासणयाए पज्जुवासइ ।

कठिन शब्दार्थ-पच्चत्थिमेणं-पश्चिम दिशा, **उप्पि**-ऊपर के. **पासायवरगए**-उत्तम प्रासाद (भवन) में, **फुट्टमाणेहिं**---अति आस्फालन से (बजाने से) आवाज करते हुए, **मुइंग-मत्थएहिं**-मृदंग के मस्तक से, **णाडएहिं**-नाटक से, **णाणाविहवरतरुणीसंपउत्तेहिं**-अनेक प्रकार की सुन्दर युवतियों से, **उवणच्चिज्जमाणे**-नचाता हुआ, **उवगिज्जमाणे**-स्तुति कराता हुआ **उवलालिज्जमाणे**-काम-क्रीड़ा करता हुआ, **पाउस**---प्रावृट्, **वासारत्त**-वर्षा, **गिम्हपज्जंते**-ग्रीष्म पर्यन्त, **छप्पि**-छह, **जहाविभवेणं**-अपने वैभव के अनुसार, **माणमाणे**-सुखानुभव करता हुआ, **कालं गालेमाणे**-समय व्यतीत करता हुआ, **पच्चणुब्भवमाणे**-अनुभव करता हुआ ।

भावार्थ-८-उस ब्राह्मणकुण्ड ग्राम नामक नगर के पश्चिम दिशा में क्षत्रियकुण्ड ग्राम नामक नगर था। उस क्षत्रियकुण्ड ग्राम नामक नगर में जमाली नाम का क्षत्रियकुमार रहता था। वह आढ्य, (धनिक) दीप्त-तेजस्वी यावत् अपरिभूत था। वह अपने उत्तम भवन पर, जिसमें मृदंग बज रहे हैं, अनेक प्रकार की सुन्दर युवतियों द्वारा सेवित है, बत्तीस प्रकार के नाटकों द्वारा हस्त-पादादि अवयव जहां नचाए जा रहे हैं, जहां बारबार स्तुति की जा रही है, अत्यन्त खुशियां मनाई जा रही हैं, उस भवन में प्रावृट्, वर्षा, शरद, हेमन्त, बसन्त और ग्रीष्म, इन छह ऋतुओं में अपने वैभव के अनुसार सुख का अनुभव करता हुआ, समय बिताता हुआ, मनुष्य सम्बन्धी पांच प्रकार के इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गन्ध, इन काम भोगों का अनुभव करता हुआ रहता था।

क्षत्रियकुंड ग्राम नामक नगर में शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क और चत्वर में यावत् बहुत-से मनुष्यों का कोलाहल हो रहा था, इत्यादि सारा वर्णन औपपातिक सूत्र में कहे अनुसार जानना चाहिये, यावत् बहुत-से मनुष्य परस्पर इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि-'हे देवानुप्रियो ! आदिकर (धर्म-तीर्थ की आदि करने वाले) यावत् सर्वज्ञ-सर्वदर्शी, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी, इस ब्राह्मणकुंड ग्राम नगर के बाहर, बहुशाल नामके उद्यान में यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके यावत् विचरते हैं। हे देवानुप्रियो ! तथारूप अरिहन्त भगवान् के

नाम, गोत्र के श्रवण मात्र से भी महाफल होता है, इत्यादि औपपातिक सूत्र के अनुसार वर्णन जानना चाहिये, यावत् वह जन-समूह एक दिशा की ओर जाता है और क्षत्रियकुंड ग्राम नामक नगर के मध्य में होता हुआ, बाहर निकलता है और बहुशालक उदयान में आता है। इसका सारा वर्णन औपपातिक सूत्र के अनुसार जानना चाहिये, यावत् वह जन-समूह तीन प्रकार की पर्युपासना करता है।

तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स तं महया जणसद्दं वा जाव जणसण्णिवायं वा सुणमाणस्स वा पासमाणस्स वा अयं एयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-"किं णं अज्ज खत्तियकुंडग्गामे णयरे इंदमहे इ वा, खंदमहे इ वा, मुगुंदमहे इ वा, णागमहे इ वा, जक्खमहे इ वा, भूयमहे इ वा, कूवमहे इ वा, तडागमहे इ वा, णईमहे इ वा, दहमहे इ वा, पव्वयमहे इ वा, रुक्खमहे इ वा, चेइयमहे इ वा, थूभमहे इ वा, जण्णं एए बहवे उग्गा, भोगा, राइण्णा, इक्खागा, णाया, कोरव्वा, खत्तिया, खत्तियपुत्ता, भडा, भडपुत्ता, जहा उववाइए, जाव सत्थवाहप्पभिइओ ण्हाया, कयवलिकम्मा जहा उववाइए, जाव णिग्गच्छंति" एवं संपेहेइ, एवं संपेहित्ता कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेइ, कं० सद्दावित्ता एवं वयासी-किं णं देवाणुप्पिया! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे णयरे इंदमहे इ वा, जाव णिग्गच्छंति? तएणं से कंचुइज्जपुरिसे जमालिणा खत्तियकुमारेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-तुट्ठे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समणस्स भगवओ महावीरस्स आगमणगहियविणिच्छए करयल० जमालिं खत्तियकुमारं जएणं विजएणं वद्धावेइ, वद्धावित्ता एवं वयासी--णो खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज खत्तियकुंडग्गामे णयरे इंद-महे इ वा, जाव णिग्गच्छंति; एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी माहणकुंडग्गामस्स णय-रस्स बहिया बहुसालए चेइए अहापडिरूवं उग्गहं जाव विहरइ। तएणं एए बहवे उग्गा भोगा, जाव अप्पेगइया वंदणवत्तियं जाव णिग्गच्छंति। तएणं से जमाली खत्तियकुमारे कंचुइपुरिसस्स अंतियं एयं अट्ठं सोच्चा, णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, को० सद्दावेत्ता एवं वयासी--खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! चाउग्घंटं आसरहं जुत्तामेव उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिणा खत्तियकुमारेण एवं वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति।

कठिन शब्दार्थ-**इंदमहे**-इन्द्र महोत्सव, **खंदमहे**-स्कन्ध महोत्सव, **मुगुंदमहे**-मुकुन्द महोत्सव, **भडा**-भट, **सत्थवाहप्पभिइओ**-सार्थवाह प्रभृति (इत्यादि), **आगमणगहियविणि-च्छए**-आगमन का निश्चय करके, **आसरहं**-अश्वरथ।

भावार्थ-बहुत से मनुष्यों के शब्द और कोलाहल सुनकर और अवधारण कर क्षत्रियकुमार जमाली के मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ कि-"क्या आज क्षत्रियकुंड ग्राम नगर में इन्द्र का उत्सव है, स्कन्द का उत्सव है, वासुदेव का उत्सव है, नाग का उत्सव है, यक्ष का उत्सव है, भूत का उत्सव है, कूप-उत्सव है, तालाव-उत्सव है, नदी का उत्सव है, द्रह का उत्सव है, पर्वत का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्सव है, वृक्ष का उत्सव है, चैत्य का उत्सव है, या स्तूप का उत्सव है, कि जिससे ये सब उग्रकुल, भोगकुल, राजन्यकुल, इक्ष्वाकुकुल, ज्ञातकुल और कुरुवंश, इन सब के क्षत्रिय, क्षत्रियपुत्र, भट और भटपुत्र इत्यादि औपपातिक सूत्र में कहे अनुसार यावत् सार्थवाह प्रमुख, स्नानादि कर के यावत् बाहर निकलते हैं—इस प्रकार विचार करके जमाली क्षत्रियकुमार ने कञ्चुकी (सेवक) को बुलाया और इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रिय ! क्या आज क्षत्रियकुंड ग्राम नामक नगर के बाहर इन्द्र आदि का उत्सव है, जिससे ये सब लोग बाहर जा रहे हैं ?" जमाली क्षत्रियकुमार के इस प्रश्न को सुनकर वह कञ्चुकी पुरुष हर्षित एवं संतुष्ट हुआ। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन का निश्चय करके उसने हाथ जोड़कर जमाली क्षत्रियकुमार को जय-विजय शब्दों द्वारा बधाया। तदनन्तर उसने इस प्रकार कहा—"हे देवानुप्रिय ! आज क्षत्रियकुंड ग्राम नामक नगर के बाहर इन्द्र आदि का उत्सव नहीं है, किन्तु सर्वज्ञ, सर्वदर्शी श्रमण भगवान् महावीर स्वामी नगर के बाहर बहुशाल नामक उद्यान में पधारे हैं और यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके यावत् विचरते हैं। इसलिये ये उग्रकुल भोगकुलादि के क्षत्रिय आदि वन्दन के लिये जा रहे हैं।" कंचुकी पुरुष से यह बात सुनकर एवं हृदय में धारण करके जमाली क्षत्रियकुमार हर्षित एवं संतुष्ट हुआ और कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा—'हे देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र चार घण्टा वाले अश्वरथ को जोड़कर यहां उपस्थित करो और मेरी आज्ञा को पालन कर निवेदन करो। जमाली क्षत्रियकुमार की इस आज्ञा को सुनकर तदनुसार कार्य करके उन्हें निवेदन किया।

९ तएणं से जमालिखत्तियकुमारे जेणेव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता ण्हाए कयबलिकम्मे जाव उववाइए परिसा वण्णओ तहा भाणियव्वं, जाव चंदणोकिण्णगायसरीरे सव्वा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लंकारविभूसिए मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ, मज्जणघराओ पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता चाउग्घंटं आसरहं दुरूहइ, चाउग्घंटं आसरहं दुरूहित्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं, महया-भड-चडकरपहकरवंद-परिक्खित्ते, खत्तियकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे णयरे, जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तुरए णिगिण्हेइ, तुरए णिगिण्हित्ता रहं ठवेइ, रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता पुप्फ-तंबोला ऽऽउहमाइयं वाहणाओ य विसज्जेइ, वाहणाओ विसज्जेत्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ, एग० करित्ता आयंते, चोक्खे, परमसुइब्भूए, अंजलिमउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, ति० २ करेत्ता जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तएणं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स खत्तियकुमारस्स, तीसे य महतिमहालियाए इसि० जाव धम्मकहा, जाव परिसा पडिगया।

कठिन शब्दार्थ-सकोरंटमल्लदामेणं-कोरंट पुष्प की माला युक्त, **तुरए**-घोड़े को, **पुप्फतंबोलाऽऽउहमाइयं**-ताम्बुल पुष्प आयुधादि, **विसज्जेइ**-त्याग करता है, **आयंते**-स्वच्छ होकर, **चोक्खे**-पवित्र, **परमसुइब्भूए**-परम शुचिभूत।

भावार्थ-९-इसके बाद जमाली क्षत्रियकुमार स्नानघर में गया। वहां

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाकर स्नान-सम्बन्धी सभी क्रियापूर्वक स्नान किया यावत् औपपातिक सूत्र में वर्णित परिषद् का सारा वर्णन जानना चाहिये। यावत् चन्दन से लिप्त शरीर वाला वह जमाली सभी अलंकारों से विभूषित होकर स्नान घर से बाहर निकला और उपस्थानशाला में आकर अश्वरथ पर चढ़ा। सिर पर कोरण्ट पुष्प की माला युक्त छत्र धारण किया हुआ और महायोद्धाओं के समूह से परिवृत वह जमालीकुमार क्षत्रियकुंड ग्राम नामक नगर के मध्य में होकर बाहर निकला और बहुशालक उद्यान में आया। घोडों को रोककर रथ खड़ा किया और नीचे उतरा। फिर पुष्प, ताम्बूल, आयुध (शस्त्र) आदि तथा उपानह (जूता) छोड़ दिया और एक पट वाले वस्त्र का उत्तरासंग किया। इसके बाद परम पवित्र बनकर और मस्तक पर दोनों हाथ जोड़कर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के निकट पहुँचा। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार प्रदक्षिणा की यावत् त्रिविध पर्युपासना से उपासना करने लगा। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जमाली क्षत्रियकुमार को तथा उस बडी ऋषिगण आदि की महापरिषद् को धर्मोपदेश दिया। धर्मोपदेश श्रवण कर वह परिषद् वापिस चली गई।

१०--तएणं से जमालिखत्तियकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा, णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ जाव हियए, उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठेत्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता एवं वयासी--सद्दहामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, रोएमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, अब्भुट्ठेमि णं भंते! णिग्गंथं पावयणं, एवमेयं भंते! तहमेयं भंते! अवितहमेयं भंते! असंदिद्धमेयं भंते! जाव से जहेयं तुब्भे वयह, जं णवरं देवाणुप्पिया! अम्मापियरो आपुच्छामि, तएणं अहं देवा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वयामि। अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं।

कठिन शब्दार्थ-रोएमि-मैं रुचि करता हूँ, अब्भुट्ठेमि-मैं उद्यत (तत्पर) होता हूँ, एवमेयं-इसी प्रकार है, तहमेयं-उसी प्रकार सत्य-तथ्य है, अवितहं-अवितथ-सत्य, असंदिद्ध-सन्देह रहित।

भावार्थ-१०-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास धर्म सुनकर और हृदय में धारण करके जमाली क्षत्रियकुमार हर्षित और संतुष्ट हृदय वाला हुआ यावत् खडे होकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया और इस प्रकार कहा-"हे भगवन् ! मैं निर्ग्रंथ-प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ, हे भगवन् ! मैं निर्ग्रंथ-प्रवचन पर विश्वास करता हूँ, हे भगवन् ! मैं निर्ग्रंथ-प्रवचन पर रुचि करता हूँ, हे भगवन् ! मैं निर्ग्रंथ-प्रवचन के अनुसार प्रवृत्ति करने को तत्पर हुआ हूँ। हे भगवन् ! यह निर्ग्रन्थ-प्रवचन सत्य है, तथ्य है, असंदिग्ध है, जैसा कि आप कहते हैं। हे देवानुप्रिय ! मैं अपने माता-पिता की आज्ञा लेकर, गृहवास का त्याग करके, मुण्डित होकर आपके पास अनगार-धर्म को स्वीकार करना चाहता हूँ।"

भगवान् ने कहा;-"हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो, धर्म-कार्य में समयमात्र भी प्रमाद मत करो।"

११-तएणं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-तुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता तामेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहेइ, दुरूहित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता सकोरंट० जाव धरिज्जमाणे णं महया-

भडचडगर जाव परिक्खित्ते, जेणेव खत्तियकुंडग्गामे णयरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता खत्तियकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं, जेणेव सए गेहे, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तुरए णिगिण्हइ, णिगिण्हित्ता रहं ठवेइ, ठवित्ता रहाओ पच्चोरुहइ, रहाओ पच्चोरुहित्ता जेणेव अब्भितरिया उवट्ठाणसाला, जेणेव अम्मा-पियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अम्मा-पियरो जएणं विजएणं वद्धावेइ, जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी—एवं खलु अम्म-याओ ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे णिसंते, से वि य मे धम्मे इच्छिए, पडिच्छिए, अभिरुइए। तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो एवं वयासी—धण्णे सि णं तुमं जाया ! कयत्थे सि णं तुमं जाया ! कयपुण्णे सि णं तुमं जाया !, कयलक्खणे सि णं तुमं जाया ! जं णं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मे णिसंते, से वि य धम्मे इच्छिए, पडिच्छिए, अभिरुइए।

कठिन शब्दार्थ—**इच्छिए**—इच्छित—इष्ट, **पडिच्छिए**—प्रतीच्छित—अत्यन्त इष्ट, **अभिरुइए**—अभिरुचित—रुचिकर, **कयत्थे**—कृतार्थ हुए, **कयपुण्णे**—कृतपुण्य।

भावार्थ—११—जब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जमाली से पूर्वोक्त प्रकार से कहा तो जमाली हर्षित और संतुष्ट हुआ। उसने भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दना नमस्कार किया। फिर चार घंटा वाले अश्वरथ पर चढ़कर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास से और बहुशालक उद्यान

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से निकला, यावत् सिर पर कोरण्ट पुष्प की माला युक्त छत्र धराता हुआ और महासुभटों के समूह से परिवृत वह जमालीकुमार क्षत्रियकुंड ग्राम नगर के मध्य होता हुआ अपने घर के बाहर की उपस्थानशाला में आया और घोडों को रोक कर रथ से नीचे उतरा। वह अपने माता-पिता के पास आया और जय-विजय शब्दों से बधाकर इस प्रकार बोला—" हे माता पिता ! मैंने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्म सुना है। वह धर्म मुझे इष्ट, अत्यन्त इष्ट और रुचिकर हुआ है।"

जमालीकुमार की यह बात सुनकर उसके माता-पिता ने कहा—"हे पुत्र ! तू धन्य है, तू कृतार्थ है, तू कृतपुण्य है और कृतलक्षण है कि तूने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्म सुना है और वह धर्म तुझे इष्ट, अत्यन्त इष्ट और रुचिकर हुआ है।

१२—तएणं से जमालिखत्तियकुमारे अम्मा-पियरो दोच्चं पि एवं वयासी—एवं खलु मए अम्मयाओ ! समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मे णिसंते, जाव अभिरुइए। तएणं अहं अम्मयाओ ! संसारभउव्विग्गे, भीए जम्म-जरा-मरणेणं, तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए।

कठिन शब्दार्थ—संसार भउव्विग्गे—संसार के भय से उद्विग्न हुआ, भीए—डरा, अब्भणुण्णाए—आज्ञा होने पर।

भावार्थ—१२—जमाली क्षत्रियकुमार ने दूसरी बार अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा—"हे माता-पिता ! मैं संसार के भय से उद्विग्न हुआ हूँ, जन्म, जरा और मरण से भयभीत हुआ हूँ। अतः हे माता-पिता ! मैं आपकी आज्ञा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होने पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास मुण्डित होकर गृहवास का त्याग करके अनगार-धर्म स्वीकार करना चाहता हूँ।"

विवेचन--श्रद्धा--जहाँ तर्क का प्रवेश न हो--ऐसे धर्मास्तिकायादि द्रव्यों पर, व्याख्याता के कथन से विश्वास कर लेना 'श्रद्धा' है।

प्रतीति--व्याख्याता के साथ तर्क-वितर्क करके युक्तियों द्वारा पुण्य पाप आदि को समझ कर विश्वास करना 'प्रतीति' है।

रुचि--व्याख्याता द्वारा उपदिष्ट विषय में श्रद्धा करके उसके अनुसार तप चारित्र आदि सेवन करने की इच्छा करना 'रुचि' है।

निर्ग्रंथ-प्रवचन 'तथ्य' है अर्थात् आप्त पुरुषों के द्वारा कथन किया गया होने के कारण अभिमत है। यह निर्ग्रंथ-प्रवचन 'अवितथ' है, अर्थात् जिस प्रकार इस समय अभिमत है, उसी प्रकार यह सदा-काल अभिमत रहता है, किन्तु कभी भी अनभिमत नहीं होता।

भगवान् के पास धर्म श्रवण कर जमाली क्षत्रियकुमार को उस पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि हुई। वह उसके अनुसार प्रवृत्ति करने को तत्पर हुआ और अपने माता-पिता से दीक्षा की आज्ञा माँगने लगा।

१३--तएणं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया तं अणिट्ठं, अकंतं, अप्पियं, अमणुण्णं, अमणामं असुयपुव्वं गिरं सोच्चा, णिसम्म, सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता, सोगभरपवेवियंगमंगी, णित्तेया, दीण-विमणवयणा, करयलमलियव्व-कमलमाला, तक्खण-ओलुग्गदुब्बलसरीरलावण्णसुण्णणिच्छाया, गयसिरीया, पसिढिल-भूसण-पडंतखुण्णियसंचुण्णियधवलवलयपब्भट्ठउत्तरिज्जा, मुच्छावस-णट्ठचेयगरुई, सुकुमालविकिण्णकेसहत्था, परसुणिकत्त व्व चंपगलया, णिव्वत्तमहे व्व इंदलट्ठी, विमुक्कसंधिबंधणा कोट्टिमतलंसि धसत्ति

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सव्वंगेहिं संणिवडिया। तएणं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ससंभमोवत्तियाए तुरियं कंचणभिंगारमुहविणिग्गय-सीयल-विमल-जलधारपरिसिंच्चमाणणिव्वावियगायलट्ठी, उक्खेवय-तालियंटवीयणगजणियवाएणं, संफुसिएणं अंतेउरपरिजणेणं आसासिया समाणी, रोयमाणी, कंदमाणी, सोयमाणी, विलवमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी—तुमं सि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे, कंते, पिए, मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेसासिए, सम्मए, बहुमए, अणुमए, भंडकरंडगसमाणे, रयणे रयणब्भूए, जीविऊसविये, हिययणंदिजणणे, उंबरपुप्फमिव दुल्लहे सवणयाए, किमंग! पुण पासणयाए; तं णो खलु जाया! अम्हे इच्छामो तुब्भं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव जाया! जाव ताव अम्हे जीवामो, तओ पच्छा अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये, वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि णिरवयक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि।

कठिन शब्दार्थ—अणिट्ठं—अनिष्ट, **अकंतं**—अकांत, **अप्पियं**—अप्रिय, **अमणुण्णं**—अमनोज्ञ, **अमणामं**—अनिच्छनीय, **असुयपुव्वं**—पहले नहीं सुने ऐसे, **गिरं सोच्चा**—वाणी सुनकर, **सेयागयरोमकूवपगलंतविलीणगत्ता**—रोम कूपों में से बहते हुए पसीने से भीग गया है शरीर जिसका, **सोगभरपवेवियंगमंगी**—शोक के कारण जिसके अंग कम्पायमान हो रहे हैं, **णित्तेया**—निस्तेज (म्लान) **दीण-विमणवयणा**—जिसका मुंह दीन एवं शोकाकुल है, **करयलमलियव्वकमलमाला**—हाथों से मसली हुई कमल-माला जैसी, **तक्खणओलुग्गदुब्बलसरीरलावण्णसुण्णणिच्छाया**—जिसका शरीर तत्क्षण म्लान, दुर्बल, लावण्य शून्य एवं प्रभा रहित हो गया, **गयसिरिया**—गत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री (शोभा रहित), **पसिढिलभूसण**-आभूषण ढीले हो गए, **पडंतखुण्णियसंचुण्णियधवलवलय-पब्भट्ठउत्तरिज्जा**-श्वेत वलय (चूडियाँ) गिरकर चूर्ण होगई, उत्तरीय वस्त्र गिर गया, **मुच्छावसणट्ठचेयगरुई**-मूर्च्छा से चेतनता नष्ट होकर शरीर भारी होगया, **सुकुमालविकिण्ण-केसहत्था**-सुकोमल केश पास बिखर गया, **परसुणिकत्त व्व चंपगलया**-कुल्हाड़ी से काटी हुई चम्पकलता की तरह, **णिवत्तमहे व्व इंदलट्ठी**-निवृत्त महोत्सव के इन्द्र-ध्वज की लट्ठी (दंड) की तरह, **विमुक्कसंधिबंधणा**-शरीर के संधि-बन्धन शिथिल होगए, **कोट्टिमतलंसि-धसत्ति सव्वंगेहिं संणिवडिया**-धरती की फर्श पर धसक कर सर्वांग से गिर गई, **ससंभमोवत्ति-याए**-व्याकुलता पूर्वक उठी हुई, **तुरियं**-त्वरित, **कंचणभिंगारमुहविणिग्गयसीयलविमल-जलधारपरिसिच्चमाणणिव्वावियगायलट्ठी**-स्वर्ण कलश के मुख से निकलती हुई शीतल निर्मल जल धारा के सिंचन से स्वस्थ किया, **उक्खेवय तालियंट वीयणगजणियवाएणं**-बाँस और ताल वृक्ष के पंखे की जल बिन्दुयुक्त वायु से, **सफुसिएणं**-स्पर्श से, **अंतेउरपरिजणेणं** अंतः पुरस्थ परिजनों से, **आसासियासमाणी**-आश्वासन पाई हुई, **रोयमाणी**-रोती हुई, **कंदमाणी**-आक्रन्द करती हुई, **सोयमाणी**-शोक करती हुई, **विलवमाणी**-विलाप करती हुई, **थेज्जे**-स्थिरता गुण युक्त, **वेसासिए**-विश्वास योग्य, **संमए**-सम्मत, **बहुमए**-बहुमत, **अणुमए**-अनुमत, **भंडकरंडगसमाणे**-आभूषणों की पेटी जैसा, **रयणब्भूए**-रत्न के समान, **जीविऊसविये**-जीवितोत्सव समान, **हिययणंदिजणणे**-हृदय में आनन्द उत्पन्न करने वाला, **उंबरपुप्फमिव-दुल्लहे**-गुलर के फूल के समान दुर्लभ, **खणमवि**-क्षण मात्र भी, **विप्पओगं**-वियोग नहीं चाहते, **कालगएहिं**-मरने पर, **परिणयवये**-वृद्धावस्था में, **वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि**-कुलवंश के तन्तु की वृद्धि करके, **णिरवयक्खे**-निरपेक्ष होकर।

भावार्थ-१३-जमाली क्षत्रियकुमार की माता उसके उपरोक्त अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय, अमनोज्ञ, मन को अप्रिय, अश्रुतपूर्व (जो पहले कभी नहीं सुनी) ऐसी (आघात कारक) वाणी सुनकर और अवधारण कर (शोक ग्रस्त हुई) शरीर के रोमकूपों से झरते हुए पसीने से वह भीग गई। शोक के भार से उसका सारा शरीर कम्पित होने लगा, चेहरे की कान्ति निस्तेज हो गई। उसका मुख, दीन और शोकातुर हो गया। हाथों से मसली हुई कमल-माला की तरह उसका शरीर तत्काल ग्लान एवं दुर्बल हो गया। वह लावण्य रहित, प्रभा रहित और शोभा रहित हो गई। उसके शरीर पर पहने हुए आभूषण ढीले हो गये। उसकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चूड़ियां हाथों से गिर पडी और टूट कर चूर्ण हो गई। उसका उत्तरीय वस्त्र अस्तव्यस्त हो गया। मूर्च्छा द्वारा उसका चैतन्य विलुप्त होजाने से वह भारी शरीर वाली हो गई। उसके सुकुमाल केशपाश बिखर गये। कुल्हाडी से काटी हुई चम्पक लता के समान और उत्सव पूरा हो जाने पर इन्द्रध्वजदण्ड के समान उसके सन्धि बन्धन शिथिल हो गये। वह सभी अंगों से 'धस' करती हुई धरती पर गिर पडी। इसके बाद जमाली क्षत्रियकुमार की माता के शरीर को दासियों ने शीघ्र ही स्वर्ण कलशों के मुख से निकली हुई शीतल और निर्मल जलधारा का सींचन करके स्वस्थ बनाया और बाँस के बने हुए उत्क्षेपक (पंखों) तथा ताड़ पत्र के बने हुए पंखों द्वारा जल बिन्दु सहित पवन करके दासियों ने उसे आश्वस्त और विश्वस्त किया। स्वस्थ होते ही रोती हुई, आक्रन्दन करती हुई, शोक करती हुई और विलाप करती हुई वह जमालीकुमार की माता इस प्रकार कहने लगी—"हे पुत्र ! तू मुझे इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मनाम (मन गमता), आधारभूत, विश्वासपात्र, सम्मत, बहुमत, अनुमत आभूषणों की पेटी के तुल्य, रत्न स्वरूप, रत्न तुल्य, जीवन के उत्सव समान और हृदय को आनन्ददायक एक ही पुत्र है। उदुम्बर (गुलर) के पुष्प के समान तेरा नाम सुनना भी दुर्लभ है, तो तेरा दर्शन दुर्लभ हो, इसमें तो कहना ही क्या ? अतः हे पुत्र ! तेरा वियोग मुझ से एक क्षण भी सहन नहीं हो सकता। इसलिए जब तक हम जीवित हैं, तब तक घर ही रह कर कुल वंश को अभिवृद्धि कर। जब हम कालधर्म को प्राप्त हो जायें और तुम्हारी वृद्धावस्था आ जाय, तब कुल वंश की वृद्धि करके तुम निरपेक्ष होकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास मुण्डित होकर अनगारधर्म को स्वीकार करना।"

१४—तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी—तहा वि णं तं अम्म-याओ ! जं णं तुब्भे मम एवं वयह, तुमं सि णं जाया ! अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते तं चेव, जाव पव्वइहिसि; एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खलु अम्मयाओ ! माणुस्सए भवे अणेगजाइ-जरा-मरण-रोग-सारीर-माणसपकामदुक्ख-वेयण-वसण-सओवद्दवाभिभूए, अधुवे, अणिइए, असासए, संज्झब्भरागसरिसे, जलबुब्बुयसमाणे, कुसग्गजलबिंदु-सण्णिभे, सुविणगदंसणोवमे, विज्जुलयाचंचले, अणिच्चे, सडणपडण-विद्धंसणधम्मे, पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सं विप्पजहियव्वे भविस्सइ; से केस णं जाणइ अम्मयाओ ! के पुव्विं गमणयाए, के पच्छा गमणयाए ? तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स जाव-पव्वइत्तए ।

कठिन शब्दार्थ--**वसणसओवद्दवाभिभूए**--सैकड़ों व्यसनों (दुःखों) से पीड़ित, **अधुवे**--अध्रुव, **अणिइए**--अनियत, **असासए**--अशाश्वत्, **संज्झब्भरागसरीसे**--संध्या के सुन्दर रंग जैसा, **जलबुब्बुयसमाणे**--पानी के बुदबुदे जैसा, **कुसग्गजलबिंदुसण्णिभे**--घास पर रही हुई जल-बिन्दु के समान, **सुविणगदंसणोवमे**--स्वप्न दर्शन जैसा, **विज्जुलयाचंचले**--बिजली के समान चंचल, **अणिच्च**--अनियत, **सडणपडणविद्धंसणधम्मे**--सड़न-गिरन और विध्वंशन धर्मवाला, **विप्पजहियव्वे**--त्याग करने योग्य ।

भावार्थ--१४--तब राजकुमार जमाली ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा--"हे माता-पिता ! अभी जो आपने कहा कि--'हे पुत्र ! तू हमें इष्ट, कांत, प्रिय आदि है यावत् हमारे कालगत होने पर तू दीक्षा अंगीकार करना" इत्यादि। परन्तु हे माता-पिता ! यह मनुष्य जीवन जन्म, जरा, मरण, रोग, व्याधि आदि अनेक शारीरिक और मानसिक दुःखों की अत्यन्त वेदना से और सैंकडों व्यसनों (कष्टों) से पीडित है। यह अध्रुव, अनित्य और अशाश्वत है । संध्याकालीन रंगों के समान, पानी के परपोटे (बुदबुदे) के समान, कुशाग्र पर रहे हुए जल-बिंदु के समान, स्वप्न-दर्शन के समान तथा बिजली की चमक के समान चञ्चल और अनित्य है । सड़ना, पड़ना, गलना और विनष्ट होना इसका धर्म (स्वभाव) है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पहले या पीछे एक दिन अवश्य ही छोड़ना पड़ता है; तो हे माता-पिता ! इस बात का निर्णय कौन कर सकता है कि हममें से कौन पहले जायेगा (मरेगा) और कौन पीछे जायेगा। इसलिए हे माता-पिता ! आप मुझे आज्ञा दीजिये। आपकी आज्ञा होने पर मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास प्रव्रज्या अंगीकार करना चाहता हूँ।"

१५—तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो एवं वयासी—इमं च ते जाया ! सरीरगं पविसिट्ठरूवलक्खण-वंजण-गुणोववेयं, उत्तमवल-वीरिय-सत्तजुत्तं, विण्णाणवियक्खणं, ससोहग्ग-गुणसमुस्सियं अभिजायमहक्खमं, विविहवाहिरोगरहियं णिरुवहय-उदत्त-लट्ठं, पंचिंदियपडुपढमजोव्वणत्थं, अणेगउत्तमगुणेहिं संजुत्तं, तं अणुहोहि ताव जाया ! णियग-सरीररूव-सोहग्ग-जोव्वणगुणे, तओ पच्छा अणुभूय णियगसरीररूव-सोहग्गजोव्वणगुणे अम्हेहिं कालगएहिं समाणेहिं परिणयवये, वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जम्मि णिरव-यक्खे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइहिसि।

कठिन शब्दार्थ—**जाया**—पुत्र, **पविसिट्ठरूव**—विशिष्ट रूप, **सत्तजुत्तं**—सत्त्वयुक्त, **विण्णाण-वियक्खणं**—विज्ञान में विचक्षण है, **ससोहग्गगुणसमुस्सियं**—सौभाग्यगुण से उन्नत है, **अभिजाय-महक्खमं**—कुलीन है और अत्यन्त क्षमता (सामर्थ्य) वाला है, **विविहवाहिरोगरहियं**—विविध प्रकार की व्याधि एवं रोग से रहित है, **णिरुवहय-उदत्त-लट्ठं**—निरुपहत, उदात्त और मनोहर है, **पंचिंदियपडुपढमजोव्वणत्थं**—पांच इंद्रिय और नवयुवावस्था प्राप्त है, **अणुहोहि ताव**—अनुभव हो रहा है तबतक, **णियगसरीररूवसोहग्गजोव्वणगुणे**—तेरे शरीर में रूप सौभाग्य

तथा यौवनादि गुण है, **अणुभूय**–अनुभव किया हुआ।

भावार्थ–१५–जमाली क्षत्रियकुमार की बात सुनकर उसके माता-पिता ने इस प्रकार कहा–"हे पुत्र ! यह तेरा शरीर उत्तम रूप, लक्षण, व्यञ्जन (मस तिल आदि चिन्ह) और गुणों से युक्त है, उत्तम बल, वीर्य और सत्त्व सहित है, विज्ञान में विचक्षण है, सौभाग्यगुण से उन्नत है, कुलीन है, अत्यंत समर्थ है, व्याधि और रोगों से रहित है, निरुपहत, उदात्त और मनोहर है, पटु (चतुर) पांच इन्द्रियों से युक्त और प्रथम युवावस्था को प्राप्त है, इत्यादि अनेक उत्तम गुणों से युक्त है। इसलिए हे पुत्र ! जबतक तेरे शरीर में रूप, सौभाग्य और यौवन आदि गुण हैं, तबतक तू इनका अनुभव कर। इसके पश्चात् जब हम कालधर्म को प्राप्त हो जायँ और तुझे वृद्धावस्था प्राप्त हो जाय तब कुल-वंश की वृद्धि करने के पश्चात् निरपेक्ष होकर, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना।"

१६–तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी–तहा वि णं तं अम्म-याओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वयह–इमं च णं ते जाया ! सरीरगं तं चेव जाव पव्वइहिसि, एवं खलु अम्म-याओ ! माणुस्सगं सरीरं दुक्खाययणं, विविहवाहिसयसंणिकेयं, अट्ठियकट्ठुट्ठियं, छिरा-ण्हारु-जालओणद्धसंपिणद्धं, मट्टियभंडं व दुब्बलं, असुइसंकिलिट्ठं, अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पयं, जराकुणिम-जज्जरघरं व सडण-पडण-विद्धंसणधम्मं, पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सं विप्पजहियव्वं भविस्सइ; से केस णं जाणइ अम्मयाओ ! के पुव्विं तं चेव जाव पव्वइत्तए।

कठिन शब्दार्थ—दुक्खाययणं–दुःखों का घर, **विविहवाहिसयसंणिकेयं**–विविध प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की सैकड़ों व्याधियों का निकेतन (स्थान) है, **अट्ठियकट्ठुट्ठियं**-अस्थिरूप लकड़ी का बना है, **छिराण्हारुजालओणद्धसंपिणद्धं**-नाड़ियों और स्नायु समूह से अत्यन्त लिपटा हुआ है, **मट्टिय-भंडं व दुब्बलं**-मिट्टी के बर्तन की तरह दुर्बल है, **असुइ संकिलिट्ठं**-अशुचि से भरपूर है, **अणिट्ठवियसव्वकालसंठप्पयं**-अनिष्ट होने से सदैव शुश्रूषा करनी होती है, **जरा-कुणिमजज्जर-घरं**-जीर्ण मांस का जीर्ण घर ।

भावार्थ-१६-जमाली क्षत्रियकुमार ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा-"हे माता-पिता ! आपने कहा-'हे पुत्र ! यह तेरा शरीर उत्तम रूप, लक्षण व्यञ्जन और गुणों से युक्त है, इत्यादि यावत् हमारे कालगत होने पर तू दीक्षा लेना ।" परन्तु हे माता-पिता ! यह मनुष्य का शरीर दुःखों का घर है । अनेक प्रकार की व्याधियों का स्थान है । अस्थिरूप लकडी का बना हुआ है। नाडियों और स्नायुओं के समूह से वेष्टित है । मिट्टी के बर्तन के समान दुर्बल है । अशुचि का भण्डार है । निरन्तर इसकी सम्हाल करनी पड़ती है । जीर्णघर के समान सड़ना, गलना और विनष्ट होना इसका स्वभाव है । इस शरीर को पहले या पीछे एक दिन छोड़ना ही पडेगा । कौन जानता है कि हम में से पहले कौन जायेगा और पीछे कौन ? इसलिए आप मुझे आज्ञा दीजियें ।"

१७-तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो एवं वयासी-इमाओ य ते जाया ! विपुलकुलबालियाओ, सरिसियाओ, सरित्तयाओ, सरिव्वयाओ, सरिसलावण्ण-रूव-जोव्वणगुणोववेयाओ, सरिसएहिंतो कुलेहिंतो आणिएल्लियाओ कलाकुसल-सव्वकाल-लालिय-सुहोचियाओ, मद्दवगुणजुत्त-णिउणविणओवयारपंडिय-वियक्खणाओ, मंजुल-मिय-महुरभणिय-विहसिय-विप्पेक्खियगइ-विलास-चिट्ठियविसारयाओ, अविकलकुल-सीलसालिणीओ, विसुद्ध-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुल-वंससंताणतंतुवद्धणप्पगब्भवयभाविणीओ, मणाणुकूल-हिय-इच्छियाओ, अट्ठ तुज्झ गुणवल्लहाओ, उत्तमाओ, णिच्चं भावाणुरत्तसव्वंगसुंदरीओ भारियाओ; तं भुंजाहि ताव जाया ! एयाहिं सद्धिं विउले माणुस्सए कामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगी, विसय-विगयवोच्छिण्णकोउहल्ले अम्हेहिं कालगएहिं जाव पव्वइहिसि ।

कठिन-शब्दार्थ--**विपुलकुलबालियाओ**--विशाल कुल की बालाएँ, **सरिसियाओ**--समान हैं, **सरित्तयाओ**--समान त्वचा वाली, **सरिव्वयाओ**--समानवयवाली, **आणिएल्लियाओ**--लाई हुई, **सव्वकाललालिय-सुहोचियाओ**--सभी काल में ललित एवं सुखप्रद, **णिउणविणओवयार-पंडिय**--निपुण विनयोपचार में पंडिता, **वियक्खणा**--विचक्षणा (चतुर), **मंजुल-मिय-महुर-भणिय**--सुन्दर मित एवं मधुर भाषण, **विहसिय विपेक्खियगइ-विलास-चिट्ठियविसारया**--हास्य, कटाक्ष, गति, विलास एवं स्थिति में विशारद, **अविकलकुल-सीलसालिणी**--उत्तम कुल और शील से सुशोभित, **संताणतंतुवद्धणप्पगब्भवयभाविणी**--सन्तान तंतु की वृद्धि करने में समर्थ यौवनवाली है, **हियइच्छियाओ**--हृदय में चाहने योग्य, **गुणवल्लहा**--गुणवल्लभा, **विसयविगय-वोच्छिण्णकोउहल्ले**--विषयेच्छा एवं उत्सुकता नष्ट होने पर ।

भावार्थ--१७--तब जमालीकुमार के माता-पिता ने उससे इस प्रकार कहा--'हे पुत्र ! ये तेरे आठ स्त्रियाँ हैं । वे विशाल कुल में उत्पन्न और तरुण अवस्था को प्राप्त है, वे समान त्वचावाली, समान उम्रवाली, समान रूप, लावण्य और यौवन गुण से युक्त हैं, वे समान कुल से लाई हुई हैं, वे कला में कुशल, सर्वकाललालित और सुख के योग्य हैं । वे मार्दव गुण से युक्त, निपुण, विनयोपचार में पण्डिता और विचक्षणा है । सुन्दर, मित और मधुर बोलने वाली हैं । हास्य, विप्रेक्षित (कटाक्ष दृष्टि), गति, विलास और स्थिति में विशारद हैं । वे उत्तम कुल और शील से सुशोभित हैं । विशुद्ध कुलरूप वंश तन्तु की वृद्धि करने में समर्थ यौवनवाली हैं । मन के अनुकूल और हृदय को इष्ट हैं और गुणों के द्वारा प्रिय और उत्तम हैं । वे तुझ में सदा अनुरक्त और सर्वांग सुन्दर हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इसलिये हे पुत्र ! तू इन स्त्रियों के साथ मनुष्य सम्बन्धी विपुल काम भोगों का भोग कर। जब विषय की उत्सुकता नहीं रहे और भुक्त भोगी हो जाय तब हमारे कालधर्म को प्राप्त हो जाने पर यावत् तू दीक्षा लेना।

१८—तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी—तहा वि णं तं अम्म-याओ ! ज णं तुब्भे मम एयं वयह—इमाओ ते जाया ! विपुलकुल जाव पव्वइहिसि; एवं खलु अम्मयाओ ! माणुस्सगा कामभोगा असुई, असासया, वंतासवा. पित्तासवा, खेलासवा, सुक्कासवा, सोणियासवा, उच्चार-पासवण-खेल-सिंघाणग-वंत-पित-पूय-सुक्क-सोणियसमुब्भवा, अमणुण्णदुरूव-मुत्त-पूइय-पुरिस-पुण्णा, मयगंधुस्सास-असुभ-णिस्सासउव्वेयणगा, बीभत्था, अप्प-कालिया, लहुसगा, कलमलाहिवासदुक्खबहुजणसाहारणा, परिकिले-सकिच्छदुक्खसज्झा, अबुहजणणिसेविया, सया साहुगरहणिज्जा, अणंतसंसारवद्धणा, कडुगफलविवागा चुडल्लिव्व अमुच्चमाण-दुक्खाणुबंधिणो, सिद्धिगमणविग्घा; से केस णं जाणइ अम्मयाओ ! के पुव्विं गमणयाए के पच्छा ? तं इच्छामि णं अम्म-याओ ! जाव पव्वइत्तए।

कठिन शब्दार्थ—वंतासवा पित्तासवा—वात और पित्त से बहनेवाला, **खेलासवा, सुक्कासवा, सोणियासवा**—श्लेष्म, शुक्र एवं शोणित के झरनेवाला, **उच्चार-पासवण**—विष्ठा मूत्र, **समुब्भवा**—उत्पन्न हुआ, **पुइय पुरिस पुण्णा**—पीप और विष्ठा से भरपूर, **मयगंधुस्सास असुभ-णिस्सास उव्वेयणगा**—मृतक जैसी गंधवाले उच्छ्वास और अशुभ निश्वास से उद्वेग उत्पन्न

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करनेवाला, अप्पकालिया—अल्पकालीन।

भावार्थ—१८—माता-पिता की उपरोक्त बात के उत्तर में जमाली क्षत्रिय कुमार ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा—"हे माता-पिता! आपने कहा कि—'विशाल कुल में उत्पन्न तेरी ये आठ स्त्रियाँ हैं, इत्यादि।' हे माता-पिता! ये मनुष्य सम्बन्धी काम-भोग निश्चित रूप से अशुचि और अशाश्वत हैं। वात, पित्त, श्लेष्म (कफ), वीर्य और रुधिर के झरने हैं। मल, मूत्र, श्लेष्म (खंखार), सिंघाण (नासिका का मेल), वमन, पित्त, राध, शुक्र और शोणित से उत्पन्न हुए हैं। ये अमनोज्ञ, बुरे, मूत्र और विष्ठा से भरपूर तथा दुर्गन्ध से युक्त हैं। मृत कलेवर के समान गन्धवाले एवं उच्छ्वास और निश्वास से उद्वेग उत्पन्न करने वाले हैं। बीभत्स, अल्प काल रहने वाले, हलके और कलमल (शरीर में रहा हुआ एक प्रकार का अशुद्ध द्रव्य) के स्थानरूप होने से दुःखरूप है और सभी मनुष्यों के लिए साधारण है। काम-भोग, शारीरिक और मानसिक अत्यन्त दुःखपूर्वक साध्य है। अज्ञानी पुरुषों द्वारा सेवित तथा उत्तम पुरुषों द्वारा सदा निन्दनीय हैं, अनन्त संसार की वृद्धि करने वाले हैं, परिणाम में कटु फलवाले हैं, जलते हुए घास के पूले के स्पर्श के समान दुःखदायी तथा कठिनता से छूटने वाले हैं, दुःखानुभव वाले हैं। ये काम-भोग मोक्षमार्ग में विघ्नरूप हैं। हे माता-पिता! यह भी कौन जानता है कि हमारे में से कौन पहले जायगा और कौन पीछे। इसलिए मुझे दीक्षा लेने की आज्ञा दीजिए।

१९—तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो एवं वयासी—इमे य ते जाया! अज्जय-पज्जय-पिउपज्जयागए सुबहु-हिरण्णे य, सुवण्णे य, कंसे य, दूसे य, विउलधण-कणग-जाव संत-सारसावएज्जे, अलाहि जाव आसत्तमाओ कुल-वंसाओ पकामं दाउं, पकामं भोत्तुं, परिभाएउं, तं अणुहोहि ताव जाया! विउले माणुस्सए

इड्ढि-सक्कारसमुदए, तओ पच्छा अणुहूयकल्लाणे, वड्ढियकुलवंस जाव पव्वइहिसि ।

कठिन शब्दार्थ-अज्जय-दादा, पज्जय-परदादा, पिउपज्जए-पिता का पर दादा, सावएज्जे-स्वापतेय-धन, अलाहि-पर्याप्त, पकामं-प्रकाम (अतिशय), परिभाएउं-वितरण करने ।

भावार्थ-१९-इसके पश्चात् जमालीकुमार के माता-पिता ने इस प्रकार कहा-"हे पुत्र ! यह दादा, परदादा और पिता के परदादा से प्राप्त बहुत हिरण्य, सुवर्ण, कांस्य, वस्त्र, विपुल धन, कनक यावत् सारभूत द्रव्य विद्यमान है । यह द्रव्य इतना है कि यदि सात पीढ़ी तक पुष्कल (खुले हाथों) दान दिया जाय, भोगा जाय और बांटा जाय, तो भी समाप्त नहीं हो सकता । अतः हे पुत्र ! मनुष्य सम्बन्धी विपुल ऋद्धि और सम्मान का भोग कर । सुख का अनुभव करके और कुल-वंश की वृद्धि करके पीछे यावत् तू दीक्षा लेना ।

२०-तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-तहा वि णं तं अम्म-याओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वयह-इमं च ते जाया ! अज्जय-पज्जय-जाव पव्वइहिसि; एवं खलु अम्म-याओ ! हिरण्णे य, सुवण्णे य, जाव सावएज्जे अग्गिसाहिए, चोर-साहिए, रायसाहिए, मच्चुसाहिए, दाइयसाहिए, अग्गिसामण्णे जाव दाइयसामण्णे, अधुवे, अणिइए, असासए, पुव्विं वा पच्छा वा अवस्सं विप्पजहियव्वे भविस्सइ, से केस णं जाणइ तं चेव जाव पव्वइत्तए ।

कठिन शब्दार्थ-अग्गिसाहिए-अग्नि-साध्य (अग्नि का विभाग) अग्नि के लिए साधा-

रोग, मच्चु—मृत्यु, साहिए—साध्य, दाइय—दायाद (बन्धु आदि भागीदार), सामण्णे—सामान्य ।

भावार्थ—२०—तब जमाली क्षत्रियकुमार ने अपने माता-पिता से इस प्रकार कहा—"आपने धन सम्पत्ति आदि के लिए कहा है, परन्तु हे माता-पिता ! यह हिरण्य, सुवर्ण यावत् सर्व सारभूत द्रव्य अग्नि, चोर, राजा और मृत्यु (काल) के लिए साधारण (अधीन) है। बन्धु इसे बँटा सकते हैं। अग्नि यावत् दायाद (भाई आदि हिस्सेदार) के लिए सामान्य (विशेष अधीन) है। यह अध्रुव, अनित्य और अशाश्वत है। इसे पहले या पीछे, एक-न-एक दिन अवश्य छोड़ना पड़ेगा। हममें से पहले कौन जायगा और पीछे कौन जायगा, यह भी कौन जानता है ? इसलिए आप मुझे दीक्षा की आज्ञा दीजिये ।"

२१—तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्म-याओ जाहे णो संचाएंति विसयाणुलोमाहिं बहूहिं आघवणाहि य, पण्णवणाहि य, सण्णवणाहि य, विण्णवणाहि य आघवेत्तए वा, पण्णवेत्तए वा, सण्णवेत्तए वा, विण्णवेत्तए वा, ताहे विसयपडिकूलाहिं संजमभयुव्वेयणकराहिं पण्णवणाहिं पण्णवेमाणा एवं वयासी—एवं खलु जाया ! णिग्गंथे पावयणे सच्चे, अणुत्तरे, केवले जहा आवस्सए, जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेइ । अहीव एगंतदिट्ठीए, खुरो इव एगंतधाराए, लोहमया जवा चावेयव्वा, वालुयाकवले इव णिस्साए, गंगा वा महाणई पडिसोयगमणयाए, महासमुद्दो वा भुयाहिं दुत्तरो; तिक्खं कमियव्वं, गरुयं लंबेयव्वं, असिधारगं वयं चरियव्वं । णो खलु कप्पइ जाया ! समणाणं णिग्गंथाणं आहाकम्मिए इ वा, उद्देसिए

इ वा, मिस्सजाए इ वा, अज्झोयरए इ वा, पूइए इ वा, कीए इ वा, पामिच्चे इ वा, अच्छेज्जे इ वा, अणिसट्ठे इ वा, अभिहडे इ वा, कंतारभत्ते इ वा, दुब्भिक्खभत्ते इ वा, गिलाणभत्ते इ वा, वद्दलियाभत्ते इ वा, पाहुणगभत्ते इ वा, सेज्जायरपिंडे इ वा, रायपिंडे इ वा, मूलभोयणे इ वा, कंदभोयणे इ वा, फलभोयणे इ वा, बीयभोयणे इ वा, हरियभोयणे इ वा, भुत्तए वा पायए वा। तुमं सि च णं जाया ! सुहसमुचिए, णो चेव णं दुहसमुचिए; णालं सियं, णालं उण्हं, णालं खुहा, णालं पिवासा, णालं चोरा, णालं वाला, णालं दंसा, णालं मसगा, णालं वाइय-पित्तिय-सेंभिय-सण्णिवाइए विविहरोगायंके, परिस्सहोवसग्गे उदिण्णे अहियासित्तए। तं णो खलु जाया ! अम्हे इच्छामो तुब्भं खणमवि विप्पओगं, तं अच्छाहि ताव जाया ! जाव ताव अम्हे जीवामो; तओ पच्छा अम्हेहिं जाव पव्वइहिसि।

कठिन शब्दार्थ—णो संचाएंति—समर्थ नहीं हुए, **विसयाणुलोमाहिं**—विषय के अनुकूल, **विसयपडिकूलाहिं**—विषय के प्रतिकूल, **संजमभयव्वेयणकराहिं**-संयम में भय एवं उद्वेग करने वाली, **अणुत्तरे**—सर्वोत्तम (प्रधान), **अहीव एगंतदिट्ठीए**—सर्प की तरह एकांत दृष्टिवाला, **खुरो इव एगंतधारए**-उस्तरे की तरह एक धारवाला, **वालुया कवले इव णिस्साए**-रेत के निवाले की तरह निःस्वाद, **पडिसोयगमणाए**—प्रतिश्रोत (बहाव के सामने) गमन, **दुत्तरो**-दुस्तर (तैरना कठिन), **तिक्खं कमियव्वं**—तीक्ष्ण खड्गादि पर चलने जैसा, **गरुयं लंबेयव्वं**—भारी शिला उठाने जैसा, **असिधारगं वयं चरियव्वं**—तलवार की धार पर चलने जैसा, **सुहसमुचिए**—सुख के योग्य, **नालं**—असमर्थ, **वाला**—व्याल (सर्पादि), **सेंभिय**—श्लेष्मिक, **सण्णिवाइय**—सन्निपातजन्य, **विविहरोगायंके**—विविध प्रकार के रोग—आतंक से, **परिस्सहोवसग्गे**—परीषह और उपसर्ग, **उदिण्णे**—उदय होने पर, **अहियासित्तए**—सहन करने में।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२१-जब जमालीकुमार के माता-पिता उसे विषय के अनुकूल बहुत-सी उक्तियाँ, प्रज्ञप्तियाँ, संज्ञप्तियाँ और विज्ञप्तियों द्वारा कहने, जतलाने और समझाने-बुझाने में समर्थ नहीं हुए, तब विषय के प्रतिकूल और संयम में भय तथा उद्वेग उत्पन्न करने वाली उक्तियों से समझाते हुए इस प्रकार कहने लगे-"हे पुत्र ! यह निर्ग्रन्थ-प्रवचन सत्य, अनुत्तर (अनुपम), अद्वितीय, परिपूर्ण, न्याययुक्त, शुद्ध, शल्य को काटनेवाला, सिद्धिमार्ग, मुक्तिमार्ग, निर्याणमार्ग और निर्वाणमार्ग रूप है, यह अवितथ (असत्य रहित) है, अविसंधि (निरन्तर) है और समस्त दुःखों का नाश करनेवाला है। इसमें तत्पर जीव सिद्ध, बुद्ध एवं मुक्त होते हैं, निर्वाण प्राप्त करते हैं तथा समस्त दुःखों का अन्त करते हैं। परन्तु हे पुत्र ! यह धर्म, सर्प की एकांत दृष्टि, शस्त्र की एक धार और लोहे के जौ (चने) चाबने के समान दुष्कर है, बालु (रेत) के कवल (ग्रास) के समान निस्वाद है, गंगा महानदी के प्रवाह के सम्मुख जाने के समान तथा भुजाओं से महा-समुद्र तैरने के समान इस का पालन करना बड़ा कठिन है। यह धर्म खड्ग आदि की तीक्ष्ण धार पर चलने के समान दुष्कर है। महाशिला को उठाने के समान है और तलवार की तीक्ष्ण धारा के समान व्रत का आचरण करना कठिन है। हे पुत्र ! श्रमण-निर्ग्रंथों को इतने कार्य करना नहीं कल्पते, यथा-(१) आधाकर्मिक, (२) औद्देशिक, (३) मिश्र जात, (४) अध्यवपूरक, (५) पूतिकर्म, (६) क्रीत, (७) प्रामित्य, (८) अछेद्य, (९) अनिसृष्ट, (१०) अभ्याहृत, (११) कान्तारभक्त, (१२) दुर्भिक्षभक्त, (१३) ग्लानभक्त, (१४) वार्दलिकाभक्त, (१५) प्राघुर्णकभक्त, (१६) शय्यातर-पिण्ड और (१७) राजपिण्ड। इसी प्रकार मूल, कन्द, फल, बीज और हरी वनस्पति का भोजन करना और पीना नहीं कल्पता। हे पुत्र ! तू सुख-भोग करने योग्य है, दुःख के योग्य नहीं है। तू शीत, उष्ण, भूख, प्यास, चोर, श्वापद (हिंसक सर्पादि), डांस और मच्छर के उपद्रव वात, पित्त, कफ और सन्निपात सम्बन्धी अनेक प्रकार के रोग और उन रोगों से होने वाला कष्ट तथा परिषह और उपसर्गों को सहन करने में तू समर्थ नहीं है। हे पुत्र ! हम एक क्षण के लिए भी तेरा वियोग सहन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नहीं कर सकते। इसलिए जब तक हम जीवित हैं तब तक तू गृहस्थवास में रह और हमारे काल-धर्म को प्राप्त होने पर यावत् दीक्षा लेना।

२२-तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-तहा वि णं तं अम्म-याओ ! जं णं तुब्भे ममं एवं वयह, एवं खलु जाया ! णिग्गंथे पावयणे सच्चे, अणुत्तरे, केवले तं चेव जाव पव्वइहिसि; एवं खलु अम्मयाओ ! णिग्गंथे पावयणे कीवाणं, कायराणं, कापुरिसाणं, इहलोगपडिबद्धाणं, परलोगपरंमुहाणं, विसयतिसियाणं दुरणुचरे पागयजणस्स; धीरस्स, णिच्छियस्स, ववसियस्स णो खलु एत्थं किंचि वि दुक्करं करणयाए, तं इच्छामि णं अम्म-याओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए। तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो जाहे णो संचाएंति विसयाणुलोमाहि य, विसयपडिकूलाहि य बहूहिं आघवणाहि य, पण्णवणाहि य आघवित्तए वा, जाव विण्णवित्तए वा, ताहे अकामाइं चेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स णिक्खमणं अणुमण्णित्था।

कठिन शब्दार्थ-कापुरिसाणं-डरपोक मनुष्य के लिए, **इहलोग-पडिबद्धाणं**-इस लोक से आबद्ध (आसक्त), **परलोगपरंमुहाणं**-परलोक से परान्मुख (विमुख), **विसयतिसियाणं**-विषयों की तृष्णावाले, **दुरणुचरे**-आचरण दुष्कर, **पागयजणस्स**-प्राकृतजन-साधारण मनुष्य के लिए, **णिच्छियस्स**-निश्चित (निश्चयवाले), **ववसियस्स**-निर्णय किये हुए, **णिक्खमणं**-निष्क्रमण (त्यागकर निकलने) का, **अणुमण्णित्था**-अनुमति दी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—२२—माता-पिता को उत्तर देते हुए जमालीकुमार ने इस प्रकार कहा—"हे माता-पिता ! आपने निर्ग्रन्थ-प्रवचन को सत्य, अनुत्तर और अद्वितीय कह कर संयम पालन में जो कठिनाइयाँ बतलाई, वे ठीक हैं, परन्तु कृपण—मन्द शक्तिवाले कायर और कापुरुष तथा इस लोक में आसक्त और परलोक से परांमुख ऐसे विषयभोगों की तृष्णा वाले पुरुषों के लिए इसका पालन करना अवश्य कठिन है । परन्तु धीर और शूरवीर, दृढ़ निश्चय वाले तथा उपाय करने में प्रवृत्त पुरुषों के लिए इसका पालन करना कुछ भी कठिन नहीं है । इसलिए हे माता-पिता ! आप मुझे दीक्षा की आज्ञा दीजिए । आपकी आज्ञा होने पर मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास दीक्षा लेना चाहता हूँ ।

जब जमालीकुमार के माता-पिता, विषय में अनुकूल और प्रतिकूल बहुत-सी उक्तियां, प्रज्ञप्तियां, संज्ञप्तियां और विज्ञप्तियों द्वारा उसे समझाने में समर्थ नहीं हुए, तब बिना इच्छा के जमालीकुमार को दीक्षा लेने की आज्ञा दी।

विवेचन—जमाली क्षत्रिय कुमार के माता-पिता ने संयम की कठिनाइयाँ बतलाते हुए कहा, कि आगे बताये जानेवाले दोष युक्त आहारादि लेना साधु को नहीं कल्पता । यथा—

१ आधाकर्मिक—'आधया साधुप्रणिधानेन यत्सचेतनमचेतनं क्रियते, अचेतनं वा पच्यते, चीयते वा गृहादिकं, वयते वा वस्त्रादिकं तदाधाकर्म ।'

अर्थात् किसी खास साधु को मन में रखकर उसके निमित्त से सचित्त वस्तु को अचित्त करना या अचित्त को पकाना, घर आदि बनाना, वस्त्र आदि बुनना—'आधाकर्म' कहलाता है । यह दोष चार प्रकार से लगता है । यथा—१ प्रतिसेवन—आधाकर्मी आहार आदि का सेवन करना, २ प्रतिश्रवण—आधाकर्मी आहारादि के लिये निमन्त्रण स्वीकार करना, ३ संवसन—आधाकर्मी आहारादि भोगनेवालों के साथ रहना और ४ अनुमोदन—आधाकर्मी आहार आदि भोगनेवालों की अनुमोदना करना ।

२ औद्देशिक—सामान्य याचकों को देने की बुद्धि से जो आहारादि तैयार किये जाते हैं, उन्हें 'औद्देशिक' कहते हैं । इसके दो भेद हैं, यथा—ओघ और विभाग । भिक्षुकों के लिये अलग तैयार न करते हुए अपने लिये बनते हुए आहारादि में ही कुछ और मिला देना—'ओघ' है । विवाह आदि में याचकों के लिये निकाल कर पृथक् रख छोड़ना 'विभाग' है । यह उद्दिष्ट, कृत और कर्म के भेद से तीन प्रकार का है । फिर प्रत्येक के उद्देश, समुद्देश,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आदेश और समादेश, इस प्रकार चार-चार भेद होते है। किसी खास साधु के लिये बनाया गया आहार यदि वही ले, तो 'आधाकर्म' है और यदि दूसरा साधु ले, तो 'औद्देशिक' है। आधाकर्म पहले से ही किसी खास के निमित्त से बनाया जाता है। औद्देशिक साधारण दान के लिये पहले या पीछे कल्पित किया जाता है।

३ मिश्रजात–अपने लिये और साधु के लिये एक साथ पकाया हुआ आहार 'मिश्रजात' कहलाता है। इसके तीन भेद हैं। यथा–१ यावदर्थिक, २ पाखण्डीमिश्र और ३ साधुमिश्र। जो आहार अपने लिये और सभी याचकों के लिये इकट्ठा बनाया जाय, वह 'यावदर्थिक' है। जो अपने लिये और बाबा, सन्यासियों के लिये इकट्ठा बनाया जाय, वह 'पाखण्डीमिश्र' है और जो अपने लिये और साधुओं के लिये इकट्ठा बनाया जाय, वह 'साधुमिश्र' है।

४ अध्यवपूरक–साधुओं का आगमन सुनकर आधण में अधिक बढ़ा देना अर्थात् अपने लिये बनते हुए भोजन में साधुओं का आगमन सुनकर उनके निमित्त से और मिला देना।

५ पूतिकर्म–शुद्ध आहार में आधाकर्मादि का अंश मिल जाना—'पूतिकर्म' है। आधाकर्मादि आहार का थोड़ा-सा अंश भी शुद्ध और निर्दोष आहार को सदोष बना देता है।

६ क्रीत–साधु के लिये मोल लिया हुआ आहारादि।

७ पामिच्चे (प्रामित्य)–साधु के लिये उधार लिया हुआ आहारादि।

८ आछेद्य–निर्बल व्यक्ति से या अपने आश्रित रहने वाले नौकर चाकर और पुत्र आदि से आहारादि छीन कर साधु को देना।

९ अनिःसृष्ट–किसी वस्तु के एक से अधिक स्वामी होने पर सब की इच्छा के बिना देना, 'अनिःसृष्ट' है।

१० अभ्याहृत–साधु के लिये गृहस्थ द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान पर या एक गाँव से दूसरे गाँव सामने लाया हुआ आहारादि।

११ कान्तरभक्त–वन में रहे भिखारी लोगों के निर्वाह के लिये तैयार किया हुआ आहारादि।

१२ दुर्भिक्षभक्त–दुर्भिक्ष (दुष्काल) के समय, भिखारी लोगों के निर्वाह के लिये तैयार किया हुआ आहारादि।

१३ ग्लानभक्त–रोगियों के लिये तैयार किया हुआ आहारादि।

१४ बार्दलिकाभक्त–दुर्दिन अर्थात् वर्षा के समय भिखारियों की भिक्षा कहाँ और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कैसे मिलेगी ? ऐसा सोचकर उस समय उन भिखारी लोगों के लिये बनाया हुआ आहारादि।

१५ प्राघूर्णकभक्त-पाहुनों के लिये बनाया हुआ आहारादि।

१६ शय्यातरपिण्ड—साधुओं को ठहरने के लिये जो स्थान देता है, वह व्यक्ति 'शय्यातर' कहलाता है। उसके वहाँ का आहार आदि 'शय्यातर पिण्ड' कहलाता है।

१७ राजपिण्ड—राजा के लिये तैयार किया गया, जिसका विभाग दूसरों को मिलता हो, वह आहार आदि।

उपर्युक्त प्रकार का आहार आदि लेना साधु को नहीं कल्पता।

जमाली क्षत्रियकुमार ने उत्तर दिया कि आपका यह कथन ठीक है। कायर पुरुषों के लिये संयम पालना कठिन है, किन्तु शूरवीर पुरुषों के लिये कुछ भी कठिन नहीं है।

जमाली के माता-पिता विषय के अनुकूल और प्रतिकूल सभी प्रकार की युक्तियों से जब उसे समझाने में समर्थ नहीं हुए, तब अनिच्छापूर्वक दीक्षा की आज्ञा दी।

२३—तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! खत्तियकुंडग्गामं णयरं सब्भिंतरबाहिरियं आसिय-संमज्जि-ओवलित्तं जहा उववाइए, जाव पच्चप्पिणंति। तएणं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! जमालिस्स खत्तियकुमारस्स महत्थं, महग्घं, महरिहं विपुलं णिक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव जाव पच्चप्पिणंति। तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं णिसीयावेंति, णिसीयावेत्ता अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं, एवं जहा रायप्पसेणइज्जे, जाव अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढिए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जाव महया रवेणं महया महया णिक्खमणाभिसेएणं अभिसिंचंति ।

कठिन शब्दार्थ-आसिय-पानी छिड़कना, संमज्जिओवलित्तं-साफ कराकर लिपाना, महत्थं-महान् अर्थवाला, महरिहं-महापूज्य, महग्घं-महामूल्यवान्, णिसियावेंति-बिठाते हैं, भोमेज्जाण-भूमि संबंधी ।

भावार्थ-२३-इसके बाद जमाली क्षत्रियकुमार के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही इस क्षत्रियकुंड ग्राम नगर के बाहर और भीतर पानी का छिटकाव करो । झाड़-बुहार कर जमीन को साफ करो, इत्यादि औपपातिक सूत्र में कहे अनुसार कार्य करके उन पुरुषों ने आज्ञा वापिस सौंपी । इसके पश्चात् उसने सेवक पुरुषों से इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! शीघ्र इस जमाली क्षत्रियकुमार का महार्थ, महामूल्य, महापूज्य (महान् पुरुषों के योग्य) और विपुल निष्क्रमणाभिषेक की तैयारी करो । सेवक पुरुषों ने उसकी आज्ञानुसार कार्य करके आज्ञा वापिस सौंपी । इसके पश्चात् जमाली क्षत्रियकुमार के माता-पिता ने उसे उत्तम सिंहासन पर पूर्व की ओर मुंह करके बैठाया । और एक सौ आठ सोने के कलशों से इत्यादि राजप्रश्नीय सूत्र में कहे अनुसार यावत् एक सौ आठ मिट्टी के कलशों से सर्वऋद्धि द्वारा यावत् महा शब्दों द्वारा निष्क्रमणाभिषेक से अभिषेक करने लगे ।

महया महया णिक्खमणाभिसेएणं अभिसिंचित्ता करयल-जाव जएणं विजएणं वद्धावेंति, जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी-भण जाया ! किं देमो, किं पयच्छामो, किणा वा ते अट्ठो ? तएणं से जमाली खत्तियकुमारे अम्मा-पियरो एवं वयासी-इच्छामि णं अम्म-याओ कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणिउं कासवगं च सद्दाविउं । तएणं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, कोडुंबियपुरिसे सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं गहाय दोहिं सयसहस्सेहिं कुत्तियावणाओ रयहरणं च पडिग्गहं च आणेह, सयसहस्सेणं कासवगं सद्दावेह । तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा एवं वुत्ता समाणा हट्ठ-तुट्ठ करयल जाव पडिसुणेत्ता खिप्पामेव सिरिघराओ तिण्णि सयसहस्साइं, तहेव जाव कासवगं सद्दावेंति । तएणं से कासवए जमालिस्स खत्तिय-कुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविए समाणे हट्ठे तुट्ठे ण्हाए कयबलिकम्मे जाव सरीरे, जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छइ ।

कठिन शब्दार्थ-**देमो**-देवें, **पयच्छामो**-प्रदान करें, **किणा वा ते अट्ठो**-तेरे क्या प्रयोजन है, **कुत्तियावण**-कुत्रिकापण-कु अर्थात् पृथ्वी, त्रिक अर्थात् तीन, आपण अर्थात् दुकान, स्वर्ग, मर्त्य और पाताल रूप तीन लोकों में रही हुई वस्तु मिलने का देवाधिष्ठित स्थान, **पडिग्गहं**-पात्र, **कासवग**-काश्यपक-नाई, **सिरिघर**-श्री घर-खजाना, **सयसहस्साइं**-लाख की संख्या, **आणेह**-लाओ, **पिउणा**-पिता द्वारा, **एवं वुत्ता समाणा**-इस प्रकार कहने पर।

भावार्थ-अभिषेक करने के बाद जमालीकुमार के माता-पिता ने हाथ जोड़ कर यावत् उसे जय विजय शब्दों से बधाया । फिर उन्होंने उससे कहा-"हे पुत्र ! हम तेरे लिए क्या देवें ? तेरे लिए क्या कार्य करें ? तेरा क्या प्रयोजन है ?" तब जमालीकुमार ने इस प्रकार कहा-'हे माता-पिता ! मैं कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र मंगवाना तथा नापित को बुलाना चाहता हूँ ।' तब जमाली कुमार के पिता ने कौटुंबिक पुरुषों को बुलाया और कहा-"हे देवानुप्रियों ! शीघ्र ही भंडार में से तीन लाख सोनैया निकालो । उनमें से दो लाख सोनैया देकर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र लाओ और एक लाख सोनैया देकर नाई को बुलाओ। उपर्युक्त आज्ञा सुन कर हर्षित और तुष्ट हुए सेवकों ने हाथ जोड़कर स्वामी के वचन स्वीकार किये और भंडार में से तीन लाख सोनैया (सुवर्ण मुद्रा) निकाल कर कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र लाए तथा नाई को बुलाया। जमालीकुमार के पिता के सेवक पुरुषों द्वारा बुलाये जाने पर नाई बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने स्नानादि किया और अपने शरीर को अलंकृत किया। फिर जमाली कुमार के पिता के पास आया।

उवागच्छित्ता करयल जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पियरं जएणं विजएणं वद्धावेइ; जएणं विजएणं वद्धावित्ता एवं वयासी-संदिसंतु णं देवाणुप्पिया ! जं मए करणिज्जं ? तएणं से जमालिस्स खत्तिय-कुमारस्स पिया तं कासवगं एवं वयासी-तुमं देवाणुप्पिया ! जमा-लिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउंगुलवज्जे णिक्खमण-पाओग्गे अग्गकेसे कप्पेहि। तएणं से कासवगे जमालिस्स खत्तिय-कुमारस्स पिउणा एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-तुट्ठ-करयल जाव एवं सामी ! तहत्ताणाए विणएणं वयणं पडिसुणेइ, पडिसुणित्ता सुरभिणा गंधो-दएणं हत्थ पाए पक्खालेइ, पक्खालित्ता सुद्धाए अट्ठपडलाए पोत्तीए मुहं बंधइ, मुहं बंधित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स परेणं जत्तेणं चउरंगुलवज्जे णिक्खमणपाओग्गे अग्गकेसे कप्पेइ। तएणं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडसाडएणं अग्गकेसे पडिच्छइ, अग्गकेसे पडिच्छित्ता सुरभिणा गंधोदएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पक्खालेइ, सुरभिणा गंधोदएणं पक्खालित्ता अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं, मल्लेहिं अच्चेइ, अग्गेहिं वरेहिं गंधेहिं, मल्लेहिं अच्चित्ता सुद्धे वत्थे बंधइ, सुद्धे वत्थे बंधित्ता रयणकरंडगंसि पक्खिवइ, पक्खिवित्ता हार-वारिधार-सिंदुवार छिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं सुयवियोग-दूसहाइं अंसूइं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी एवं वयासी–एस णं अम्हं जमालिस्स खत्तियकुमारस्स बहूसु तिहीसु य पव्वणीसु य उस्सवेसु य जण्णेसु य छणेसु य अपच्छिमे दरिसणे भविस्सईति कट्टु ऊसीसगमूले ठवेइ।

कठिन शब्दार्थ–जएणं विजएणं–'जय हो, विजय हो'–इस प्रकार कहकर, **वद्धावेइ**–वधाये, **संदिसंतु**–दिखाओ, कहो, **परेणं जत्तेणं**–अत्यंत यत्नपूर्वक, **णिक्खमणपाओग्गे**–निष्क्रमण के योग्य, **अग्गकेसे**–आगे के बाल, **कप्पेहि**–काटो, **तहत्ताणाए**–आज्ञा स्वीकार कर, **सुरभिणा-गंधोदए**–सुगन्धित गन्धोदक (सुगन्धित पानी) से, **पक्खालेइ**–धोये, **अट्ठपडलाए**–आठ परत वाली, **पडसाडएणं**–पटसाटक (वस्त्र), **पडिच्छइ**–ग्रहण किये, **अग्गेहि**–उत्तम, **अच्चेइ**–अचित किये, **पक्खिवइ**–प्रक्षिप्त किये (रखे), **हार-वारिधार-सिंदुवार-छिण्णमुत्तावलिप्पगासाइं**–हार, पानी की धारा, सिन्दुवार के पुष्पों और टूटी हुई मोती की माला के मोती जैसे, **सुयवियोगदूसहाइं**–पुत्र वियोग से दुःसह, **अंसूइं विणिम्मुयमाणी**–आँसू डालती हुई **तिहिसु**–तिथि में, **पव्वणीसु**–पर्व पर, **उस्सवेसु**–उत्सव पर, **जण्णेसु**–यज्ञों पर, **अपच्छिमे**–अपश्चिम, **ऊसीसगमूले**–तकिये के नीचे, **ठवेई**–रखती है।

भावार्थ–वह नापित जमालीकुमार के पिता के पास आया। उन्हें जय-विजय शब्दों से बधाया और इस प्रकार कहा–"हे देवानुप्रिय ! मेरे करने योग्य कार्य कहिये।" जमालीकुमार के पिता ने उस नापित से इस प्रकार कहा–"हे देवानुप्रिय ! जमालीकुमार के अग्रकेश, अत्यन्त यत्नपूर्वक चार अंगुल छोड़कर निष्क्रमण के योग्य काट दे।" जमालीकुमार के पिता की आज्ञा सुन कर नापित अत्यंत प्रसन्न हुआ और दोनों हाथ जोड़कर बोला–"हे स्वामिन् ! मैं आपकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आज्ञानुसार करूँगा,"–इस प्रकार कह कर विनयपूर्वक उनके वचनों को स्वीकार किया। फिर सुगन्धित गन्धोदक से हाथ-पैर धोए और शुद्ध आठ पट वाले वस्त्र से मुँह बांधा, फिर अत्यन्त यत्नपूर्वक जमालीकुमार के, निष्क्रमण योग्य चार अंगुल अग्रकेश छोड़कर शेष केशों को काटा। इसके बाद जमालीकुमार की माता ने हंस के समान श्वेत वस्त्र में उन अग्र-केशों को ग्रहण किया। सुगन्धित गन्धोदक से धोया। उत्तम और प्रधान गन्ध तथा माला द्वारा उनका अर्चन किया और शुद्ध वस्त्र में बांधकर उन्हें रत्न करण्डिये में रखा। इसके बाद जमालीकुमार की माता, पुत्र वियोग से रोती हुई हार, जलधारा, सिन्दुवार वृक्ष के पुष्प और टूटी हुई मोतियों की माला के समान आँसू गिराती हुई इस प्रकार बोली–"ये केश हमारे लिए बहुत-सी तिथियाँ, पर्व, उत्सव, नागपूजादि रूप यज्ञ और महोत्सवों में जमालीकुमार के अन्तिम दर्शन-रूप या बारम्बार दर्शनरूप होंगे"–ऐसा विचार कर उसने उन्हें अपने तकिये के नीचे रखा।

२४–तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मा-पियरो दोच्चं पि उत्तरावक्कमणं सीहासणं रयावेंति, दोच्चं पि उत्तरा-वक्कमणं सीहासणं रयावित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सेया-पीयएहिं कलसेहिं ण्हावेंति सेया० ण्हावित्ता पम्हलसुकुमालाए सुरभीए गंधकासाईए गायाइं लूहेंति, प० लूहित्ता सरसेणं गोसीसचन्दणेणं गायाइं अणुलिंपंति स० अणुलिंपित्ता णासा-णिस्सासवायवोज्झं, चक्खुहरं, वण्ण-फरिसजुत्तं, हयलालापेलवाऽ-इरेगं, धवलं, कणगखचितंतकम्मं, महरिहं, हंसलक्खणपडसाडगं परिहिंति, परिहित्ता हारं पिणद्धेंति, पिणद्धित्ता अद्धहारं पिणद्धेंति,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पिणद्धित्ता एवं जहा सूरियाभस्स अलंकारो तहेव जाव चित्तं रयण-संकडुक्कडं मउडं पिणिद्धंति, किं बहुणा ? गंथिम-वेढिम-पूरिम-संघाइमेणं चउव्विहेणं मल्लेणं कप्परुक्खगं पिव अलंकिय-विभूसियं करेंति। तएणं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबिय-पुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं, लीलट्ठियसालभंजियागं जहा रायप्पसेण-इज्जे विमाणवण्णओ, जाव मणिरयणघंटियाजालपरिक्खित्तं पुरिस-सहस्सवाहिणिं सीयं उवट्ठवेह, उवट्ठवेत्ता मम एयमाणत्तियं पच्चप्पिणह। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति। तएणं से जमाली खत्तियकुमारे केसालंकारेणं, वत्थालंकारेणं, मल्लालंकारेणं, आभरणा-लंकारेणं चउव्विहेणं अलंकारेणं अलंकारिए समाणे पडिपुण्णालंकारे सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सीहासणाओ अब्भुट्ठित्ता सीयं अणुप्पदाहिणी-करेमाणे सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाऽभिमुहे सण्णिसण्णे।

कठिन शब्दार्थ-उत्तरावक्कमणं-उत्तराभिमुख-उत्तर दिशा की ओर, **रयावेंति**-रख-वाया, **सेयापीयएहिं**-श्वेतपीत (रजतस्वर्ण), **ण्हावेंति**-स्नान कराया, **पम्हलसुकुमालाए**-रोयेंदार कोमल मुलायम वस्त्र से, **सुरभीए**-सुगंधित, **गंधकासाईए**-लालरंग का सुगन्धित, **गायाइं लूहेंति**-शरीर पोंछा, **सरसेणं**-रसवाले, **गोसीसचंदणेणं**-गोशीर्ष चन्दन से, **गायाइं अणुलिंपंति**-शरीर पर विलेपन किया, **नासाणिस्सासवायवोज्झं**-नासिका के श्वास से उड़े वैसा हलका, **चक्खुहरं**-आंखों को आकर्षित करने वाला, **हयलालापेलवाऽइरेगं**-घोड़े के मुंह की लार से भी अधिक नरम, **कणगखचितंतकम्मं**-जिसकी किनारों पर सोना जड़ा है, **परि-**

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिंति—पहिनाया, **पिणद्धेति**—धारण कराया, **रयणसंकडुक्कडं**—रत्नों से जड़े हुए, **मउडं**—मुकुट, **किं बहुणा**—अधिक क्या कहें, **गंथिम-वेढिम-पूरिम-संघाइमेणं**—गुंथे हुए लपेटे, पिरोये और परस्पर जोड़े हुए, **अणेगखंभसयसण्णिविट्ठं**—अनेक सैकड़ों स्तंभों से युक्त, **लीलट्ठियसाल-भंजियागं**—लीला पूर्वक सालभंजिका (पुतली) वाली, **सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणे**—शिविका को प्रदक्षिणा करते हैं, **पुरत्थाभिमुहे**—पूर्व की ओर मुंह करके, **सण्णिसण्णे**—बैठा।

भावार्थ-२४-इसके बाद जमालीकुमार के माता-पिता ने उत्तर दिशा की ओर दूसरा सिंहासन रखवाया और जमालीकुमार को सोने और चांदी के कलशों से स्नान कराया, फिर सुगन्धित गन्धकाषायित (गन्ध प्रधान लाल) वस्त्र से उसके अंग पोंछे। उसके बाद सरस गोशीर्ष चन्दन से गात्रों का विलेपन किया। तत्पश्चात् ऐसा पटशाटक (रेशमी वस्त्र) पहिनाया जो नासिका के निश्वास की वायु से उड़ जाय, ऐसा हलका, नेत्रों को अच्छा लगे वैसा सुंदर, सुंदर वर्ण और कोमल स्पर्श से युक्त था। वह वस्त्र घोड़े के मुख की लार से भी अधिक मुलायम, श्वेत सोने के तार से जड़ा हुआ महामूल्यवान् और हंस के चिन्ह से युक्त था। फिर हार (अठारह लड़ीवाला हार), अर्द्ध हार (नवसर हार) पहनाया। जिस प्रकार राजप्रश्नीय सूत्र में सूर्याभ देव के अलंकारों का वर्णन है, उसी प्रकार यहां भी समझना चाहिए। यावत् विचित्र रत्नों से जड़ा हुआ मुकुट पहिनाया। अधिक क्या कहा जाय, ग्रंथिम (गूंथी हुई), वेष्टिम (वींटी हुई), पूरिम (पूरी की हुई) और संघातिम (परस्पर संघात की हुई) से तैयार की हुई चारों प्रकार की मालाओं से कल्प वृक्ष के समान उस जमालीकुमार को अलंकृत एवं विभूषित किया गया। इसके बाद उसके पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियों! सैकड़ों स्तम्भों से युक्त लीलापूर्वक पुतलियों से युक्त इत्यादि राजप्रश्नीय सूत्र में वर्णित विमान के समान यावत् मणि-रत्नों की घण्टिकाओं के समूहों से युक्त, हजार पुरुषों द्वारा उठाने योग्य शिविका (पालकी) तैयार करके मुझे निवेदन करो।" इसके बाद उन सेवक पुरुषों ने उसी प्रकार की शिविका तैयार कर निवेदन किया। इसके बाद जमाली कुमार केशालङ्कार, वस्त्रालङ्कार, मालालङ्कार और आभरणालङ्कार, इन चार

प्रकार के अलङ्कारों से अलंकृत होकर और प्रतिपूर्ण अलङ्कारों से विभूषित होकर सिंहासन से उठा। वह दक्षिण की ओर से शिविका पर चढ़ा और श्रेष्ठ सिंहासन पर, पूर्व की ओर मुंह करके बैठा।

तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया ण्हाया, कयबलिकम्मा जाव सरीरा हंसलक्खणं पडसाडगं गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणे पासे भद्दासणवरंसि सण्णिसण्णा। तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मधाई ण्हाया जाव सरीरा, रयहरणं पडिग्गहं च गहाय सीयं अणुप्पदाहिणीकरेमाणी सीयं दुरूहइ सीयं दुरूहित्ता जमालिस्स खत्तियकुमारस्स वामे पासे भद्दासणवरंसि सण्णिसण्णा। तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी सिंगारागारचारुवेसा संगयगय जाव रूव-जोव्वण-विलासकलिया सुंदरथण०हिम-रयय-कुमुद-कुंदें-दुप्पगासं सकोरंट-मल्लदामं धवलं आयवत्तं गहाय सलीलं उवरिं धारेमाणी धारेमाणी चिट्ठइ। तएणं तस्स जमालिस्स उभओ पासिं दुवे वरतरुणीओ सिंगारागारचारु जाव कलियाओ, णाणामणि-कणग-रयण-विमल-महरिहतवणिज्जु-ज्जलविचित्त-दंडाओ, चिल्लियाओ, संखंक-कुंदें-दुदगरय-अमयमहिय-फेणपुंजसण्णिकासाओ धवलाओ चामराओ गहाय सलीलं वीयमाणीओ वीयमाणीओ चिट्ठंति। तएणं तस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमालिस्स खत्तियकुमारस्स उत्तरपुरत्थिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारा-गार जाव कलिया सेयं रययामयं विमलसलिलपुण्णं मत्तगयमहा-मुहाकिइसमाणं भिंगारं गहाय चिट्ठइ । तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स दाहिणपुरत्थिमेणं एगा वरतरुणी सिंगारागार जाव कलिया चित्तकणगदंडं तालवेंटं गहाय चिट्ठइ ।

कठिन शब्दार्थ-महासणवरंसि-उत्तम भद्रासन पर, **अम्मधाई**-धायमाता, **पिट्ठओ**-पीछे की ओर, **वरतरुणी**-श्रेष्ठ युवती, **सिंगारागारचारुवेसा**-मनोहर आकृति और सुन्दर वेश वाली, **संगयगय**-संगत गतिवाली, **धवलं आयवत्तं**-श्वेत छत्र, **महरिहतवणिज्जुज्जल-विचित्तदंडाओचिल्लियाओ**-महामूल्यवान तपनीय (रक्त स्वर्ण) से बने हुए उज्ज्वल विचित्र दंडवाले, **संखंककुंदेंदुदगरय-अमयमहिय-फेणपुंजसण्णिकासाओ**-शंख, अंक, चन्द्र, मोगरे के फूल, जल-बिन्दु और मथे हुए अमृत फेन के समान, **विमलसलिलपुण्णं**-स्वच्छ जल से परि-पूर्ण, **मत्तगयमहामुहाकिइसमाणं**-उन्मत्त हाथी के फैले हुए मुंह के आकार वाले, **भिंगारं**-कलश को, **तालवेंटं**-पंखा ।

भावार्थ-इसके बाद जमालीकुमार की माता, स्नानादि करके यावत् शरीर को अलंकृत करके, हंस के चिन्ह वाला पटशाटक लेकर दक्षिण की ओर से शिविका पर चढ़ी और जमालीकुमार के दाहिनी ओर उत्तम भद्रासन पर बैठी । इसके बाद जमालीकुमार की धायमाता स्नानादि करके यावत् शरीर को अलंकृत करके रजोहरण और पात्र लेकर दाहिनी ओर से शिविका पर चढ़ी और जमालीकुमार के बाँई ओर उत्तम भद्रासन पर बैठी । इसके बाद जमालीकुमार के पीछे मनो-हर आकार और सुन्दर वेष वाली, सुन्दर गतिवाली, सुन्दर शरीरवाली यावत् रूप और यौवन के विलास युक्त, एक युवती हिम, रजत, कुमुद, मोगरे के फूल और चन्द्रमा के समान कोरण्टक पुष्प की माला से युक्त श्वेत छत्र हाथ में लेकर, लीलापूर्वक धारण करती हुई खड़ी रही । फिर जमालीकुमार के दाहिनी तथा बांयी ओर, शृंगार के घर के समान मनोहर आकारवाली और सुन्दर वेषवाली

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्तम दो युवतियाँ दोनों ओर चामर डुलाती हुई खड़ी हुई। वे चामर मणि, कनक, रत्न और महामूल्य के विमल तपनीय (रक्त सुवर्ण) से बने हुए विचित्र दण्ड वाले थे और शंख, अङ्क, मोगरा के फूल, चन्द्र, जलबिन्दु और मथे हुए अमृत के फेन के समान श्वेत थे। इसके बाद जमालीकुमार के उत्तर-पूर्व दिशा (ईशान कोण) में, शृंगार के गृह के समान और उत्तम वेषवाली, एक उत्तम स्त्री श्वेत रजतमय पवित्र पानी से भरा हुआ, उन्मत्त हाथी के मुख के आकार वाला कलश लेकर खड़ी हुई। जमालीकुमार के दक्षिण-पूर्व (आग्नेय कोण) में, शृंगार के घर के समान उत्तम वेषवाली एक उत्तम स्त्री, विचित्र सोने के दण्डवाले पंखे लेकर खड़ी हुई।

तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ को० सद्दावित्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सरिसयं, सरित्तयं, सरिव्वयं, सरिसलावण्ण-रूव-जोव्वण-गुणोववेयं, एगाभरण-वसणगहियणिज्जोयं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं सद्दावेह। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सरिसयं, सरित्तयं जाव सद्दावेंति। तएणं ते कोडुंबियपुरिया जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिउणा कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठ-तुट्ठ ण्हाया, कयबलिकम्मा, कयकोउय-मंगल-पायच्छित्ता एगाभरण-वसणगहिय-णिज्जोया जेणेव जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता करयल जाव वद्धावेत्ता एवं वयासी-संदिसंतु णं देवाणुप्पिया! जं अम्मेहिं करणिज्जं। तएणं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया तं कोडुंबियवरतरुणसहस्सं पि

एवं वयासी-तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! ण्हाया कयबलिकम्मा जाव गहियणिज्जोआ जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहह । तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स जाव पडिसुणित्ता ण्हाया जाव गहिय-णिज्जोआ जमालिस्स खत्तियकुमारस्स सीयं परिवहंति । तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरिससहस्स-वाहिणिं सीयं दुरूढस्स समाणस्स तप्पढमयाए इमे अट्ठ-ट्ठ मंगलगा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया; तं जहा-सोत्थिय-सिरिवच्छ जाव दप्पणा; तयाणंतरं च णं पुण्णकलसभिंगारं जहा उववाइए, जाव गगणतलमणुलिहंती पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया, एवं जहा उववाइए तहेव भाणियव्वं, जाव आलोयं च करेमाणा जयजयसद्दं च पउंजमाणा पुरओ अहाणुपुव्वीए संपट्ठिया । तयाणंतरं च णं बहवे उग्गा भोगा जहा उववाइए जाव महापुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता, जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ य मग्गओ य पासओ य अहाणु-पुव्वीए संपट्ठिया ।

कठिन शब्दार्थ-एगाभरण-एक सरीखे भूषण, **णिज्जोया**-योजित किये (नियुक्त किये), **सीयं परिवहह**-शिविका वहन करो, **सोत्थिय**-स्वस्तिक, **सिरिवच्छ**-श्रीवत्स, **दप्पणा**-दर्पण, **तदाणंतरं**-इसके बाद, **गगणतलमणुलिहंति**-गगन तल को स्पर्श करती, **वग्गुरापरि-क्खित्ता**-घेरे से घिरा हुआ ।

भावार्थ-जमालीकुमार के पिता ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुला कर इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियों ! समान त्वचावाले, समान उम्रवाले, समान रूप लावण्य और यौवन गुणों से युक्त तथा एक समान आभूषण और वस्त्र पहने हुए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक हजार उत्तम युवक पुरुषों को बुलाओ।" सेवक पुरुषों ने स्वामी के वचन स्वीकार कर शीघ्र ही हजार पुरुषों को बुलाया। वे हजार पुरुष हर्षित और तुष्ट हुए। वे स्नानादि कर के एक समान आभूषण और वस्त्र पहन कर जमाली कुमार के पिता के पास आए और हाथ जोड़ कर बधाये तथा इस प्रकार बोले-"हे देवानुप्रिय! हमारे योग्य जो कार्य हो वह कहिये। तब जमालीकुमार के पिता ने उनसे कहा-"हे देवानुप्रियों! तुम सब जमालीकुमार की शिविका को उठाओ।" उन पुरुषों ने शिविका उठाई। हजार पुरुषों द्वारा उठाई हुई जमाली-कुमार की शिविका के सब से आगे ये आठ मंगल अनुक्रम से चले। यथा:-(१) स्वस्तिक, (२) श्रीवत्स, (३) नन्द्यावर्त, (४) वर्धमानक, (५) भद्रासन, (६ कलश, (७) मत्स्य और (८) दर्पण। इन आठ मंगलों के पीछे पूर्ण कलश चला, इत्यादि औपपातिक सूत्र में कहे अनुसार यावत् गगनतल को स्पर्श करती हुई वैजयन्ती (ध्वजा) चली। लोग जय-जयकार का उच्चारण करते हुए अनुक्रम से आगे चले। इसके बाद उग्रकुल, भोगकुल में उत्पन्न पुरुष यावत् महापुरुषों के समूह जमालीकुमार के आगे पीछे और आसपास चलने लगे।

२५-तएणं से जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिया ण्हाया कय-वलिकम्मा जाव विभूसिए हत्थिक्खंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं हय-गय-रह-पवरजोह-कलियाए चाउरंगिणीए सेणाए सद्धिं संपरिवुडे, महयाभडचडगर जाव परिक्खित्ते जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पिट्ठओ अणुगच्छइ। तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स पुरओ महं आसा, आस-वरा, उभओ पासिं णागा, णागवरा, पिट्ठओ रहा, रहसंगेल्ली।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तए णं से जमाली खत्तियकुमारे अब्भुग्गयभिंगारे, परिग्गहियतालि-यंटे, ऊसवियसेयछत्ते, पवीइयसेयचामरबालवीयणीए, सव्विड्ढीए जाव णाइयरवेणं तयाणंतरं च णं बहवे लट्ठिग्गाहा कुंतग्गाहा जाव पुत्थय-ग्गाहा, जाव वीणग्गाहा, तयाणंतरं च णं अट्ठसयं गयाणं, अट्ठसयं तुरयाणं अट्ठसयं रहाणं; तयाणंतरं च णं लउडअसि-कोंतहत्थाणं बहूणं पायत्ताणीणं पुरओ संपट्ठियं; तयाणंतरं च णं बहवे राईसर-तलवरजाव सत्थवाहप्पभिइओ पुरओ संपट्ठिया खत्तियकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव माहणकुंडग्गामे णयरे, जेणेव बहुसालए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

कठिन शब्दार्थ-णागा-हाथी, रहा-रथ, रहसंगेल्ली-रथ समूह, अब्भुग्गयभिंगारे-आगे कलश, परिग्गहिय तालयंटे-पंखे ग्रहण कर, ऊसवियसेयछत्ते-ऊँचा श्वेत छत्र धारण किया हुआ, पवीइयसेयचामरबालवीयणीए-बगल में श्वेत चामर और छोटे पंखे विजते हुए, णाइयरवेणं-नादित शब्द युक्त, पुत्थयगाहा-पुस्तकवाले, पहारेत्थ-प्रारम्भ हुए।

भावार्थ-२५-जमालीकुमार के पिता ने स्नानादि किया, यावत् विभूषित होकर हाथी के उत्तम कंध पर चढ़ा। कोरण्टक पुष्प की माला से युक्त छत्र धारण करते हुए, दो श्वेत चामरों से बिंजाते हुए, घोड़ा, हाथी, रथ और सुभटों से युक्त, चतुरंगिनी सेना सहित और महासुभटों के वृन्द से परिवृत जमालीकुमार के पिता, उसके पीछे चलने लगे। जमालीकुमार के आगे महान् और उत्तम घोड़े, दोनों ओर उत्तम हाथी, पीछे रथ और रथ का समूह चला। इस प्रकार ऋद्धि सहित यावत् वादिन्त्र के शब्दों से युक्त जमालीकुमार चलने लगा। उसके आगे कलश और तालवृन्त लिये हुए पुरुष चले। उसके सिर पर श्वेत छत्र धारण किया हुआ था। दोनों ओर श्वेत चामर और पंखे बिंजायें जा रहे थे। इनके पीछे बहुत-से लकडीवाले, भालावाले, पुस्तकवाले यावत् वीणावाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पुरुष चले। उनके पीछे एक सौ आठ हाथी, एक सौ आठ घोड़े और एक सौ आठ रथ चले। उनके बाद लकड़ी, तलवार और भाला लिये हुए पदाति पुरुष चले। उनके पीछे बहुत-से युवराज, धनिक, तलवर, यावत् सार्थवाह आदि चले। इस प्रकार क्षत्रियकुण्ड ग्राम नगर के बीच में चलते हुए माहण कुंडग्राम नगर के बाहर बहुशालक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास जाने लगे।

२६-तएणं तस्स जमालिस्स खत्तियकुमारस्स खत्तियकुंडग्गामं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छमाणस्स सिंघाडग-तिय-चउक्क जाव पहेसु बहवे अत्थत्थिया जहा उववाइए, जाव अभिणंदिया य अभित्थुणंता य एवं वयासी-'जय जय णंदा! धम्मेणं, जय जय णंदा! तवेणं, जय जय णंदा! भद्दं ते अभग्गेहिं णाण-दंसण-चरित्तमुत्तमेहिं, अजियाइं जिणाहि इंदियाइं, जीयं च पालेहि समण-धम्मं; जियविग्घो वि य वसाहि तं देव! सिद्धिमज्झे णिहणाहि य राग-दोसमल्ले, तवेणं धिइधणियबद्धकच्छे, मद्दाहि य अट्ठ कम्मसत्तू झाणेणं उत्तमेणं सुक्केणं, अप्पमत्तो हराहि आराहणपडागं च धीर! तेलोक्करंगमज्झे, पावय वितिमिरमणुत्तरं केवलं च णाणं, गच्छ य मोक्खं परं पदं जिणवरोवदिट्ठेणं सिद्धिमग्गेणं अकुडिलेणं, हंता परीसहचमूं, अभिभविय गामकंटकोवसग्गाणं, धम्मे ते अविग्घमत्थु' त्ति कट्टु अभिणंदंति य अभिथुणंति य।

कठिन शब्दार्थ-बहवे अत्थत्थि-बहुत से धन के अर्थी, **अभित्थुणंता**-स्तुति करते हुए, **अभग्गेहिं**-अखंडित, **अजियाइं जिणाहि**-नहीं जीते को जीतो, **जियविग्घो**-विघ्नों को

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जीतो, **णिहणाहि**-नष्ट करो, **धिइधणियबद्धकच्छे**-धैर्यरूपी कच्छ को दृढ़ता से बाँधकर, **मद्दाहि**-मर्दन कर, **आराहणपडागं**-आराधना रूपी पताका, **तेलोक्करंगमज्झे**-त्रिलोक रूपी रंग-मंडप में, **पावय**-प्राप्त करो, **अकुडिलेणं**-सरलता से, **परिसहचमूं**-परिषह रूपी सेना, **अभिभविय गामकंटकोवसग्गाणं**-इन्द्रियों के प्रतिकूल कंटक समान उपसर्गों को हराकर, **अविग्घमत्थु**-निर्विघ्न होवो।

भावार्थ-२६-क्षत्रियकुण्डग्राम के बीच से निकलते हुए जमालीकुमार को शृंगाटक, त्रिक, चतुष्क यावत् राजमार्गों में बहुत-से धनार्थी और कामार्थी पुरुष, अभिनन्दन करते हुए एवं स्तुति करते हुए इस प्रकार कहने लगे-"हे नन्द (आनन्द-दायक)! धर्म द्वारा तेरी जय हो। हे नन्द! तप से तुम्हारी जय हो। हे नन्द! तुम्हारा भद्र (कल्याण) हो। हे नन्द! अखण्डित उत्तम ज्ञान, दर्शन और चारित्र द्वारा अविजित ऐसी इन्द्रियों को जीतें और श्रमण धर्म का पालन करें। धैर्य रूपी कच्छ को मजबूत बाँध कर सर्व विघ्नों को जीतें। इन्द्रियों को वश कर के परीषह रूपी सेनापर विजय प्राप्त करें। तप द्वारा रागद्वेष रूपी मल्लों पर विजय प्राप्त करें और उत्तम शुक्लध्यान द्वारा अष्ट कर्म रूपी शत्रुओं का मर्दन करें। हे धीर! तीन लोक रूपी विश्व-मण्डप में आप आराधना रूपी पताका लेकर अप्रमत्तता पूर्वक विचरण करें और निर्मल विशुद्ध ऐसे अनुत्तर केवलज्ञान प्राप्त करें तथा जिनवरोपदिष्ट सरल सिद्धि मार्ग द्वारा परम पद रूप मोक्ष को प्राप्त करें। तुम्हारे धर्म-मार्ग में किसी प्रकार का विघ्न नहीं हो।" इस प्रकार लोग अभिनन्दन और स्तुति करते हैं।

तएणं से जमाली खत्तियकुमारे णयणमालासहस्सेहिं पिच्छिज्जमाणे पिच्छिज्जमाणे एवं जहा उववाइए कुणिओ, जाव णिग्गच्छइ; णिग्गच्छित्ता जेणेव माहणकुंडग्गामे णयरे जेणेव बहुसालए चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता छत्ताईए तित्थगराइसए पासइ,

पासित्ता पुरिससहस्सवाहिणिं सीयं ठवेइ, पुरिससहस्सवाहिणिओ सियाओ पच्चोरुहइ । तएणं तं जमालिं खत्तियकुमारं अम्मा-पियरो पुरओ काउं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता एवं वयासी-एवं खलु भंते ! जमाली खत्तियकुमारे अम्हं एगे पुत्ते इट्ठे कंते जाव किमंग ! पुण पासणयाए, से जहा णामए उप्पले इ वा, पउमे इ वा, जाव सहस्सपत्ते इ वा पंके जाए जले संवुड्ढे णोऽव-लिप्पइ पंकरएणं, णोऽवलिप्पइ जलरएणं, एवामेव जमाली वि खत्तियकुमारे कामेहिं जाए, भोगेहिं संवुड्ढे णो विलिप्पइ कामरएणं णो विलिप्पइ भोगरएणं णो विलिप्पइ मित्त-णाइ-णियग-सयण-संबंधिपरिजणेणं । एस णं देवाणुप्पिया ! संसारभयुव्विग्गे भीए जम्मण-मरणेणं; देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए; तं एयं णं देवाणुप्पियाणं अम्हे सीसभिक्खं दलयामो, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सीसभिक्खं ।

कठिन शब्दार्थ-णोवलिप्पइ-लिप्त नहीं होता, **पंकरएणं**-पंक की रज से, **संसार-भयुव्विग्गे**-संसार के भय से उद्विग्न हुआ, **पडिच्छंतु**-ग्रहण करें ।

भावार्थ-औपपातिक सूत्र में वर्णित कोणिक के प्रसंगानुसार जमालीकुमार, हजारों पुरुषों से देखाजाता हुआ ब्राह्मणकुण्ड ग्राम नगर के बाहर बहुशाल उद्यान में आया और तीर्थङ्कर भगवान् के छत्र आदि अतिशयों को देखते ही सहस्त्रपुरुष-वाहिनी से नीचे उतरा । फिर जमालीकुमार को आगे करके उसके माता-पिता,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की सेवामें उपस्थित हुए और भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा करके इस प्रकार बोले-"हे भगवन् ! यह जमालीकुमार हमारा इकलौता, प्रिय और इष्ट पुत्र है। इसका नाम सुनना भी दुर्लभ है, तो दर्शन दुर्लभ हो इसमें तो कहना ही क्या। जिस प्रकार कीचड़ में उत्पन्न होने और पानी में बड़ा होने पर भी कमल, पानी और कीचड़ से निर्लिप्त रहता है, इसी प्रकार जमालीकुमार भी काम से उत्पन्न हुआ और भोगों में बड़ा हुआ, परन्तु वह काम-भोग में किंचित् भी आसक्त नहीं है। मित्र, ज्ञाति, स्वजन सम्बन्धी और परिजनों में लिप्त नहीं हैं। हे भगवन् ! यह जमालीकुमार संसार के भय से उद्विग्न हुआ है, जन्म-मरण के भय से भयभीत हुआ है। यह आपके पास मुण्डित होकर अनगार धर्म स्वीकार करना चाहता है। अतः हे भगवन् ! हम यह शिष्यरूपी भिक्षा देते हैं। आप इसे स्वीकार करें।

२७–तएणं समणे भगवं महावीरे जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं ! तएणं से जमाली खत्तियकुमारे समणेणं भगवया महावीरेणं एवं वुत्ते समाणे हट्ठ-तुट्ठे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता उत्तरपुरत्थिमं दिसि-भागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सयमेव आभरण-मल्ला-लंकारं ओमुयइ। तएणं सा जमालिस्स खत्तियकुमारस्स माया हंसलक्ख-णेणं पडसाडएणं आभरण-मल्ला-लंकारं पडिच्छइ, आ० २ पडि-च्छित्ता हार-वारि जाव विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी जमालिं खत्तियकुमारं एवं वयासी–घडियव्वं जाया ! जइयव्वं जाया ! परिक्कमियव्वं जाया ! अस्सिं च णं अट्ठे, णो पमाएयव्वं ति कट्टु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जमालिस्स खत्तियकुमारस्स अम्मा-पियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति, णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसिं पाउब्भूया तामेव दिसिं पडिगया।

कठिन शब्दार्थ-अहासुहं-यथासुख (जैसा सुख हो वैसा करो), मा पडिबंधं-प्रतिबंध (रुकावट) मत करो. विणिम्मुयमाणी-विमोचन करती (डालती) हुई, घडियव्वं-प्रयत्न करना चाहिये, जइयव्वं यत्न करना, पडिक्कमियव्वं-पराक्रम करना।

भावार्थ-२७-तत् पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जमाली-क्षत्रिय कुमार से इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रिय ! जिस प्रकार तुम्हें सुख हो वैसा करो, किन्तु विलम्ब मत करो।" भगवान् के ऐसा कहने पर जमाली क्षत्रिय कुमार हर्षित और तुष्ट हुआ और भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा कर यावत् वन्दना नमस्कार कर, उत्तर पूर्व (ईशान कोण) में गया। उसने स्वयमेव आभरण, माला और अलङ्कार उतारे। उसकी माता ने उन्हें हंस के चिन्हवाले पटशाटक (वस्त्र) में ग्रहण किया। फिर हार और जलधारा के समान आंसू गिराती हुई अपने पुत्र से इस प्रकार बोली-"हे पुत्र ! संयम में प्रयत्न करना, संयम में पराक्रम करना। संयम पालन में किंचित् मात्र भी प्रमाद मत करना।" इस प्रकार कहकर जमाली क्षत्रिय कुमार के माता पिता भगवान् को वन्दना नमस्कार कर के जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा में वापिस चले गये।

२८-तएणं से जमाली खत्तियकुमारे सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, एवं जहा उसभदत्तो तहेव पव्वइओ; णवरं पंचहिं पुरिससएहिं सद्धिं तहेव जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, सा०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ-छट्ठ-ट्ठम-जाव मासद्ध-मासखमणेहिं विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।

भावार्थ—२८—इसके बाद जमाली क्षत्रियकुमार ने स्वयमेव पंचमुष्टिक लोच किया और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की सेवा में आकर ऋषभदत्त ब्राह्मण की तरह प्रव्रज्या अंगीकार की । इसमें इतनी विशेषता है कि जमाली क्षत्रियकुमार ने पांच सौ पुरुषों के साथ प्रव्रज्या ली । फिर जमाली अनगार ने सामायिकादि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बहुत-से उपवास, बेला, तेला यावत् अर्द्धमास, मासखमण आदि विचित्र तप द्वारा आत्मा को भावित करता हुआ विचरने लगा ।

जमाली का पृथक् विहार

२९—तएणं से जमाली अणगारे अण्णया कयाइ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरित्तए । तएणं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं णो आढाइ, णो परिजाणइ, तुसिणीए संचिट्ठइ । तएणं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं दोच्चं पि तच्चं पि एवं वयासी—इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं जाव विहरित्तए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तएणं समणे भगवं महावीरे जमालिस्स अणगारस्स दोच्चं पि तच्चं पि एयमट्ठं णो आढाइ, जाव तुसिणीए संचिट्ठइ। तएणं से जमाली अणगारे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ बहुसालाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं बहिया जणवयविहारं विहरइ।

कठिन शब्दार्थ-**जणवयविहारं**-जनपद विहार, **णो आढाइ**-आदर नहीं किया, **णो परिजाणइ**-अच्छा नहीं जाना, **तुसिणीए संचिट्ठइ**-मौन रहे, **अंतियाओ**-पास से।

भावार्थ-२९-एक दिन जमाली अनगार श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार बोले-"हे भगवन्! आपकी आज्ञा हो, तो मैं पांच सौ अनगारों के साथ अन्य प्रान्तों में विचरना चाहता हूँ।" भगवान् ने जमाली अनगार की इस मांग का आदर नहीं किया, स्वीकार नहीं किया और मौन रहे। जमाली अनगार ने यही बात दूसरी बार और तीसरी बार कही, परन्तु भगवान् पूर्ववत् मौन रहे। तब जमाली अनगार भगवान् को वन्दना नमस्कार करके उनके पास से एवं बहुशालक उद्यान से निकल कर पांच सौ साधुओं के साथ अन्य देशों में विचरने लगे।

३०-तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी णामं णयरी होत्था, वण्णओ; कोट्ठए चेइए, वण्णओ जाव वणसंडस्स। तेणं कालेणं तेणं समएणं, चंपा णामं णयरी होत्था, वण्णओ। पुण्णभद्दे चेइए, वण्णओ जाव पुढविसिलापट्टओ। तएणं से जमाली अणगारे अण्णया कयाइं पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे जेणेव सावत्थी णयरी, जेणेव कोट्ठए चेइए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हइ, अ० ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तएणं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइं पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे जाव सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव चपा णयरी, जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हइ, अ० ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

कठिन शब्दार्थ— अहापडिरूवं - यथा प्रतिरूप-मुनियों के योग्य।

भावार्थ-३०-उस काल उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी-वर्णन। वहाँ कोष्ठक नामक उद्यान था-वर्णन यावत् वनखण्ड तक। उस काल उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी-वर्णन। पूर्णभद्र उद्यान था-वर्णन यावत् उसमें पृथ्वीशिलापट्ट था। एक बार वह जमाली अनगार पांच सौ साधुओं के साथ अनुक्रम से विहार करते हुए और ग्रामानुग्राम विचरते हुए श्रावस्ती नगरी के बाहर कोष्ठक उद्यान में आये और यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप द्वारा आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। इधर भगवान् महावीर स्वामी अनुक्रम से विचरते हुए यावत् सुखपूर्वक विहार करते हुए चम्पा नगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे और यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके तप संयम से आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

जमाली के मिथ्यात्व का उदय

३१-तएणं तस्स जमालिस्स अणगारस्स तेहिं अरसेहि य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विरसेहि य अंतेहि य पंतेहि य लूहेहि य तुच्छेहि य कालाइक्कंतेहि य, पमाणाइक्कंतेहि य, सीएहि य पाण-भोयणेहिं अण्णया कयाइं सरीरगंसि विउले रोगायंके पाउब्भूए, उज्जले, विउले, पगाढे, कक्कसे, कडुए, चंडे, दुक्खे, दुग्गे, तिव्वे, दुरहियासे। पित्तज्जर-परिगयसरीरे, दाहवुक्कंतिए या वि विहरइ। तएणं से जमाली अणगारे वेयणाए अभिभूए समाणे समणे णिग्गंथे सद्दावेइ स० सद्दावित्ता एवं वयासी-तुब्भे णं देवाणुप्पिया ! मम सेज्जासंथारगं संथरह। तएणं ते समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता जमालिस्स अणगारस्स सेज्जासंथारगं संथरंति। तएणं से जमाली अणगारे बलियतरं वेयणाए अभिभूए समाणे दोच्चं पि समणे णिग्गंथे सद्दावेइ, सद्दा-वित्ता, दोच्चं पि एवं वयासी-ममं णं देवाणुप्पिया ! सेज्जासंथारए णं किं कडे, कज्जइ ? तएणं ते समणा णिग्गंथा जमालिं अणगारं एवं वयासी-णो खलु देवाणुप्पिया णं सेज्जासंथारए कडे, कज्जइ।

कठिन शब्दार्थ-अरसेहिं-विना रस वाले, **विरसेहिं**-खराब रस वाले, **अंतेहिं**-भोजन के बाद बचा हुआ, **पंतेहिं**-तुच्छ (हलका), **लूहे**-रूक्ष से, **कालाइक्कंतेहिं**-जिसका काल बीत चुका ऐसे आहार से, **पाउब्भुए**-उत्पन्न हुआ, **पगाढे**-जोरदार, **दुग्गे**-कष्ट साध्य, **दुरहियासे**-असह्य, **पित्तजरपरिगयसरीरं**-शरीर में पित्तज्वर व्याप्त हुआ, **दाहवुक्कंतिए**-जलन युक्त हुआ, **सेज्जासंथारगं संथरह**-बिछौना बिछाओ, **कि कडे, कज्जइ** ?-क्या किया है, या कर रहे हो ?

भावार्थ-३१-जमाली अनगार को अरस, विरस, अन्त, प्रान्त, रूक्ष, तुच्छ, कालातिक्रान्त (भूख, प्यास का समय बीत जाने पर किया गया आहार),

प्रमाणातिक्रान्त (प्रमाण से कम या अधिक।) और ठण्डे पान-भोजन से शरीर में महारोग हो गया। वह रोग, अत्यन्त दाह करने वाला, विपुल, प्रगाढ़, कर्कश, कटुक, चण्ड (भयङ्कर), दुःखरूप, कष्ट-साध्य, तीव्र और असह्य था। उसका शरीर पित्तज्वर से व्याप्त होने से दाह युक्त था। वेदना से पीड़ित बने जमाली अनगार ने श्रमण निर्ग्रन्थों से कहा-"हे देवानुप्रियो ! मेरे सोने के लिये संस्तारक (बिछौना) बिछाओ।" श्रमण-निर्ग्रन्थों ने जमाली अनगार की बात, विनय पूर्वक स्वीकार की और बिछौना बिछाने लगे। जमाली अनगार वेदना से अत्यन्त व्याकुल थे, इसलिये उन्होंने फिर श्रमण निर्ग्रन्थों से पूछा-"हे देवानुप्रियो ! क्या बिछौना बिछा दिया, या बिछा रहे हो ?" तब श्रमण निर्ग्रन्थों ने कहा-"हे देवानुप्रिय ! बिछौना अभी बिछा नहीं है, बिछा रहे हैं।"

तएणं तस्स जमालिस्स अणगारस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-जं णं समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ, जाव एवं परूवेइ-एवं खलु चलमाणे चलिए, उदीरिज्जमाणे उदीरिए, जाव णिज्जरिज्जमाणे णिज्जिण्णे; तं णं मिच्छा; इमं च णं पच्चक्खमेव दीसइ सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे, संथरिज्जमाणे असंथरिए; जम्हा णं सेज्जासंथारए कज्जमाणे अकडे, संथरिज्जमाणे असंथरिए तम्हा चलमाणे वि अचलिए, जाव णिज्जरिज्जमाणे वि अणिज्जिण्णे, एवं संपेहेइ, संपेहित्ता समणे णिग्गंथे सद्दावेइ, सम० सद्दावित्ता एवं वयासी-जं णं देवाणुप्पिया ! समणे भगवं महावीरे एवं आइक्खइ जाव परूवेइ-एवं खलु चलमाणे चलिए; तं चेव सव्वं जाव णिज्जरिज्जेमाणे अणिज्जिण्णे। तएणं तस्स जमालिस्स अणगारस्स एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आइक्खमाणस्स जाव परूवेमाणस्स अत्थेगइया समणा णिग्गंथा एयमट्ठं सद्दहंति पत्तियंति रोयंति, अत्थेगइया समणा णिग्गंथा एयमट्ठं णो सद्दहंति, णो पत्तियंति, णो रोयंति। तत्थ णं जे ते समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयमट्ठं सद्दहंति, पत्तियंति, रोयंति ते णं जमालिं चेव अणगारं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति; तत्थ णं जे ते समणा णिग्गंथा जमालिस्स अणगारस्स एयं अट्ठं णो सद्दहंति, णो पत्तियंति, णो रोयंति ते णं जमालिस्स अणगारस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता पुव्वाणुपुव्विं चरमाणा गामाणुगामं दूइज्जमाणा जेणेव चंपा णयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेंति, करित्ता वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता समणं भगवं महावीरं उवसंपज्जित्ता णं विहरंति।

कठिन शब्दार्थ–अज्झत्थिए–अध्यवसाय, चलमाणे चलिए–चलता हो वह चला, पच्चक्खमेव–प्रत्यक्ष ही, संपेहेइ–विचार करता है, उवसंपज्जित्ताणं–आश्रय करके।

भावार्थ–श्रमणों की यह बात सुनने पर जमाली अनगार को इस प्रकार विचार हुआ–"श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि 'चलमान चलित है, उदीर्यमाण उदीरित है यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण है,' परन्तु यह बात मिथ्या है। क्योंकि यह बात प्रत्यक्ष है कि जब तक बिछौना बिछाया जाता हो, तब तक 'बिछाया हुआ' नहीं है, इस कारण चलमान चलित नहीं, किन्तु अचलित है, यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण नहीं, परन्तु अनिर्जीर्ण

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है।" इस प्रकार विचार कर जमाली अनगार ने श्रमण-निर्ग्रन्थों को बुलाकर इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियो ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस प्रकार कहते हैं यावत् प्ररूपणा करते हैं कि 'चलमान चलित कहलाता है' इत्यादि (पूर्ववत्), यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण नहीं, किन्तु अनिर्जीर्ण है।" जमाली अनगार की इस बात पर कितने ही श्रमण-निर्ग्रंथों ने श्रद्धा, प्रतीति और रुचि की तथा कितने ही श्रमण-निर्ग्रन्थों ने श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की। जिन श्रमण-निर्ग्रन्थों ने जमाली अनगार की उपरोक्त बात पर श्रद्धा, प्रतीति एवं रुचि की, वे जमाली अनगार के पास रहे और जिन्होंने उनकी बात पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की, वे जमाली अनगार के पास से-कोष्ठक उद्यान से निकल कर अनुक्रम से विचरते हुए एवं ग्रामानुग्राम विहार करते हुए, चम्पा नगरी के बाहर पूर्णभद्र उद्यान में, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास लौट आये और भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा करके एवं वन्दना-नमस्कार करके उनके आश्रय में विचरने लगे।

विवेचन-'चलमान चलित यावत् निर्जीर्यमाण निर्जीर्ण'-यह भगवान् का सिद्धान्त है। इसका सयुक्तिक विवेचन भगवती सूत्र के प्रथम शतक के प्रथम उद्देशक के प्रारम्भ में कर दिया गया है। जमाली ने इस सिद्धान्त से विपरीत प्ररूपणा की। उनके पास रहने वाले कितने ही श्रमण-निर्ग्रन्थों ने इस सिद्धान्त पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि की और कितने ही श्रमण निर्ग्रन्थों ने इस सिद्धान्त पर श्रद्धा, प्रतीति, रुचि नहीं की। वे जमाली अनगार के पास से निकल कर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास चले आये।

सर्वज्ञता का झूठा दावा

३२-तएणं से जमाली अणगारे अण्णया कयाइ ताओ रोगायंकाओ विप्पमुक्के, हट्ठे जाए, अरोए बलियसरीरे, सावत्थीए णयरीए कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता

पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे, गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे जेणेव चंपा णयरी, जेणेव पुण्णभद्दे चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता समणस्स भगवओ महावीरस्स अदूरसामंते ठिच्चा समणं भगवं महावीरं एवं वयासी-जहा णं देवाणुप्पियाणं बहवे अंतेवासी समणा णिग्गंथा छउमत्था भवित्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंता, णो खलु अहं तहा छउमत्थे भवित्ता छउमत्थावक्कमणेणं अवक्कंते, अहं णं उप्पण्णणाण-दंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते ।

कठिन शब्दार्थ-अण्णया कयाइ-किसी अन्य दिन, **बलियसरीरे**-बलवान् शरीर वाले, **छउमत्था**-असर्वज्ञ, **छउमत्थावक्कमणेणं**-असर्वज्ञ रहे हुए विचर रहे हैं ।

भावार्थ-३२-किसी समय जमाली अनगार पूर्वोक्त रोग से मुक्त हुआ, रोग रहित और बलवान् शरीर वाला हुआ । श्रावस्ती नगरी के कोष्ठक उद्यान से निकल कर अनुक्रम से विचरता हुआ एवं ग्रामानुग्राम विहार करता हुआ चंपा नगरी के पूर्णभद्र उद्यान में आया । उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी भी वहाँ पधारे हुए थे । वह श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आया और भगवान् के न अति दूर और न अति समीप खड़ा रहकर इस प्रकार बोला-"जिस प्रकार आपके बहुत से शिष्य छद्मस्थ रहकर, छद्मस्थ विहार से विचरण करते हुए आपके पास आते है, उस प्रकार मैं छद्मस्थ विहार से विचरण करता हुआ नहीं आया हूँ, किन्तु उत्पन्न हुए केवलज्ञान केवलदर्शन को धारण करने वाला अरिहन्त, जिन, केवली होकर केवली-विहार से विचरण करता हुआ आया हूँ ।"

३३-तएणं भगवं गोयमे जमालिं अणगारं एवं वयासी-णो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खलु जमाली ! केवलिस्स णाणे वा दंसणे वा सेलंसि वा थंभंसि वा थूभंसि वा आवरिज्जइ वा णिवारिज्जइ वा. जइ णं तुमं जमाली ! उप्पण्णणाण-दंसणधरे अरहा जिणे केवली भवित्ता केवलिअवक्कमणेणं अवक्कंते तो णं इमाइं दो वागरणाइं वागरेहि-सासए लोए जमाली ! असासए लोए जमाली ! सासए जीवे जमाली ! असासए जीवे जमाली ! तएणं से जमाली अणगारे भगवया गोयमेणं एवं वुत्ते समाणे संकिए कंखिए जाव कलुससमावण्णे जाए या वि होत्था, णो संचाएइ भगवओ गोयमस्स किंचि वि पमोक्खं आइक्खित्तए, तुसिणीए संचिट्ठइ।

कठिन शब्दार्थ-सेलंसि-पर्वत से, आवरिज्जइ-ढकता है, णिवारिज्जइ-निवारित होता है, कलुससमावण्णे-कलुषित भाव को प्राप्त हुआ।

भावार्थ-३३-जमाली की बात सुनकर भगवान् गौतम स्वामी ने जमाली अनगार से इस प्रकार कहा-"हे जमाली ! केवली का ज्ञान दर्शन पर्वत, स्तम्भ और स्तूप आदि से आवृत और निवारित नहीं होता। हे जमाली ! यदि तू उत्पन्न केवलज्ञान दर्शन का धारण करने वाला अरिहन्त, जिन, केवली होकर केवली-विहार से विचरण करता हुआ आया है, तो इन दो प्रश्नों का उत्तर दे-(प्रश्न) हे जमाली ! क्या लोक शाश्वत है या अशाश्वत है ? हे जमाली ! क्या जीव शाश्वत है या अशाश्वत है ?

गौतम स्वामी के इन प्रश्नों को सुनकर जमाली शंकित और कांक्षित हुआ यावत् कलुषित परिणाम वाला हुआ। वह गौतम स्वामी के प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ नहीं हुआ। अंतः मौन धारण कर चुपचाप खड़ा रहा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३४-'जमाली' त्ति समणे भगवं महावीरे जमालिं अणगारं एवं वयासी-अत्थि णं जमाली ! ममं बहवे अंतेवासी समणा णिग्गंथा छउमत्था, जे णं पभू एयं वागरणं वागरित्तए, जहा णं अहं, णो चेव णं एयप्पगारं भासं भासित्तए, जहा णं तुमं ! सासए लोए जमाली ! जं ण कयाइ णासी, ण कयाइ ण भवइ, ण कयाइ ण भविस्सइ, भुविं च, भवइ य, भविस्सइ य, धुवे, णिइए, सासए, अक्खए, अव्वए, अवट्ठिए णिच्चे । असासए लोए जमाली ! जं ओसप्पिणी भवित्ता उस्सप्पिणी भवइ, उस्सप्पिणी भवित्ता ओसप्पिणी भवइ । सासए जीवे जमाली ! जं ण कयाइ णासी, जाव णिच्चे । असासए जीवे जमाली ! जं णं णेरइए भवित्ता तिरिक्खजोणिए भवइ तिरिक्खजोणिए भवित्ता मणुस्से भवइ, मणुस्से भवित्ता देवे भवइ ।

कठिन शब्दार्थ-एयप्पगारं-इस प्रकार, अव्वए-अव्यय, अवट्ठिए-अवस्थित ।

भावार्थ-३४-इसके पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने जमाली अनगार को सम्बोधित करके कहा-"हे जमाली ! मेरे बहुत से श्रमण-निर्ग्रन्थ शिष्य छद्मस्थ हैं, परन्तु वे मेरे ही समान इन प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ हैं, किंतु जिस प्रकार तू कहता है कि 'मैं सर्वज्ञ अरिहन्त, जिन, केवली हूँ,' वे इस प्रकार की भाषा नहीं बोलते ।"

हे जमाली ! लोक शाश्वत है, क्योंकि 'लोक कदापि नहीं था, नहीं है और नहीं रहेगा'-यह बात नहीं है, किंतु 'लोक था, है और रहेगा ।' लोक ध्रुव नियत, शाश्वत, अक्षय, अव्यय, अवस्थित और नित्य है । हे जमाली ! लोक अशाश्वत भी है, क्योंकि अवसर्पिणी काल होकर उत्सर्पिणी काल होता है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्सर्पिणी काल होकर अवसर्पिणी काल होता है।"

"हे जमाली ! जीव शाश्वत है, क्योंकि 'जीव कदापि नहीं था, नहीं है और नहीं रहेगा'-ऐसी बात नहीं है, किन्तु 'जीव था, है और रहेगा।' यावत् जीव नित्य है। हे जमाली ! जीव अशाश्वत भी है। क्योंकि वह नैरयिक होकर तिर्यंच योनिक हो जाता है, तिर्यंच योनिक होकर मनुष्य हो जाता है और मनुष्य होकर देव हो जाता है।

३५-तएणं से जमाली अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स एवं आइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयं अट्ठं णो सद्दहइ, णो पत्तियइ, णो रोएइ; एयमट्ठं असद्दहमाणे, अपत्तियमाणे, अरोए-माणे दोच्चं पि समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ आयाए अवक्कमइ, दोच्चं पि आयाए अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भा-वणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं च परं च तदुभयं च वुग्गाहे-माणे, वुप्पाएमाणे बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेइ, झूसित्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ, तीसं० छेदित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइय-अपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवम-ठिइएसु देवकिब्बिसिएसु देवेसु देवकिब्बिसियत्ताए उववण्णे।

कठिन शब्दार्थ-आइक्खमाणस्स-कही गई बात का, **असब्भावुब्भावणाहिं**-असत्य भाव प्रकट करने से, **मिच्छत्ताभिणिवेसेहिं**-मिथ्यात्वाभिनिवेश (असत्य के दृढ़ आग्रह से), **वुग्गाहेमाणे**-भ्रान्त करता हुआ, **वुप्पाएमाणे**-मिथ्याज्ञान वाला करता हुआ, **अणालोइय**-आलोचना नहीं किया हुआ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ--३५--इसके बाद जमाली अनगार इस प्रकार कहता यावत् प्ररूपणा करता हुआ और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी की बात पर श्रद्धा, प्रतीति, रुचि नहीं करता हुआ, अपितु अश्रद्धा, अप्रतीति और अरुचि करता हुआ, दूसरी बार भगवान् के पास से निकल गया। जमाली ने बहुत से असद्भूत भावों को प्रकट करके तथा मिथ्यात्व के अभिनिवेश से अपनी आत्मा को, पर को और उभय को भ्रान्त तथा मिथ्या ज्ञान वाले करता हुआ बहुत वर्षों तक श्रमण पर्याय का पालन किया। फिर अर्द्ध मास की संलेखना द्वारा अपने शरीर को कृश करके और अनशन द्वारा तीस भक्तों का छेदन करके, पूर्वोक्त पाप की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना ही काल के समय में काल करके लान्तक देवलोक में, तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देवों में, किल्विषिक देव रूप से उत्पन्न हुआ।

३६ प्रश्न--तएणं भगवं गोयमे जमालिं अणगारं कालगयं जाणित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--एवं खलु देवाणुप्पियाणं अंतेवासी कुसिस्से जमाली णामं अणगारे, से णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा कहिं गए, कहिं उववण्णे ?

३६ उत्तर--गोयमाइ ! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी--एवं खलु गोयमा ! ममं अंतेवासी कुसिस्से जमाली णामं अणगारे से णं तया मम एवं आइक्खमाणस्स ४ एयं अट्ठं णो सद्दहइ ३ एयं अट्ठं असद्दहमाणे ३ दोच्चं पि ममं अंतियाओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयाए अवक्कमइ, दोच्चं० अवक्कमित्ता बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं तं चेव जाव देवकिब्बिसियत्ताए उववण्णे ।

कठिन शब्दार्थ—कुसिस्से—कुशिष्य ।

भावार्थ—३६ प्रश्न—जमाली अनगार को कालधर्म प्राप्त हुआ जानकर गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार पूछा—'हे भगवन् ! आप देवानुप्रिय का अन्तेवासी कुशिष्य जमाली अनगार काल के समय काल करके कहाँ गया, कहाँ उत्पन्न हुआ ?'

३६ उत्तर—'हे गौतम ! 'इस प्रकार सम्बोधित करके श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने इस प्रकार कहा—' हे गौतम ! मेरा अन्तेवासी कुशिष्य जो जमाली अनगार था, वह जब मैं इस प्रकार कहता था यावत् प्ररूपणा करता था, तब इस प्रकार की यावत् प्ररूपणा करते हुए मेरी बात पर श्रद्धा, प्रतीति, रुचि नहीं करता हुआ यावत् काल के समय काल करके किल्विषिक देवों में उत्पन्न हुआ है ।

किल्विषी देवों का स्वरूप

३७ प्रश्न—कइविहा णं भंते ! देवकिब्बिसिया पण्णत्ता ?

३७ उत्तर—गोयमा ! तिविहा देवकिब्बिसिया पण्णत्ता, तं जहा—तिपलिओवमट्ठिइया, तिसागरोवमट्ठिइया, तेरससागरोवमट्ठिइया ।

३८ प्रश्न—कहिं णं भंते ! तिपलिओवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?

३८ उत्तर—गोयमा ! उप्पिं जोइसियाणं हिट्ठिं सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु, एत्थ णं तिपलिओवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३९ प्रश्न–कहिं णं भंते ! तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ?

३९ उत्तर–गोयमा ! उप्पिं सोहम्मीसाणाणं कप्पाणं, हिट्ठिं सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु एत्थ णं तिसागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया परिवसंति ।

४० प्रश्न–कहिं णं भंते ! तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति ?

४० उत्तर–गोयमा ! उप्पिं बंभलोगस्स कप्पस्स हिट्ठिं लंतए कप्पे, एत्थ णं तेरससागरोवमट्ठिइया देवकिब्बिसिया देवा परिवसंति ।

कठिन शब्दार्थ–उप्पि–ऊँचा, हिट्ठि—नीचे ।

भावार्थ–३७ प्रश्न–हे भगवन् ! किल्विषिक देव कितने प्रकार के कहे गये हैं ?

३७ उत्तर–हे गौतम ! किल्विषिक देव तीन प्रकार के कहे गये हैं । यथा–तीन पल्योपम की स्थिति वाले, तीन सागरोपम की स्थिति वाले और तेरह सागरोपम की स्थिति वाले ।

३८ प्रश्न–हे भगवन् ! तीन पल्योपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहाँ रहते हैं ?

३८ उत्तर–हे गौतम ! ज्योतिषी देवों के ऊपर और सौधर्म एवं ईशान देवलोक के नीचे तीन पल्योपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव रहते हैं ।

३९ प्रश्न–हे भगवन् ! तीन सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहां रहते हैं ?

३९ उत्तर–हे गौतम ! सौधर्म और ईशान देवलोक के ऊपर तथा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सनत्कुमार और माहेंद्र देवलोक के नीचे तीन सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव रहते हैं।

४० प्रश्न-हे भगवन् ! तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव कहाँ रहते हैं ?

४० उत्तर-हे गौतम ! ब्रह्म देवलोक के ऊपर और लान्तक देवलोक के नीचे तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देव रहते हैं।

४१ प्रश्न-देवकिब्विसिया णं भंते ! केसु कम्मादाणेसु देवकिब्विसियत्ताए उववत्तारो भवंति ?

४१ उत्तर-गोयमा ! जे इमे जीवा आयरियपडिणीया, उवज्झायपडिणीया, कुलपडिणीया, गणपडिणीया, संघपडिणीया; आयरियउवज्झायाणं अयसकरा, अवण्णकरा, अकित्तिकरा, बहूहिं असब्भावुब्भावणाहिं मिच्छत्ताभिणिवेसेहि य अप्पाणं परं च तदुभयं च वुग्गाहेमाणा, वुप्पाएमाणा बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणंति, पाउणित्ता, तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंता कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवकिब्विसिएसु देवकिब्विसियत्ताए उववत्तारो भवंति; तं जहा-तिपलिओवमट्ठिइएसु वा, तिसागरोवमट्ठिइएसु वा, तेरससागरोवमट्ठिइएसु वा।

कठिन शब्दार्थ-कम्मादाणेसु-कर्म के कारण, उववत्तारो-उत्पन्न होते, पडिणिया-द्वेषी, अवण्णकरा-निन्दा करने वाले।

भावार्थ-४१ प्रश्न-हे भगवन् ! किल्विषिक देव किस कर्म के निमित्त से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किल्विषिक देवपने उत्पन्न होते हैं ?

४१ उत्तर-हे गौतम ! जो जीव आचार्य, उपाध्याय, कुल, गण और संघ के प्रत्यनीक (द्वेषी) होते हैं, आचार्य और उपाध्याय के अयशः करनेवाले, अवर्णवाद बोलने वाले और अकीर्ति करने वाले होते हैं। बहुत असत्य अर्थ को प्रकट करने से तथा मिथ्या-कदाग्रह से अपनी आत्मा को, दूसरों को और उभय को भ्रान्त और दुर्बोध करने वाले जीव, बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन कर, अकार्यस्थान (पापस्थान) की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना, काल के समय काल करके किन्हीं किल्विषिक देवों में किल्विषिक देवपने उत्पन्न होते हैं। वे इस प्रकार हैं--तीन पल्योपम की स्थिति वाले, तीन सागर की स्थिति वाले और तेरह सागर की स्थिति वाले।

४२ प्रश्न-देवकिव्विसिया णं भंते ! ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं, भवक्खएणं, ठिइक्खएणं अणंतरं चयं चइत्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ?

४२ उत्तर-गोयमा ! जाव चत्तारि पंच णेरइय-तिरिक्ख-जोणिय-मणुस्स-देवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झंति, बुज्झंति, जाव अंतं करेंति; अत्थेगइया अणाईयं अणवदग्गं दीहमद्धं चाउरंतसंसारकंतारं अणुपरियट्टंति।

भावार्थ-४२ प्रश्न-हे भगवन् ! वे किल्विषिक देव, आयु, भव और स्थिति का क्षय होने पर उस देवलोक से चवकर कहाँ जाते हैं, कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

४२ उत्तर-हे गौतम ! कुछ किल्विषिक देव नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य और देव के चार, पाँच भव करके और इतना संसार परिभ्रमण करके सिद्ध होते हैं, बुद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं। और कितने ही

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किल्विषिक देव अनादि, अनन्त और दीर्घ मार्ग वाले चार गति रूप संसार कान्तार (संसार रूपी अटवी) में परिभ्रमण करते हैं।

विवेचन–देवों में जो देव पाप के कारण चाण्डाल के समान होते हैं, उन्हें 'किल्विषिक' कहते हैं। अर्थात् जिस प्रकार यहाँ चाण्डाल अपमानित होता है उसी प्रकार जो देव, देवसभा में अपमानित होते हैं, उन्हें 'किल्विषिक' कहते हैं। वे जब सभा में उठकर कुछ बोलते हैं, तो दो-चार महर्द्धिक देव खड़े होकर कहते हैं—"बस, मत बोलो, चुप रहो, बैठ जाओ," इत्यादि शब्द कहकर उनका अपमान करते हैं। कोई उनका आदर-सत्कार नहीं करता।

प्रश्न ४२ में यह कहा गया है कि किल्विषी मरकर कहाँ उत्पन्न होते हैं ? इस प्रश्न के उत्तर में 'नारक, तिर्यञ्च, मनुष्य और देव के चार पांच भव ग्रहण करके मोक्ष जाने का कहा गया, यह सामान्य कथन है। अन्यथा देव और नारक मरकर तुरन्त देव और नारक नहीं होते। वे वहाँ से मनुष्य या तिर्यञ्च में उत्पन्न होते हैं। इसके पश्चात् नारक या देवों में उत्पन्न हो सकते हैं।

जमाली का भविष्य

४३ प्रश्न–जमाली णं भंते ! अणगारे अरसाहारे विरसाहारे अंताहारे पंताहारे लूहाहारे तुच्छाहारे अरसजीवी विरसजीवी जाव तुच्छजीवी उवसंतजीवी पसंतजीवी विवित्तजीवी ?

४३ उत्तर–हंता, गोयमा ! जमाली णं अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी।

४४ प्रश्न–जइ णं भंते ! जमाली अणगारे अरसाहारे विरसाहारे जाव विवित्तजीवी, कम्हा णं भंते ! जमाली अणगारे कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे तेरससागरोवमट्ठिइएसु देवकिब्बिसिएसु

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवेसु देवकिव्विसियत्ताए उववण्णे ?

४४ उत्तर–गोयमा ! जमाली णं अणगारे आयरियपडिणीए, उवज्झायपडिणीए; आयरिय-उवज्झायाणं अयसकारए, अवण्णकारए, जाव वुप्पाएमाणे, जाव बहूइं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेइ,, तीसं० छेदित्ता तस्स ठाणस्स अणालोइयपडिक्कंते कालमासे कालं किच्चा लंतए कप्पे जाव उववण्णे ।

४५ प्रश्न–जमाली णं भंते ! देवत्ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिइ ?

४५ उत्तर–गोयमा ! चत्तारि, पंच तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवभवग्गहणाइं संसारं अणुपरियट्टित्ता तओ पच्छा सिज्झिहिइ, जाव अंतं काहिइ ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ णवमसए तेत्तीसइमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ–अंताहारे–खाने के बाद बचा हुआ आहार, पंताहारे–तुच्छ आहार, उवसंतजीवी–शान्त जीवन वाला, पसंतजीवी–प्रशांत जीवन वाला, विवित्तजीवी–विविक्त जीवी—स्त्री, पशु, पण्डक रहित स्थान का सेवन करने वाला ।

भावार्थ–४३ प्रश्न–हे भगवन् ! क्या जमाली अनगार अरसाहारी (रस रहित आहार करने वाला), विरसाहारी, अन्ताहारी, प्रान्ताहारी, रूक्षाहारी, तुच्छाहारी, अरसजीवी, विरसजीवी यावत् तुच्छजीवी, उपशांत जीवन वाला,

प्रशांत जीवन वाला और विविक्तजीवी (पवित्र और एकांत जीवन वाला) था ?

४३ उत्तर–हाँ, गौतम ! जमाली अनगार अरसाहारी, विरसाहारी यावत् विविक्तजीवी था ।

४४ प्रश्न–हे भगवन् ! यदि जमाली अनगार अरसाहारी, विरसाहारी यावत् विविक्तजीवी था, तो काल के समय काल करके वह लान्तक देवलोक में तेरह सागरोपम की स्थिति वाले किल्विषिक देवों में किल्विषिक देवपने क्यों उत्पन्न हुआ ?

४४ उत्तर–हे गौतम ! वह जमाली अनगार, आचार्य और उपाध्याय का प्रत्यनीक (द्वेषी) था । आचार्य और उपाध्याय का अपयश करने वाला और अवर्णवाद बोलने वाला था, यावत् वह मिथ्याभिनिवेश द्वारा अपने आपको, दूसरों को और उभय को भ्रान्त और दुर्बोध करता था यावत् बहुत वर्षों तक श्रमण-पर्याय का पालन कर, अर्धमासिक संलेखना द्वारा शरीर को कृश कर और तीस भक्त अनशन का छेदन कर, उस पापस्थानक की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना काल के समय काल कर, लान्तक देवलोक में तेरह सागरोपम की स्थितिवाले किल्विषिक देवों में किल्विषिक देव रूप से उत्पन्न हुआ ।

४५ प्रश्न–हे भगवन् ! वह जमाली देव, देवपन और देवलोक अपनी आयु क्षय होने पर यावत् कहाँ उत्पन्न होगा ?

४५ उत्तर–हे गौतम ! तिर्यंच योनिक, मनुष्य और देव के चार पांच भव करके और इतना संसार परिभ्रमण करके सिद्ध होगा, बुद्ध होगा यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेगा ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन–यद्यपि जमाली अनगार अरसाहारी, विरसाहारी आदि था, किन्तु आचार्य उपाध्याय का प्रत्यनीक होने से तथा असद्भावना और मिथ्यात्व के अभिनिवेश के कारण झूठी प्ररूपणा द्वारा स्वयं तथा दूसरों को भ्रान्त करने से एवं उस पाप स्थान की आलोचना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और प्रतिक्रमण किये बिना ही काल करने के कारण किल्विषिक देवों में उत्पन्न हुआ। वहां से चवकर तिर्यंच, मनुष्य और देव के चार पांच भव कर के सिद्ध, बुद्ध यावत् मुक्त होगा।

॥ नौवें शतक का तेतीसवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ९ उद्देशक ३४

पुरुष और नोपुरुष का घातक

१ प्रश्न-तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव एवं वयासी-पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसं हणइ, णोपुरिसे हणइ ?

१ उत्तर-गोयमा ! पुरिसं पि हणइ, णोपुरिसे वि हणइ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-पुरिसं पि हणइ, जाव णोपुरिसे वि हणइ ?

उत्तर-गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ-एवं खलु अहं एगंपुरिसं हणामि से णं एगं पुरिसं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-पुरिसं पि हणइ, जाव णोपुरिसे वि हणइ।

२ प्रश्न-पुरिसे णं भंते ! आसं हणमाणे किं आसं हणइ, णोआसे वि हणइ ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-गोयमा ! आसं पि हणइ, णोआसे वि हणइ ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं ?

उत्तर-अट्ठो तहेव, एवं हत्थिं, सीहं, वग्घं जाव चित्तलगं । एए सव्वे इक्कगमा ।

३ प्रश्न-पुरिसे णं भंते ! अण्णयरं तसं पाणं हणमाणे किं अण्णयरं तसं पाणं हणइ, णोअण्णयरे तसे पाणे हणइ ?

३ उत्तर-गोयमा ! अण्णयरं पि तसं पाणं हणइ, णोअण्णयरे वि तसे पाणे हणइ ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-अण्णयरं पि तसं पाणं हणइ, णोअण्णयरे वि तसे पाणे हणइ ।

उत्तर-गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ एवं खलु अहं एगं अण्णयरं तसं पाणं हणामि, से णं एगं अण्णयरं तसं पाणं हणमाणे अणेगे जीवे हणइ, से तेणट्ठेणं गोयमा ! तं चेव । एए सव्वे वि एक्कगमा ।

कठिन शब्दार्थ-आसं-घोड़े को, चित्तलगं-चित्रल-एक जंगली जानवर विशेष, इक्कगमा-एक समान पाठ ।

भावार्थ-१ प्रश्न-उस काल उस समय में राजगृह नगर था । वहां गौतम स्वामी ने भगवान् से इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! कोई पुरुष, पुरुष की घात करता हुआ, क्या पुरुष की ही घात करता है, अथवा नोपुरुष (पुरुष के सिवाय दूसरे जीवों) की घात करता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-हे गौतम ! वह पुरुष की भी घात करता है और नोपुरुष की भी ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! घात करने वाले उस पुरुष के मन में इस प्रकार का विचार होता है कि 'मैं एक पुरुष को मारता हूँ,' परन्तु वह एक पुरुष को मारता हुआ दूसरे अनेक जीवों को भी मारता है । इसलिये हे गौतम ! यह कहा गया है कि-'वह पुरुष को भी मारता है और नोपुरुष को भी मारता है ।'

२ प्रश्न-हे भगवन् ! अश्व को मारता हुआ कोई पुरुष, अश्व को मारता है, या नोअश्व को ?

२ उत्तर-हे गौतम ! वह अश्व को भी मारता है और नोअश्व (अश्व के सिवाय दूसरे जीवों) को भी मारता है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! इसका उत्तर पूर्ववत् जानना चाहिये । इसी प्रकार हाथी, सिंह, व्याघ्र यावत् चित्रल तक जानना चाहिए । इन सभी के लिये एक समान पाठ है ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! कोई पुरुष किसी एक त्रस जीव को मारता हुआ वह उस त्रस जीव को मारता है, या उसके सिवाय दूसरे त्रस जीवों को भी मारता है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! वह उस त्रस जीव को भी मारता है और उसके सिवाय दूसरे त्रस जीवों को भी मारता है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! उस त्रस जीव को मारने वाले पुरुष के मन में ऐसा विचार होता है कि-'मैं इस त्रस जीव को मारता हूँ,' परन्तु वह उस त्रस जीव को मारता हुआ उसके सिवाय दूसरे अनेक त्रस जीवों को भी मारता है, इसलिये हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । इन सभी का एक समान पाठ है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

ऋषि-घातक अनंत जवों का घातक

४ प्रश्न-पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिं हणइ, णोइसिं हणइ ?

४ उत्तर-गोयमा ! इसिं पि हणइ णोइसिं पि हणइ ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-जाव णोइसिं पि हणइ ?

उत्तर-गोयमा ! तस्स णं एवं भवइ-एवं खलु अहं एगं इसिं हणामि, से णं एगं इसिं हणमाणे अणंते जीवे हणइ, से तेणट्ठेणं णिक्खेवो ।

५ प्रश्न-पुरिसे णं भंते ! पुरिसं हणमाणे किं पुरिसवेरेणं पुट्ठे, णोपुरिसवेरेणं पुट्ठे ?

५ उत्तर-गोयमा ! णियमं ताव पुरिसवेरेणं पुट्ठे, अहवा पुरिसवेरेण य णोपुरिसवेरेण य पुट्ठे अहवा पुरिसवेरेण य णोपुरिसवेरेहि य पुट्ठे; एवं आसं, एवं जाव चित्तलगं, जाव अहवा चित्तलावेरेण य णोचित्तलावेरेहि य पुट्ठे ।

६ प्रश्न-पुरिसे णं भंते ! इसिं हणमाणे किं इसिवेरेणं पुट्ठे, णोइसिवेरेणं पुट्ठे ?

६ उत्तर-गोयमा ! णियमं ताव इसिवेरेण य णोइसिवेरेहि य पुट्ठे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-इसि-ऋषि, पुट्ठे-स्पर्श करता है (बन्धता है), णिक्खेवो-उपसंहार।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! कोई पुरुष, ऋषि को मारता हुआ ऋषि को ही मारता है, या नोऋषि (ऋषि के सिवाय दूसरे जीवों) को भी मारता है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वह ऋषि को भी मारता है और नोऋषि को भी।

प्रश्न-हे भगवन् इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! उस मारने वाले पुरुष के मन में ऐसा विचार होता है कि 'मैं एक ऋषि को मारता हूँ,' परन्तु वह एक ऋषि को मारता हुआ अनन्त जीवों को मारता है। इस कारण पूर्वोक्त रूप से कहा गया है।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! पुरुष को मारता हुआ कोई व्यक्ति, क्या पुरुष वैर से स्पृष्ट होता है, या नोपुरुषवैर से ?

५ उत्तर-हे गौतम ! वह नियम से (निश्चित रूप से) पुरुष वैर से स्पृष्ट होता है। (१) अथवा पुरुष वैर से और नोपुरुष वैर से स्पृष्ट होता है। (२) अथवा पुरुषवैर से और नोपुरुष-वैरों से स्पृष्ट होता है। इसी प्रकार अश्व के विषय में यावत् चित्रल के विषय में भी जानना चाहिये। यावत् अथवा चित्रल-वैर से और नोऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! ऋषि को मारता हुआ कोई पुरुष, क्या ऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है, या नोऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है ?

६ उत्तर-हे गौतम ! वह नियम से ऋषि-वैर से और नोऋषि-वैरों से स्पृष्ट होता है।

विवेचन-कोई पुरुष किसी पुरुष को मारता है, तो कभी केवल वह उसी का वध करता है, कभी उसके साथ दूसरे एक जीव का भी वध करता है और कभी उसके साथ अन्य अनेक जीवों का वध भी करता है। इस प्रकार तीन भंग बनते हैं।

ऋषि की घात करता हुआ पुरुष, अन्य अनन्त जीवों की घात करता है। यह एक ही भंग बनता है। क्योंकि ऋषि की घात करने में अनन्त जीवों की घात होती है। इसका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कारण यह है कि ऋषि अवस्था में वह सर्व विरत है। इसलिये अनन्त जीवों का रक्षक है। मर जाने के पश्चात् वह अविरत हो जाता है। अविरत होकर वह अनन्त जीवों का घातक बनता है। इसलिये ऋषि की घात करनेवाला पुरुष, अन्य अनन्त जीवों का भी घातक होता है। अथवा जीवित रहता हुआ ऋषि, बहुत से प्राणियों को प्रतिबोध देता है। प्रतिबोध प्राप्त वे प्राणी क्रमशः मोक्ष को प्राप्त होते हैं और मुक्त जीव अनन्त संसारी प्राणियों के अघातक होते हैं। इसलिये उन अनन्त जीवों की रक्षा में ऋषि कारण है। इसलिये ऋषि की घात करने वाला पुरुष, अन्य अनन्त जीवों की भी घात करता है।

पुरुष को मारने वाला व्यक्ति नियम से पुरुष-वध के पाप से स्पृष्ट होता है। यह पहला भंग है। उस पुरुष को मारते हुए यदि किसी दूसरे एक प्राणी की घात करता है, तो वह एक पुरुष-वैर से और एक नोपुरुष-वैर से स्पृष्ट होता है। यह दूसरा भंग है। यदि उस एक पुरुष को घात करते हुए अन्य अनेक प्राणियों की घात करता है, तो वह 'एक पुरुष-वैर से और बहुत नोपुरुष-वैरों से' स्पृष्ट होता है। यह तीसरा भंग है। हस्ती, अश्व आदि के वध में भी सर्वत्र ये तीन भंग पाये जाते हैं, किन्तु ऋषि-घात में केवल एक तीसरा भंग ही पाया जाता है।

शंका-जो ऋषि मरकर मोक्ष में चला जाता है, वह वहाँ अविरत नहीं बनता, इसलिये उस ऋषि की घात करने से वह घातक पुरुष, केवल ऋषि-वैर से ही स्पृष्ट होता है। इसलिये प्रथम भंग बन सकता है। तब तीसरा भंग ही क्यों कहा गया ? यदि कोई इसका यह समाधान दे कि चरम-शरीरी जीव तो निरुपक्रम आयुष्यवाला होता है, इसलिये उसकी घात नहीं हो सकती। अतः अचरम-शरीरी ऋषि की अपेक्षा केवल तीसरा भंग ही बनता है, प्रथम भंग नहीं, तो यह समाधान भी ठीक नहीं, क्योंकि यद्यपि चरम शरीरी जीव निरुपक्रम आयुष्य वाला होता है, तथापि उसके वध के लिये प्रवृत्ति करनेवाले पुरुष को उसकी हिंसा का पाप लगता ही है और वह ऋषि-वैर से स्पृष्ट होता है। इस प्रकार प्रथम भंग बन सकता है, तब केवल तीसरा भंग ही कहने का क्या कारण है ?

समाधान-यद्यपि शङ्काकार का कथन ठीक है, तथापि जिस सोपक्रम आयुष्यवाले ऋषि का पुरुष कृत वध होता है, उसकी अपेक्षा से यह सूत्र कहा गया है। इसलिये तीसरा भंग ही कहा गया है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एकेन्द्रिय जीव और श्वासोच्छवास

७ प्रश्न-पुढविक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं चेव आणमइ वा, पाणमइ वा, ऊससइ वा, णीससइ वा ?

७ उत्तर-हंता, गोयमा ! पुढविक्काइए पुढविक्काइयं चेव आणमइ वा जाव णीससइ वा ।

८ प्रश्न-पुढविक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणमइ, जाव णीससइ वा ?

८ उत्तर-हंता, गोयमा ! पुढविक्काइए आउक्काइयं आणमइ, जाव णीससइ वा; एवं तेउक्काइयं, वाउक्काइयं एवं वणस्सइ-काइयं ।

९ प्रश्न-आउक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं आणमइ वा, पाणमइ वा ?

९ उत्तर-एवं चेव ।

१० प्रश्न-आउक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं चेव आणमइ वा ?

१० उत्तर-एवं चेव; एवं तेउ-वाउ-वणस्सइकायं ।

११ प्रश्न-तेउक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं आणमइ वा ?

११ उत्तर-एवं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-जाव वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणमइ वा ?

उत्तर-तहेव ।

१२ प्रश्न-पुढविक्काइए णं भंते ! पुढविक्काइयं चेव आणममाणे वा, पाणममाणे वा, ऊससमाणे वा, णीससमाणे वा कइकिरिए ?

१२ उत्तर-गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए ।

१३ प्रश्न-पुढविक्काइए णं भंते ! आउक्काइयं आणममाणे वा ?

१३ उत्तर-एवं चेव; एवं जाव वणस्सइकाइयं, एवं आउक्काइएण वि सव्वे वि भाणियव्वा, एवं तेउक्काइएण वि, एवं वाउक्काइएण वि । जाव (प्रश्न) वणस्सइकाइए णं भंते ! वणस्सइकाइयं चेव आणममाणे वा-पुच्छा । (उत्तर) गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए ।

१४ प्रश्न-वाउक्काइए णं भंते ! रुक्खस्स मूलं पचालेमाणे वा पवाडेमाणे वा कइकिरिए ?

१४ उत्तर-गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए; एवं कंदं एवं जाव (प्रश्न) बीयं पचालेमाणे वा पुच्छा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(उत्तर) गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ णवमसए चोत्तीसइमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ णवमं सयं समत्तं ॥

कठिन शब्दार्थ-**आणमइवा पाणमइ वा**-श्वासोच्छ्वास के रूप में, **पचालेमाणे**-कम्पाता हुआ, **पवाडेमाणे**-गिराता हुआ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं ?

७ उत्तर-हाँ, गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हैं ?

८ उत्तर-हाँ, गौतम ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीवों को यावत् ग्रहण करते और छोड़ते हैं। इसी प्रकार अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों को भी यावत् ग्रहण करते और छोड़ते हैं।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! अप्कायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हैं ?

९ उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! अप्कायिक जीव, अप्कायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हैं ?

१० उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये। इसी प्रकार तेउकाय, वायुकाय और वनस्पतिकाय के विषय में भी जानना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ प्रश्न-हे भगवन् ! तेजस्कायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते हैं ?

११ उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये ।

प्रश्न-यावत् हे भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव वनस्पतिकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हैं ?

उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, पृथ्वीकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते हुए और छोड़ते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पांच क्रिया वाले होते हैं ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीव, अप्कायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते और छोड़ते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । इसी प्रकार तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक के साथ भी कहना चाहिये । इसी प्रकार अप्कायिक जीवों के साथ पृथ्वीकायिक आदि सभी का कथन करना चाहिये । इसी प्रकार तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों के साथ पृथ्वीकायिकादि का कथन करना चाहिए । यावत् (प्रश्न) हे भगवन् ! वनस्पतिकायिक जीव, वनस्पतिकायिक जीवों को आभ्यन्तर और बाहरी श्वासोच्छ्वास के रूप में ग्रहण करते हुए और छोड़ते हुए कितनी क्रियावाले होते हैं ? (उत्तर) हे गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रियावाले और कदाचित् पांच क्रिया वाले होते हैं ।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! वायुकायिक जीव, वृक्ष के मूल को कम्पाते हुए और गिराते हुए कितनी क्रिया वाले होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ उत्तर-हे गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पांच क्रिया वाले होते हैं। इसी प्रकार यावत् कन्द तक जानना चाहिये। इसी प्रकार यावत् (प्रश्न) बीज को कम्पाने आदि के सम्बन्ध में प्रश्न ! (उत्तर) हे गौतम ! कदाचित् तीन क्रिया वाले, कदाचित् चार क्रिया वाले और कदाचित् पांच क्रिया वाले होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-पृथ्वीकायिक जीव पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक जीवों को श्वासोच्छ्वास रूप में ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं। इसी प्रकार अप्कायिक आदि चारों स्थावर जीव भी पृथ्वीकायिक आदि पाँचों स्थावर जीवों को श्वासोच्छ्वास रूप में ग्रहण करते हैं और छोड़ते हैं। इन पाँचों के ये पच्चीस सूत्र होते हैं और इनके क्रिया सम्बन्धी भी पच्चीस सूत्र होते हैं।

पृथ्वीकायिकादि जीव, पृथ्वीकायिकादि जीवों को श्वासोच्छ्वास रूप से ग्रहण करते हुए और छोड़ते हुए जब तक उनको पीड़ा उत्पन्न नहीं करते, तब तक कायिकादि तीन क्रियाएँ लगती है। जब पीड़ा उत्पन्न करते हैं तब पारितापनिकी सहित चार क्रियाएँ लगती हैं और जब उन जीवों की घात करते हैं, तब प्राणातिपातिकी सहित पाँच क्रियाएँ लगती हैं।

वायुकायिक जीव, वृक्ष के मूल को तब कम्पित और पतन कर सकते हैं जब कि वृक्ष नदी के किनारे पर हो और उसका मूल पृथ्वी से ढका हुआ न हो।

॥ नौवें शतक का चोतीसवाँ उद्देशक समाप्त ॥

॥ नौवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १०

१ गाहा—

१ दिसि २ संवुडअणगारे ३ आयड्ढी ४ सामहत्थि ५ देवि ६ सभा।
७–३४ उत्तरअंतरदीवा दसमम्मि सयम्मि चउत्तीसा ॥

कठिन शब्दार्थ—संवुडअणगारे—संवृत अनगार ।

भावार्थ—१—इस शतक के चौंतीस उद्देशक इस प्रकार हैं;—(१) दिशा के सम्बन्ध में पहला उद्देशक हैं, (२) संवृत अनगारादि के विषय में दूसरा उद्देशक है, (३) देवावासों को उल्लंघन करने में देवों की आत्मऋद्धि (स्व-शक्ति) के विषय में तीसरा उद्देशक है, (४) श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के श्याम हस्ती नामक शिष्य के प्रश्नों के सम्बन्ध में चौथा उद्देशक है (५) चमर आदि इन्द्रों की अग्रमहिषियों के सम्बन्ध में पांचवां उद्देशक है (६) सुधर्मा सभा के विषय में छठा उद्देशक है (७–३४) उत्तर दिशा के अट्ठाईस अन्तरद्वीपों के विषय में सातवें से लेकर चौतीसवें तक अट्ठाईस उद्देशक हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उद्देशक १

दिशाओं का स्वरूप

२ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–किमियं भंते ! 'पाईणा' ति पवुच्चइ ?

२ उत्तर–गोयमा ! जीवा चेव अजीवा चेव ।

३ प्रश्न–किमियं भंते ! 'पडीणा' ति पवुच्चइ ?

३ उत्तर–गोयमा ! एवं चेव; एवं दाहिणा एवं उदीणा एवं उड्ढा एवं अहो वि ।

४ प्रश्न–कइ णं भंते ! दिसाओ पण्णत्ताओ ?

४ उत्तर–गोयमा ! दस दिसाओ पण्णत्ताओ, तं जहा– १ पुरत्थिमा, २ पुरत्थिमदाहिणा, ३ दाहिणा, ४ दाहिणपच्चत्थिमा ५ पच्चत्थिमा, ६ पच्चत्थिमुत्तरा, ७ उत्तरा, ८ उत्तरपुरत्थिमा, ९ उड्ढा, १० अहो ।

५ प्रश्न–एयासि णं भंते ! दसण्हं दिसाणं कइ णामधेज्जा पण्णत्ता ?

५ उत्तर–गोयमा ! दस णामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा–

१ इंदा २ अग्गेयी ३ जमा य ४ णेरई ५ वारुणी य ६ वायव्वा ।
७ सोमा ८ ईसाणी य ९ विमला य १० तमा य बोद्धव्वा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-किमियं-किम्-क्या इयं-यह, **पाईणा**-पूर्व दिशा, **पवुच्चई**-कहलाती है, **पडिणा**-पश्चिम दिशा, **दाहिणा**-दक्षिण दिशा, **उदीणा**-उत्तर दिशा, **पुरत्थिमा**-पूर्व दिशा, **पच्चत्थिमा**-पश्चिम दिशा, **एयासि**-इन, **जमा**-याम्या (दक्षिण) दिशा, **सोमा**-उत्तर, **विमला**-ऊर्ध्व दिशा, **तमा**-अधो दिशा।

भावार्थ-२ प्रश्न-राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा-हे भगवन् ! यह पूर्व दिशा क्या कहलाती है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! यह जीव रूप भी कहलाती है और अजीव रूप भी कहलाती है।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! यह पश्चिम दिशा क्या कहलाती है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! पूर्व दिशा के समान जानना चाहिये। इसी प्रकार दक्षिण दिशा, उत्तर दिशा, ऊर्ध्व दिशा और अधो दिशा के विषय में भी जानना चाहिये।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! दिशाएँ कितनी कही गई हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! दिशाएँ दस कही गई हैं। यथा-१ पूर्व, २ पूर्व-दक्षिण (आग्नेय कोण), ३ दक्षिण, ४ दक्षिणपश्चिम (नैऋत्य कोण) ५ पश्चिम, ६ पश्चिमोत्तर (वायव्य कोण) ७ उत्तर, ८ उत्तरपूर्व (ईशान कोण) ९ ऊर्ध्व दिशा और १० अधो दिशा।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! इन दस दिशाओं के कितने नाम कहे गये हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! दस नाम कहे गये हैं। यथा-१ ऐन्द्री (पूर्व), २ आग्नेयी (अग्नि कोण) ३ याम्या (दक्षिण), ४ नैर्ऋती (नैर्ऋत्य कोण) ५ वारुणी (पश्चिम), ६ वायव्य (वायव्य कोण) ७ सौम्या (उत्तर) ८ ऐशानी (ईशान कोण), ९ विमला (ऊर्ध्वदिशा) १० तमा (अधो दिशा)।

६ प्रश्न-इंदा णं भंते ! दिसा किं-१ जीवा, २ जीवदेसा, ३ जीवपएसा, ४ अजीवा, ५ अजीवदेसा, ६ अजीवपएसा ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ उत्तर-गोयमा ! जीवा वि, तं चेव जाव अजीवपएसा वि। जे जीवा ते णियमा एगिंदिया. बेइंदिया, जाव पंचिंदिया, अणिंदिया। जे जीवदेसा ते णियमा एगिंदियदेसा, जाव अणिंदियदेसा। जे जीवपएसा ते एगिंदियपएसा बेइंदियपएसा, जाव अणिंदियपएसा। जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता. तं जहा-रूवि अजीवा य अरूविअजीवा य। जे रूविअजीवा ते चउव्विहा पण्णत्ता; तं जहा-खंधा, खंधदेसा, खंधपएसा, परमाणुपोग्गला। जे अरूविअजीवा ते सत्तविहा पण्णत्ता. तं जहा-१ णोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे, २ धम्मत्थिकायस्स पएसा, ३ णोअधम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकायस्स देसे, ४ अधम्मत्थिकायस्स पएसा, ५ णोआगासत्थिकाए आगासत्थिकायस्स देसे, ६ आगासत्थिकायस्स पएसा, ७ अद्धासमए।

७ प्रश्न-अग्गेयी णं भंते ! दिसा किं जीवा, जीवदेसा, जीवपएसा-पुच्छा।

७ उत्तर-गोयमा ! १ णोजीवा जीवदेसा वि, २ जीवपएसा वि; १ अजीवा वि, २ अजीवदेसा वि, ३ अजीवपएसा वि। जे जीवदेसा ते णियमा एगिंदियदेसा। १ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे, २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसा य, ३ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा। १ अहवा एगिं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दियदेसा य तेइंदियस्स देसे य। एवं चेव तियभंगो भाणियव्वो। एवं जाव अणिंदियाणं तियभंगो। जे जीवपएसा ते णियमा एगिंदियपएसा। अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा, अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियाण य पएसा। एवं आइल्लविरहिओ जाव अणिंदियाणं। जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तं जहा-रूविअजीवा य अरूविअजीवा य। जे रूविअजीवा ते चउव्विहा पण्णत्ता, तं जहा-खंधा, जाव परमाणुपोग्गला। जे अरूविअजीवा ते सतविहा पण्णत्ता, तं जहा-१ णोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे, २ धम्मत्थिकायस्स पएसा, एवं अहम्मत्थिकायस्स वि, जाव ६ आगासत्थिकायस्स पएसा, ७ अद्धासमए। विदिसासु णत्थि जीवा; देसे भंगो य होइ सव्वत्थ।

८ प्रश्न-जमा णं भंते ! दिसा किं जीवा ?

८ उत्तर-जहा इंदा तहेव णिरवसेसा। णेरई य जहा अग्गेयी। वारुणी जहा इंदा। वायव्वा जहा अग्गेयी। सोमा जहा इंदा। ईसाणी जहा अग्गेयी। विमलाए जीवा जहा अग्गेयीए। अजीवा जहा इंदा। एवं तमाए वि, णवरं अरूवि छव्विहा, अद्धासमयो ण भण्णइ।

कठिन शब्दार्थ-इंदा-पूर्व दिशा, अद्धासमए-अद्धासमय (काल)।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! ऐन्द्री (पूर्व) दिशा-१ जीव रूप है, २ जीव के देश रूप है, ३ जीव के प्रदेश रूप है, अथवा ४ अजीव रूप है, ५ अजीव के देश रूप है, ६ या अजीव के प्रदेश रूप है ?

६ उत्तर-हे गौतम ! ऐन्द्री दिशा जीव रूप भी है, इत्यादि पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये, यावत् वह अजीव प्रदेश रूप भी है। उसमें जो जीव हैं वे एकेंन्द्रिय, बेइन्द्रिय यावत् पंचेंद्रिय तथा अनिन्द्रिय (केवलज्ञानी) हैं। जो जीव के देश हैं, वे एकेंद्रिय जीव के देश हैं यावत् अनिन्द्रिय जीव के देश हैं। जो जीव प्रदेश हैं, वे नियमतः एकेंद्रिय जीव के प्रदेश हैं, बेइन्द्रिय जीव के प्रदेश हैं यावत् अनिन्द्रिय जीव के प्रदेश हैं। जो अजीव हैं, वे दो प्रकार के हैं। यथा-रूपी अजीव और अरूपी अजीव। रूपी अजीवों के चार भेद हैं। यथा-स्कन्ध, स्कन्ध देश, स्कन्ध प्रदेश और परमाणु पुद्गल। अरूपी अजीवों के सात भेद हैं। यथा-१ स्कन्ध रूप धर्मास्तिकाय नहीं, किन्तु धर्मास्तिकाय का देश है। २ धर्मास्तिकाय के प्रदेश हैं। ३ अधर्मास्तिकाय नहीं, किन्तु अधर्मास्तिकाय का देश है। ४ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश हैं। ५ आकाशास्तिकाय नहीं, किन्तु आकाशास्तिकाय का एक देश है। ६ आकाशास्तिकाय के प्रदेश हैं। ७ अद्धासमय अर्थात् काल है।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! आग्नेयी दिशा क्या जीव रूप है, जीव देश रूप है, जीव प्रदेश रूप है, इत्यादि प्रश्न।

७ उत्तर-हे गौतम ! १ जीव नहीं, किन्तु जीव के देश, २ जीव के प्रदेश ३ अजीव, ४ अजीव के देश और ५ अजीव प्रदेश भी हैं। जीव के जो देश हैं, वे नियम से एकेन्द्रियों के देश हैं अथवा एकेन्द्रियों के बहुत देश और बेइन्द्रिय का एक देश है। अथवा एकेंद्रियों के बहुत देश और बेइन्द्रिय के बहुत देश हैं। अथवा एकेंद्रियों के बहुत देश और बहुत बेइन्द्रियों के बहुत देश। अथवा एकेंद्रियों के बहुत देश और एक तेइन्द्रिय का एक देश। इस प्रकार तीन भंग तेइंद्रिय के साथ कहना चाहिये। इसी प्रकार यावत् अनिन्द्रिय तक के तीन-तीन भंग

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहना चाहिये। जीव के जो प्रदेश हैं वे नियम से एकेन्द्रियों के प्रदेश हैं अथवा एकेंद्रियों के बहुत प्रदेश और एक बेइन्द्रिय के बहुत प्रदेश। अथवा एकेंद्रियों के बहुत प्रदेश और बहुत बेइन्द्रियों के बहुत प्रदेश। इस प्रकार सभी जगह प्रथम भंग के सिवाय दो दो भंग जानना चाहिये। इस प्रकार यावत् अनिन्द्रिय तक जानना चाहिये। अजीवों के दो भेद हैं। यथा-रूपी अजीव और अरूपी अजीव। रूपी अजीव के चार भेद हैं। स्कन्ध, स्कन्ध देश, स्कन्ध प्रदेश और परमाणु पुद्गल हैं। अरूपी अजीव के सात भेद हैं। यथा-१ धर्मास्तिकाय नहीं, किन्तु धर्मास्तिकाय का देश २ धर्मास्तिकाय के प्रदेश ३ अधर्मास्तिकाय नहीं, किन्तु अधर्मास्तिकाय का देश ४ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ५ आकाशास्तिकाय नहीं, किन्तु आकाशास्तिकाय का देश, ६ आकाशास्तिकाय के प्रदेश, और ७ अद्धा समय। विदिशाओं में जीव नहीं हैं, इसलिये सर्वत्र देश और प्रदेश विषयक भंग होते हैं।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! याम्या (दक्षिण) दिशा क्या जीव रूप है, इत्यादि प्रश्न।

८ उत्तर-हे गौतम ! ऐन्द्री दिशा के समान सभी कथन जानना चाहिये। आग्नेयी विदिशा का कथन नैर्ऋती विदिशा के समान है। वारुणी (पश्चिम) दिशा का कथन ऐन्द्री दिशा के समान है। वायव्यविदिशा का कथन आग्नेयी विदिशा के समान है। सौम्या (उत्तर) दिशा का कथन ऐन्द्री दिशा के समान है और ऐशानी विदिशा का कथन आग्नेयी विदिशा के समान है। विमला (ऊर्ध्व) दिशा में जीवों का कथन आग्नेयी दिशा के समान है और अजीवों का कथन ऐन्द्री दिशा में कथित अजीवों की तरह है। इसी प्रकार तमा (अधो) दिशा का कथन भी जानना चाहिये। परन्तु इतनी विशेषता है कि तमा दिशा में अरूपी अजीवों के छह भेद हैं। क्योंकि उसमें अद्धासमय (काल) नहीं है।

विवेचन-पूर्व दिशा जीव रूप है। क्योंकि उसमें एकेन्द्रिय आदि जीव रहे हुए हैं। उसमें पुद्गलास्तिकाय आदि अजीव पदार्थ रहे हुए हैं, इसलिये वह अजीव रूप भी है।

दिशाओं के दस नाम कहे गये हैं। पूर्व दिशा का स्वामी इन्द्र है। इसलिये उसे 'ऐन्द्री' कहते हैं। इसी प्रकार अग्नि, यम, नैर्ऋती, वरुण, वायु, सोम और ईशान देव स्वामी होने से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इन दिशाओं को क्रमशः आग्नेयी, नैऋती, वारुणी, वायव्या, सौम्या और ऐशानी कहते हैं। प्रकाश युक्त होने से ऊर्ध्व दिशा को 'विमला' कहते हैं और अन्धकार युक्त होने से अधोदिशा को 'तमा' कहते हैं।

पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण, ये चारों दिशाएँ गाड़ी के उद्धि (ओढण) के आकार हैं। अर्थात् मेरु पर्वत के मध्य भाग में आठ रुचक प्रदेश हैं। चार ऊपर की ओर और चार नीचे की ओर गोस्तनाकार हैं। यहाँ से दस दिशाएँ निकली हैं। पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ये चार दिशाएँ मूल में दो दो प्रदेशी निकली हैं और आगे दो-दो प्रदेश की वृद्धि होती हुई लोकान्त तक एवं अलोक में चलीगई हैं। लोक में असंख्यात प्रदेश वृद्धि हुई है और अलोक में अनन्त प्रदेश वृद्धि हुई है। अतः इनका आकार गाड़ी के ओढ़ण के समान है। आग्नेयी, नैर्ऋती, वायव्य और ईशान, ये चार विदिशाएँ एक-एक प्रदेशी निकली हैं और लोकान्त तक एक प्रदेशी ही चली गई हैं। इनका आकार मुक्तावली (मोतियों की लड़ी) के समान है। ऊर्ध्व दिशा और अधो दिशा चार-चार प्रदेशी निकली हैं और लोकांत तक एवं अलोक में चली गई हैं। ये रुचकाकार हैं। पूर्व दिशा समस्त धर्मास्तिकाय रूप नहीं है, किन्तु धर्मास्तिकाय का एक देश है और असंख्यात प्रदेश रूप है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और आकाशास्तिकाय का एक देश और असंख्यात प्रदेश रूप है और अद्धा समय रूप है। इस प्रकार अरूपी अजीव रूप सात प्रकार की पूर्व दिशा है।

आग्नेयी विदिशा जीव रूप नहीं है। क्योंकि सभी विदिशाओं की चौड़ाई एक-एक प्रदेश रूप है, क्योंकि वे एक प्रदेशी ही निकली हैं और अन्त तक एक प्रदेशी ही रही हैं। एक प्रदेश में जीव का समावेश नहीं हो सकता। क्योंकि जीव की अवगाहना असंख्य प्रदेशात्मक है। पूर्व दिशा के समान शेष तीनों दिशाओं का कथन जानना चाहिये और आग्नेयी विदिशा के समान शेष तीनों विदिशाओं का कथन जानना चाहिये।

समय का व्यवहार गतिमान् सूर्य के प्रकाश पर अवलम्बित है। वह गतिमान् सूर्य का प्रकाश तमा (अधो) दिशा में नहीं है। इसलिये वहाँ अद्धा समय (काल) नहीं है। यद्यपि विमला (ऊर्ध्व) दिशा के विषय में भी गतिमान् सूर्य का प्रकाश न होने से अद्धा समय का व्यवहार संभव नहीं है, तथापि मेरु पर्वत के स्फटिक काण्ड में गतिमान् सूर्य के प्रकाश का संक्रम होता है, इसलिये वहां समय का व्यवहार हो सकता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शरीर

९ प्रश्न-कइ णं भंते ! सरीरा पण्णत्ता ?

९ उत्तर-गोयमा ! पंच सरीरा पण्णत्ता, तं जहा-१ ओरालिए जाव ५ कम्मए ।

१० प्रश्न-ओरालियसरीरे णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

१० उत्तर-एवं ओगाहणासंठाणं णिरवसेसं भाणियव्वं, जाव 'अप्पाबहुगं' ति ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दसमसए पढमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-ओरालिए-औदारिक शरीर ।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! शरीर कितने प्रकार के कहे गये है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! शरीर पांच प्रकार के कहे गये हैं । यथा-औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस् और कार्मण ।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! औदारिक शरीर कितने प्रकार का कहा गया है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! यहां प्रज्ञापना सूत्र के अवगाहना संस्थान नामक इक्कीसवें पद में वर्णित अल्प-बहुत्व तक सारा वर्णन कहना चाहिये ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-औदारिक आदि पांच शरीर हैं । इनका संस्थान, प्रमाण, पुद्गल चय, पारस्परिक संयोग अल्प-बहुत्व इन द्वारों से विस्तृत वर्णन प्रज्ञापना सूत्र के इक्कीसवें अवगाहना संस्थान पद में है । अल्प-बहुत्व तक का सारा वर्णन यहाँ कहना चाहिये ।

॥ दसवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १० उद्देशक २

कषाय भाव में साम्परायिकी क्रिया

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स वीयीपंथे ठिच्चा पुरओ रूवाइं णिज्झायमाणस्स, मग्गओ रूवाइं अवयक्खमाणस्स, पासओ रूवाइं अवलोएमाणस्स, उड्ढं रूवाइं आलोएमाणस्स, अहे रूवाणि आलोएमाणस्स तस्स णं भंते ! किं *इरियावहिया किरिया कज्जइ संपराइयाकिरियाकज्जइ ?*

१ उत्तर–गोयमा ! संवुडस्स णं अणगारस्स वीयीपंथे ठिच्चा जाव तस्स णं णो इरियावहिया किरिया कज्जइ, संपराइया किरिया कज्जइ ।

प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ जाव संपराइया किरिया कज्जइ ?

उत्तर–गोयमा ! जस्स णं कोह-माण-माया-लोभा० एवं जहा सत्तमसए पढमोद्देसए जाव से णं उस्सुत्तमेव रियइ से तेणट्ठेणं जाव से संपराइया किरिया कज्जइ ।

२ प्रश्न–संवुडस्स णं भंते ! अणगारस्स अवीयीपंथे ठिच्चा पुरओ रूवाइं णिज्झायमाणस्स जाव तस्स णं भंते ! किं इरियावहिया किरिया कज्जइ ? पुच्छा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-गोयमा ! संवुड० जाव तस्स णं इरियावहिया किरिया कज्जइ, णो संपराइया किरिया कज्जइ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ ?

उत्तर-जहा सत्तमे सए पढमोद्देसए, जाव से णं अहासुत्तमेव रीयइ से तेणट्ठेणं जाव णो संपराइया किरिया कज्जइ।

कठिन शब्दार्थ-**वीयीपंथे**-वीचिमार्ग में-कषाय भाव में, **ठिच्चा**-स्थित रहकर, **पुरओ**-आगे, **णिज्झायमाणस्स**-देखते हुए का, **मग्गओ**-पीछे, **अववखयमाणस्स**-देखते हुए, **पासओ**-पार्श्वतः-पसवाड़ा, **अवलोएमाणस्स**-अवलोकन करते हुए का, **संपराइया**-सांपरायिक (कषाय सम्बन्धी), **संवुडस्स**-सवृत (संवर वाले) का, **उस्सुत्तं**-उत्सूत्र-सूत्र विरुद्ध, **एव**-ही, **अहासुत्तं**-यथासूत्र-सूत्र के अनुसार।

भावार्थ-१ प्रश्न-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-हे भगवन् ! वीचिमार्ग (कषाय भाव) में, स्थित होकर सामने के रूपों को देखते हुए, पीछे रहे हुए रूपों को देखते हुए, पार्श्ववर्ती (दोनों ओर के) रूपों को देखते हुए, ऊपर के रूपों को देखते हुए और नीचे के रूपों को देखते हुए सवृत अनगार को क्या ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, या साम्परायिकी क्रिया लगती है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! वीचिमार्ग में स्थित यावत् रूपों को देखते हुए संवृत अनगार को ऐर्यापथिकी क्रिया नहीं लगती, साम्परायिकी क्रिया लगती है।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिसके क्रोध, मान, माया, और लोभ व्युच्छिन्न (अनुदित-उदयावस्था में नहीं रहे हुए) हो गये हों, उसी को ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है। यहां सातवें शतक के प्रथम उद्देशक में वर्णित 'वह संवृत-अनगार सूत्र विरुद्ध आचरण करता है'-तक सब वर्णन जानना चाहिये।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! अवीचिमार्ग में (अकषाय भाव में) स्थित संवृत अनगार को उपर्युक्त रूपों का अवलोकन करते हुए क्या ऐर्यापथिकी क्रिया लगती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, या साम्परायिकी क्रिया लगती है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! अकषाय भाव में स्थित संवृत अनगार को उपर्युक्त रूपों का अवलोकन करते हुए ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, किन्तु साम्परायिकी क्रिया नहीं लगती ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिसके क्रोध, मान, माया और लोभ व्युच्छिन्न (अनुदित-उदयावस्था में नहीं रहे हुए) हो गये हों, उसको ऐर्यापथिकी क्रिया लगती है, साम्परायिकी नहीं लगती । यहाँ सातवें शतक के प्रथम उद्देशक में वर्णित 'वह संवृत अनगार सूत्र के अनुसार आचरण करता है'-तक सब वर्णन कहना चाहिये ।

विवेचन-यहाँ संवृत अनगार को क्रिया लगने के विषय में बतलाया गया है । जिस जीव के क्रोध, मान, माया और लोभ व्यवच्छिन्न हो जाते हैं, (उदय में नहीं रहते) उसके एक ऐर्यापथिकी क्रिया होती है । एवं सूत्रानुसार प्रवृत्ति करने वाले जीव के एक ऐर्यापथिकी क्रिया होती है । जिस जीव के क्रोध, मान, माया और लोभ व्यवच्छिन्न नहीं हुए हैं (उदय में हैं) यावत् जो सूत्र विपरीत प्रवृत्ति करता है, उसे साम्परायिकी क्रिया लगती है ।

योनि और वेदना

३ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! जोणी पण्णत्ता ?

३ उत्तर-गोयमा ! तिविहा जोणी पण्णत्ता, तं जहा-सीया, उसिणा, सीओसिणा; एवं जोणीपयं णिरवसेसं भाणियव्वं ।

४ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! वेयणा पण्णत्ता ?

४ उत्तर-गोयमा ! तिविहा वेयणा पण्णत्ता, तं जहा-सीया, उसिणा, सीओसिणा । एवं वेयणापयं णिरवसेसं भाणियव्वं, जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णेरइया णं भंते ! किं दुक्खं वेयणं वेदेंति, सुहं वेयणं वेदेंति, अदुक्खमसुहं वेयणं वेदेंति ? गोयमा ! दुक्खं पि वेयणं वेदेंति, सुहं पि वेयणं वेदेंति, अदुक्खमसुहं पि वेयणं वेदेंति ।

कठिन शब्दार्थ-ओणी-योनि-जीवों का उत्पत्ति स्थान, अदुक्खं-दुःख नहीं, असुहं-सुख नहीं ।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! योनि कितने प्रकार की कही गई है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! योनि तीन प्रकार की कही गई है । यथा-शीत, उष्ण और शीतोष्ण । यहाँ प्रज्ञापना सूत्र का नौवां 'योनि पद' सम्पूर्ण कहना चाहिये ।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! वेदना कितने प्रकार की कही गई है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वेदना तीन प्रकार की कही गई है । यथा-शीत, उष्ण और शीतोष्ण । इस प्रकार यहां प्रज्ञापना सूत्र का सम्पूर्ण पैंतीसवां वेदना पद कहना चाहिये, यावत् हे भगवन् ! क्या नैरयिक जीव दुःख रूप वेदना वेदते हैं, या सुख-रूप वेदना वेदते हैं, या अदुःख-असुख रूप वेदना वेदते हैं ? हे गौतम ! नैरयिक जीव, दुःखरूप वेदना भी वेदते हैं, सुखरूप वेदना भी वेदते हैं और अदुःख-असुख रूप वेदना भी वेदते हैं ।

विवेचन-योनि शब्द 'यु मिश्रणे' धातु से बना है । इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार है-"युवन्ति अस्यामिति 'योनिः' अर्थात् जिसमें तैजस कार्मण शरीरवाले जीव, औदारिकादि शरीर योग्य पुद्गल स्कन्ध के समुदाय के साथ मिश्रित होते हैं, उसे 'योनि' कहते हैं । अर्थात् जीवों के उत्पत्ति स्थान को योनि कहते हैं । वह योनि प्रत्येक जीवनिकाय के वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श के भेद से अनेक प्रकार की है। यथा-पृथ्वीकाय, अप्काय, तेउकाय और वायुकाय प्रत्येक की सात-सात लाख, प्रत्येक वनस्पति की दस लाख, साधारण वनस्पति (अनन्त) काय की चौदह लाख, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय प्रत्येक की दो-दो लाख, देव,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नारक और तिर्यंचपञ्चेन्द्रिय की चार-चार लाख और मनुष्य की चौदह लाख योनि है। सब मिलाकर चौरासी लाख योनि होती है। यद्यपि व्यक्ति भेद की अपेक्षा से अनन्त जीव होने से अनन्त योनियाँ होती है, तथापि समान वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्शवाली बहुतसी योनियाँ होने पर भी सामान्यतया जाति रूप से एक योनि गिनी जाती है। इसलिये चौरासी लाख ही योनियाँ होती हैं। जैसा कि कहा है—

> "समवण्णाई समेया बहवोवि हु जोणिभेय लक्खा उ।
> सामण्णा घेप्पंति हु एक्कजोणीए गहणेणं ॥"

अर्थात् समान वर्णादि सहित योनि के अनेक लाख भेद होते है, तथापि सामान्य रूप से एक योनि के ग्रहण द्वारा उन समान वर्णादि वाली सब योनियों का ग्रहण हो जाता है।

यहाँ योनि के सामान्यतया तीन भेद कहे गये हैं। यथा-शीतयोनि, उष्णयोनि और शीतोष्णयोनि। शीत स्पर्श के परिणाम वाली शीतयोनि और उष्ण स्पर्श के परिणाम वाली उष्णयोनि तथा शीत और उष्ण उभय स्पर्श के परिणाम वाली शीतोष्णयोनि कहलाती है।

देव और गर्भज जीवों के शीतोष्ण योनि, तेउकाय के उष्ण योनि और नैरयिक जीवों के शीत और उष्ण दोनों प्रकार की योनि तथा शेष जीवों के तीनों प्रकार की योनि होती है।

दूसरी तरह से योनि के तीन भेद कहे गये है। यथा-सचित्त, अचित्त और मिश्र। जीव प्रदेशों से सम्बन्ध वाली योनि सचित्त और सर्वथा जीव रहित योनि अचित्त कहलाती है। अंशतः जीव प्रदेश सहित और अंशतः जीव प्रदेश रहित योनि सचित्ताचित्त (मिश्र) कहलाती है।

देव और नारक जीवों की अचित्तयोनि होती है। गर्भज जीवों की सचित्ताचित्त योनि होती है और शेष जीवों की तीनों प्रकार की योनि होती है।

दूसरे प्रकार से योनि के तीन भेद कहे गये हैं। यथा-संवृत, विवृत और संवृतविवृत। जो उत्पत्ति स्थान ढका हुआ (गुप्त) हो, उसे 'संवृत योनि' और जो उत्पत्ति स्थान खुला हुआ हो, उसे 'विवृत योनि' तथा जो कुछ ढका और कुछ खुला हुआ हो, उसे 'संवृत-विवृत' योनि कहते हैं।

नैरयिक, देव और एकेंद्रिय जीवों के संवृत योनि, गर्भज जीवों के संवृत-विवृत योनि और शेष जीवों के विवृत योनि होती है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अन्य प्रकार से योनि के तीन भेद कहे गये हैं। यथा-कूर्मोन्नता, शंखावर्त्ता और वंशीपत्रा। जो योनि कछुए की पीठ के समान उन्नत हो, उसे 'कूर्मोन्नता' योनि कहते हैं। जो योनि शंख के समान आवर्त्तवाली हो, उसे 'शंखावर्त्ता' योनि कहते हैं। बांस के दो पत्तों के समान सम्पुट मिले हुए हों, उसे 'वंशीपत्रा' योनि कहते हैं।

चक्रवर्त्ती की श्रीदेवी के शंखावर्त्ता योनि होती हैं। उसमें बहुत से जीव और जीव के साथ सम्बन्ध वाले पुद्गल आते हैं और गर्भ रूप से उत्पन्न होते हैं। सामान्यत: चय (वृद्धि) और विशेषत: उपचय को प्राप्त होते हैं, किन्तु अति प्रबल कामाग्नि के परिताप से नष्ट हो जाने के कारण गर्भ की निष्पत्ति नहीं होती-इस प्रकार प्राचीन आचार्यों का कथन है। तीर्थंकर, चक्रवर्ती, बलदेव और वासुदेव-इन उत्तम पुरुषों की माता के कूर्मोन्नता योनि होती है। शेष सभी संसारी जीवों की माता के वंशीपत्रा योनि होती है।

योनि सम्बन्धी विस्तृत विवेचन और अल्पबहुत्व आदि प्रज्ञापना सूत्र के नौवें 'योनि पद' में है।

जो वेदी जाय उसे 'वेदना' कहते हैं। उसके तीन भेद हैं। यथा-शीत वेदना, उष्ण वेदना और शीतोष्ण वेदना। नरक में शीत और उष्ण दो प्रकार की वेदना पाई जाती है। शेष २३ दण्डकों में तीनों वेदनाएँ पाई जाती हैं। दूसरी प्रकार से वेदना चार प्रकार की कही गई है। यथा-द्रव्य से वेदना, क्षेत्र से वेदना, काल से वेदना और भाव से वेदना। चौबीस दण्डक में चारों प्रकार की वेदना पाई जाती हैं।

वेदना के तीन भेद हैं। यथा-शारीरिक वेदना, मानसिक वेदना और शारीरिक-मानसिक वेदना। पांच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय, इन आठ दण्डकों में एक शारीरिक वेदना पाई जाती है। शेष सोलह-दण्डकों में तीनों प्रकार की वेदना पाई जाती है।

पुन:-वेदना के तीन भेद हैं। यथा-सातावेदना, असातावेदना और साताअसाता-वेदना। चौबीस दण्डक में यह तीनों प्रकार की वेदना पाई जाती है।

पुन:—वेदना के तीन भेद हैं। यथा—दु:खा वेदना, सुखा वेदना और अदु:खसुखा वेदना। तीनों प्रकार की वेदना चौबीस ही दण्डक में पाई जाती है।

वेदना के दो भेद हैं। यथा-आभ्युपगमिकी और औपक्रमिकी। स्वयं कष्ट को अंगीकार करना जैसे-केश-लोच आदि 'आभ्युपगमिकी' वेदना है। स्वभाव से उदय में आने वाली वेदना,-ज्वरादि 'औपक्रमिकी' वेदना है। तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय और मनुष्य में यह दोनों प्रकार की वेदना होती है। शेष बाईस दण्डक में एक औपक्रमिकी वेदना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होती है ।

वेदना के दो भेद है । यथा-निदा और अनिदा । मन के विवेक सहित जो वेदना वेदी जाय वह 'निदा' वेदना है और जो मन के विवेकपूर्वक न वेदी जाय वह 'अनिदा' वेदना है ।

नैरयिक, भवनपति, वाणव्यन्तर, तिर्यञ्चपञ्चेन्द्रिय और मनुष्य--इन चौदह दण्डक के जीव दोनों प्रकार की वेदना वेदते हैं । अर्थात् संज्ञीभूत निदा वेदना वेदते हैं और असंज्ञी-भूत अनिदा वेदना वेदते हैं । पांच स्थावर और तीन विकलेन्द्रिय असंज्ञीभूत एक अनिदा वेदना वेदते हैं । ज्योतिषी और वैमानिक देवों के दो भेद हैं । यथा-मायी-मिथ्यादृष्टि और अमायीसमदृष्टि । मायी-मिथ्यादृष्टि अनिदा वेदना वेदते हैं और अमायी-समदृष्टि निदा वेदना वेदते हैं ।

वेदना सम्बन्धी विस्तृत वर्णन प्रज्ञापना सूत्र के पैंतीसवें पद में है ।

भिक्षु प्रतिमा और आराधना

५-मासियं णं भंते ! भिक्खुपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स णिच्चं वोसट्ठे काए चियत्ते देहे-एवं मासिया भिक्खुपडिमा णिरव-सेसा भाणियव्वा, जहा दसाहिं जाव 'आराहिया भवइ' ।

६-भिक्खू य अण्णयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता से णं तस्स ठाणस्स अणालोइया अपडिक्कंते कालं करेइ, णत्थि तस्स आरा-हणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइय-पडिक्कंते कालं करेइ, अत्थि तस्स आराहणा । भिक्खू य अण्णयरं अकिच्चट्ठाणं पडिसेवित्ता तस्स णं एवं भवइ-'पच्छा वि णं अहं चरिमकालसमयंसि एयस्स ठाणस्स आलोएस्सामि जाव पडिक्कमिस्सामि, से णं तस्स ठाणस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणालोइय अपडिक्कंते जाव णत्थि तस्स आराहणा, से णं तस्स ठाणस्स आलोइय-पडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा। भिक्खू य अण्णयरं अकिच्चठाणं पडिसेवित्ता तस्सणं एवं भवइ-'जइ ताव समणोवासगा वि कालमासे कालं किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति, किमंग ! पुण अहं अणपण्णियदेवत्तणंपि णो लभिस्सामि' त्ति कट्टु से णं तस्स ठाणस्स अणालोइय अपडिक्कंते कालं करेइ णत्थि तस्स आराहणा; से णं तस्स ठाणस्स आलोइय-पडिक्कंते कालं करेइ अत्थि तस्स आराहणा।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दसमसए बीओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ--पडिवण्णस्स--प्रतिपन्न (जो पहले स्वीकार कर चुका है) के **वोसट्ठे**--छोड़ा हुआ, **चियत्ते**--त्यागा हुआ, **अकिच्चट्ठाणं**--अकृत्य स्थान--पाप स्थान, **पच्छावि**--बाद में, **चरिमकालसमयंसि**--अंतिम काल के समय, **आलोएस्सामि**--आलोचना करूंगा, **आराहणा**--आराधना, **उववत्तारो**--उत्पन्न होने वाले।

भावार्थ-५-जिस अनगार ने मासिक भिक्षु-प्रतिमा अंगीकार की है, तथा जिसने शरीर के ममत्व का और शरीर-संस्कार का त्याग कर दिया है, इत्यादि मासिक भिक्षु-प्रतिमा सम्बन्धी सभी वर्णन यहाँ दशाश्रुतस्कन्ध में बताये अनुसार यावत् बारहवीं भिक्षु-प्रतिमा तक सभी वर्णन-यावत् उसके आराधना होती है-तक कहना चाहिये।

६-यदि किसी भिक्षु के द्वारा किसी अकृत्य-स्थान का सेवन हो गया हो और यदि वह उस अकृत्य-स्थान की आलोचना तथा प्रतिक्रमण किये बिना ही काल कर जाय, तो उसके आराधना नहीं होती। यदि अकृत्य-स्थान की वह आलोचना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और प्रतिक्रमण करके काल करे, तो उसके आराधना होती है। कदाचित् किसी भिक्षु के द्वारा अकृत्यस्थान का सेवन होगया हो और बाद में उसके मन में यह विचार उत्पन्न हो कि 'मैं अपने अन्तिम समय में इस अकृत्य स्थान की आलोचना करूँगा यावत् तप रूप प्रायश्चित्त स्वीकार करूँगा,' परन्तु वह उस अकृत्यस्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही काल कर जाय, तो उसके आराधना नहीं होती। यदि वह आलोचना और प्रतिक्रमण करके काल करे, तो आराधना होती है। कदाचित् किसी भिक्षु के द्वारा अकृत्यस्थान का सेवन हो गया हो और उसके बाद वह यह सोचे कि 'जब कि श्रमणोपासक भी काल के समय काल करके किसी एक देवलोक में उत्पन्न हो जाते हैं, तो क्या मैं अणपर्णिक देव-भी नहीं हो सकूँगा'-यह सोचकर यदि वह उस अकृत्य-स्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही काल कर जाय, तो उसके आराधना नहीं होती। यदि अकृत्यस्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण करके काल करता है, तो उसके आराधना होती है।

हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है। ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-साधु के अभिग्रह विशेष को 'भिक्षु-प्रतिमा' कहते हैं। वे बारह हैं-एक मास से लेकर सात मास तक सात प्रतिमाएँ हैं। आठवीं, नौवीं और दसवीं प्रतिमाएँ प्रत्येक सात दिन-रात्रि की होती हैं, ग्यारहवीं एक अहोरात्र की होती है और बारहवीं केवल एक रात्रि की होती है। इनका विस्तृत विवेचन दशाश्रुतस्कन्ध की सातवीं दशा में है।

॥ दसवें शतक का द्वितीय उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १० उद्देशक ३

देव की उल्लंघन शक्ति

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–आइड्ढीए णं भंते ! देवे जाव चत्तारि, पंच देवावासंतराइं वीइक्कंते, तेण परं परिड्ढीए ?

१ उत्तर–हंता, गोयमा ! आयड्ढीए णं तं चेव, एवं असुरकुमारे वि । णवरं असुरकुमारावासंतराइं, सेसं तं चेव । एवं एएणं कमेणं जाव थणियकुमारे, एवं वाणमंतरे, जोइसिए, वेमाणिए, जाव तेण परं परिड्ढीए ।

कठिन शब्दार्थ–आइड्ढीए–आत्मऋद्धि (स्वयं की शक्ति) से, परिड्ढीए–दूसरी ऋद्धि से ।

भावार्थ–१ प्रश्न–राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–हे भगवन् ! देव, अपनी शक्ति द्वारा यावत् चार-पांच देवावासों का उल्लंघन करता है और इसके बाद दूसरे की शक्ति द्वारा उल्लंघन करता है ?

१ उत्तर–हाँ, गौतम ! देव अपनी शक्ति द्वारा चार-पांच देवावासों का उल्लंघन करता है और उसके बाद दूसरी शक्ति (वैक्रिय की शक्ति) द्वारा उल्लंघन करता है । इसी प्रकार असुरकुमारों के विषय में भी जानना चाहिये, परंतु वे अपनी शक्ति द्वारा असुरकुमारों के आवासों का उल्लंघन करते हैं । शेष पूर्ववत् जानना चाहिये । इसी प्रकार इसी अनुक्रम से यावत् स्तनित कुमार, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक पर्यन्त जानना चाहिये, यावत् 'वे अपनी शक्ति से चार पांच आवासों का उल्लंघन करते हैं, इसके बाद दूसरी शक्ति (स्वाभाविक शक्ति के अतिरिक्त वैक्रिय शक्ति) से उल्लंघन करते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवों के मध्य में होकर निकलने की क्षमता

२ प्रश्न-अप्पड्ढीए णं भंते ! देवे से महड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?

२ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

३ प्रश्न-समिड्ढीए णं भंते ! देवे समड्ढीयस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?

३ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे; पमत्तं पुण वीइवएज्जा ।

४ प्रश्न-से णं भंते ! किं विमोहित्ता पभू, अविमोहित्ता पभू ?

४ उत्तर-गोयमा ! विमोहित्ता पभू, णो अविमोहेत्ता पभू ।

५ प्रश्न-से भंते ! किं पुव्विं विमोहित्ता पच्छा वीइवएज्जा पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ?

५ उत्तर-गोयमा ! पुव्विं विमोहित्ता पच्छा वीइवएज्जा, णो पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-अप्पड्ढीए-अल्प ऋद्धिक, वीइवएज्जा-जाता है-उल्लंघन करता है, **विमोहित्ता**-विमोहित करके ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या अल्पऋद्धिक (अल्प शक्ति वाला) देव महर्द्धिक (महा शक्ति वाले) देव के बीच में से होकर जा सकता है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है, (वह उनके बीचोबीच होकर नहीं जा सकता) ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! समर्द्धिक (समान शक्तिवाला) देव, समर्द्धिक देव के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बीच में होकर जा सकता है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, परन्तु वह प्रमत्त (असावधान) हो तो जा सकता है ।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या वह देव, उस सामनेवाले देव को विमोहित करके जाता है, या विमोहित किये बिना जाता है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वह देव, सामने वाले देव को विमोहित करके जा सकता है, विमोहित किये बिना नहीं जा सकता ।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या वह देव, उसे पहले विमोहित करता है और पीछे जाता है, अथवा पहले जाता है और पीछे विमोहित करता है ?

५ उत्तर-हे गौतम ! वह देव, उसे पहले विमोहित करता है और पीछे जाता है, परन्तु पहले जाकर पीछे विमोहित नहीं करता ।

६ प्रश्न-महिड्ढीए णं भंते ! देवे अप्पड्ढियस्स देवस्स मज्झं-मज्झेणं वीइवएज्जा ?

६ उत्तर-हंता, वीइवएज्जा ।

७ प्रश्न-से भंते ! किं विमोहित्ता पभू, अविमोहित्ता पभू ?

७ उत्तर-गोयमा ! विमोहित्ता वि पभू, अविमोहेत्ता वि पभू ।

८ प्रश्न-से भंते ! किं पुव्विं विमोहित्ता पच्छा वीइवएज्जा, पुव्विं वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ?

८ उत्तर-गोयमा ! पुव्विं वा विमोहेत्ता पच्छा वीइवएज्जा, पुव्विं वा वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा ।

९ प्रश्न-अप्पड्ढिए णं भंते ! असुरकुमारे महड्ढियस्स असुर-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुमारस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?

९ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे। एवं असुरकुमारेण वि तिण्णि आलावगा भाणियव्वा जहा ओहिएणं देवेणं भणिया! एवं जाव थणियकुमारेणं, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिएणं एवं चेव।

१० प्रश्न-अप्पड्ढिए णं भंते ! देवे महिड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?

१० उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे।

११ प्रश्न-समड्ढिए णं भंते ! देवे समड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं० ?

११ उत्तर-एवं तहेव देवेण य देवीए य दंडओ भाणियव्वो, जाव वेमाणियाए।

१२ प्रश्न-अप्पड्ढिया णं भंते ! देवी महड्ढियस्स देवस्स मज्झंमज्झेणं० ?

१२ उत्तर-एवं एसो वि तईओ दंडओ भाणियव्वो, जाव (प्र०) 'महिड्ढिया वेमाणिणी अप्पड्ढियस्स वेमाणियस्स मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ? (उ०) हंता, वीइवएज्जा।

१३ प्रश्न-अप्पड्ढिया णं भंते ! देवी महड्ढियाए देवीए मज्झंमज्झेणं वीइवएज्जा ?

१३ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे। एवं समड्ढिया देवी समड्ढियाए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवीए तहेव, महिड्ढिया वि देवी अप्पड्ढियाए देवीए तहेव, एवं एक्केक्के तिण्णि तीण्ण अलावगा भाणियव्वा, जाव-(प्र०) महड्ढिया णं भंते ! वेमाणिणी अप्पड्ढियाए वेमाणिणीए मज्झंमज्झेणं वीइव-एज्जा ? (उ०) हंता, वीइवएज्जा । सा भंते ! किं विमोहित्ता पभू० ? तहेव जाव पुव्विं वा वीइवइत्ता पच्छा विमोहेज्जा । एए चत्तारि दंडगा ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या महर्द्धिक देव, अल्प ऋद्धिक देव के ठीक मध्य में होकर जा सकता है ?

६ उत्तर-हाँ, गौतम ! जा सकता है ।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! वह महर्द्धिक देव, उस अल्प ऋद्धिक देव को विमोहित करके जाता है अथवा विमोहित किये बिना जाता है ?

७ उत्तर-हे गौतम ! विमोहित करके भी जा सकता है और विमोहित किये बिना भी जा सकता है ।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! वह महर्द्धिक देव, उसे पहले विमोहित करके पीछे जाता है, अथवा पहले जाता है और पीछे विमोहित करता है ?

८ उत्तर-हे गौतम ! वह महर्द्धिक देव पहले विमोहित करके पीछे भी जा सकता है और पहले जाकर पीछे भी विमोहित कर सकता है ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! अल्प ऋद्धिक असुरकुमार देव, महर्द्धिक असुर-कुमार देव के बीचोबीच होकर जा सकता है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । इस प्रकार सामान्य देव की तरह असुरकुमार के भी तीन आलापक कहने चाहिए । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना चाहिए, तथा वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देवों के विषय में भी इसी प्रकार कहना चाहिए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० प्रश्न-हे भगवन् ! अल्पऋद्धिक देव, महर्द्धिक देवी के मध्य में होकर जा सकता है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! समऋद्धिक देव, समऋद्धिक देवी के मध्य में होकर जा सकता है ?

११ उत्तर-हे गौतम ! पूर्वोक्त प्रकार से देव के साथ देवी का भी दण्डक कहना चाहिये, यावत् वैमानिक पर्यंत इसी प्रकार कहना चाहिये ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! अल्पऋद्धिक देवी, महर्द्धिक देव के मध्य में होकर जा सकती है ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, इस प्रकार यहाँ तीसरा दण्डक कहना चाहिये, यावत् (प्रश्न) हे भगवन् ! महर्द्धिक वैमानिक देवी, अल्पऋद्धिक वैमानिक देव के बीच में से निकलकर जा सकती है ? (उत्तर) हाँ, गौतम ! जा सकती है ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! अल्पऋद्धिक देवी महर्द्धिक देवी के मध्य में से चलकर जा सकती है ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं । इस प्रकार समऋद्धिक देवी का, समऋद्धिक देवी के साथ तथा महर्द्धिक देवी का, अल्पऋद्धिक देवी के साथ, उपर्युक्त रूप से आलापक कहना चाहिये । इस प्रकार एक-एक के भी तीन-तीन आलापक कहना चाहिये, यावत् (प्रश्न) हे भगवन् ! महर्द्धिक वैमानिक देवी, अल्पऋद्धिक वैमानिक देवी के मध्य में होकर जा सकती है ? (उत्तर) हाँ गौतम ! जा सकती है, यावत् (प्रश्न) हे भगवन् ! क्या वह महर्द्धिक देवी, उसे विमोहित करके जा सकती है, अथवा विमोहित किये बिना जा सकती है, तथा पहले विमोहित करके पीछे जाती है, अथवा पहले जाकर पीछे विमोहित करती है ? (उत्तर) हे गौतम ! पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये, यावत् 'पहले जाती है और पीछे भी विमोहित करती है,' तक कहना चाहिये । इस प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चार दण्डक कहने चाहिये ।

विवेचन-१ अल्प ऋद्धिक महर्द्धिक के साथ, २ समऋद्धिक समऋद्धिक के साथ और ३ महर्द्धिक अल्प ऋद्धिक के साथ-ये तीन आलापक होते हैं। ये तीन आलापक असुरकुमार से वैमानिक तक कहने चाहिये। १ इन तीन आलापकों से युक्त सामान्य देव का सामान्य देव के साथ एक दण्डक होता है, इसी प्रकार २ इन तीन आलापकों से युक्त वैमानिक पर्यंत देव का देवी के साथ दूसरा दण्डक होता है, ३ इसी तरह वैमानिक पर्यंत देवी का देव के साथ तीसरा दण्डक होता है और ४ इसी तरह वैमानिक पर्यंत देवी का देवी के साथ चौथा दण्डक होता है।

विमोहित करने का अर्थ है-'विस्मित करना' अर्थात् महिका (धूंअर) आदि के द्वारा अन्धकार कर देना। उस अन्धकार को देखकर सामने वाला देव, विस्मय में पड़ जाता है कि यह क्या है ? उसी समय उसके न देखते हुए ही बीच में से निकल जाना 'विमोहित कर निकल जाना'—कहलाता है।

अश्व की खु-खु ध्वनि और भाषा के भेद

१४ प्रश्न-आसस्स णं भंते ! धावमाणस्स किं 'खु खु' त्ति करेइ ?

१४ उत्तर-गोयमा ! आसस्स णं धावमाणस्स हिययस्स य जगयस्स य अंतरा एत्थ णं कक्कडए + णामं वाए संमुच्छइ, जेणं आसस्स धावमाणस्स 'खु खु' त्ति करेइ ।

कठिन शब्दार्थ-आसस्स-अश्व (घोड़े) के, **धावमाणस्स**-दौड़ते हुए के, **हिययस्स**-हृदय के, **जगयस्स**-यकृत (लीवर) का, **कक्कडए**-कर्कट, **समुच्छइ**-उत्पन्न होता है।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! जब घोड़ा दौड़ता है, तब 'खु-खु' शब्द क्यों करता है ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! जब घोड़ा दौड़ता है, तब उसके हृदय और

+ पाठ भेद-'कब्बडए ।'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यकृत् के बीच में कर्कट नामक वायु उत्पन्न होती है, इससे दौड़ता हुआ घोड़ा 'खु-खु' शब्द करता है।

१५ प्रश्न-अह भंते ! आसइस्सामो, सइस्समो, चिट्ठिस्सामो, णिसिइस्सामो, तुयट्टिस्सामो--

"आमंतणी आणवणी जायणी तह पुच्छणी य पण्णवणी।
पच्चक्खाणी भासा, भासा इच्छाणुलोमा य ।।
अणभिग्गहिया भासा भासा य, अभिग्गहम्मि बोद्धव्वा।
संसयकरणी भासा, वोयडमव्वोयडा चेव" ।।

पण्णवणी णं एसा भासा, ण एसा भासा मोसा ?

हंता, गोयमा ! आसइस्सामो, तं चेव जाव ण एसा भासा मोसा।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

।। दसमे सए तईओ उद्देसो सम्मत्तो ।।

कठिन शब्दार्थ-**आसइस्सामो**-आश्रय करेंगे, **सइस्सामो**-शयन करेंगे, **चिट्ठिस्सामो**-खड़े रहेंगे, **णिसिइस्सामो**-बैठेंगे, **तुयट्टिस्सामो**-लेटेंगे, **आमंतणी**-आमन्त्रणदेनेवाली, **आणवणी**-आज्ञापनी, **जायणी**-याचना करने वाली, **इच्छाणुलोमा**--इच्छानुलोमा, **वोयडमव्वोयडा**-*व्याकृता अव्याकृता।*

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! १ आमन्त्रणी, २ आज्ञापनी, ३ याचनी, ४ पृच्छनी, ५ प्रज्ञापनी, ६ प्रत्याख्यानी, ७ इच्छानुलोमा, ८ अनभिगृहीता, ९ अभिगृहीता, १० संशयकरणी, ११ व्याकृता और १२ अव्याकृता, इन बारह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार की भाषाओं में-'हम आश्रय करेंगे, शयन करेंगे, खड़े रहेंगे, बैठेंगे और लेटेंगे,' इत्यादि भाषा, क्या प्रज्ञापनी भाषा कहलाती है और ऐसी भाषा मृषा (असत्य) नहीं कहलाती ?

१५ उत्तर-हाँ, गौतम ! उपरोक्त प्रकार की भाषा प्रज्ञापनी भाषा है और वह भाषा मृषा नहीं कहलाती ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-सत्या, असत्या, सत्यामृषा और असत्यामृषा, इस प्रकार भाषा के मूल चार भेद हैं । लौकिक व्यवहार की प्रवृति का कारण होने से असत्यामृषा भाषा को 'व्यवहार भाषा' कहते हैं । इसके बारह भेद हैं । यथा-

१ आमन्त्रणी-आमन्त्रण करना अर्थात् किसी को सम्बोधित करना । जैसे—हे भगवन् ! हे देवदत्त ! इत्यादि ।

२ आज्ञापनी – दूसरे को किसी कार्य में प्रेरित करने वाली भाषा 'आज्ञापनी' कहलाती है । जैसे-जाओ, लाओ, अमुक कार्य करो, इत्यादि ।

३ याचनी—याचना करने के लिये कही जाने वाली भाषा ।

४ पृच्छनी—अज्ञात तथा संदिग्ध पदार्थों को जानने के लिय प्रयुक्त भाषा ।

५ प्रज्ञापनी-उपदेश देने रूप भाषा 'प्रज्ञापनी' है । यथा-प्राणियों की हिंसा से निवृत्त पुरुष भवान्तर में दीर्घायु और नीरोग शरीरी होते हैं ।

६ प्रत्याख्यानी—निषेधात्मक भाषा 'प्रत्याख्यानी' कहलाती है ।

७ इच्छानुलोमा-दूसरे की इच्छा का अनुसरण करना । जैसे-किसी के द्वारा पूछा जाने पर उत्तर देना कि जो तुम करते हो, वह मुझे भी अभीप्ट है ।

८ अनभिगृहीता-प्रतिनियत (निश्चित) अर्थ का ज्ञान न कराने वाली भाषा 'अनभिगृहीता' है ।

९ अभिगृहीता-प्रतिनियत अर्थ का बोध कराने वाली भाषा 'अभिगृहीता' है ।

१० संशयकरणी-अनेक अर्थों के वाचक शब्दों का जहाँ प्रयोग किया गया हो और जिसे सुनकर श्रोता संशय में पड़ जाय, वह भाषा 'संशयकरणी' है । जैसे-'सैन्धव' शब्द सुनकर श्रोता संशय में पड़ जाता कि नमक लाया जाय या घोड़ा (क्योंकि सैन्धव शब्द के

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दो अर्थ हैं-घोड़ा और नमक) ।

११ व्याकृता-स्पष्ट अर्थ वाली भाषा 'व्याकृता' कहलाती है ।

१२ अव्याकृता-अस्पष्ट उच्चारण वाली अथवा अति गंभीर अर्थ वाली भाषा ।

'हम आश्रय करेंगे' इत्यादि भाषा यद्यपि भविष्यत्कालीन है, तथापि वर्तमान सामीप्य होने से प्रज्ञापनी भाषा है और वह असत्य नहीं है । इसी प्रकार आमन्त्रणी आदि के विषय में जानना चाहिये ।

॥ दसवें शतक का तृतीय उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १० उद्देशक ४

चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिंशक देव

१—तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे णयरे होत्था, वण्णओ । दूइपलासए चेइए । सामी समोसढे । जाव परिसा पडिगया । तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई णामं अणगारे, जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ । तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतेवासी सामहत्थी णामं अणगारे पगइभद्दए, जहा रोहे, जाव उड्ढंजाणू जाव विहरइ । तएणं से सामहत्थी अणगारे जायसड्ढे जाव उट्ठाए उट्ठेइ उट्ठित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता भगवं गोयमं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासमाणे एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वयासी ।

२ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमार-रण्णो तायत्तीसगा देवा ?

२ उत्तर-हंता, अत्थि ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा' ?

उत्तर-एवं खलु सामहत्थी ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे कायंदी णामं णयरी होत्था । वण्णओ । तत्थ णं कायंदीए णयरीए तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया परिवसंति, अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा, उवलद्ध-पुण्णपावा, वण्णओ जाव विहरंति । तएणं ते तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया पुव्विं उग्गा उग्गविहारी, संविग्गा, संविग्ग-विहारी भवित्ता, तओ पच्छा पासत्था, पासत्थविहारी, ओसण्णा, ओसण्णविहारी, कुसीला, कुसीलविहारी, अहाच्छंदा, अहाच्छंद-विहारी, बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणंति पाउणित्ता अद्धमासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेंति, अत्ताणं झूसित्ता तीसं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति, छेदित्ता, तस्स ठाणस्स अणालोइयअपडि-क्कंता कालमासे कालं किच्चा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगदेवत्ताए उववण्णा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-जायसड्ढे-श्रद्धावाले, **सहाया**-सहायता करनेवाले, **उग्गा**-उग्र (उदार भाववाले), **उग्गविहारी**-उग्र विहारी (उदार आचारवाले)।

भावार्थ-१ उस काल उस समय वाणिज्यग्राम नामक नगर था। उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अन्तेवासी (शिष्य) इंद्रभूति नामक अनगार थे। वे ऊर्ध्वजानु यावत् विचरते थे। उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के शिष्य 'श्यामहस्ती' अनगार थे। वे गौतम स्वामी के पास आकर, उन्हें तीन बार प्रदक्षिणा एवं वन्दना नमस्कार करके पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले-

२ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या असुरकुमारों के राजा, असुरकुमारों के इन्द्र चमर के त्रायस्त्रिशक देव हैं ?

२ उत्तर-हाँ, श्यामहस्ती ! चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव हैं।

प्र०-हे भगवन् ! क्या कारण है इसका कि असुरेन्द्र असुरकुमारेन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव हैं ?

उ०- हे श्यामहस्ती ! उन त्रायस्त्रिशक देवों का वर्णन इस प्रकार है।

उस काल उस समय इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काकन्दी नाम की नगरी थी (वर्णन)। उस काकन्दी नगरी में एक दूसरे की परस्पर सहायता करने वाले तेतीस श्रमणोपासक गृहपति रहते थे। वे धनिक यावत् अपरिभूत थे। वे जीवाजीव के ज्ञाता और पुण्य-पाप के जानने वाले थे। वे परस्पर सहायक तेतीस श्रमणोपासक गृहपति, पहले उग्र, उग्रविहारी, संविग्न, संविग्नविहारी थे, परन्तु पीछे पासत्थ (पार्श्वस्थ), पासत्थविहारी, अवसन्न, अवसन्नविहारी, कुशील कुशीलविहारी, यथाछन्द और यथाछन्दविहारी हो गये। बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक पर्याय का पालन कर, अर्धमासिक संलेखना द्वारा शरीर को कृश कर, तीस भक्तों का अनशन द्वारा छेदन कर के और उस प्रमाद स्थान की आलोचना और प्रतिक्रमण किये बिना ही काल के समय काल कर वे असुरकुमारराज असुरकुमारेन्द्र चमर के त्रायस्त्रिशक देवपने उत्पन्न हुए हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३-जप्पभिइं च णं भंते ! ते काकंदगा तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगदेवत्ताए उववण्णा तप्पभिइं च णं भंते ! एवं वुच्चइ-'चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा ? तएणं भगवं गोयमे सामहत्थिणा अणगारेणं वुत्ते समाणे संकिए, कंखिए, वितिगिच्छिए उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए उट्ठित्ता सामहत्थिणा अणगारेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ । तेणेव उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ । वंदित्ता, णमंसित्ता एवं वयासी-

४ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा तायत्तीसगा देवा ?

४ उत्तर-हंता, अत्थि ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-एवं तं चेव सव्वं भाणियव्वं, जाव 'तप्पभिइं च णं एवं वुच्चइ-चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा तायत्तीसगा देवा ?

उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए णामधेज्जे पण्णत्ते; जं णं कयाइ, णासी, ण कयाइ ण भवइ, ण कयाइ ण भविस्सइ; जाव णिच्चे अव्वोच्छित्तिणयट्ठयाए, अण्णे चयंति, अण्णे उववज्जंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-**संकिए**-शंकित हुए, **कंखिए**-कांक्षित, **वितिगिच्छिए**-अत्यंत सन्देह-युक्त, **अव्वोच्छित्तिणयट्ठाए**-अव्युच्छित्ति नय (द्रव्यार्थिक नय) के अर्थ से, **तप्पभिइं**-तब से।

भावार्थ-३-(श्यामहस्ती, गौतम स्वामी से पूछते हैं) हे भगवन् ! क्या जब से वे काकन्दी निवासी, परस्पर सहायता करने वाले तेतीस श्रमणोपासक, असुरकुमारराज असुरेन्द्र चमर के त्रायस्त्रिशक देवपने उत्पन्न हुए हैं, तब से ऐसा कहा जाता है कि असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर के त्रायस्त्रिशक देव हैं ? (अर्थात् क्या इस से पहले त्रायस्त्रिशक देव नहीं थे ?) श्यामहस्ती अनगार के इस प्रश्न को सुनकर गौतमस्वामी शंकित, कांक्षित और अत्यन्त संदिग्ध हुए। वे वहाँ से उठे और श्यामहस्ती अनगार के साथ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास आये। भगवान् को वन्दना नमस्कार करके गौतमस्वामी ने इस प्रकार पूछा-

४ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या असुरेन्द्र, असुरकुमारराज चमर के त्रायस्त्रिशक देव हैं ?

४ उत्तर-हाँ, गौतम हैं।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि चमर के त्रायस्त्रिशक देव हैं, इत्यादि पूर्व कथित त्रायस्त्रिशक देवों का सब सम्बन्ध कहना चाहिये, यावत् काकन्दी निवासी श्रमणोपासक त्रायस्त्रिशक देवपने उत्पन्न हुए। तब से लेकर ऐसा कहा जाता है कि चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिशक देव हैं ? क्या इसके पहले वे नहीं थे ?

उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं। असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर के त्रायस्त्रिशक देवों के नाम शाश्वत कहे गये हैं। इसलिये वे कभी नहीं थे-ऐसा नहीं और नहीं रहेंगे-ऐसा भी नहीं। वे नित्य हैं, अव्युच्छित्तिनय (द्रव्यार्थिक नय) की अपेक्षा पहले वाले चवते हैं और दूसरे उत्पन्न होते हैं। उनका विच्छेद कभी नहीं होता।

विवेचन-जो देव, मन्त्री और पुरोहित का कार्य करते हैं, वे 'त्रायस्त्रिशक' कहलाते हैं। काकन्दी नगरी में तेतीस श्रमणोपासक रहते थे। वे परस्पर एक दूसरे की सहायता करते थे। वे गृहपति अर्थात् कुटुम्ब के नायक थे। वे उग्र (उदार भाव वाले)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और उग्रविहारी (उदार आचार वाले) थे। वे पहले तो संविग्न (मोक्ष प्राप्ति के इच्छुक एवं संसार से भयभीत) और संविग्न विहारी (मोक्ष के अनुकूल आचरण करने वाले) थे किन्तु पीछे वे पासत्थ (पार्श्वस्थ-ज्ञानादि से बहिर्भूत) और पासत्थविहारी (जीवन पर्यन्त ज्ञान आदि से बहिर्भूत प्रवृत्ति करने वाले) अवसन्न (उत्तम आचार का पालन करने में थके हुए-आलसी) और अवसन्न विहारी (जीवन पर्यन्त शिथिलाचारी), कुशील (ज्ञानादि आचार की विराधना करने वाले) और कुशील विहारी (जीवन पर्यन्त ज्ञानादि आचार की विराधना करने वाले), यथाछन्द (आगम से विपरीत अपनी इच्छानुसार प्रवृत्ति करने वाले स्वच्छन्दी) और यथाछन्दविहारी (जीवन पर्यन्त स्वच्छन्दी) हो गये थे। इससे काल के समय काल करके वे चमरेन्द्र के त्रायस्त्रिंशक देवपने उत्पन्न हुए। यह कथानक वर्तमान के त्रायस्त्रिंशक देवों का है। इसी प्रकार अनादिकाल से त्रायस्त्रिंशक देवों के स्थान में नवीन जीव उत्पन्न होते रहते हैं और पुराने चवते जाते हैं।

बलीन्द्र के त्रायस्त्रिंशक देव

५ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! बलिस्स वइरोयणिंदस्स वइरोयणरण्णो तायत्तीसगा देवा तायत्तीसगा देवा ?

५ उत्तर-हंता, अत्थि।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'बलिस्स वइरोयणिंदस्स जाव तायत्तीसगा देवा तायत्तीसगा देवा ?

उत्तर-एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे बिभेले णामं सण्णिवेसे होत्था वण्णओ। तत्थ णं बिभेले सण्णिवेसे जहा चमरस्स जाव उववण्णा।

प्रश्न-जप्पभिइं च णं भंते ! बिभेलगा तायत्तीसं सहाया गाहावई

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समणोवासगा बलिस्स वइरोयणिंदस्स सेसं तं चेव जाव णिच्चे अव्वोच्छित्तिणयट्ठयाए, अण्णे चयंति, अण्णे उववज्जंति ।

६ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! धरणस्स णागकुमारिंदस्स णागकुमाररण्णो तायत्तीसगा देवा ?

६ उत्तर-हंता अत्थि ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा तायत्तीसगा देवा ?

उत्तर-गोयमा ! धरणस्स णागकुमारिंदस्स णागकुमाररण्णो तायत्तीसगाणं देवाणं सासए णामधेज्जे पण्णत्ते, जं ण कयाइ णासी, जाव अण्णे चयंति अण्णे उववज्जंति । एवं भूयाणंदस्स वि एवं जाव महाघोसस्स ।

कठिन शब्दार्थ-सण्णिवेसे-सन्निवेश, जप्पभिइं-जब से ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

५ उत्तर-हाँ, गौतम ! हैं ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! बलि के त्रायस्त्रिंशक देवों का वर्णन इस प्रकार है;-उस काल उस समय इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में बिभेल नाम का सन्निवेश (कस्बा) था (वर्णन) । उस बिभेल सन्निवेश में परस्पर सहायता करने वाले तेतीस श्रमणोपासक थे, इत्यादि जैसा वर्णन चमरेन्द्र के लिये कहा है, वैसा यहाँ भी जानना चाहिये । यावत् वे त्रायस्त्रिंशक देवपने उत्पन्न हुए । जब से वे बिभेल सन्निवेश निवासी परस्पर सहायक तेतीस गृहपति श्रमणोपासक, बलि के

त्रायस्त्रिंशक देव पने उत्पन्न हुए, तब से क्या ऐसा कहा जाता है कि बलि के त्रायस्त्रिंशक देव हैं, इत्यादि पूर्वोक्त सभी वर्णन कहना चाहिये। यावत् 'वे नित्य हैं, अव्युच्छित्ति नय की अपेक्षा पुराने चवते हैं और नये उत्पन्न होते हैं' –तक कहना चाहिये।

६ प्रश्न–हे भगवन् ! नागकुमारेन्द्र नागकुमार राज धरण के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

६ उत्तर–हाँ, गौतम ! हैं।

प्रश्न–हे भगवन् ! किस कारण से कहते हैं कि नागकुमारेन्द्र नागकुमार-राज धरण के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

उत्तर–हे गौतम ! नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज धरण के त्रायस्त्रिंशक देवों के नाम शाश्वत कहे गये हैं। 'वे कभी नहीं थे'–ऐसा नहीं, 'नहीं रहेंगे'–ऐसा भी नहीं, यावत् पुराने चवते हैं और नये उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार भूतानन्द यावत् महाघोष इन्द्र के त्रायस्त्रिंशक देवों के विषय में जानना चाहिये।

शक्रेन्द्र के त्रायस्त्रिंशक देव

७ प्रश्न–अत्थि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स, देवरण्णो पुच्छा ?

७ उत्तर–हंता अत्थि। (प्र०) से केणट्ठेणं जाव तायत्तीसगा देवा, तायत्तीसगा देवा ? (उ०) एवं खलु गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं इहेव जंबुद्दीवे दीवे भारहे वासे पलासए णामं सण्णिवेसे होत्था। वण्णओ। तत्थ णं पलासए सण्णिवेसे तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया जहा चमरस्स जाव विहरंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तएणं ते तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासया पुव्विं पि पच्छा वि उग्गा, उग्गविहारी, संविग्गा, संविग्गविहारी बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणंति पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेंति, झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेंति, छेदित्ता आलोइयपडिक्कंता समाहिपत्ता कालमासे कालं किच्चा जाव उववण्णा। जप्पभिइं च णं भंते ! पालासिगा तायत्तीसं सहाया गाहावई समणोवासगा, सेसं जहा चमरस्स जाव अण्णे उववज्जंति।

८ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! ईसाणस्स० ?

८ उत्तर-एवं जहा सक्कस्स, णवरं चंपाए णयरीए जाव उववण्णा। जप्पभिइं च णं भंते ! चंपिज्जा तायत्तीसं सहाया, सेसं तं चेव जाव अण्णे उववज्जंति।

९ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! सणंकुमारस्स देविंदस्स देवरण्णो पुच्छा ?

९ उत्तर-हंता अत्थि। (प्र०) से केणट्ठेणं ? (उ०) जहा धरणस्स तहेव, एवं जाव पाणयस्स, एवं अच्चुयस्स जाव अण्णे उववज्जंति।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दसमे सए चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

७ उत्तर-हाँ, गौतम ! हैं ।

प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा किस कारण से कहते हैं कि देवेन्द्र देवराज शक्र के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! शक्र के त्रायस्त्रिंशक देवों का सम्बन्ध इस प्रकार है-

उस काल उस समय में इस जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में पलाशक नाम का सन्निवेश था (वर्णन) । वहाँ परस्पर सहायता करने वाले तेतीस श्रमणोपासक रहते थे । इत्यादि पूर्वोक्त वर्णन कहना चाहिये । वे तेतीस श्रमणोपासक पहले भी और पीछे भी उग्र, उग्रविहारी, संविग्न और संविग्न विहारी होकर बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक पर्याय का पालन कर, मासिक संलेखना द्वारा शरीर को कृश कर, साठ भक्त अनशन का छेदन कर, आलोचना और प्रतिक्रमण कर और काल के अवसर समाधिपूर्वक काल करके, शक्र के त्रायस्त्रिंशक देवपने उत्पन्न हुए हैं, इत्यादि सारा वर्णन चमरेन्द्र के समान कहना चाहिये । यावत् 'पुराने चवते हैं, और नये उत्पन्न होते हैं'-तक कहना चाहिये ।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! शक्रेन्द्र के समान ईशानेन्द्र का भी वर्णन जानना चाहिये । इसमें इतनी विशेषता है कि ये श्रमणोपासक चम्पा नगरी में रहते थे । शेष सारा वर्णन शक्रेन्द्र के समान जानना चाहिये ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार के त्रायस्त्रिंशक देव हैं ?

९ उत्तर-हां गौतम ! हैं ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है कि देवेन्द्र देवराज सनत्कुमार के त्रायस्त्रिंशक देव है ?

उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार धरणेन्द्र के विषय में कहा है, उसी प्रकार सनत्कुमार के विषय में भी जानना चाहिए । इसी प्रकार यावत् प्राणत तक जानना चाहिए और इसी प्रकार अच्युत तक जानना चाहिए, यावत् 'पुराने चवते हैं और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नए उत्पन्न होते हैं'-तक जानना चाहिए।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक-ये चार प्रकार के देव हैं। इनमें से भवनपति और वैमानिक देवों में तो त्रायस्त्रिशक देव होते हैं, किंतु वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवों में त्रायस्त्रिशक देव नहीं होते, इसलिए भवनपति और वैमानिक देवों के ही त्रायस्त्रिशक देवों का वर्णन आया है।

॥ इति दशवें शतक का चतुर्थ उद्देशक समाप्त ॥

शतक १० उद्देशक ५

चमरेन्द्र का परिवार

१-तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णामं णयरे। गुणसिलए चेइए, जाव परिसा पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स बहवे अंतेवासी थेरा भगवंतो जाइसंपण्णा कुलसंपण्णा जहा अट्ठमे सए सत्तमुद्देसए जाव विहरंति। तएणं ते थेरा भगवंतो जायसड्ढा जायसंसया जहा गोयमसामी, जाव पज्जुवासमाणा एवं वयासी-

२ प्रश्न-चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो कइ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

२ उत्तर-अज्जो ! पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ काली, २ रायी, ३ रयणी, ४ विज्जु, ५ मेहा । तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठ-ट्ठ देवीसहस्सा परिवारो पण्णत्तो ।

३ प्रश्न-पभू णं भंते ! ताओ एगमेगा देवी अण्णाइं अट्ठ-ट्ठ देवीसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए ?

३ उत्तर-एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तालीसं देवीसहस्सा, सेत्तं तुडिए ।

४ प्रश्न-पभू णं भंते ! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए, चमरंसि सीहासणंसि तुडिएणं सद्धिं दिव्वाइं भोग भोगाइं भुंजमाणे विहरित्तए ?

४ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'णो पभू चमरे असुरिंदे चमरचंचाए रायहाणीए जाव विहरित्तए' ?

उत्तर-अज्जो ! चमरस्स णं असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए, माणवए चेइयखंभे वइरामएसु गोल-वट्ट-समुग्गएसु बहूओ जिणसकहाओ सण्णिक्खित्ताओ चिट्ठंति; जाओ णं चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो अण्णेसिं च बहूणं असुरकुमाराणं देवाण य देवीण य अच्चणिज्जाओ, वंद-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिज्जाओ णमंसणिज्जाओ पूयणिज्जाओ सक्कारणिज्जाओ सम्माणणिज्जाओ कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासणिज्जाओ भवंति, तेसिं पणिहाए णो पभू, से तेणट्ठेणं अज्जो! एवं वुच्चइ-'णो पभू चमरे असुरिंदे जाव चमरचंचाए जाव विहरित्तए'।(प्र०) पभू णं अज्जो ! चमरे असुरिंदे असुरकुमारराया चमरचंचाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए चमरंसि सीहासणंसि चउसट्ठीए सामाणीयसाहस्सीहिं तायत्तीसाए जाव अण्णेहिं च बहूहिं असुरकुमारेहिं देवेहि य देवीहि य सद्धिं संपरिवुडे महयाहय-जाव भुंजमाणे विहरित्तए? (उ०) केवलं परियारिड्ढीए, णो चेव णं मेहुणवत्तियं ।

कठिन शब्दार्थ-**अग्गमहिसी**-अग्रमहिषी-पटरानी, **एवामेव**-इसी प्रकार, **तुडिए**-त्रुटिक-वर्ग, **वइरामएसु**-वज्रमय, **गोलवट्टसमुग्गएसु**-वृत्ताकार गोल डिब्बों में, **जिणसकहाओ**-जिनसक्थि-जिनेन्द्र भगवान् की अस्थियाँ, **अच्चणिज्जा**-अर्चनीय, **पणिहाए**-प्रणिधान में।

भावार्थ-१-उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। वहाँ गुणशीलक नामक उद्यान था। (वहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी समवसरे) यावत् परिषद् धर्मोपदेश सुनकर लौट गई। उस काल उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के बहुत-से अन्तेवासी (शिष्य) स्थविर भगवान् जाति सम्पन्न इत्यादि आठवें शतक के सातवें उद्देशक में कहे अनुसार विशेषण विशिष्ट यावत् विचरते थे। वे स्थविर भगवान् जानने की श्रद्धावाले यावत् संशय वाले होकर गौतम स्वामी के समान पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले-

२ प्रश्न-हे भगवन् ! असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर के कितनी अग्रमहिषियाँ (पटरानियाँ) कही गई हैं ?

२ उत्तर-हे आर्यों ! चमरेन्द्र के पांच अग्रमहिषियाँ कही गई है। यथा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ काली २ राजी ३ रजनी ४ विद्युत् और ५ मेधा। इनमें से एक-एक अग्रमहिषी के आठ-आठ हजार देवियों का परिवार कहा गया है।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या एक-एक देवी आठ-आठ हजार देवियों के परिवार की विकुर्वणा कर सकती है ?

३ उत्तर-हे आर्यो ! हाँ, कर सकती है। इस प्रकार पूर्वापर सब मिल कर पांच अग्रमहिषियों का परिवार चालीस हजार देवियाँ हैं। यह एक त्रुटिक (वर्ग) कहलाता है।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर अपनी चमरचञ्चा राजधानी की सुधर्मासभा में, चमर नामक सिंहासन पर बैठकर, उस त्रुटिक (देवियों के परिवार) के साथ भोगने योग्य दिव्य-भोगों को भोगने में समर्थ है ?

४ उत्तर-हे आर्यो ! यह अर्थ समर्थ नहीं।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि 'चमरचञ्चा राजधानी में वह असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर दिव्य-भोग भोगने में समर्थ नहीं है।'

उत्तर-हे आर्यो ! असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर की चमरचञ्चा राजधानी की सुधर्मा नामक सभा में, माणवक चैत्यस्तम्भ में, वज्रमय गोल डिब्बों में जिन भगवान् की बहुत-सी अस्थियाँ हैं, जो कि असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर के लिए तथा बहुत-से असुरकुमार देव और देवियों के लिए अर्चनीय, वन्दनीय, नमस्करणीय, पूजनीय तथा सत्कार व सम्मान करने योग्य हैं। वे कल्याणकारी, मंगलकारी, देवस्वरूप, चैत्यरूप पर्युपासना करने के योग्य हैं। इसलिए उन जिन भगवान् की अस्थियों के प्रणिधान (सन्निधान-समीप) में वह असुरेन्द्र, अपनी राजधानी की सुधर्मासभा में यावत् भोग भोगने में समर्थ नहीं है। इसलिए हे आर्यो ! ऐसा कहा गया है कि 'असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर चमरचञ्चा राजधानी में यावत् भोग भोगने में समर्थ नहीं है। परन्तु हे आर्यो। वह असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर, चमरचञ्चा राजधानी की सुधर्मा सभा में चमर नामक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिंहासन पर बैठकर चौसठ हजार सामानिक देव, त्रायस्त्रिंशक देव और दूसरे बहुत से असुरकुमार देव और देवियों के साथ प्रवृत्त होकर निरन्तर होने वाले नाट्य गीत और वादिन्त्रों के शब्दों द्वारा, केवल परिवार की ऋद्धि से भोग भोगने में समर्थ है, परन्तु मैथुन-निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है।

५ प्रश्न–चमरस्स णं भंते ! असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो सोमस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

५ उत्तर–अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा–१ कणगा २ कणगलया ३ चित्तगुत्ता ४ वसुंधरा। तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगं देवीसहस्सं परिवारे पण्णत्ते। (प्र०) पभू णं ताओ एगमेगाए देवीए अण्णं एगमेगं देवीसहस्सं परिवारं विउव्वित्तए ? (उ०) एवामेव सपुव्वावरेणं चत्तारि देवीसहस्सा। सेत्तं तुडिए।

६ प्रश्न–पभू णं भंते ! चमरस्स असुरिंदस्स असुरकुमाररण्णो सोमे महाराया सोमाए रायहाणीए सभाए सुहम्माए सोमंसि सीहासणंसि तुडिएणं ?

६ उत्तर–अवसेसं जहा चमरस्स, णवरं परिवारो जहा सूरियाभस्स, सेसं तं चेव, जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं।

७ प्रश्न–चमरस्स णं भंते ! जाव रण्णो जमस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ उत्तर-एवं चेव, णवरं जमाए रायहाणीए, सेसं जहा सोमस्स, एवं वरुणस्स वि, णवरं वरुणाए रायहाणीए; एवं वेसमणस्स वि, णवरं वेसमणाए रायहाणीए; सेसं तं चेव, जाव मेहुणवत्तियं।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर के लोकपाल सोम-महाराजा के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

५ उत्तर-हे आर्यो ! उनके चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-कनका, कनकलता, चित्रगुप्ता और वसुन्धरा। इनमें से प्रत्येक देवी का एक-एक हजार देवियों का परिवार है। इनमें से प्रत्येक देवी, एक-एक हजार देवियों के परिवार की विकुर्वणा कर सकती है। इस प्रकार पूर्वापर सब मिल कर चार हजार देवियाँ होती हैं। यह त्रुटिक (देवियों का वर्ग) कहलाता है।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या असुरेन्द्र असुरकुमारराज चमर का लोकपाल सोम नामक महाराजा, अपनी सोमा राजधानी की सुधर्मासभा में, सोम नामक सिंहासन पर बैठकर उस त्रुटिक के साथ भोग भोगने में समर्थ है ?

६ उत्तर-हे आर्यो ! जिस प्रकार चमर के सम्बन्ध में कहा गया, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये, परन्तु इसका परिवार राजप्रश्नीय सूत्र में वर्णित सूर्याभ देव समान जानना चाहिये। शेष सब पूर्ववत् जानना चाहिये, यावत् वह सोमा राजधानी में मैथुन-निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! उस चमर के लोकपाल यम महाराजा के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

७ उत्तर-हे आर्यो ! जिस प्रकार सोम महाराजा का कहा, उसी प्रकार यम महाराजा का कहना चाहिये, किन्तु इतनी विशेषता है कि यम लोकपाल के यमा नामक राजधानी है। इसी प्रकार वरुण और वैश्रमण का भी कहना चाहिये, किन्तु वरुण के वरुणा राजधानी है और वैश्रमण के वैश्रमणा राजधानी है। शेष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सब पूर्ववत् जानना चाहिए, यावत् 'वे वहाँ मैथुननिमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है।'

बलीन्द्र का परिवार

८ प्रश्न-बलिस्स णं भंते ! वइरोयणिंदस्स पुच्छा ?

८ उत्तर-अज्जो ! पंच अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ सुभा २ णिसुंभा ३ रंभा ४ णिरंभा ५ मयणा। तत्थ णं एगमेगाए देवीए अट्ठ-ट्ठ०, सेसं जहा चमरस्स, णवरं बलिचंचाए रायहाणीए, परिवारो जहा मोउद्देसए सेसं तं चेव, जाव मेहुणवत्तियं।

९ प्रश्न-बलिस्स णं भंते ! वइरोयणिंदस्स, वइरोयणरण्णो सोमस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

९ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ। तं जहा-१ मीणगा २ सुभद्दा ३ विजया ४ असणी। तत्थ णं एगमेगाए देवीए, सेसं जहा चमरसोमस्स एवं जाव वेसमणस्स।

कठिन शब्दार्थ-मोउद्देसए-मोका नगरी के उद्देशक के अनुसार।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि के कितनी अग्रमहिषियां कही गई हैं ?

८ उत्तर-हे आर्यो ! पाँच अग्रमहिषियां कही गई हैं। यथा-सुभा, निसुम्भा, रम्भा, निरम्भा और मदना। इनमें प्रत्येक देवी के आठ-आठ हजार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवियों का परिवार है, इत्यादि सारा वर्णन चमरेन्द्र के समान जानना चाहिए, परन्तु बलीन्द्र के बलिचञ्चा राजधानी है। इसका परिवार तृतीय शतक के प्रथम उद्देशक में कहे अनुसार तथा शेष सब वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिए, यावत् 'वह मैथुन निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है।'

९ प्रश्न-हे भगवन् ! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि के लोकपाल सोम-महाराजा के कितनी अग्रमहिषियाँ हैं ?

९ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ हैं। यथा-मेनका, सुभद्रा, विजया और अशनी। इनकी एक-एक देवी का परिवार आदि सारा वर्णन चमर के सोम नामक लोकपाल के समान जानना चाहिए। इसी प्रकार यावत् वैश्रमण तक जानना चाहिए।

१० प्रश्न-धरणस्स णं भंते ! णागकुमारिंदस्स णागकुमार-रण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

१० उत्तर-अज्जो ! छ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ इला २ सुक्का ३ सतारा ४ सोदामिणी ५ इंदा ६ घण-विज्जुया। तत्थ णं एगमेगाए देवीए छ छ देवीसहस्सा परिवारो पण्णत्तो।

११ प्रश्न-पभू णं भंते ! ताओ एगमेगा देवी अण्णाइं छ छ देविसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए ?

११ उत्तर-एवामेव सपुव्वावरेणं छत्तीसाइं देविसहस्साइं, सेत्तं तुडिए। (प्र०) पभू णं भंते ! धरणे० ? (उ०) सेसं तं चेव, णवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धरणाए रायहाणीए, धरणंसि सीहासणंसि, सओ परिवारो, सेसं तं चेव।

१२ प्रश्न-धरणस्स णं भंते ! णागकुमारिंदस्स लोगपालस्स कालवालस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

१२ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ असोगा २ विमला ३ सुप्पभा ४ सुदंसणा। तत्थ णं एगमेगाए० अवसेसं जहा चमरलोगपालाणं। एवं सेसाणं तिण्ह वि।

१३ प्रश्न-भूयाणंदस्स भंते ! पुच्छा।

१३ उत्तर-अज्जो ! छ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ रूया २ रूयंसा ३ सुरूया ४ रूयगावई ५ रूयकंता ६ रूयप्पभा। तत्थ णं एगमेगाए देवीए० अवसेसं जहा धरणस्स।

१४ प्रश्न-भूयाणंदस्स णं भंते ! णागवित्तस्स पुच्छा ?

१४ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ सुणंदा, २ सुभद्दा, ३ सुजाया, ४ सुमणा। तत्थ णं एगमेगाए० अवसेसं जहा चमरलोगपालाणं। एवं सेसाणं तिण्ह वि लोगपालाणं। जे दाहिणिल्ला इंदा तेसिं जहा धरणिंदस्स, लोगपालाण वि तेसिं जहा धरणस्स लोगपालाणं उत्तरिल्लाणं इंदाणं जहा भूयाणंदस्स, लोगपालाण वि तेसिं जहा भूयाणंदस्स लोग-

पालाणं, णवरं इंदाणं सव्वेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसणामगाणि; परिवारो जहा तइए सए पढमे उद्देसए। लोगपालाणं सव्वेसिं रायहाणीओ सीहासणाणि य सरिसणामगाणि, परिवारो जहा चमरस्स लोगपालाणं।

कठिन शब्दार्थ-**रायहाणीओ**-राजधानियाँ, **सपुव्वावरेणं**-पहले और पीछे का सब मिलाकर, **सरिसणामगाणि**-समान नाम, **परिवारो**-परिवार।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! नागकुमारेन्द्र नागकुमारराज, धरण के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

१० उत्तर-हे आर्यो ! उसके छह अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-इला, शुक्रा, सतारा, सौदामिनी, इन्द्रा, घनविद्युत्। इन प्रत्येक देवियों के छह-छह हजार देवियों का परिवार कहा गया है।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! इनमें से प्रत्येक देवी, अन्य छह-छह हजार देवियों के परिवार की विकुर्वणा कर सकती है ?

११ उत्तर-हाँ, आर्यो ! कर सकती है। ये पूर्वापर सब मिलाकर छत्तीस हजार देवियों की विकुर्वणा कर सकती हैं। इस प्रकार यह इन देवियों का त्रुटिक कहा गया है।

प्रश्न-हे भगवन् ! धरणेन्द्र यावत् भोग भोगने में समर्थ है, इत्यादि प्रश्न ?

उत्तर-पूर्ववत् जानना चाहिए, यावत् वह वहाँ मैथुन-निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं है, इसमें इतनी विशेषता है कि राजधानी का नाम धरणा, धरण सिंहासन के विषय में स्व परिवार, शेष सब पूर्ववत् कहना चाहिये।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! नागकुमारेन्द्र, नागकुमारराज, धरण के लोकपाल कालवाल नामक महाराजा के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२ उत्तर-हे आर्यो ! उसके चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-अशोक, विमला, सुप्रभा और सुदर्शना। इनमें से एक-एक देवी का परिवार आदि वर्णन चमर के लोकपाल के समान कहना चाहिए। इसी प्रकार शेष तीन लोकपालों के विषय में भी कहना चाहिए।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! भूतानन्द के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

१३ उत्तर-हे आर्यो ! उसके छह अग्रमहिषियां कही गई हैं। यथा-रूपा, रूपांशा, सुरूपा, रूपकावती, रूपकान्ता, रूपप्रभा। इनमें प्रत्येक देवी के परिवार आदि का वर्णन धरणेन्द्र के समान जानना चाहिए।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! भूतानन्द के लोकपाल नागवित्त के कितनी अग्र-महिषियां कही गई हैं ?

१४ उत्तर-हे आर्यो ! उसके चार अग्रमहिषियां कही गई हैं। यथा-सुनन्दा, सुभद्रा, सुजाता, सुमना। इनमें प्रत्येक देवी के परिवार आदि का वर्णन चमरेन्द्र के लोकपाल के समान और इसी प्रकार शेष तीन लोकपालों के विषय में भी जानना चाहिये।

दक्षिण दिशा के इन्द्रों का कथन धरणेन्द्र के समान और उनके लोक-पालों का कथन धरणेन्द्र के लोकपालों की तरह जानना चाहिये।

उत्तर दिशा के इन्द्रों का कथन भूतानन्द के समान और उनके लोक-पालों का कथन भूतानन्द के लोकपालों के समान जानना चाहिये। परन्तु इतनी विशेषता है कि सब इन्द्रों की राजधानियों का और सिंहासनों का नाम इन्द्र के नाम के समान जानना चाहिये। उनके परिवार का वर्णन तीसरे शतक के पहले उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये। सभी लोकपालों की राज-धानियों और सिंहासनों का नाम लोकपाल के नाम के अनुसार जानना चाहिये और उनके परिवार का वर्णन चमरेन्द्र के लोकपालों के परिवार के वर्णन के समान जानना चाहिये।

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

व्यन्तरेन्द्रों का परिवार

१५ प्रश्न-कालस्स णं भंते ! पिसायिंदस्स पिसायरण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

१५ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ कमला २ कमलप्पभा ३ उप्पला ४ सुदंसणा । तत्थ णं एगमेगाए देवीए एगमेगं देविसहस्सं, सेसं जहा चमरलोगपालाणं । परिवारो तहेव, णवरं कालाए रायहाणीए, कालंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं महाकालस्स वि ।

१६ प्रश्न-सुरूवस्स णं भंते ! भूतिंदस्स भूतरण्णो पुच्छा ।

१६ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ रूववई २ बहुरूवा ३ सुरूवा ४ सुभगा । तत्थ णं एगमेगाए, सेसं जहा कालस्स । एवं पडिरूवस्स वि ।

१७ प्रश्न-पुण्णभद्दस्स णं भंते ! जक्खिंदस्स पुच्छा ।

१७ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ पुण्णा २ बहुपुत्तिया ३ उत्तमा ४ तारया । तत्थ णं एगमेगाए, सेसं जहा कालस्स । एवं माणिभद्दस्स वि ।

१८ प्रश्न-भीमस्स णं भंते ! रक्खसिंदस्स पुच्छा ?

१८ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ पउमा २ पउमावती ३ कणगा ४ रयणप्पभा। तत्थ णं एग-मेगाए, सेसं जहा कालस्स। एवं महाभीमस्स वि।

कठिन शब्दार्थ-पिसाइंदस्स-पिशाचेन्द्र का, भूइंदस्स-भूतेन्द्र का।

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! पिशाचेन्द्र पिशाचराज काल के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

१५ उत्तर-हे आर्यो ! उसके चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं, यथा-कमला, कमलप्रभा, उत्पला और सुदर्शना। इनमें से प्रत्येक देवी के एक एक हजार देवियों का परिवार है। शेष सब वर्णन चमरेन्द्र के लोकपालों के समान जानना चाहिए और परिवार भी उसी के समान जानना चाहिये। परन्तु विशेषता यह है कि इसके काला नाम की राजधानी और काल नाम का सिंहासन है। शेष सब वर्णन पहले के समान जानना चाहिये। इसी प्रकार महाकाल के विषय में भी जानना चाहिये।

१६ प्रश्न-हे भगवन् ! भूतेन्द्र भूतराज सुरूप के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई है ?

१६ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-रूपवती, बहुरूपा, सुरूपा और सुभगा। इन में प्रत्येक देवी के परिवार आदि का वर्णन कालेन्द्र के समान जानना चाहिये। इसी प्रकार प्रतिरूपेन्द्र के विषय में भी जानना चाहिये।

१७ प्रश्न-हे भगवन् ! यक्षेन्द्र यक्षराज पूर्णभद्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

१७ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियां कही हैं। यथा-पूर्णा, बहु-पुत्रिका, उत्तमा और तारका। प्रत्येक देवी के परिवार आदि का वर्णन कालेन्द्र के समान जानना चाहिये। इसी प्रकार माणिभद्र के विषय में भी जानना चाहिये।

१८ प्रश्न-हे भगवन् ! राक्षसेन्द्र राक्षसराज भीम के कितनी अग्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महिषियाँ कही गई है ?

१८ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-पद्मा, पद्मावती, कनका और रत्नप्रभा । प्रत्येक देवी के परिवार आदि का वर्णन कालेन्द्र के समान है और इसी प्रकार महाभीम के विषय में भी जानना चाहिये ।

विवेचन-उपरोक्त सूत्र में व्यन्तर देवों के इन्द्र काल, महाकाल, सुरूप, प्रतिरूप पूर्णभद्र, माणिभद्र, भीम और महाभीम की अग्रमहिषियाँ तथा उनके परिवार आदि का वर्णन किया गया है ।

१९ प्रश्न-किण्णरस्स णं भंते ! पुच्छा ।

१९ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ वडेंसा २ केतुमती ३ रतिसेणा ४ रइप्पिया । तत्थ णं सेसं तं चेव, एवं किंपुरिसस्स वि ।

२० प्रश्न-सप्पुरिसस्स णं पुच्छा ।

२० उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ रोहिणी २ नवमिया ३ हिरी ४ पुप्फवती । तत्थ णं एगमेगाए, सेसं तं चेव, एवं महापुरिसस्स वि ।

२१ प्रश्न-अतिकायस्स णं पुच्छा ।

२१ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ भुयंगा २ भुयगवई ३ महाकच्छा ४ फुडा । तत्थ णं सेसं तं चेव, एवं महाकायस्स वि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२२ प्रश्न-गीयरइस्स णं पुच्छा ।

२२ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ सुघोसा २ विमला ३ सुस्सरा ४ सरस्सई । तत्थ णं सेसं तं चेव । एवं गीयजसस्स वि । सव्वेसिं एएसिं जहा कालस्स णवरं सरिसणामियाओ रायहाणीओ सीहासणाणि य, सेसं तं चेव ।

कठिन-शब्दार्थ—वडेंसा-अवतंसा, फुडा—स्फुटा ।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! किन्नरेन्द्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

१९ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-अवतंसा, केतुमती, रतिसेना और रतिप्रिया । प्रत्येक देवी के परिवार के विषय में पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । इसी प्रकार किम्पुरुषेन्द्र के विषय में भी जानना चाहिये ।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! सत्पुरुषेन्द्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२० उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-रोहिणी, नवमिका, ह्री और पुष्पवती । प्रत्येक देवी के परिवार का वर्णन पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । इसी प्रकार महापुरुषेन्द्र के विषय में भी जानना चाहिये ।

२१ प्रश्न-हे भगवन् ! अतिकायेन्द्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२१ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-भुजंगा, भुजंगवती, महाकच्छा और स्फुटा । प्रत्येक देवी के परिवार का वर्णन पूर्वोक्त रूप से जानना चाहिये । इसी प्रकार महाकायेन्द्र के विषय में भी जानना चाहिये ।

२२ प्रश्न-हे भगवन् ! गीतरतीन्द्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२२ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-सुघोषा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विमला, सुस्वरा और सरस्वती। प्रत्येक देवी के परिवार का वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिए। इसी प्रकार गीतयश इन्द्र के विषय में भी जानना चाहिये। इन सभी इन्द्रों का शेष सब वर्णन कालेन्द्र के समान जानना चाहिये। राजधानियों और सिंहासनों का नाम इन्द्रों के नाम के समान तथा शेष वर्णन पूर्ववत् जानना चहिये।

विवेचन-इस सूत्र में वाणव्यन्तर देवों के इन्द्र-किन्नर, किम्पुरुष, सत्पुरुष, महापुरुष, अतिकाय, महाकाय, गीतरति और गीतयशः-इन आठइन्द्रों की अग्रमहिषियाँ और उन के परिवार का वर्णन किया गया है।

वाणव्यन्तर इन्द्रों के लोकपाल नहीं होते। इसलिए उनका वर्णन नहीं आया है।

ज्योतिषेन्द्र का परिवार

२३ प्रश्न-चंदस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो पुच्छा।

२३ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ चंदप्पभा २ दोसिणाभा ३ अच्चिमाली ४ पभंकरा। एवं जहा जीवाभिगमे जोइसियउद्देसए तहेव सूरस्स वि १ सूरप्पभा २ आयवाभा ३ अच्चिमाली ४ पभंकरा। सेसं तं चेव, जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं।

२४ प्रश्न-इंगालस्स णं भंते ! महग्गहस्स कइ अग्गमहिसीओ पुच्छा।

२४ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ विजया २ वेजयंती ३ जयंती ४ अपराजिया। तत्थ णं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगमेगाए देवीए सेसं तं चेव चंदस्स णवरं इंगालवडेंसए विमाणे, इंगालगंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं वियालगस्स वि। एवं अट्ठासीतीए वि महागहाणं भाणियव्वं, जाव भावकेउस्स, णवरं वडेंसगा सीहासणाणि य सरिसणामगाणि, सेसं तं चेव।

कठिन शब्दार्थ-मेहुणवत्तियं-मैथुन निमित्तक।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन्! ज्योतिषीन्द्र ज्योतिषीराज चन्द्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं?

२३ उत्तर-हे आर्यो! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-चन्द्रप्रभा, ज्योत्स्नाभा, अचिमाली और प्रभंकरा, इत्यादि जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के 'ज्योतिषी' नामक दूसरे उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये। इसी प्रकार सूर्य के विषय में भी जानना चाहिये। सूर्य के चार अग्रमहिषियों के नाम ये हैं-सूर्यप्रभा, आतपाभा अचिमाली, और प्रभंकरा, इत्यादि पूर्वोक्त सब कहना चाहिये, यावत् वे अपनी राजधानी में सिंहासन पर मैथुननिमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं हैं।

२४ प्रश्न-हे भगवन्! अंगार नामक महाग्रह के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं?

२४ उत्तर-हे आर्यो! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-विजया, वैजयन्ती, जयन्ती और अपराजिता। इनकी प्रत्येक देवी के परिवार का वर्णन चन्द्रमा के समान जानना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि इसके विमान का नाम अंगारावतंसक और सिंहासन का नाम अंगारक है। इसी प्रकार व्याल नामक ग्रह के विषय में भी जानना चाहिये। इसी प्रकार ८८ महाग्रहों के विषय में यावत् भावकेतु ग्रह तक जानना चाहिये। परन्तु अवतंसक और सिंहासन का नाम इन्द्र के समान है, शेष वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये।

विवेचन-यहाँ ज्योतिषी देवों के इन्द्र, चन्द्र और सूर्य तथा ८८ महाग्रहों की अग्र-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महिषियाँ आदि का वर्णन दिया गया है। ज्योतिषी इन्द्रों के भी लोकपाल नहीं होते, इसलिए उनका वर्णन नहीं आया है।

२५ प्रश्न-सक्कस्स णं भंते ! देविंदस्स देवरण्णो पुच्छा ?

२५ उत्तर-अज्जो ! अट्ठ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ पउमा २ सिवा ३ सेया ४ अंजू ५ अमला ६ अच्छरा ७ णवमिया ८ रोहिणी। तत्थ णं एगमेगाए देवीए सोलस सोलस देवी सहस्सा परिवारो पण्णत्तो। (प्र०) पभू णं ताओ एगमेगा देवी अण्णाइं सोलस सोलस देविसहस्साइं परिवारं विउव्वित्तए ? (उ०) एवामेव सपुव्वावरेणं अट्ठावीसुत्तरं देविसयसहस्सं परिवारं, सेत्तं तुडिए।

२६ प्रश्न-पभू णं भंते ! सक्के देविंदे देवराया सोहम्मे कप्पे सोहम्मवडेंसए विमाणे सभाए सुहम्माए सक्कंसि सीहासणंसि तुडि-एणं सद्धिं, सेसं जहा चमरस्स, णवरं परिवारो जहा मोउद्देसए।

२७ प्रश्न-सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सोमस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पुच्छा।

२७ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ रोहिणी २ मदणा ३ चित्ता ४ सोमा। तत्थ णं एगमेगा० सेसं जहा चमरलोगपालाणं, णवरं सयंपभे विमाणे, सभाए सुहम्माए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सोमंसि सीहासणंसि, सेसं तं चेव, एवं जाव-वेसमणस्स, णवरं विमाणाइं जहा तइयसए ।

२८ प्रश्न-ईसाणस्स णं भंते ! पुच्छा ।

२८ उत्तर-अज्जो ! अट्ठ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ कण्हा २ कण्हराई ३ रामा ४ रामरक्खिया ५ वसू ६ वसुगुत्ता ७ वसुमित्ता ८ वसुंधरा । तत्थ णं एगमेगाए सेसं जहा सक्कस्स ।

२९ प्रश्न-ईसाणस्स णं भंते ! देविंदस्स सोमस्स महारण्णो कइ अग्गमहिसीओ पुच्छा ।

२९ उत्तर-अज्जो ! चत्तारि अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-१ पुढवी २ राई ३ रयणी ४ विज्जू । तत्थ णं० सेसं जहा सक्कस्स लोगपालाणं, एवं जाव वरुणस्स, णवरं विमाणा जहा चउत्थसए, सेसं तं चेव, जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दसमसए पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ—विउव्वित्तए—वैक्रिय करने के लिये ।

भावार्थ-२५ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२५ उत्तर-हे आर्यो ! आठ अग्रमहिषियाँ कही गई हैं । यथा-पद्मा, शिवा, श्रेया, अञ्जू, अमला, अप्सरा, नवमिका और रोहिणी । इनमें से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रत्येक देवी का सोलह हजार देवियों का परिवार है। इनमें से प्रत्येक देवी, दूसरी सोलह हजार देवियों के परिवार की विकुर्वणा कर सकती है। इसी प्रकार पूर्वापर मिलाकर एकलाख अट्ठाईस हजार देवियों के परिवार की विकुर्वणा कर सकती हैं। यह एक त्रुटिक कहा गया है।

२६ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र, सौधर्म देवलोक के सौधर्मावतंसक विमान में, सुधर्मा सभा में, शक्र नामक सिंहासन पर बैठकर उस त्रुटिक के साथ भोग भोगने में समर्थ है ?

२६ उत्तर-हे आर्यो ! इसका सभी वर्णन चमरेन्द्र के समान जानना चाहिये, परन्तु इसके परिवार का वर्णन तीसरे शतक के प्रथम उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये।

२७ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र के लोकपाल सोम महाराजा के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं।

२७ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही गई हैं। यथा-रोहिणी, मदना, चित्रा और सोमा। इनमें से प्रत्येक देवी के परिवार का वर्णन चमरेन्द्र के लोकपालों के समान जानना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि स्वयंप्रभ नामक विमान में, सुधर्मासभा में सोम नामक सिंहासन पर बैठकर यावत् भोग भोगने में समर्थ नहीं, इत्यादि पूर्ववत् जानना चाहिये। इसी प्रकार यावत् वैश्रमण तक जानना चाहिये, परन्तु उसके विमान आदि का वर्णन तृतीय शतक के सातवें उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये।

२८ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२८ उत्तर-हे आर्यो ! आठ अग्रमहिषियां कही गई हैं। यथा-कृष्णा, कृष्णराजि, रामा, रामरक्षिता, वसु, वसुगुप्ता, वसुमित्रा और वसुन्धरा। इन देवियों के परिवार आदि का वर्णन शक्रेन्द्र के समान जानना चाहिये।

२९ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज ईशान के सोम नामक लोकपाल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के कितनी अग्रमहिषियाँ कही गई हैं ?

२९ उत्तर-हे आर्यो ! चार अग्रमहिषियाँ कही हैं। यथा-पृथ्वी, रात्रि, रजनी और विद्युत्। शेष वर्णन शक्र के लोकपालों के समान है। इसी प्रकार यावत् वरुण तक जानना चाहिये परन्तु विमानों का वर्णन चौथे शतक के पहले दूसरे तीसरे और चौथे उद्देशक के उल्लेखानुसार जानना चाहिये शेष पूर्ववत् यावत् वह मैथुन-निमित्तक भोग भोगने में समर्थ नहीं हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है- ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-वैमानिक देवों में केवल पहले और दूसरे देवलोक तक ही देवियाँ उत्पन्न होती हैं। इसलिये यहाँ पहले और दूसरे देवलोक के इन्द्र तथा उनके लोकपाल आदि की अग्रमहिषियों का वर्णन किया गया है।

॥ दशवें शतक का पाँचवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १० उद्देशक ६

शक्रेन्द्र की सभा एवं ऋद्धि

१ प्रश्न-कहि णं भंते ! सक्कस्स देविंदस्स देवरण्णो सभा सुहम्मा पण्णत्ता ?

१ उत्तर-गोयमा ! जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स दाहिणेणं इमीसे रयणप्पभाए एवं जहा रायप्पसेणइज्जे, जाव पंच वडेंसगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पण्णत्ता, तं जहा-१ असोगवडेंसए, जाव मज्झे ५ सोहम्मवडेंसए। से णं सोहम्मवडेंसए महाविमाणे अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविक्खंभेणं।

"एवं जह सूरियाभे तहेव माणं तहेव उववाओ।
सक्कस्स य अभिसेओ तहेव जह सूरियाभस्स ॥१॥
अलंकारअच्चणिया तहेव जाव आयरक्ख त्ति।"

दो सागरोवमाइं ठिई।

२ प्रश्न-सक्केणं भंते ! देविंदे देवराया केमहिड्ढिए, जाव केमहासोक्खे।

२ उत्तर-गोयमा ! महिड्ढिए जाव महासोक्खे। से णं तत्थ बत्तीसाए विमाणावाससयसहस्साणं जाव विहरइ, एवं महिड्ढिए जाव महासोक्खे सक्के देविंदे देवराया।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दसमसए छट्ठओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-वडेंसगा-अवतंसक-महल, महासोक्खे-महान् सुखवाला।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र की सुधर्मा सभा कहाँ है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! इस जम्बूद्वीप के मेरुपर्वत से दक्षिण दिशा में, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के बहुसम रमणीय भूमि-भाग से बहुत कोटाकोटि योजन दूर ऊँचाई में, सौधर्म नामक देवलोक में सुधर्मा सभा है। इत्यादि 'राजप्रश्नीय'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सूत्र के अनुसार यावत् पाँच अवतंसक विमान कहे गये हैं। यथा-अशोकावतंसक, यावत् मध्य में सौधर्मावतंसक विमान है। उसकी लम्बाई और चौड़ाई साढ़े बारह लाख योजन है। शक्र का उपपात, अभिषेक, अलङ्कार और अर्चनिका यावत् आत्मरक्षक इत्यादि सारा वर्णन सूर्याभ देव के समान जानना चाहिये, किन्तु प्रमाण जो शक्रेन्द्र का है वही कहना चाहिये। शक्रेन्द्र की स्थिति दो सागरोपम की है।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! देवेन्द्र देवराज शक्र कितना महाऋद्धिशाली और कितना महासुखी है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! वह महाऋद्धिशाली यावत् महासुखी है। वह बत्तीस लाख विमानों का स्वामी है, यावत् विचरता है। देवेन्द्र देवराज शक्र इस प्रकार की महाऋद्धि और महासुखवाला है।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-सूर्याभ देव का वर्णन राजप्रश्नीय सूत्र में बहुत विस्तार के साथ किया गया है। यहाँ शक्रेन्द्र के उपपात आदि के वर्णन के लिये उसी का अतिदेश किया गया है। अतः इसका वर्णन सूर्याभ देव के समान जानना चाहिये।

॥ दसवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १० उद्देशक ७-३४

एकोरुक आदि अन्तर द्वीप

१ प्रश्न-कहि णं भंते ! उत्तरिल्लाणं एगोरुयमणुस्साणं एगोरुयदीवे णामं दीवे पण्णत्ते ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर-एवं जहा जीवाभिगमे तहेव णिरवसेसं, जाव सुद्ध-दंतदीवो त्ति। एए अट्ठावीसं उद्देसगा भाणियव्वा।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ। ❀

॥ दसमसए सत्तमादि चोत्तीसइमपज्जंता अट्ठावीसं उद्देसा समत्ता ॥

॥ दसमं सयं समत्तं ॥

कठिन शब्दार्थ-कहिणं-कहाँ।

भावार्थ-१ **प्रश्न**-हे भगवन् ! उत्तर दिशा में रहने वाले एकोरुक मनुष्यों का एकोरुक नामक द्वीप कहाँ है ?

१ **उत्तर**-हे गौतम ! एकोरुक द्वीप से लगाकर यावत् शुद्धदन्त द्वीप तक समस्त अधिकार जीवाभिगम सूत्र में कहे अनुसार कहना चाहिये। प्रत्येक द्वीप के विषय में एक-एक उद्देशक है। इस प्रकार अट्ठाईस द्वीपों के अट्ठाईस उद्देशक होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-दक्षिण दिशा में अट्ठाईस अन्तरद्वीप हैं और इसी प्रकार उत्तर दिशा में भी अट्ठाईस अन्तरद्वीप हैं। दक्षिण दिशा के अन्तरद्वीपों का वर्णन पहले नौवें शतक में हो गया है। उसी के अनुसार उत्तर दिशा के अन्तरद्वीपों का वर्णन भी जानना चाहिये। इन सब के विस्तृत वर्णन के लिये जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के पहले उद्देशक का अतिदेश किया गया है।

॥ दसवें शतक के ७ से ३४ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

॥ दसवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ११

१—उप्पल सालु पलासे कुंभी नाली य पउम कण्णिय ।
णलिण सिव लोग काला-लंभिय दस दो य एक्कारे ॥

भावार्थ—१ ग्यारहवें शतक में बारह उद्देशक हैं। यथा—१ उत्पल, २ शालूक, ३ पलाश, ४ कुम्भी, ५ नाडीक, ६ पद्म, ७ कर्णिका, ८ नलिन, ९ शिवराजर्षि, १० लोक, ११ काल और १२ आलभिका ।

उद्देशक १

उत्पल के जीव

२—तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी—

प्रश्न—उप्पले णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?

२ उत्तर—गोयमा ! एगजीवे, णो अणेगजीवे । तेण परं जे अण्णे जीवा उववज्जंति तेणं णो एगजीवा अणेगजीवे ।

३ प्रश्न—ते णं भंते ! जीवा कओहिंतो उववज्जंति ? किं णेरइए-हिंतो उववज्जंति, तिरि० मणु० देवेहिंतो उववज्जंति ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइएहिंतो उववज्जंति, तिरिक्ख-जोणिएहिंतो वि उववज्जंति मणुस्सेहिंतो० देवेहिंतो वि उववज्जंति। एवं उववाओ भाणियव्वो जहा वक्कंतीए वणस्सइकाइयाणं जाव ईसाणेति।

४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा एगसमए णं केवइआ उववज्जंति ?

४ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा उववज्जंति।

५ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा समए समए अवहीरमाणा अव-हीरमाणा केवइकालेणं अवहीरंति ?

५ उत्तर-गोयमा ! ते णं असंखेज्जा समए समए अवहीरमाणा अवहीरमाणा असंखेज्जाहिं उस्सप्पिणिओस्सप्पिणिहिं अवहीरंति, णो चेव णं अवहिया सिया।

६ प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं केमहालिआ सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?

६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्को-सेणं साइरेगं जोयणसहस्सं।

कठिन शब्दार्थ-कओहिंतो-कहां से, **केवइआ**-कितने, **अवहीरमाणा**-अपहृत किये जाते हुए, **केमहालिआ**-कितनी बड़ी।

भावार्थ-२ उस काल उस समय में, राजगृह नगर में पर्युपासना करते हुए गौतम स्वामी यावत् इस प्रकार बोले-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-हे भगवन् ! एक पत्ते वाला उत्पल (कमल) एक जीव वाला है, या अनेक जीवों वाला ?

२ उत्तर-हे गौतम ! एक पत्र वाला उत्पल एक जीव वाला है, अनेक जीवों वाला नहीं। जब उस उत्पल में दूसरे जीव (जीवाश्रित पत्ते आदि अवयव) उत्पन्न होते हैं, तब वह एक जीव वाला नहीं रह कर अनेक जीव वाला होता है।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! उत्पल में वे जीव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं ? नैरयिक से, तिर्यञ्च से, मनुष्य से या देव से आकर उत्पन्न होते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! वे जीव नरक से आकर उत्पन्न नहीं होते, वे तिर्यञ्च से, मनुष्य से या देव से आकर उत्पन्न होते हैं। यहां प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्तिपद के 'वनस्पतिकायिक जीवों में यावत् ईशान देवलोक तक के जीवों का उपपात होता है'--तक कहना चाहिये।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! उत्पल में वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! वे जीव, एक समय में जघन्य एक दो या तीन और उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! उन उत्पल के जीवों को प्रतिसमय निकाला जाय तो कितने काल में वे पूरे निकाले जा सकते हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! उत्पल के उन असंख्यात जीवों में से प्रतिसमय एक-एक जीव निकाला जाय, तो असंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल बीत जाय तो भी वे सम्पूर्ण रूप से नहीं निकाले जा सकते। इस प्रकार किसी ने किया नहीं और कर भी नहीं सकता।

६ उत्तर-हे भगवन् ! उन उत्पल के जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी होती है ?

६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट कुछ अधिक एक हजार योजन होती है।

विवेचन-जब उत्पल एक पत्र वाला होता है, तब उसकी वह अवस्था किशलय

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवस्था से ऊपर की होती है। जब उसके अधिक पत्ते उत्पन्न होते हैं, तब वह अनेक जीव वाला हो जाता है। उसमें वे जीव नरक गति से आकर उत्पन्न नहीं होते, शेष तीन गतियों से आकर उत्पन्न होते हैं। वे एक समय में जघन्य एक दो या तीन, उत्कृष्ट संख्यात या असंख्यात उत्पन्न होते हैं। उन असंख्यातों का परिमाण बताने के लिये कहा गया है कि यदि उनमें से प्रति समय एक-एक जीव निकाला जाय तो असंख्यात उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी पूरी हो जाने पर भी वे निर्लेप नहीं हो सकते, अर्थात् सम्पूर्ण रूप से नहीं निकाले जा सकते। किसी ने ऐसा कभी किया नहीं और कर भी नहीं सकता, क्योंकि इतने समय तक न तो वे वनस्पति के जीव रहते हैं और न गणना करने वाला ही रहता है। इन जीवों के शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्येय भाग जितनी और उत्कृष्ट कुछ अधिक हजार योजन की होती है।

यहां टीका में प्रथम उद्देशक के अर्थ संग्रह की गाथाएँ दी गई हैं। वे इस प्रकार हैं-

उववाओ परिमाणं, अवहारुच्चत्त बंध वेदे य।
उदए उदीरणाए, लेस्सा दिट्ठी य णाणे य ॥ १ ॥
जोगुवओगे वण्ण रसमाई, ऊसासगे य आहारे।
विरई किरिया बंधे, सण्ण कसायित्थि बंधे य ॥ २ ॥
सण्णिंदिय अणुबंधे, संवेहाहार ठिइ समुग्घाए।
चयणं मूलादीसु य, उववाओ सव्व जीवाणं ॥ ३ ॥

अर्थ-१ उपपात, २ परिमाण, ३ अपहार, ४ ऊँचाई-अवगाहना ५ बंध ६ वेद ७ उदय ८ उदीरणा ९ लेश्या १० दृष्टि ११ ज्ञान १२ योग १३ उपयोग १४ वर्ण रसादि १५ उच्छ्वास १६ आहार १७ विरति १८ क्रिया १९ बंधक २० संज्ञा २१ कषाय २२ स्त्री वेदादि बंध २३ संज्ञी २४ इन्द्रिय २५ अनुबंध २६ संवेध २७ आहार २८ स्थिति २९ समुद्घात ३० च्यवन और ३१ सभी जीवों का मूलादि में उपपात।

इन द्वारों में से उपपात, परिमाण, अपहार और ऊँचाई अर्थात् शरीर की अवगाहना-इन चार द्वारों का वर्णन ऊपर किया गया है, शेष द्वारों का वर्णन आगे किया जायगा।

७ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं बंधगा अबंधगा ?

७ उत्तर-गोयमा ! णो अबंधगा, बंधए वा, बंधगा वा । एवं जाव अंतराइयस्स ।

८ प्रश्न-णवरं आउयस्स पुच्छा ।

८ उत्तर-गोयमा ! १ बंधए वा, २ अबंधए वा, ३ बंधगा वा, ४ अबंधगा वा; ५ अहवा बंधए य अबंधए य ६ अहवा बंधए य अबंधगा य, ७ अहवा बंधगा य अबंधए य, ८ अहवा बंधगा य अबंधगा य एते अट्ठ भंगा ।

९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं वेयगा अवेयगा ?

९ उत्तर-गोयमा ! णो अवेयगा, वेयए वा वेयगा वा । एवं जाव अंतराइयस्स ।

१० प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सायावेयगा असायावेयगा ?

१० उत्तर-गोयमा ! सायावेयए वा, असायावेयए वा अट्ठ भंगा ।

११ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं उदई अणुदई ?

११ उत्तर-गोयमा ! णो अणुदई, उदई वा उदइणो वा । एवं जाव अंतराइयस्स ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२ प्रश्न--ते णं भंते ! जीवा णाणावरणिज्जस्स कम्मस्स किं उदीरगा अणुदीरगा ?

१२ उत्तर-गोयमा ! णो अणुदीरगा, उदीरए वा उदीरगा वा। एवं जाव अंतराइयस्स। णवरं वेयणिज्जा उएसु अट्ठ भंगा।

कठिन शब्दार्थ-सायावेयगा-सातावेदक-सुख का अनुभव करने वाले।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव, ज्ञानावरणीय कर्म के बंधक हैं या अबन्धक ?

७ उत्तर-हे गौतम ! वे ज्ञानावरणीय कर्म के अबन्धक नहीं, बंधक हैं। एक जीव हो, तो एक बंधक है और अनेक जीव हों, तो अनेक बंधक हैं। इस प्रकार आयुष्य को छोड़कर अन्तराय कर्म तक समझना चाहिये।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! वे जीव, आयुष्यकर्म के बन्धक हैं या अबन्धक ?

८ उत्तर-हे गौतम ! उत्पल का एक जीव बंधक है, २ एक जीव अबंधक है, ३ अनेक जीव बंधक हैं, ४ अनेक जीव अबन्धक हैं। ५ अथवा एक जीव बन्धक और एक जीव अबन्धक है, ६ अथवा एक बन्धक और अनेक अबन्धक हैं, ७ अथवा अनेक बन्धक और एक अबन्धक हैं, ८ अथवा अनेक बन्धक और अनेक अबन्धक हैं,-इस प्रकार ये आठ भंग होते हैं।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव ज्ञानावरणीय कर्म के वेदक हैं, या अवेदक हैं ?

९ उत्तर-हे गौतम ! वे अवेदक नहीं, वेदक हैं। एक जीव हो तो एक जीव वेदक है और अनेक जीव हो, तो अनेक जीव वेदक हैं। इसी प्रकार यावत् अन्तराय कर्म तक जानना चाहिये।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव साता-वेदक हैं या असाता वेदक हैं ?

१० उत्तर-हे गौतम ! एक जीव साता-वेदक है या एक जीव असाता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेदक है। इत्यादि पूर्वोक्त आठ भंग जानने चाहिये।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव ज्ञानावरणीय-कर्म के उदय वाले हैं या अनुदय वाले ?

११ उत्तर-हे गौतम ! वे जीव, ज्ञानावरणीय-कर्म के अनुदय वाले नहीं, परन्तु एक जीव हो तो एक और अनेक जीव हों तो अनेक (-सभी जीव) उदय वाले हैं। इसी प्रकार यावत् अन्तराय-कर्म तक जानना चाहिये।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव, ज्ञानावरणीय-कर्म के उदीरक हैं या अनुदीरक ?

उत्तर-हे गौतम ! वे अनुदीरक नहीं, परन्तु एक जीव हो तो एक और अनेक जीव हों तो अनेक जीव उदीरक हैं। इसी प्रकार यावत् अन्तराय-कर्म तक जानना चाहिये। परन्तु इतनी विशेषता है कि वेदनीय-कर्म और आयुष्य-कर्म में पूर्वोक्त आठ भंग कहने चाहिये।

विवेचन-उत्पल के प्रारम्भ में जब वह एक ही पत्ते वाला होता है, तब एक ही जीव होने से एक जीव ज्ञानावरणीय आदि कर्मों का बन्धक होता है, परन्तु जब वह अनेक पत्तों वाला हो जाता हैं तब उसमें अनेक जीव होने से अनेक जीव बन्धक होते हैं। आयुष्य-कर्म तो सम्पूर्ण जीवन में एक ही बार बन्धता है, उस बन्धकाल के अतिरिक्त जीव आयुष्य-कर्म का अबन्धक होता है। इसलिये आयुष्य-कर्म के बन्धक और अबन्धक की अपेक्षा आठ भंग होते हैं अर्थात् असंयोगी चार और द्विक-संयोगी चार भंग होते हैं।

वेदक द्वार में भी एकवचन और बहुवचन की अपेक्षा दो भंग होते हैं। परन्तु साता-वेदनीय और असातावेदनीय की अपेक्षा पूर्वोक्त आठ भंग होते हैं। उदीरणा द्वार में छह कर्मों में दो भंग होते हैं और वेदनीय तथा आयुष्य-कर्म के पूर्वोक्त आठ भंग होते हैं।

१३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेसा णीललेसा काउलेसा तेउलेसा ?

१३ उत्तर-गोयमा ! कण्हलेसे वा जाव तेउलेसे वा कण्हलेस्सा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वा णीललेस्सा वा काउलेस्सा वा तेउलेस्सा वा। अहवा कण्हलेसे य णीललेस्से य, एवं एए दुयासंजोग-तियासंजोग-चउक्कसंजोगेणं असीती भंगा भवंति।

१४ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा किं सम्मदिट्ठी मिच्छादिट्ठी सम्मामिच्छादिट्ठी ?

१४ उत्तर–गोयमा ! णो सम्मदिट्ठी णो सम्मामिच्छादिट्ठी, मिच्छादिट्ठी वा मिच्छादिट्ठीणो वा।

१५ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा किं णाणी अण्णाणी ?

१५ उत्तर–गोयमा ! णो णाणी, अण्णाणी वा अण्णाणिणो वा।

१६ प्रश्न–ते णं भंते ! जीवा किं मणजोगी, वयजोगी, कायजोगी ?

१६ उत्तर–गोयमा ! णो मणजोगी, णो वयजोगी, कायजोगी वा, कायजोगिणो वा।

कठिन शब्दार्थ–असीती–अस्सी।

भावार्थ–१३ प्रश्न–हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव, कृष्ण-लेश्या वाले, नील-लेश्या वाले, कापोत-लेश्या वाले या तेजो-लेश्या वाले होते हैं ?

१३ उत्तर–हे गौतम ! एक जीव कृष्ण-लेश्या वाला यावत् एक जीव तेजो-लेश्या वाला होता है। अथवा अनेक जीव कृष्ण-लेश्या वाले या अनेक जीव नील-लेश्या वाले, या अनेक जीव कापोत-लेश्या वाले अनेक जीव तेजो-लेश्या

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाले होते हैं। अथवा एक जीव कृष्णलेश्या वाला और एक जीव नीललेश्या वाला होता है। इस प्रकार द्विक संयोगी, त्रिकसंयोगी और चतुःसंयोगी सब मिलकर अस्सी भंग होते हैं।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव सम्यग्दृष्टि हैं, मिथ्यादृष्टि हैं अथवा सम्यग्मिथ्यादृष्टि हैं ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! वे सम्यग्दृष्टि नहीं, सम्यग्मिथ्यादृष्टि भी नहीं, वे एक हों या अनेक, सभी जीव मिथ्यादृष्टि ही हैं।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव ज्ञानी हैं, अथवा अज्ञानी ?

१५ उत्तर-हे गौतम ! वे ज्ञानी नहीं, परन्तु एक हो या अनेक, सभी जीव-अज्ञानी हैं।

१६ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव मनयोगी, वचन-योगी और काय-योगी हैं ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! वे मन योगी नहीं, वचन योगी भी नहीं, वे एक हो या अनेक-सभी जीव काययोगी हैं।

विवेचन-उत्पल वनस्पतिकायिक है, इसलिये उसमें पहले की चार लेश्याएँ पाई जाती हैं। एक संयोगी एक जीव के चार और अनेक जीवों के चार, ये एक संयोगी (असंयोगी) आठ भंग होते हैं। द्विक-संयोगी में एक और अनेक की चतुर्भंगी होती है। कृष्णादि चार लेश्याओं के छह द्विक-संयोग होते है। इन छह को पूर्वोक्त चतुर्भंगी से गुणा करने पर चौवीस भंग होते हैं। चार लेश्या के त्रिकसंयोगी आठ विकल्प होते हैं। इनको पूर्वोक्त चतुर्भंगी के साथ गुणा करने से त्रिक-संयोगी बत्तीस भंग होते हैं। चतुःसंयोगी सोलह भंग होते हैं। ये सब मिलकर अस्सी भंग होते हैं। वे इस प्रकार हैं—

असंयोगी आठ भंग--

१ कृष्ण का एक, २ नील का एक, ३ कापोत का एक, ४ तेजो का एक,
५ कृष्ण के बहुत, ६ नील के बहुत, ७ कापोत के बहुत और ८ तेजो के बहुत,

द्विक संयोगी २४ भंग

१ कृष्ण का एक, नील का एक।
२ कृष्ण का एक, नील के बहुत।
३ कृष्ण के बहुत, नील का एक।
४ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ कृष्ण का एक, कापोत का एक ।
६ कृष्ण का एक, कापोत के बहुत ।
७ कृष्ण के बहुत, कापोत का एक ।
८ कृष्ण के बहुत, कापोत के बहुत ।
९ कृष्ण का एक, तेजो का एक ।
१० कृष्ण का एक, तेजो के बहुत ।
११ कृष्ण के बहुत, तेजो का एक ।
१२ कृष्ण के बहुत, तेजो के बहुत ।
१३ नील का एक, कापोत का एक ।
१४ नील का एक, कापोत के बहुत ।
१५ नील के बहुत, कापोत का एक ।
१६ नील के बहुत, कापोत के बहुत ।
१७ नील का एक, तेजो का एक ।
१८ नील का एक, तेजो के बहुत ।
१९ नील के बहुत, तेजो का एक ।
२० नील के बहुत, तेजो के बहुत ।
२१ कापोत का एक, तेजो का एक ।
२२ कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
२३ कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
२४ कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।

त्रिक-संयोगी ३२ भंग—

१ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत का एक ।
२ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत के बहुत ।
३ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत का एक ।
४ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत के बहुत ।
५ कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत का एक ।
६ कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत के बहुत ।
७ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत का एक ।
८ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत के बहुत ।
९ कृष्ण का एक, नील का एक, तेजो का एक ।
१० कृष्ण का एक, नील का एक, तेजो के बहुत ।
११ कृष्ण का एक, नील के बहुत, तेजो का एक ।
१२ कृष्ण का एक, नील के बहुत, तेजो का बहुत ।
१३ कृष्ण के बहुत, नील का एक, तेजो का एक ।
१४ कृष्ण के बहुत, नील का एक, तेजो के बहुत ।
१५ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, तेजो का एक ।
१६ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, तेजो के बहुत ।
१७ कृष्ण का एक, कापोत का एक, तेजो का एक ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ कृष्ण का एक, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
१९ कृष्ण का एक, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
२० कृष्ण का एक, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।
२१ कृष्ण के बहुत, कापोत का एक, तेजो का एक ।
२२ कृष्ण के बहुत, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
२३ कृष्ण के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
२४ कृष्ण के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।
२५ नील का एक, कापोत का एक, तेजो का एक ।
२६ नील का एक, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
२७ नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
२८ नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।
२९ नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो का एक ।
३० नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
३१ नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
३२ नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।

चतुःसंयोगी १६ भंग—

१ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत का एक, तेजो का एक ।
२ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
३ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
४ कृष्ण का एक, नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।
५ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो का एक ।
६ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
७ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
८ कृष्ण का एक, नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।
९ कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत का एक, तेजो का एक ।
१० कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
११ कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
१२ कृष्ण के बहुत, नील का एक, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो का एक ।
१४ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत का एक, तेजो के बहुत ।
१५ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो का एक ।
१६ कृष्ण के बहुत, नील के बहुत, कापोत के बहुत, तेजो के बहुत ।

दृष्टिद्वार, ज्ञान द्वार और योग द्वार का विषय स्पष्ट है। उत्पल के जीव एकान्त मिथ्यादृष्टि और अज्ञानी हैं। वे एकेन्द्रिय हैं, इसलिये उनके केवल एक काययोग ही है, मन योग और वचन योग नहीं हैं।

१७ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सागारोवउत्ता, अणागारोवउत्ता ?

१७ उत्तर-गोयमा ! सागारोवउत्ते वा, अणागारोवउत्ते वा अट्ठ भंगा ।

१८ प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं सरीरगा कइवण्णा, कइगंधा, कइरसा, कइफासा पण्णत्ता ?

१८ उत्तर-गोयमा ! पंचवण्णा पंचरसा दुगंधा अट्ठफासा पण्णत्ता । ते पुण अप्पणा अवण्णा अगंधा अरसा अफासा पण्णत्ता ।

१९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं उस्सासगा णिस्सासगा णोउस्सासणिस्सासगा ?

१९ उत्तर-गोयमा ! उस्सासए वा णिस्सासए वा णोउस्सासणिस्सासए वा; उस्सासगा वा णिस्सासगा वा णोउस्सासणिस्सा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मगा वा, अहवा उस्सासए य णिस्सासए य, अहवा उस्सासए य णोउस्सासणिस्सासए य, अहवा णिस्सासए य णोउस्सासणिस्सासए य; अहवा उस्सासए य णिस्सासए य णोउस्सासणिस्सासए य। अट्ठ भंगा। एए छव्वीसं भंगा भवंति।

२० प्रश्न-ते णं भंते! जीवा किं आहारगा अणाहारगा?

२० उत्तर-गोयमा! णो अणाहारगा, आहारए वा, अणाहारए वा एवं अट्ठ भंगा।

कठिन शब्दार्थ-सागारोवउत्ता-साकारोपयुक्त-ज्ञानोपयोग सहित, अणागारोवउत्ता-अनाकारोपयुक्त-दर्शनोपयोग सहित।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन्! वे उत्पल के जीव साकारोपयोग (ज्ञानोपयोग) वाले हैं या अनाकारोपयोग (दर्शनोपयोग) वाले हैं?

१७ उत्तर-हे गौतम! एक जीव साकारोपयोग वाला है अथवा एक जीव अनाकारोपयोग वाला है। इत्यादि पूर्वोक्त आठ भंग कहना चाहिये।

१८ प्रश्न-हे भगवन्! उन उत्पल के जीवों का शरीर कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला है?

१८ उत्तर-हे गौतम! पाँच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाला है। जीव स्वयं वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श रहित है।

१९ प्रश्न-हे भगवन्! वे उत्पल के जीव उच्छ्वासक हैं, निःश्वासक हैं, या अनुच्छ्वासकनिश्वासक हैं?

१९ उत्तर-हे गौतम! १ एक जीव उच्छ्वासक है, या २ एक जीव निश्वासक है, ३ या एक जीव अनुच्छ्वासकनिश्वासक है, ४ या अनेक जीव उच्छ्वासक हैं, ५ या अनेक जीव निःश्वासक हैं, ६ या अनेक जीव अनुच्छ्वासकनिश्वासक हैं, (७-१०) अथवा एक उच्छ्वासक और एक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निश्वासक है, इत्यादि (११-१४) अथवा एक उच्छ्वासक और एक अनुच्छ्वासकनिश्वासक है इत्यादि (१५-१८) अथवा एक निःश्वासक और एक अनुच्छ्वासकनिश्वासक है, इत्यादि। (१९-२६) अथवा एक उच्छ्वासक, एक निश्वासक और एक अनुच्छ्वासकनिश्वासक है, इत्यादि आठ भंग होते हैं। ये सब मिलकर छब्बीस भंग हो जाते हैं।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव आहारक है या अनाहारक ?

२० उत्तर-हे गौतम ! वे सब अनाहारक नहीं, किन्तु कोई एक जीव आहारक है अथवा कोई एक जीव अनाहारक है, इत्यादि आठ भंग कहने चाहिये।

विवेचन-पाँच ज्ञान और तीन अज्ञान को 'साकारोपयोग' कहते हैं और चार दर्शन को 'अनाकारोपयोग' कहते हैं।

उत्पल के शरीर वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं, किंतु वे जीव वर्णादि से रहित हैं, क्योंकि जीव तो अमूर्त हैं।

अपर्याप्त अवस्था में जीव अनुच्छ्वासकनिश्वासक होता है। उच्छ्वासकनिश्वासक द्वार के छब्बीस भंग बनते हैं। असंयोगी एक और अनेक के योग में छह भंग बनते हैं। द्विक-संयोगी बारह और त्रिक-संयोगी आठ भंग बनते हैं। वे इस प्रकार हैं-

असंयोगी ६ भंग—

१ उच्छ्वासक एक।	२ निःश्वासक एक।	३ नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक।
४ उच्छ्वासक बहुत।	५ निःश्वासक बहुत।	६ नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत।

द्विक संयोगी १२ भंग—

१ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक एक।	७ उच्छ्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक।
२ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक बहुत।	८ उच्छ्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत।
३ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक एक।	९ निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक।
४ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक बहुत।	१० निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत।
५ " एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक।	११ " बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक।
६ " एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत।	१२ " बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

त्रिकसंयोगी ८ भंग-

१ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक ।
२ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत ।
३ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक ।
४ उच्छ्वासक एक, निःश्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत ।
५ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक ।
६ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक एक, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत ।
७ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक एक ।
८ उच्छ्वासक बहुत, निःश्वासक बहुत, नोउच्छ्वासकनिःश्वासक बहुत ।

आहारक द्वार के विषय में यह समझना चाहिये कि विग्रह गति में जीव अनाहारक होता है और शेष समय में आहारक होता है, इसलिये आहारक अनाहारक के आठ भंग कहे गये हैं ।

२१ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं विरया अविरया विरयाविरया ?

२१ उत्तर-गोयमा ! णो विरया, णो विरयाविरया, अविरिए वा अविरया वा ।

२२ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सकिरिया अकिरिया ?

२२ उत्तर-गोयमा ! णो अकिरिया, सकिरिए वा सकिरिया वा ।

२३ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सत्तविहबंधगा अट्ठविहबंधगा ?

२३ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहबंधए वा अट्ठविहबंधए वा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठ भंगा ।

२४ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं आहारसण्णोवउत्ता भयसण्णोवउत्ता मेहुणसण्णोवउत्ता, परिग्गहसण्णोवउत्ता ?

२४ उत्तर-गोयमा ! आहारसण्णोवउत्ता वा असीती भंगा ।

२५ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं कोहकसायी माणकसायी मायाकसायी लोभकसायी ?

२५ उत्तर-असीती भंगा ।

२६ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं इत्थिवेयगा पुरिसवेयगा णपुंसगवेयगा ?

२६ उत्तर-गोयमा ! णो इत्थिवेयगा णो पुरिसवेयगा, णपुंसगवेयए वा णपुंसगवेयगा वा ।

२७ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं इत्थिवेयबंधगा पुरिसवेयबंधगा णपुंसगवेयबंधगा ?

२७ उत्तर-गोयमा ! इत्थिवेयबंधए वा पुरिसवेयबंधए वा णपुंसगवेयबंधए वा छव्वीसं भंगा ।

२८ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सण्णी असण्णी ?

२८ उत्तर-गोयमा ! णो सण्णी, असण्णी वा असण्णीणो वा ।

२९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किं सइंदिया अणिंदिया ?

२९ उत्तर-गोयमा ! णो अणिंदिया, सइंदिए वा सइंदिया वा ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ--विरया--विरत ।

भावार्थ--२१ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव सर्वविरत हैं, अविरत हैं, या विरताविरत हैं ?

२१ उत्तर--हे गौतम ! वे सर्वविरत नहीं और विरताविरत भी नहीं, किन्तु एक जीव अथवा अनेक जीव अविरत ही हैं ।

२२ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव सक्रिय हैं, या अक्रिय ?

२२ उत्तर--हे गौतम ! वे एक हो या अनेक, अक्रिय नहीं, सक्रिय हैं ।

२३ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव सप्तविध बन्धक हैं, या अष्टविध बन्धक ?

२३ उत्तर--हे गौतम ! वे जीव सप्तविध बन्धक हैं अथवा अष्टविध बन्धक हैं । यहाँ पूर्वोक्त आठ भंग कहना चाहिये ।

२४ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव, आहार संज्ञा के उपयोग वाले, भयसंज्ञा के उपयोग वाले, मैथुन संज्ञा के उपयोग वाले और परिग्रह संज्ञा के उपयोग वाले हैं ?

२४ उत्तर--हे गौतम ! वे आहारसंज्ञा के उपयोग वाले हैं, इत्यादि लेश्याद्वार के समान अस्सी भंग कहना चाहिये ।

२५ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव, क्रोध कषायी, मान कषायी, माया कषायी और लोभ कषायी हैं ?

२५ उत्तर--हे गौतम ! यहाँ भी पूर्वोक्त अस्सी भंग कहना चाहिये ।

२६ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव स्त्रीवेद वाले, पुरुषवेद वाले और नपुंसक वेद वाले हैं ।

२६ उत्तर--हे गौतम ! वे स्त्री वेद वाले नहीं, पुरुष वेद वाले भी नहीं, परन्तु एक जीव हो या अनेक, सभी नपुंसक वेद वाले हैं ।

२७ प्रश्न--हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव स्त्री-वेद के बन्धक, पुरुषवेद बन्धक और नपुंसक-वेद के बन्धक हैं ?

२७ उत्तर--हे गौतम ! वे स्त्री-वेद बन्धक, पुरुष वेद-बन्धक और नपुं-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सक-वेद बन्धक हैं। यहाँ उच्छ्वास द्वार के अनुसार छब्बीस भंग कहना चाहिये।

२८ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव संज्ञी हैं या असंज्ञी ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! वे संज्ञी नहीं, किन्तु एक हों या अनेक जीव, वे असंज्ञी ही हैं।

२९ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव सेन्द्रिय हैं या अनिन्द्रिय ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! वे अनिन्द्रिय नहीं, किन्तु एक जीव सेन्द्रिय है अथवा अनेक जीव सेन्द्रिय हैं।

विवेचन-यहाँ विरति द्वार, क्रिया द्वार, बन्धक द्वार, संज्ञा द्वार, कषाय द्वार, वेद द्वार वेदबन्ध द्वार, संज्ञी द्वार और इन्द्रिय द्वार, का कथन किया गया है।

३० प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवेत्ति कालओ केवच्चिरं होइ ?

३० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं उक्कोसेणं असंखेज्ज कालं।

३१ प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवे पुढविजीवे, पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवइयं कालं सेवेज्जा ? केवइयं कालं गइरागइं करेज्जा ?

३१ उत्तर-गोयमा ! भवादेसेणं जहण्णेणं दो भवग्गहणाइं, उक्कोसेणं असंखेज्जाइं भवग्गहणाइं। कालादेसेणं जहण्णेणं दो अंतोमुहुत्ता, उक्कोसेणं असंखेज्जं कालं, एवइयं कालं सेवेज्जा एवइयं कालं गइरागइं करेज्जा।

३२ प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवे, आउजीवे०?

३२ उत्तर-एवं चेव, एवं जहा पुढविजीवे भणिए तहा जाव

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

वाउजीवे भाणियव्वे ।

३३ प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवे से वणस्सइजीवे, से पुणरवि उप्पलजीवेत्ति केवइयं कालं सेवेज्जा-केवइयं कालं गइरागइं करेज्जा ?

३३ उत्तर-गोयमा ! भवादेसेणं जहण्णेणं दो भवग्गहणाइं उक्कोसेणं अणंताइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहण्णेणं दो अंतोमुहुत्ता, उक्कोसेणं अणंतं कालं तरुकालं, एवइयं कालं सेवेज्जा, एवइयं कालं गइरागइं करेज्जा ।

३४ प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवे बेइंदियजीवे पुणरवि उप्पलजीवे त्ति केवइयं कालं सेवेज्जा-केवइयं कालं गइरागइं करेज्जा ?

३४ उत्तर-गोयमा ! भवादेसेणं जहण्णेणं दो भवग्गहणाइं, उक्कोसेणं संखेज्जाइं भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहण्णेणं दो अंतोमुहुत्ता, उक्कोसेणं संखेज्जं कालं, एवइयं कालं सेवेज्जा एवइयं कालं गइरागइं करेज्जा । एवं तेइंदियजीवे, एवं चउरिंदियजीवे वि ।

३५ प्रश्न-से णं भंते ! उप्पलजीवे पंचेंदियतिरिक्खजोणियजीवे पुणरवि उप्पलजीवेत्ति पुच्छा ।

३५ उत्तर-गोयमा ! भवादेसेणं जहण्णेणं दो भवग्गहणाइं, उक्कोसेणं अट्ठ भवग्गहणाइं, कालादेसेणं जहण्णेणं दो अंतोमुहुत्ताइं, उक्कोसेणं पुव्वकोडिपुहुत्तं, एवइयं कालं सेवेज्जा-एवइयं कालं गइरागइं करेज्जा । एवं मणुस्सेण वि समं जाव एवइयं कालं

गइरागइं करेज्जा ।

कठिन शब्दार्थ-भवादेसेणं-भवादेश से अर्थात् भव की अपेक्षा, **गइरागइं**-गति आगति-गमनागमन ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव, उत्पलपने कितने काल तक रहता है ?

३० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट असंख्य काल तक रहता है ।

३१ प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव, पृथ्वीकाय में जावे और पुनः उत्पल में आवे, इस प्रकार कितने काल तक गमनागमन करता है ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! भवादेश (भव की अपेक्षा) से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट असंख्यात भव तक गमनागमन करता है । कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट असंख्यात काल तक गमनागमन करता है ।

३२ प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव, अप्कायपने उत्पन्न हो कर पुनः उत्पल में आवे, तो इस प्रकार कितने काल तक गमनागमन करता है ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार पृथ्वीकाय के विषय में कहा है, उसी प्रकार अप्काय के विषय में यावत् वायुकाय तक कहना चाहिए ।

३३ प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव वनस्पति में आवे और पुनः उसी में उत्पन्न हो, इस प्रकार कितने काल तक गमनागमन करता है ?

३३ उत्तर-हे गौतम ! भवादेश से जघन्य दो भव और उत्कृष्ट अनन्त भव तक गमनागमन करता है, कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अनन्त काल (वनस्पति काल) तक गमनागमन करता है ।

३४ प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव बेइंद्रिय में जाकर पुनः उत्पल में ही आवे, तो इस प्रकार कितने काल तक गमनागमन करता है ?

३४ उत्तर-हे गौतम ! भवादेश से जघन्य दो भव, उत्कृष्ट संख्यात भव और कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट संख्यात काल तक गमना-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गमन करता है । इसी प्रकार तेइंद्रिय और चौइंद्रिय के विषय में भी जानना चाहिये ।

३५ प्रश्न-हे भगवन् ! वह उत्पल का जीव, पंचेन्द्रिय तिर्यंच योनि में जाकर पुनः उत्पलपने उत्पन्न हो, तो इस प्रकार कितने काल तक गमनागमन करता है ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! भवादेश से जघन्य दो भव, उत्कृष्ट आठ भव और कालादेश से जघन्य दो अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पूर्वकोटिपृथक्त्वकाल तक गमनागमन करता है । इसी प्रकार मनुष्य योनि का भी जानना चाहिये ।

विवेचन-उत्पल का जीव उत्पलपने उत्पन्न होता रहे, इसे 'अनुबन्ध' कहते हैं । उत्पल का जीव पृथ्वीकायादि दूसरी कायों में उत्पन्न होकर पुनः उत्पलपने उत्पन्न हो, इसे 'कायसंवेध' कहते हैं । यह भवादेश और कालादेश की अपेक्षा से दो प्रकार का है । उत्पल का जीव भवादेश की अपेक्षा कितने भव करता है और कालादेश की अपेक्षा कितने काल तक गमनागमन करता है, इत्यादि बातों का वर्णन इस सूत्र में किया गया है ।

३६ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा किमाहारमाहारेंति ?

३६ उत्तर-गोयमा ! दव्वओ अणंतपएसियाइं दव्वाइं, एवं जहा आहारुद्देसए वणस्सइकाइयाणं आहारो तहेव जाव सव्वप्पणयाए आहारमाहारेंति । णवरं णियमा छद्दिसिं सेसं तं चेव ।

३७ प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ।

३७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं ।

३८ प्रश्न-तेसि णं भंते ! जीवाणं कइ समुग्घाया पण्णत्ता ?

३८ उत्तर-गोयमा ! तओ समुग्घाया पण्णत्ता । तं जहा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वेयणासमुग्घाए, कसायसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाए ।

३९ प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा मारणंतियसमुग्घाएणं किं समोहया मरंति, असमोहया मरंति ?

३९ उत्तर-गोयमा ! समोहया वि मरंति, असमोहया वि मरंति।

४० प्रश्न-ते णं भंते ! जीवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ? किं णेरइएसु उववज्जंति, तिरिक्खजोणिएसु उववज्जंति० ? एवं जहा वक्कंतीए उव्वट्टणाए वणस्सइकाइयाणं तहा भाणियव्वं ।

४१ प्रश्न-अह भंते ! सव्वे पाणा सव्वे भूया सव्वे जीवा सव्वे सत्ता उप्पलमूलत्ताए उप्पलकंदत्ताए उप्पलणालत्ताए उप्पलपत्तत्ताए उप्पलकेसरत्ताए उप्पलकण्णियत्ताए उप्पलथिभुगत्ताए उववण्णपुव्वा ?

४१ उत्तर-हंता, गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ पढमो उप्पलउद्देसओ समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-**उववण्णपुव्वा**-उत्पन्नपूर्व-पहले उत्पन्न हुए, **सव्वप्पणयाए**-सभी आत्मप्रदेशों से, **उव्वट्टित्ता**-उद्वर्तन कर-निकल कर ।

भावार्थ-३६ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव किस पदार्थ का आहार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करते हैं ?

३६ उत्तर-हे गौतम ! वे जीव, द्रव्य से अनन्त प्रदेशी द्रव्यों का आहार करते हैं, इत्यादि प्रज्ञापना सूत्र के अट्ठाइसवें पद के पहले आहारक उद्देशक में वर्णित वर्णन के अनुसार वनस्पतिकायिकों का आहार यावत् 'वे सर्वात्मना (सर्व-प्रदेशों से) आहार करते हैं'-तक कहना चाहिए, किंतु वे नियमा छह दिशा का आहार करते है । शेष सभी वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिए ।

३७ प्रश्न-हे भगवन् ! उन उत्पल के जीवों की स्थिति कितने काल की है ?

३७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट दस हजार वर्ष की है ।

३८ प्रश्न-हे भगवन् ! उत्पल के जीवों में कितने समुद्घात कहे गये हैं ?

३८ उत्तर-हे गौतम ! उनमें तीन समुद्घात कहे गये हैं, यथा-वेदना समुद्घात, कषाय समुद्घात और मारणान्तिक समुद्घात ।

३९ प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव मारणान्तिक समुद्घात द्वारा समवहत होकर मरते हैं या असमवहत होकर ?

३९ उत्तर-हे गौतम ! वे समवहत होकर भी मरते हैं और असमवहत होकर भी ।

४० प्रश्न-हे भगवन् ! वे उत्पल के जीव मर कर तुरन्त कहाँ जाते हैं और कहाँ उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं, तिर्यञ्चयोनिकों में, मनुष्यों में या देवों में उत्पन्न होते हैं ।

४० उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद के उद्वर्तना प्रकरण में वनस्पतिकायिक जीवों के वर्णित वर्णन के अनुसार यहाँ भी कहना चाहिये ।

४१ प्रश्न-हे भगवन् ! सभी प्राण, सभी भूत, सभी जीव और सभी सत्त्व, उत्पल के मूलपने, कन्दपने, नालपने, पत्रपने, केसरपने, कर्णिकापने और थिभुगपने (पत्र के उत्पत्ति स्थानपने) पहले उत्पन्न हुए ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

४१ उत्तर-हाँ गौतम ! सभी प्राण, भूत, जीव और सत्त्व अनेक बार अथवा अनन्त बार पूर्वोक्त रूप से उत्पन्न हुए ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-आहार द्वार-पृथ्वीकायिकादि जीव सूक्ष्म होने से निष्कुटों (लोक के अन्तिम कोण) में उत्पन्न हो सकते हैं, इसलिये वे कदाचित् तीन दिशा से, कदाचित् चार दिशा से और कदाचित् पाँच दिशा से आहार लेते हैं तथा निर्व्याघात आश्रयी छहों दिशा का आहार लेते हैं, किंतु उत्पल के जीव बादर होने से वे निष्कुटों में उत्पन्न नहीं होते । अतः वे नियम से छह दिशा का आहार लेते हैं ।

उत्पल के जीव, वहाँ से मरकर तुरन्त तिर्यञ्च गति में या मनुष्य गति में जन्म लेते हैं, किन्तु देवगति और नरक गति में उत्पन्न नहीं होते ।

समस्त जीव उत्पल के मूल, नाल, कन्दादिपने अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं ।

इस प्रकार उत्पल के सम्बन्ध में यहाँ तेतीस द्वार कहे गये हैं ।

॥ ग्यारहवां शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक २

शालूक के जीव

१ प्रश्न-सालुए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?

१ उत्तर-गोयमा ! एगजीवे । एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा जाव 'अणंतखुत्तो'; णवरं सरीरोगाहणा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं, उक्कोसेणं धणुपुहुत्तं। सेसं तं चेव।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ बीओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-अपरिसेसा-समस्त।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! एक पत्ते वाला शालूक (वनस्पति विशेष उत्पल कन्द) एक जीव वाला है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर-हे गौतम ! वह एक जीव वाला है। इस प्रकार उत्पलोद्देशक की सभी वक्तव्यता यावत् 'अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं'-तक कहनी चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि शालूक के शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग और उत्कृष्ट धनुषपृथक्त्व है। शेष पूर्ववत् जानना चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ ग्यारहवें शतक का द्वितीय उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक ३

पलास के जीव

१ प्रश्न-पलासे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?

१ उत्तर-एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया अपरिसेसा भाणियव्वा।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णवरं सरीरोगाहणा जहण्णेणं अंगुलस्स असंखेज्जइभागं उक्कोसेणं गाउयपुहुत्ता, देवा एएसु चेव ण उववज्जंति।

२ प्रश्न-लेस्सासु ते णं भंते ! जीवा किं कण्हलेस्सा, णीललेस्सा, काउलेस्सा ?

२ उत्तर-गोयमा ! कण्हलेस्से वा णीललेस्से वा काउलेस्से वा छव्वीसं भंगा। सेसं तं चेव।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ तइओ उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-पलासे-पलाश-ढाक (खाखरा) का वृक्ष।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! पलास वृक्ष प्रारम्भ में जब वह एक पत्ते वाला होता है, तब एक जीव वाला होता है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर-हे गौतम ! उत्पल उद्देशक की सारी वक्तव्यता कहनी चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि पलास के शरीर की अवगाहना जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट गाऊ पृथक्त्व है। देव चवकर पलास वृक्ष में उत्पन्न नहीं होते।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! पलास वृक्ष के जीव कृष्णलेश्या वाले, नीललेश्या वाले और कापोत लेश्या वाले होते हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! वे कृष्ण लेश्या वाले, नील लेश्या वाले या कापोत लेश्या वाले होते हैं। इस प्रकार यहाँ उच्छ्वासक द्वार के समान छब्बीस भंग कहने चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-- ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन-देवों से चवकर जीव वनस्पतिकाय में उत्पन्न होते हैं और वनस्पति में भी जो प्रशस्त वनस्पति है, उसी में उत्पन्न होते हैं, अप्रशस्त में उत्पन्न नहीं होते । उत्पल प्रशस्त वनस्पति मानी गई है, इसलिये देव-गति से चवा हुआ जीव उसमें उत्पन्न होता है। जब तेजो लेश्या युक्त देव, देवभव से चवकर वनस्पति में उत्पन्न होता है, तब उसमें तेजो-लेश्या पाई जाती है । प्रशस्त वनस्पति में पलास नहीं गिना गया है, इसलिये उसमें देव भव से चवा हुआ जीव उत्पन्न नहीं होता । इसलिये उसमें तेजो-लेश्या भी नहीं पाई जाती, पहले की तीन अप्रशस्त लेश्याएँ ही पाई जाती हैं, इसलिये उसके छब्बीस भंग होते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का तृतीय उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक ४

कुंभिक के जीव

१ प्रश्न-कुंभिए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?

१ उत्तर-एवं जहा पलासुद्देसए तहा भाणियव्वे । णवरं ठिइ जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं वासपुहुत्तं । सेसं तं चेव ।

सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति

॥ चउत्थो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! एक पत्ते वाला कुंभिक (वनस्पति विशेष) एक जीव वाला होता है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार पलास के विषय में तीसरे उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी कहना चाहिये, इसमें इतनी विशेषता है कि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कुंभिक की स्थिति जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट वर्ष पृथक्त्व (दो वर्ष से नौ वर्ष तक) है। शेष सभी पूर्ववत् जानना चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ ग्यारहवें शतक का चतुर्थ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक ५

नालिक के जीव

१ प्रश्न-णालिए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे अणेगजीवे ?

१ उत्तर-एवं कुंभिउद्देसगवत्तव्वया णिरवसेसं भाणियव्वा।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ पंचमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! एक पत्ते वाला नालिक (नाडिक) एक जीव वाला है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार चौथे कुंभिक उद्देशक में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी सभी वक्तव्यता कहनी चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन्! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ ग्यारहवें शतक का पंचम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ११ उद्देशक ६

पद्म के जीव

१ प्रश्न–पउमे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे, अणेगजीवे ?

१ उत्तर–एवं उप्पलुद्देसगवत्तव्वया णिरवसेसा भाणियव्वा ।

✵ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ✵

॥ छट्ठो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! एक पत्ते वाला पद्म, एक जीव वाला होता है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर–हे गौतम ! उत्पल उद्देशकानुसार सभी वर्णन करना चाहिये ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है–ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक ७

कर्णिका के जीव

१ प्रश्न–कण्णिए णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे, अणेगजीवे ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१ उत्तर–एवं चेव णिरवसेसं भाणियव्वं ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ सत्तमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! एक पत्ते वाली कर्णिका (वनस्पति विशेष) एक जीव वाली है या अनेक जीव वाली ?

१ उत्तर–हे गौतम ! उत्पल उद्देशक के समान सभी वर्णन करना चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है–ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का सप्तम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक ८

नलिन के जीव

१ प्रश्न–णलिणे णं भंते ! एगपत्तए किं एगजीवे, अणेगजीवे ?

१ उत्तर–एवं चेव णिरवसेसं जाव 'अणंतखुत्तो' ।

❀ सेवं ! भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ–१ प्रश्न–हे भगवन् ! एक पत्ते वाला नलिन (कमल विशेष)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक जीव वाला होता है या अनेक जीव वाला ?

१ उत्तर-हे गौतम ! उत्पल उद्देशक के अनुसार सभी वर्णन करना चाहिये, यावत् 'सभी जीव अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं'-तक कहना चाहिये।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-पहले उद्देशक से लेकर आठवें उद्देशक तक उत्पलादि आठ वनस्पतिकायिक जीवों का वर्णन किया गया है। उनके पारस्परिक अन्तर को बतलाने वाली ये तीन गाथाएँ हैं। यथा—

सालम्मि धणुपुहत्तं होइ, पलासे य गाउ य पुहत्तं।
जोयणसहस्समहियं, अवसेसाणं तु छण्हं पि ॥१॥
कुंभिए नालियाए, वासपुहत्तं ठिई उ बोद्धव्वा।
दस-वाससहस्साइं, अवसेसाणं तु छण्हं पि ॥२॥
कुंभिए नालियाए होंति, पलासे य तिण्णि लेसाओ।
चत्तारि उ लेसाओ, अवसेसाणं तु पंचण्हं ॥३॥

अर्थ-शालूक की उत्कृष्ट अवगाहना धनुषपृथक्त्व और पलास की उत्कृष्ट अवगाहना गाऊ पृथक्त्व होती हैं। शेष उत्पल, कुम्भिक, नालिक, पद्म, कर्णिका और नलिन इन छह की उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार योजन से कुछ अधिक होती है ॥ १ ॥

कुम्भिक और नालिक की उत्कृष्ट स्थिति वर्ष-पृथक्त्व होती है और शेष छह की उत्कृष्ट स्थिति दस हजार वर्ष की होती है ॥ २ ॥

कुम्भिक, नालिक और पलास में पहले की तीन लेश्याएँ होती हैं, शेष पांच में पहले की चार लेश्याएँ होती हैं ॥ ३ ॥

यद्यपि गाथा में तो शालूक और पलास के सिवाय छहों वनस्पतियों की हजार योजन की अवगाहना बताई है किन्तु मूल पाठ में कुंभिक और नालिक उद्देशक में पलास उद्देशक और कुंभिक उद्देशक की भलामण होने से उनकी अवगाहना भी गव्यूति पृथक्त्व ही स्पष्ट होती है। इस प्रकार चार वनस्पतियों (उत्पल, पद्म, कर्णिका और नलिन) की ही साधिक हजार योजन की अवगाहना होती है।

॥ ग्यारहवें शतक का अष्टम उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ११ उद्देशक ९

राजर्षि शिव का वृत्तांत

१ तेणं कालेणं तेणं समएणं हत्थिणापुरे णामं णयरे होत्था, वण्णओ। तस्स णं हत्थिणापुरस्स णयरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभागे एत्थ णं सहसंबवणे णामं उज्जाणे होत्था। सव्वोउय-पुप्फफलसमिद्धे रम्मे णंदणवणसण्णिभप्पगासे सुहसीतलच्छाए मणोरमे साउप्फले अकंटए पासाईए, जाव-पडिरूवे। तत्थ णं हत्थिणापुरे णयरे सिवे णामं राया होत्था। महयाहिमवंत० वण्णओ। तस्स णं सिवस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था। सुकुमाल० वण्णओ। तस्स णं सिवस्स रण्णो पुत्ते धारिणीए अत्तए सिवभद्दे णामं कुमारे होत्था। सुकुमाल० जहा सूरियकंते, जाव-पच्चुवेक्खमाणे पच्चुवेक्खमाणे विहरइ।

कठिन शब्दार्थ—सव्वोउयपुप्फ—सभी ऋतुओं के पुष्प, रम्मे—रम्य, सण्णिभप्पगासे—समान, शोभित, साउप्फले—स्वादिष्ट फल वाला।

भावार्थ--१--उस काल उस समय में हस्तिनापुर नामक था, वर्णन। उस हस्तिनापुर नगर के बाहर उत्तरपूर्व दिशा (ईशानकोण) में सहस्राम्र नामक उद्यान था। वह उद्यान सभी ऋतुओं के पुष्प और फलों से समृद्ध था। वह नन्दन वन के समान सुरम्य था। उसकी छाया सुख कारक और शीतल थी। वह मनोहर, स्वादिष्ट फल युक्त, कण्टक रहित और प्रसन्नता उत्पन्न करने वाला यावत् प्रतिरूप (सुन्दर) था। उस हस्तिनापुर नगर में 'शिव' नाम का राजा था। वह हिमवान् पर्वत के समान श्रेष्ठ राजा था, इत्यादि राजा का सब वर्णन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कहना । उस शिव राजा के 'धारिणी' नाम की पटरानी थी । उसके हाथ, पैर अति सुकुमाल थे, इत्यादि स्त्री का वर्णन कहना । उस शिव राजा का पुत्र धारिणी रानी का अंगजात शिवभद्र नाम का कुमार था । उसके हाथ पैर अतिसुकुमाल थे । कुमार का वर्णन राजप्रश्नीय सूत्र में कथित सूर्यकान्त राजकुमार के समान कहना चाहिये । यावत् वह कुमार राज्य, राष्ट्र और सैन्यादिक का अवलोकन करता हुआ विचरता था ।

२—तएणं तस्स सिवस्स रण्णो अण्णया कयाइ पुव्वरत्ता-वरत्तकालसमयंसि रज्जधुरं चिंतेमाणस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'अत्थि ता मे पुरा पोराणाणं० जहा तामलिस्स, जाव—पुत्तेहिं वड्ढामि पसूहिं वड्ढामि रज्जेणं वड्ढामि, एवं रट्ठेणं बलेणं वाहणेणं कोसेणं कोट्ठागारेणं पुरेणं अंतेउरेणं वड्ढामि; विपुलधण-कणग-रयण० जाव संतसारसावएज्जेणं अईव अईव अभि-वड्ढामि, तं किं णं अहं पुरा पोराणाणं० जाव एगंतसोक्खयं उव्वेहमाणे विहरामि ? तं जाव ताव अहं हिरण्णेणं वड्ढामि, तं चेव जाव अभिवड्ढामि, जाव मे सामंतरायाणो वि वसे वट्टंति, तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते सुबहुं लोही-लोह-कडाह-कडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं घडावेत्ता सिवभद्दं कुमारं रज्जे ठवित्ता तं सुबहुं लोही-लोहकडाह-कडुच्छुयं तंबियं तावसभंडगं गहाय जे इमे गंगाकूले वाणपत्था तावसा भवंति, तं जहा—होत्तिया पोत्तिया कोत्तिया जण्णई सड्ढई थालई हुंबउट्ठा दंतुक्खलिया उम्मज्जगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संमज्जगा णिमज्जगा संपक्खाला उद्धकंडूयगा अहोकंडूयगा दाहिण-कूलगा उत्तरकूलगा संखधमगा कूलधमगा मियलुद्धया हत्थितावसा जलाभिसेयकिढिणगाया अंबुवासिणो वाउवासिणो वक्कलवासिणो जलवासिणो चेलवासिणो अंबुभक्खिणो वाउभक्खिणो सेवाल-भक्खिणो मूलाहारा कंदाहारा पत्ताहारा तयाहारा पुप्फाहारा फला-हारा बीयाहारा परिसडियकंदमूलपंडुपत्तपुप्फफलाहारा उद्दंडा रुक्ख-मूलिया मंडलिया वणवासिणो बिलवासिणो दिसापोक्खिया आया-वणाहिं पंचग्गितावेहिं इंगालसोल्लियंपिव कंडुसोल्लियंपिव कट्ठसो-ल्लियंपिव अप्पाणं जाव करेमाणा विहरंति (जहा उववाइए जाव—कट्ठसोल्लियं पिव अप्पाणं करेमाणा विहरंति) तत्थ णं जे ते दिसा-पोक्खी तावसा तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइत्तए। पव्वइए वि य णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभि-गिण्हिस्सामि—'कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं-छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ पगिज्झिय पगिज्झिय जाव विहरित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ।

कठिन शब्दार्थ—रज्जधुरं—राज्य-धुरा (राज्य का भार), **वड्ढामि**—मेरे बढ़ रहे हैं, **उव्वेह-माणे**—भोगता हुआ, **कडुच्छुयं**—कुड़छी, **वाणपत्था**—वानप्रस्थ, **होत्तिया**—अग्नि होत्री, **पोत्तिया**—पौत्रिक (वस्त्रधारी), **कोत्तिया**—कौत्रिक (भूशायी), **जण्णई**—याज्ञिक, **सड्ढई**—श्रद्धालु, **थालई**—खप्परधारी, **हुंबउट्ठा**—कुण्डिधारी, **दंतुक्खलिया**—फल भोगी, **उम्मज्जगा**—एक वार पानी में डुबकी लगा कर स्नान करने वाले, **संमज्जगा**—बारबार डुबकी लगा कर स्नान करने वाले,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिमज्जगा-पानी में कुछ देर डूब कर स्नान करने वाले, **संपक्खाला**-सम्प्रक्षालक (मिट्टी रगड़कर नहाने वाले), **उद्धकंडूयगा**-ऊपर की ओर खुजालने वाले, **दाहिणकूलगा**-गंगा के दक्षिण किनारे रहने वाले, **संखधमगा**-शंख फूंक कर भोजन करने वाले, **कूलधमगा**-किनारे रह कर शब्द करने वाले. **मियलुद्धया**-मृगलुब्धक, **हत्थितावसा**-हस्ति तापस (हाथी को मारकर बहुत दिनों तक खाने वाले), **जलाभिसेयकिढिणगाया**-स्नान किये बिना नहीं खाने वाले, **अंबुवासिणो**-बिल में रहने वाले, **वाउवासिणो**-वायु में रहने वाले, **वक्कलवासिणो**-वल्कलधारी, **अंबुभक्खिणो**-जलपान पर ही जीवन बिताने वाले, **परिसडिय**-गिरे हुए, **उद्दंडा**-ऊंचा दंड रख कर फिरने वाले, **पंचग्गितावेहिं**-पंचाग्नि तापस, **इंगालसोल्लियंपिव**-अंगारों से अपने को भुनाने वाले, **कंडुसोल्लियंपिव**-भड़भूंजे की भाड़ में पकाये हुए के समान, **कट्ठसोल्लियंपिव**-काष्ठ के समान शरीर को बनाने वाले, **दिसापोक्खी**-दिशा-प्रोक्षक, **संपेहेइ**-विचार करता है ।

भावार्थ-२-किसी समय राजा शिव को रात्रि के पिछले प्रहर में राज्य कार्यभार का विचार करते हुए ऐसा अध्यवसाय उत्पन्न हुआ कि यह मेरे पूर्व के पुण्य-कर्मों का प्रभाव है, इत्यादि तीसरे शतक के प्रथम उद्देशक में कथित तामली तापस के अनुसार विचार हुआ, यावत् मैं पुत्र, पशु, राज्य, राष्ट्र, बल, वाहन, कोष, कोष्ठागार, पुर और अन्तःपुर इत्यादि द्वारा वृद्धि को प्राप्त हो रहा हूँ । पुष्कल धन, कनक, रत्न यावत् सारभूत द्रव्य द्वारा अतिशय वृद्धि को प्राप्त हो रहा हूँ और मैं पूर्व-पुण्यों के फल स्वरूप एकान्त सुख भोग रहा हूँ, तो अब मेरे लिये यह श्रेष्ठ है कि जब तक मैं हिरण्यादि से वृद्धि को प्राप्त हो रहा हूँ यावत् जब तक सामन्त राजा आदि मेरे आधीन हैं, तब तक कल प्रातःकाल देदीप्यमान सूर्य के उदय होने पर बहुत-सी लोढ़ी, लोह की कड़ाही, कुड़छी और ताम्बे के दूसरे तापसोचित उपकरण बनवाऊँ और शिवभद्र कुमार को राज्य पर स्थापित कर के और पूर्वोक्त तापस के उपकरण लेकर, उन तापसों के पास जाऊँ-जो गंगा नदी के किनारे वानप्रस्थ तापस हैं, यथा-अग्निहोत्री, पोतिक-वस्त्र धारण करने वाले, कौत्रिक, याज्ञिक, श्रद्धालु, खप्परधारी, कुंडिका धारण करनेवाले, फल भोजी उम्मज्जक, समज्जक, निमज्जक, सम्प्रक्षालक, ऊर्ध्वकंडुक, अधोकंडुक, दक्षिण कूलक, उत्तर कूलक, शंखधमक, कूलधमक, मृगलुब्धक, हस्ती-तापस, जलाभिषेक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

किये बिना भोजन नहीं करने वाले, बिलवासी, वायु में रहने वाले, वल्कलधारी, पानी में रहने वाले, वस्त्रधारी, जलभक्षक, वायुभक्षक, शेवालभक्षक, मूलाहारक कन्दाहारक, पत्राहारक, छाल खाने वाले, पुष्पाहारक, फलाहारी, बीजाहारी, वृक्ष से सड़ कर टूटे या गिरे हुए कन्द, मूल, छाल, पत्र, पुष्प और फल खाने वाले, ऊँचा दंड रख कर चलने वाले, वृक्ष के मूलों में रहने वाले, मांडलिक, वनवासी, बिलवासी, दिशाप्रोक्षी, आतापना से पंचाग्नि तापने वाले और अपने शरीर को अंगारों से तपा कर लकड़े-सा करने वाले इत्यादि औपपातिक सूत्र में कहे अनुसार यावत् जो अपने शरीर को काष्ठ तुल्य बना देते हैं, उनमें से जो तापस 'दिशा-प्रोक्षक' (जल द्वारा दिशा का पूजन करने के पश्चात् फल-पुष्पादि ग्रहण करने वाले) हैं, उनके पास मुण्डित होकर दिक्प्रोक्षक तापस रूप प्रव्रज्या अंगीकार करूँ। प्रव्रज्या अंगीकार कर के इस प्रकार का अभिग्रह करूँ कि 'यावज्जीवन निरन्तर बेले-बेले की तपस्या द्वारा दिक्चक्रवाल तप-कर्म से दोनों हाथ ऊँचे रख कर रहना मुझे कल्पता है।' इस प्रकार शिवराजा को विचार हुआ।

३—संपेहेत्ता कल्लं जाव जलंते सुबहुं लोही-लोह० जाव घडावेत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! हत्थिणापुरं णयरं सब्भिंतर-बाहिरियं आसिय० जाव तमाणत्तियं पच्चप्पिणंति, तए णं से सिवे राया दोच्चं पि कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी—'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! सिवभद्दस्स कुमारस्स महत्थं ३ विउलं रायाभिसेयं उवट्ठवेह।' तएणं ते कोडुंबियपुरिसा तहेव उवट्ठवेंति। तएणं से सिवे राया अणेगगणणायग-दंडणायग० जाव—संधिपालसद्धिं संपरिवुडे सिवभद्दं कुमारं सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहं णिसि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यावेइ, णिसियावेत्ता अट्ठसएणं सोवण्णियाणं कलसाणं जाव-अट्ठसएणं भोमेज्जाणं कलसाणं सव्विड्ढीए जाव-रवेणं महया महया रायाभिसेगेणं अभिसिंचति, म० म० पम्हलसुकुमालाए सुरभीए गंधकासाईए गायाइं लूहेइ, पम्हल० सरसेणं गोसीसेणं एवं जहेव जमालिस्स अलंकारो तहेव जाव-कप्परुक्खगं विव अलंकिय-विभूसियं करेइ, करित्ता करयल० जाव-कट्टु सिवभद्दं कुमारं-जएणं विजएणं वद्धावेंति, जएणं विजएणं वद्धावित्ता ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं जहा उववाइए कूणियस्स जाव-परमाउं पालयाहि, इट्ठजणसंपरिवुडे हत्थिणाउरस्स णयरस्स अण्णेसिं च बहूणं गामा-गर-णयरं० जाव विहराहि' त्ति कट्टु जयजयसद्दं पउंजंति। तएणं से सिवभद्दे कुमारे राया जाए। महया हिमवंत० वण्णओ जाव-विहरइ।

कठिन शब्दार्थ-णिसियावेइ-बिठाया।

भावार्थ-३-इस प्रकार विचार करके दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने पर अनेक प्रकार की लोढ़ियाँ, लोह कड़ाह आदि तापस के उपकरण तैयार करवा कर, अपने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो! हस्तिनापुर नगर के बाहर और भीतर जल का छिड़काव करके शीघ्र स्वच्छ कराओ,' इत्यादि यावत् उन्होंने राजा की आज्ञानुसार कार्य करवा कर राजा को निवेदन किया। इसके बाद शिव राजा ने उनसे कहा कि-'हे देवानुप्रियो! शिवभद्र कुमार के राज्याभिषेक की शीघ्र तैयारी करो।' कौटुम्बिक पुरुषों द्वारा राज्याभिषेक की तैयारी हो जाने पर शिवराजा ने अनेक गण-नायक, दण्ड-नायक यावत्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सन्धि-पालक आदि के परिवार से युक्त होकर शिवभद्र कुमार को उत्तम सिंहासन पर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बिठाया। फिर एक सौ आठ सोने के कलशों द्वारा यावत् एक सौ आठ मिट्टी के कलशों द्वारा सर्व ऋद्धि से यावत् वादिन्त्रादिक के शब्दों द्वारा राज्याभिषेक से अभिषिक्त किया। तत्पश्चात् अत्यन्त सुकुमाल और सुगन्धित गन्ध-वस्त्र द्वारा उसके शरीर को पोंछा। गोशीर्ष चन्दन का लेप किया, यावत् जमाली वर्णन के अनुसार कल्पवृक्ष के समान उसको अलंकृत एवं विभूषित किया। इसके बाद हाथ जोड़ कर शिवभद्र कुमार को जय विजय शब्दों से बधाया और औपपातिक सूत्र में वर्णित कोणिक राजा के प्रकरणानुसार इष्ट, कान्त एवं प्रिय शब्दों द्वारा आशीर्वाद दिया, यावत् कहा कि तुम दीर्घायु हो और इष्टजनों से युक्त होकर हस्तिनापुर नगर और दूसरे बहुत-से ग्रामादि का तथा परिवार, राज्य और राष्ट्र आदि का स्वामीपन भोगते हुए विचरो, इत्यादि कह कर जय जय शब्द उच्चारण किये। शिवभद्रकुमार राजा बना। वह महाहिमवान् पर्वत की तरह राजाओं में मुख्य होकर विचरने लगा। यहाँ शिवभद्र राजा का वर्णन कहना चाहिए।

४—तएणं से सिवे राया अण्णया कयाइं सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-मुहुत्त-णक्खत्तंसि विउलं असण-पाण-खाइम-साइमं उवक्खडावेइ, उवक्खडावेत्ता मित्त-णाइ-णियग० जाव-परिजणं रायाणो य खत्तिया आमंतेइ, आमंतेत्ता तओ पच्छा ण्हाए जाव-सरीरे भोयणवेलाए भोयणमंडवंसि सुहासणवरगए तेणं मित्त-णाइ-णियग-सयण० जाव-परिजणेणं राएहि य खत्तिएहि य सद्धिं विउलं असण-पाण-खाइम-साइमं एवं जहा तामली जाव-सक्कारेइ, संमाणेइ, सक्कारित्ता संमाणित्ता तं मित्त-णाइ० जाव-परिजणं

रायाणो य खत्तिए य सिवभद्दं च रायाणं आपुच्छइ, आपुच्छित्ता सुबहुं लोही-लोहकडाह-कडुच्छुयं जाव-भंडगं गहाय जे इमे गंगा-कूलगा वाणपत्था तावसा भवंति, तं चेव जाव तेसिं अंतियं मुंडे भवित्ता दिसापोक्खियतावसत्ताए पव्वइए, पव्वइए वि य णं समाणे अयमेयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हइ-'कप्पइ मे जावज्जीवाए छटुं०' तं चेव जाव अभिग्गहं अभिगिण्हइ, अभिगिण्हित्ता पढमं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ ।

कठिन शब्दार्थ-**वाणपत्था**-वानप्रस्थ (तीसरा आश्रम)।

भावार्थ-४-इसके पश्चात् किसी समय शिव राजा ने प्रशस्त तिथि, करण, दिवस और नक्षत्र के योग में विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार करवाया और मित्र, ज्ञाति, स्वजन, परिजन, राजा, क्षत्रिय आदि को आमंत्रित किया। स्वयं स्नानादि करके भोजन के समय भोजन मण्डप में उत्तम सुखासन पर बैठा और उन मित्र, ज्ञाति, स्वजन, परिजन, राजा, क्षत्रिय आदि के साथ विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का भोजन कर के तामली तापस के समान उनका सत्कार सम्मान किया। तत्पश्चात् उन सभी की तथा शिवभद्र राजा की आज्ञा लेकर तापसोचित उपकरण ग्रहण किये और गंगा नदी के किनारे दिशा-प्रोक्षक तापसों के पास दिशाप्रोक्षक तापसी प्रव्रज्या ग्रहण की और इस प्रकार का अभिग्रह धारण किया कि 'मुझे बेले-बेले तपस्या करते हुए विचरना कल्पता है,' इत्यादि पूर्ववत् अभिग्रह धारण कर, प्रथम छट्ठ तप अंगीकार कर विचरने लगा।

विवेचन-जल से दिशाओं की पूजा करके फिर फल-फूल को ग्रहण करना-'दिशा-प्रोक्षक प्रव्रज्या' कहलाती है।

बेले के पारणे के दिन पूर्व, पश्चिम आदि किसी एक दिशा से फलादि लाकर खाना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

और दूसरे पारणे में दूसरी किसी एक दिशा से फलादि लाकर खाना-'दिशाचक्रवाल तप' कहलाता है।

शिव राजा, दिक्प्रोक्षक तापस प्रव्रज्या अंगीकार करके बेले-बेले की तपस्या करते हुए दिक्चक्रवाल तप का पारणा करने लगे।

५-तएणं से सिवे रायरिसी पढमछट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, पच्चोरुहित्ता वागलवत्थणियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता किढिणसंकाइयगं गिण्हइ, गिण्हित्ता पुरत्थिमं दिसं पोक्खेइ, 'पुरत्थिमाए दिसाए सोमे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवं रायरिसिं अभिरक्खित्ता जाणि य तत्थ कंदाणि य मूलाणि य तयाणि य पत्ताणि य पुप्फाणि य फलाणि य बीयाणि य हरियाणि य ताणि अणुजाणउ' ति कट्टु पुरत्थिमं दिसं पसरइ, पुरत्थिमं दिसं पसरइत्ता जाणिय तत्थ कंदाणि य जाव-हरियाणि य ताइं गेण्हइ, गिण्हित्ता किढिणसंकाइयगं भरेइ, किढि० दब्भे य कुसे य समिहाओ य पत्तामोडं च गिण्हइ, गिण्हित्ता जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता किढिणसंकाइयगं ठवेइ, किढि० वेदिं वड्ढेइ, वे० उवलेवण-संमज्जणं करेइ, उ० दब्भ-कलसाहत्थगए जेणेव गंगा महाणई तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० गंगामहाणई ओगाहेइ, गंगा० जलमज्जणं करेइ, जल० जलकीडं करेइ, जल० जलाभिसेयं करेइ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जला० आयंते चोक्खे परमसुइभूए देवय-पिइकयकज्जे दब्भ-कलसा-हत्थगए गंगाओ महाणईओ पच्चुत्तरइ, गंगाओ० जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० दब्भेहि य कुसेहि य वालुयाएहि य वेइं रइए, वेइं रएत्ता सरएणं अरणिं महेइ, सर० अग्गिं पाडेइ, अग्गिं पाडेत्ता, अग्गिं संधुक्केइ, अग्गिं० समिहाकट्ठाइं पक्खिवइ, समिहा० अग्गिं उज्जालेइ, अग्गिं० "अग्गिस्स दाहिणे पासे, सत्तंगाइं समादहे। तं जहा-सकहं वक्कलं ठाणं, सिज्जा भंडं कमंडलुं। दंडदारुं तहअप्पाणं अहे ताइं समादहे॥" महुणा य घएण य तंदुलेहि य अग्गिं हुणइ, अग्गिं हुणित्ता चरुं साहेइ, चरुं साहेत्ता बलिं वइस्सदेवं करेइ, बलिं० अतिहिपूयं करेइ, अतिहि० तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेइ।

कठिन शब्दार्थ-**वागलवत्थणियत्थे**-वल्कल वस्त्र पहिने, **उडए**-उटज-झोंपड़ी, **किढिण-संकाइयगं**-बांस का पात्र और कावड़, **पत्थाणे**-प्रवृत्त हुए, **अणुजाणओ**-अनुज्ञा देवें, **पसरइ**-जाते हैं, **उवलेवण संमज्जइ**-लीपकर शुद्ध करते हैं, **आयंते चोक्खे**-आचमन करके पवित्र हुए, **पिइकयकज्जे**-पितृकार्य किया, **पच्चुत्तरइ**-निकले, **सरएणं अरणिं महेइ**-सर-काष्ठ से अरणि घिसते हैं, **सत्तंगाइं समादहे**-सात वस्तुएँ रखीं।

भावार्थ-५-इसके बाद प्रथम बेले की तपस्या के पारणे के दिन वे शिव राजर्षि आतापना भूमि से नीचे उतरे, वल्कल के वस्त्र पहिने, फिर अपनी झोंपड़ी में आये और कीढीण (बाँस का पात्र-छबड़ी) और कावड़ को लेकर पूर्व दिशा को प्रोक्षित (पूजित) किया और बोले-'हे पूर्व दिशा के सोम महाराजा! धर्म साधन में प्रवृत्त मुझ राजर्षि शिव का आप रक्षण करें और पूर्व दिशा में रहे हुए कन्द मूल, छाल, पत्र, पुष्प, फल, बीज और हरी वनस्पति लेने की आज्ञा दीजिए।'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

इस प्रकार कह कर वे शिव राजर्षि पूर्व दिशा की ओर गये । उन्होंने कन्द मूल आदि ग्रहण कर अपनी छबड़ी भरी । दर्भ, कुश, समिध और वृक्ष की शाखाओं को झुका कर पत्ते ग्रहण किये और अपनी झोंपड़ी में आए । फिर कावड़ नीचे रख कर वेदिका का प्रमार्जन किया और लीप कर उसे शुद्ध किया । फिर डाभ और कलश हाथ में लेकर गंगा नदी पर आए, उसमें डुबकी लगाई । जल-क्रीड़ा स्नान, आचमन आदि करके गंगा नदी से बाहर निकले और अपनी झोंपड़ी में आकर डाभ, कुश और वालुका से वेदिका बनाई । मथन-काष्ठ से अरणी की लकडी को घिस कर अग्नि सुलगाई और उसमें काष्ठ डाल कर प्रज्वलित की । फिर अग्नि की दाहिनी ओर इन सात वस्तुओं को रखा, यथा–सकथा (उपकरण विशेष) वल्कल, दीप, शय्या के उपकरण, कमण्डल, दण्ड और अपना शरीर । मधु, घी और चावल द्वारा अग्नि में होम करके बलि द्वारा वैश्व देव की पूजा की, फिर अतिथि की पूजा करके शिव राजर्षि ने आहार किया ।

६–तएणं से सिवे रायरिसी दोच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ । तएणं से सिवे रायरिसी दोच्चे छट्ठक्खमणपारणगंसि आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, आयावण० एवं जहा पढमपारणगं, णवरं दाहिणगं दिसं पोक्खेइ, दाहिण० दाहिणाए दिसाए जमे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव आहारमाहारेइ । तएणं से सिवे रायरिसी तच्चं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ता णं विहरइ । तएणं से सिवे रायरिसी सेसं तं चेव णवरं पच्चत्थिमाए दिसाए वरुणे महाराया पत्थाणे पत्थियं सेसं तं चेव जाव आहारमाहारेइ । तएणं से सिवे रायरिसी चउत्थं छट्ठक्खमणं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तएणं से सिवे रायरिसी चउत्थछट्ठक्खमण० एवं तं चेव, णवरं उत्तर-दिसं पोक्खेइ, उत्तराए दिसाए वेसमणे महाराया पत्थाणे पत्थियं अभिरक्खउ सिवं रायरिसिं, सेसं तं चेव जाव-तओ पच्छा अप्पणा आहारमाहारेइ ।

भावार्थ-६-इसके बाद शिव राजर्षि ने दूसरी बार बेले की तपस्या की । पारणे के दिन वे आतापना भूमि से नीचे उतरे, वल्कल के वस्त्र पहने, यावत् प्रथम पारणे का सारा वर्णन जानना चाहिए, परंतु इतनी विशेषता है कि दूसरे पारणे के दिन दक्षिण दिशा की पूजा की और इस प्रकार कहा-"हे दक्षिण दिशा के लोकपाल यम महाराज ! परलोक साधना में प्रवृत्त मुझ शिव राजर्षि की रक्षा करो," इत्यादि, सब पूर्ववत् जानना चाहिए । इसके बाद यावत् उसने आहार किया । इसी प्रकार शिवराजर्षि ने तीसरी बार बेले की तपस्या की । उसके पारणे के दिन पूर्वोक्त सारी विधि की । इसमें इतनी विशेषता है कि पश्चिम दिशा का प्रोक्षण किया और कहा-"हे पश्चिम दिशा के लोकपाल वरुण महाराज ! परलोक साधना में प्रवृत्त मुझ शिव राजर्षि की रक्षा करें," इत्यादि यावत् आहार किया । चौथी बार बेले की तपस्या के पारणे के दिन उत्तर दिशा का प्रोक्षण किया और कहा-'हे उत्तर दिशा के लोकपाल वैश्रमण महाराज ! धर्म साधना में प्रवृत्त मुझ शिवराजर्षि की आप रक्षा करें,' इत्यादि, यावत् आहार किया ।

७-तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं अणिक्खित्तेणं दिसाचक्कवालेणं जाव-आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए जाव-विणीययाए अण्णया कयाइ तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहा-पोह-मग्गण-गवेसणं करेमाणस्स विब्भंगे णामं अण्णाणे समुप्पण्णे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से णं तेणं विब्भंगणाणेणं समुप्पण्णेणं पासइ अस्सिं लोए सत्त दीवे सत्त समुद्दे, तेण परं ण जाणइ ण पासइ।

कठिन शब्दार्थ—अणिक्खित्तेणं—अनिक्षिप्त-निरन्तर, दिसाचक्कवालेणं—दिशा चक्रवाल, आयावेमाणस्स—आतापना लेते हुए।

भावार्थ-७-निरन्तर बेले-बेले की तपस्यापूर्वक दिक्चक्रवाल तप करने यावत् आतापना लेने और प्रकृति की भद्रता यावत् विनीतता से शिवराजर्षि को किसी दिन तदावरणीय कर्मों के क्षयोपशम होने से ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए विभंग नामक अज्ञान उत्पन्न हुआ। उस उत्पन्न हुए विभंग-ज्ञान से वे इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र देखने लगे। इससे आगे वे जानते-देखते नहीं थे।

८-तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'अत्थि णं ममं अइसेसे णाण-दंसणे समुप्पण्णे, एवं खलु अस्सिं लोए सत्त दीवा सत्त समुद्दा, तेण परं वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य, एवं संपेहेइ, एवं० आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, आ० वागलवत्थणियत्थे जेणेव सए उडए तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० सुबहुं लोही-लोहकडाह-कडुच्छुयं जाव-भंडगं किढिणसंकाइयगं च गेण्हइ, गेण्हित्ता जेणेव हत्थिणापुरे णयरे जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० भंडणिक्खेवं करेइ, भंड० हत्थिणापुरे णयरे सिंघाडग-तिग० जाव-पहेसु बहु जणस्स एवमाइक्खइ, जाव-एवं परूवेइ-'अत्थि णं देवाणुप्पिया! ममं अइसेसे णाण-दंसणे समुप्पण्णे,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं खलु अस्सिं लोए जाव दीवा य समुद्दा य'। तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हत्थिणापुरे णयरे सिंघाडग-तिग० जाव-पहेसु बहु जणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ, जाव परूवेइ-एवं खलु देवाणुप्पिया ! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ, जाव परूवेइ- 'अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अइसेसे णाणदंसणे, जाव तेण परं वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य'। से कहमेयं मण्णे एवं ?

कठिन शब्दार्थ-अज्झत्थिए-अध्यवसाय-विचार, **अइसेसे**-अतिशेष अर्थात् अतिशय वाला, **वोच्छिण्णा**-विच्छेद (नहीं है,) **तावसावसहे**-तापसों के आश्रम में।

भावार्थ--८-इससे शिवराजर्षि को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ-"मुझे अतिशय ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ है। इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र हैं, उसके बाद द्वीप और समुद्र नहीं हैं।" ऐसा विचार कर वे आतापना-भूमि से नीचे उतरे और वल्कल वस्त्र पहन कर अपनी झोंपड़ी में आये। अपने लोढ़ी, लोह कड़ाह आदि तापस के उपकरण और कावड़ को लेकर हस्तिनापुर नगर में, तापसों के आश्रम में आये और तापसों के उपकरण रख कर हस्तिनापुर नगर के शृंगाटक, त्रिक यावत् राजमार्गों में बहुत-से मनुष्यों को इस प्रकार कहने और प्ररूपणा करने लगे-" हे देवानुप्रियो ! मुझे अतिशय ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ है, जिससे मैं यह जानता देखता हूँ कि इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र हैं" शिवराजर्षि की उपरोक्त बात सुन कर बहुत-से मनुष्य इस प्रकार कहने लगे-"हे देवानुप्रियो ! शिवराजर्षि जो यह बात कहते हैं कि 'मुझे अतिशय ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ है, यावत् इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र ही हैं। इसके आगे द्वीप-समुद्र नही हैं'-उनकी यह बात इस प्रकार कैसे मानी जाय ?"

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९ तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे, परिसा जाव पडिगया। तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी जहा बिइयसए णियंठुद्देसए जाव अडमाणे बहुजण-सद्दं णिसामेइ, बहुजणो अण्णमण्णस्स एवं आइक्खइ, एवं जाव परूवेइ–एवं खलु देवाणुप्पिया! सिवे रायरिसी एवं आइक्खइ, जाव परूवेइ अत्थि णं देवाणुप्पिया! तं चेव जाव वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य।' से कहमेयं मण्णे एवं?

१०–तएणं भगवं गोयमे बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म जायसड्ढे जहा णियंठुद्देसए जाव तेण परं वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य, से कहमेयं भंते! एवं? गोयमादि! समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी–जण्णं गोयमा! से बहुजणे अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ, तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव–भंड-णिक्खेवं करेइ, हत्थिणापुरे णयरे सिंघाडग० तं चेव जाव वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य। तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतिए एय-मट्ठं सोच्चा णिसम्म तं चेव सव्वं भाणियव्वं जाव तेणं परं वोच्छिण्णा दीवा य समुद्दा य, तण्णं मिच्छा। अहं पुण गोयमा! एवमाइक्खामि, जाव परूवेमि–'एवं खलु जंबुद्दीवाइया दीवा लवणाईया समुद्दा संठाणओ एगविहिविहाणा, वित्थारओ अणेगविहिविहाणा एवं जहा जीवाभिगमे जाव–सयंभूरमणपज्जवसाणा अस्सिं तिरियलोए

असंखेज्जे दीवसमुद्दे पण्णत्ते समणाउसो !

कठिन शब्दार्थ---पज्जवसाणा—पर्यवसान-अन्त ।

भावार्थ-९-उस काल उस समय श्रमण भगवन् महावीर स्वामी वहाँ पधारे । जनता धर्मोपदेश सुनकर यावत् चली गई । उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के ज्येष्ठ अन्तेवासी इन्द्रभूति अनगार, दूसरे शतक के निर्ग्रन्थोद्देशक में वर्णित विधि के अनुसार भिक्षार्थ जाते हुए, बहुत-से मनुष्यों के शब्द सुने । वे परस्पर कह रहे थे कि 'हे देवानुप्रियों ! शिवराजर्षि कहते हैं कि मुझे अतिशय ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ है, यावत् इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र ही हैं, इसके आगे द्वीप और समुद्र नहीं हैं । यह बात कैसे मानी जाय ?'

१०-बहुत-से मनुष्यों से यह बात सुनकर गौतम स्वामी को सन्देह कुतूहल एवं श्रद्धा हुई, उन्होंने भगवान् की सेवा में आकर इस प्रकार पूछा-'हे भगवन् ! शिवराजर्षि कहते हैं कि सात द्वीप और सात समुद्र हैं, इसके बाद द्वीप समुद्र नहीं हैं, उनका ऐसा कहना सत्य है क्या ?' भगवान् ने कहा-'हे गौतम ! शिवराजर्षि से सुनकर बहुत-से मनुष्य जो कहते हैं कि 'सात द्वीप और सात समुद्र ही हैं, इसके बाद कुछ भी नहीं है, इत्यादि'-यह कथन मिथ्या है । हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि जम्बूद्वीपादि द्वीप और लवण समुद्रादि समुद्र, ये सब वृत्ताकार (गोल) होने से आकार में एक सरीखे हैं । परन्तु विस्तार में एक दूसरे से दुगुने-दुगुने होने के कारण अनेक प्रकार के हैं, इत्यादि सभी वर्णन जीवाभिगम सूत्र में कहे अनुसार जानना चाहिए । यावत् हे आयुष्मन् श्रमणों ! इस तिर्च्छा लोक में स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त असंख्यात द्वीप और समुद्र कहे गये हैं ।

११ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! जंबुद्दीवे दीवे दव्वाइं सवण्णाइं पि अवण्णाइं पि सगंधाइं पि अगंधाइं पि सरसाइं पि अरसाइं पि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सफासाइं पि अफासाइं पि अण्णमण्णबद्धाइं अण्णमण्णपुट्ठाइं जाव-घडत्ताए चिट्ठंति ।

११ उत्तर-हंता अत्थि ।

१२ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! लवणसमुद्दे दव्वाइं सवण्णाइं पि अवण्णाइं पि सगंधाइं पि अगंधाइं पि सरसाइं पि अरसाइं पि सफासाइं पि अफासाइं पि अण्णमण्णबद्धाइं अण्णमण्णपुट्ठाइं जाव-घडत्ताए चिट्ठंति ।

१२ उत्तर-हंता अत्थि ।

१३ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! धायइसंडे दीवे दव्वाइं सवण्णाइं पि एवं चेव, एवं जाव-सयंभूरमणसमुद्दे ?

१३ उत्तर-जाव हंता अत्थि ।

१४-तएणं सा महतिमहालिया महच्चपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठा समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ।

१५-तए णं हत्थिणापुरे णयरे सिंघाडग० जाव-पहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव परूवेइ-'जण्णं देवाणुप्पिया ! सिवे रायरिसी एवमाइक्खइ जाव परूवेइ-अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अइसेसे णाणे जाव-समुद्दा य,' तं णो इणट्ठे समट्ठे, समणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवं महावीरे एवमाइक्खइ, जाव परूवेइ-एवं खलु एयस्स सिवस्स रायरिसिस्स छट्ठंछट्ठेणं तं चेव जाव-भंडणिक्खेवं करेइ, भंडणिक्खेवं करेत्ता हत्थिणापुरे णयरे सिंघाडग० जाव-समुद्दा य। तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म जाव-समुद्दा य तण्णं मिच्छा, समणे भगवं महावीरे एवमाइक्खइ-एवं खलु जंबुद्दीवाईया दीवा लवणाईया समुद्दा तं चेव जाव असंखेज्जा दीवसमुद्दा पण्णत्ता समणाउसो !

कठिन शब्दार्थ-अण्णमण्णघडत्ताए-अन्योन्य संबद्ध।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! जम्बूद्वीप नामक द्वीप में वर्ण सहित और वर्ण रहित, गन्ध सहित और गन्ध रहित, रस सहित और रस रहित, स्पर्श सहित और स्पर्श रहित द्रव्य, अन्योन्य बद्ध, अन्योन्य स्पृष्ट यावत् अन्योन्य सम्बद्ध हैं ?

११ उत्तर-हाँ, गौतम ! हैं।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! लवण समुद्र में वर्ण सहित और वर्ण रहित गन्ध सहित और गन्ध रहित, रस सहित और रस रहित, स्पर्श सहित और स्पर्श रहित द्रव्य अन्योन्य बद्ध, अन्योन्य स्पृष्ट यावत् अन्योन्य सम्बद्ध हैं ?

१२ उत्तर-हाँ, गौतम ! हैं।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या धातकीखण्ड में यावत् स्वयम्भूरमण समुद्र में वर्णादि सहित और वर्णादि रहित द्रव्य यावत् अन्योन्य सम्बद्ध हैं ?

१३ उत्तर-हाँ, गौतम ! हैं।

१४ इसके पश्चात् वह महती परिषद् श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से उपर्युक्त अर्थ सुनकर और हृदय में धारण कर हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई और भगवान् को वन्दना नमस्कार कर चली गई।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१५ हस्तिनापुर नगर में शृंगाटक यावत् अन्य राज-मार्गों पर बहुत-से लोग इस प्रकार कहने एवं प्ररूपणा करने लगे कि-'हे देवानुप्रियो! शिव राजर्षि जो कहते एवं प्ररूपणा करते हैं कि 'मुझे अतिशेष ज्ञान दर्शन उत्पन्न हुआ है, जिससे मैं जानता-देखता हूँ कि इस लोक में सात द्वीप और सात समुद्र ही हैं, इन के आगे द्वीप और समुद्र नहीं हैं,'-उनका यह कथन मिथ्या है। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी इस प्रकार कहते और प्ररूपणा करते हैं कि 'निरन्तर बेले-बेले की तपस्या करते हुए शिवराजर्षि को विभंगज्ञान उत्पन्न हुआ है। जिससे वे सात द्वीप समुद्र तक जानते-देखते हैं और इसके आगे द्वीप समुद्र नहीं है, यह उनका कथन मिथ्या है। क्योंकि जम्बूद्वीप आदि द्वीप और लवणादि समुद्र असंख्यात हैं।'

विवेचन-मिथ्यात्व युक्त अवधि को 'विभंगज्ञान' कहते हैं। किसी बाल-तपस्वी को अज्ञान तप के द्वारा जब दूर के पदार्थ दिखाई देते हैं, तो वह अपने को विशिष्ट ज्ञानवाला समझ कर सर्वज्ञ के वचनों में विश्वास नहीं करता हुआ मिथ्या प्ररूपणा करने लगता है। शिवराजर्षि को भी इसी प्रकार का विभंगज्ञान उत्पन्न हुआ था। वे उस विभंग को ही विशिष्ट एवं पूर्ण ज्ञान समझकर मिथ्या प्ररूपणा करने लगे। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने शिवराजर्षि का कथन मिथ्या बताया और कहा कि द्वीप और समुद्र असंख्यात हैं।

१६-तए णं से सिवे रायरिसी बहुजणस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म संकिए कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावण्णे कलुससमावण्णे जाए यावि होत्था। तए णं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स संकियस्स कंखियस्स जाव-कलुससमावण्णस्स से विभंगे अण्णाणे खिप्पामेव परिवडिए।

१७-तएणं तस्स सिवस्स रायरिसिस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए

जाव समुप्पज्जित्था-'एवं खलु समणे भगवं महावीरे आइगरे तित्थगरे जाव-सव्वण्णू सव्वदरिसी आगासगएणं चक्केणं जाव सहसंबवणे उज्जाणे अहापडिरूवं जाव विहरइ, तं महाफलं खलु तहारूवाणं अरहंताणं भगवंताणं णामगोयस्स जहा उववाइए जाव-गहणयाए, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि, एयं णे इहभवे य परभवे य जाव भविस्सइ' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ ।

१८-एवं संपेहित्ता जेणेव तावसावसहे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तावसावसहं अणुप्पविसइ, तावसावसहं अणुप्पविसित्ता सुबहुं लोही-लोहकडाह० जाव किढिणसंकाइयगं च गेण्हइ, गेण्हित्ता तावसावसहाओ पडिणिक्खमइ, ताव० परिवडियविब्भंगे हत्थिणा-उरं णयरं मज्झंमज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव सहसंबवणे उज्जाणे, जेणेव समणे भगवं महावीरे, तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवा-गच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ, वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे जाव-पंज-लिउडे पज्जुवासइ । तएणं समणे भगवं महावीरे सिवस्स राय-रिसिस्स तीसे य महतिमहालियाए० जाव-आणाए आराहए भवइ ।

१९-तएणं से सिवे रायरिसी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म जहा खंदओ, जाव उत्तरपुरत्थिमं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दिसीभागं अवक्कमइ, अवक्कमित्ता सुबहुं लोही लोहकडाह० जाव–किढिणसंकाइयगं एगंते एडेइ, ए० सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, सयमे० समणं भगवं महावीरं एवं जहेव उसभदत्ते तहेव पव्वइओ, तहेव इक्कारस अंगाइं अहिज्जइ, तहेव सव्वं जाव–सव्वदुक्खप्पहीणे ।

२० प्रश्न–'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–जीवा णं भंते ! सिज्झमाणा कयरंमि संघयणे सिज्झंति ?

२० उत्तर–गोयमा ! वइरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति । एवं जहेव उववाइए तहेव "संघयणं संठाणं उच्चत्तं आउयं च परिवसणा" । एवं सिद्धिगंडिया णिरवसेसा भाणियव्वा, जाव–"अव्वाबाहं सोक्खं अणुहोंति सासयं सिद्धा" ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ एक्कारससए णवमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ–**परिवडिए**–नष्ट हो गया, **तावसावसहे**–तापसावसथ–तापसों का मठ ।

भावार्थ–१६-शिवराजर्षि, बहुत-से मनुष्यों से यह बात सुन कर और अवधारण कर के शंकित, कांक्षित, संदिग्ध, अनिश्चित और कलुषित भाव को प्राप्त हुए । शंकित, कांक्षित आदि बने हुए शिवराजर्षि का वह विभंग नामक अज्ञान तुरन्त नष्ट हो गया ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१७-इसके पश्चात् शिवराजर्षि को इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ कि 'श्रमण भगवान् महावीर स्वामी, धर्म की आदि करने वाले, तीर्थंकर यावत् सर्वज्ञ, सर्वदर्शी हैं, जिनके आगे आकाश में धर्मचक्र चलता है, वे यहां सहस्राम्रवन उद्यान में यथा-योग्य अवग्रह ग्रहण करके यावत् विचरते हैं। इस प्रकार के अरिहंत भगवन्तों का नाम-गोत्र सुनना भी महाफल वाला है, तो उनके सम्मुख जाना, वन्दन करना, इत्यादि का तो कहना ही क्या, इत्यादि औपपातिक सूत्र के उल्लेखानुसार विचार किया, यावत् एक भी आर्य धार्मिक सुवचन का सुनना भी महाफल दायक है, तो विपुल अर्थ के अवधारण का तो कहना ही क्या। अतः मैं श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास जाऊँ, वन्दन-नमस्कार यावत् पर्युपासना करूँ। यह मेरे लिये इस भव और परभव में यावत् श्रेयकारी होगा।'

१८-ऐसा विचार कर तापसों के मठ में आये और उसमें प्रवेश किया। मठ में से लोढ़ी, लोह-कड़ाह यावत् कावड़ आदि उपकरण लेकर पुनः निकले। विभंगज्ञान रहित वे शिवराजर्षि हस्तिनापुर नगर के मध्य होते हुए सहस्राम्रवन उद्यान में, श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के निकट आये। भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया और न अति दूर न अति निकट यावत् हाथ जोड़ कर भगवान् की उपासना करने लगे। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने शिवराजर्षि और महा-परिषद् को धर्मोपदेश दिया यावत्-"इस प्रकार पालन करने से जीव आज्ञा के आराधक होते हैं।"

१९-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्मोपदेश सुनकर और अवधारण कर शिवराजर्षि, स्कन्दक की तरह ईशानकोण में गये और लोढ़ी, लोह-कड़ाह यावत् कावड़ आदि तापसोचित उपकरणों को एकान्त स्थान में डाल दिया। फिर स्वयमेव पञ्चमुष्टि लोच किया और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के समीप (नौवें शतक के तेतीसवें उद्देशक में कथित) ऋषभदत्त की तरह प्रव्रज्या अंगीकार की। ग्यारह अंगों का ज्ञान पढ़ा, यावत् वे शिवराजर्षि समस्त दुःखों से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मुक्त हुए ।

२० प्रश्न-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर, गौतमस्वामी ने इस प्रकार पूछा-'हे भगवन् ! सिद्ध होने वाले जीव किस संहनन में सिद्ध होते हैं ?'

२० उत्तर-हे गौतम ! वज्रऋषभनाराच संहनन में सिद्ध होते हैं, इत्यादि औपपातिक सूत्र के अनुसार 'संहनन, संस्थान, उच्चत्व, आयुष्य, परि-वसन (निवास), इस प्रकार सम्पूर्ण सिद्धिगण्डिका तक यावत् सिद्ध जीव अव्या-बाध शाश्वत सुखों का अनुभव करते हैं-कहना चाहिए ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का नौवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक १०

लोक के द्रव्यादि भेद

१ प्रश्न-रायगिहे जाव एवं वयासी-कइविहे णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?

१ उत्तर-गोयमा ! चउव्विहे लोए पण्णत्ते, तंजहा-दव्वलोए खेत्तलोए काललोए भावलोए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ प्रश्न–खेत्तलोए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

२ उत्तर–गोयमा ! तिविहे पण्णत्ते, तंजहा–१ अहोलोयखेत्तलोए २ तिरियलोयखेत्तलोए ३ उड्ढलोयखेत्तलोए ।

३ प्रश्न–अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

३ उत्तर–गोयमा ! सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा–रयणप्पभापुढविअहोलोयखेत्तलोए, जाव–अहेसत्तमापुढविअहोलोयखेत्तलोए ।

४ प्रश्न–तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

४ उत्तर–गोयमा ! असंखेज्जविहे पण्णत्ते, तंजहा–जंबुद्दीवे दीवे तिरियलोयखेत्तलोए, जाव–सयंभूरमणसमुद्दे तिरियलोयखेत्तलोए ।

५ प्रश्न–उड्ढलोयखेत्तलोए णं भंते ! कइविहे पण्णत्ते ?

५ उत्तर–गोयमा ! पण्णरसविहे पण्णत्ते, तंजहा–सोहम्मकप्पउड्ढलोयखेत्तलोए, जाव–अच्चुयउड्ढलोए, गेवेज्जविमाणउड्ढलोए, अणुत्तरविमाण० ईसिपब्भारपुढविउड्ढलोयखेत्तलोए ।

कठिन शब्दार्थ–ईसिपब्भारपुढवी–ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी–सिद्ध-शिला ।

भावार्थ–१ प्रश्न–राजगृह नगर में गौतम स्वामी ने यावत् इस प्रकार पूछा–'हे भगवन् ! लोक कितने प्रकार का कहा गया है ?'

१ उत्तर–हे गौतम ! लोक चार प्रकार का कहा गया है । यथा–१ द्रव्य लोक, २ क्षेत्र लोक, ३ काल लोक और ४ भाव लोक ।

२ प्रश्न–हे भगवन् ! क्षेत्र-लोक कितने प्रकार का कहा गया है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२ उत्तर-हे गौतम ! तीन प्रकार का कहा गया है। यथा-१ अधोलोक क्षेत्रलोक २ तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक, ३ ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! अधोलोक क्षेत्रलोक कितने प्रकार का कहा गया है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! सात प्रकार का कहा गया है। यथा-रत्नप्रभापृथ्वी अधोलोक क्षेत्रलोक, यावत् अधःसप्तमपृथ्वी अधोलोक क्षेत्रलोक।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक कितने प्रकार का कहा गया है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! असंख्य प्रकार का कहा गया है। यथा-जम्बूद्वीपतिर्यग्लोक क्षेत्रलोक यावत् स्वयंभूरमणसमुद्र तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक कितने प्रकार का कहा गया है ?

५ उत्तर-हे गौतम ! पन्द्रह प्रकार का कहा गया है। यथा-(१-१२) सौधर्मकल्प ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक यावत् अच्युत्कल्प ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक। १३ ग्रैवेयक विमान ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक। १४ अनुत्तरविमान ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक। १५ ईषत्प्राग्भार पृथ्वी ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक।

विवेचन-धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय से व्याप्त सम्पूर्ण द्रव्यों के आधाररूप चौदह राजु परिमाण आकाशखण्ड को 'लोक' कहते हैं। वह लोक चार प्रकार का है। उनमें से द्रव्य लोक के दो भेद हैं-आगमतः और नोआगमतः। जो 'लोक' शब्द के अर्थ को जानता है, किंतु उसमें उपयोग नहीं है, उसे 'आगमतः द्रव्यलोक' कहते हैं। नोआगमतः द्रव्यलोक के तीन भेद किये गये हैं। यथा-१ ज्ञशरीर, २ भव्यशरीर, ३ तद्व्यतिरिक्त। जिस प्रकार जिस घड़े में घी भरा था, वह घी निकाल लेने पर भी 'घी का घड़ा' कहा जाता है, इसी प्रकार जिस व्यक्ति ने पहले 'लोक' शब्द का अर्थ जाना था उसके मृत शरीर को 'ज्ञशरीर द्रव्यलोक' कहते हैं। जिस प्रकार भविष्य में राजा की पर्याय प्राप्त करने के योग्य राजकुमार को 'भावी राजा' कहा जाता है, तथा भविष्य में जिस घट में मधु रखा जायगा, उस घट को अभी से 'मधुघट' कहा जाता है, उसी प्रकार जो व्यक्ति भविष्य में लोक शब्द के अर्थ को जानेगा, उसके सचेतन शरीर को 'भव्यशरीर द्रव्यलोक' कहते हैं। धर्मास्तिकाय आदि द्रव्यों को 'ज्ञशरीर-भव्यशरीर-व्यतिरिक्त द्रव्य लोक' कहते हैं।

क्षेत्र रूप लोक को 'क्षेत्र-लोक' कहते हैं। उसके भेद ऊपर बतलाये गये हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ प्रश्न-अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

६ उत्तर-गोयमा ! तप्पागारसंठिए पण्णत्ते ।

७ प्रश्न-तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

७ उत्तर-गोयमा ! झल्लरिसंठिए पण्णत्ते ।

८ प्रश्न-उड्ढलोयखेत्तलोए-पुच्छा ?

८ उत्तर-उड्ढमुइंगाकारसंठिए पण्णत्ते ।

९ प्रश्न-लोए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

९ उत्तर-गोयमा ! सुपइट्ठगसंठिए लोए पण्णत्ते, तंजहा-हेट्ठा विच्छिण्णे, मज्झे संखित्ते, जहा सत्तमसए पढमुद्देसए जाव अंतं करेइ ।

१० प्रश्न-अलोए णं भंते ! किंसंठिए पण्णत्ते ?

१० उत्तर-गोयमा ! झुसिरगोलसंठिए पण्णत्ते ।

११ प्रश्न-अहोलोयखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जाव पएसा ?

११ उत्तर-एवं जहा इंदा दिसा तहेव णिरवसेसं भाणियव्वं, जाव अद्धासमए ।

१२ प्रश्न-तिरियलोयखेत्तलोए णं भंते ! किं जीवा० ?

१२ उत्तर-एवं चेव, एवं उड्ढलोयखेत्तलोए वि, णवरं अरूवी छव्विहा, अद्धासमओ णत्थि ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न—लोए णं भंते ! किं जीवा० ?

१३ उत्तर—जहा बिईयसए अत्थिउद्देसए लोयागासे, णवरं अरूवी सत्तविहा, जाव—अहम्मत्थिकायस्स पएसा, णोआगासत्थिकाए, आगासत्थिकायस्स देसे, आगासत्थिकायपएसा, अद्धासमए, सेसं तं चेव ।

१४ प्रश्न—अलोए णं भंते ! किं जीवा० ?

१४ उत्तर—एवं जहा अत्थिकायउद्देसए अलोयागासे, तहेव णिरवसेसं जाव अणंताभागूणे ।

कठिन शब्दार्थ—तप्पागारसंठिए—त्रापा (तिपाई) के आकार, **झल्लरिसंठिए**—झालर के आकार, **उड्ढमुइंग**—ऊर्ध्व मृदंग, **सुपइट्ठ**—सुप्रतिष्ठक (शराव) **विच्छिण्णे**—विस्तीर्ण, **संखित्ते**—संक्षिप्त, **झूसिर**—पोला ।

भावार्थ—६ प्रश्न—हे भगवन् ! अधोलोक क्षेत्रलोक का कैसा संस्थान है ?

६ उत्तर—हे गौतम ! त्रपा (तिपाई) के आकार है ।

७ प्रश्न—हे भगवन् ! तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक का संस्थान कैसा है ?

७ उत्तर—हे गौतम ! झालर के आकार का है ।

८ प्रश्न—हे भगवन् ! ऊर्ध्वलोक क्षेत्र लोक का कैसा संस्थान है ?

८ उत्तर—हे गौतम ! ऊर्ध्व मृदंग के आकार है ।

९ प्रश्न—हे भगवन् ! लोक का कैसा संस्थान है ?

९ उत्तर—हे गौतम ! लोक सुप्रतिष्ठक (शराव) के आकार है । यथा—वह नीचे चौड़ा है । मध्य में संक्षिप्त (संकीर्ण) है, इत्यादि सातवें शतक के प्रथम उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिये । उस लोक को उत्पन्न ज्ञान-दर्शन के धारक केवलज्ञानी जानते हैं । इसके पश्चात् वे सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१० प्रश्न-हे भगवन् ! अलोक का कैसा संस्थान कहा है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! अलोक का संस्थान पोले गोले के समान कहा है।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! अधोलोक क्षेत्रलोक में क्या जीव हैं, जीव के देश हैं, जीव के प्रदेश हैं, अजीव हैं, अजीव के देश हैं और अजीव के प्रदेश हैं ?

११ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार दसवें शतक के प्रथम उद्देशक में ऐन्द्री दिशा के विषय में कहा, उसी प्रकार यहां भी सभी वर्णन कहना चाहिये, यावत् 'अद्धासमय' (काल) रूप है।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! तिर्यग्लोक जीव रूप है, इत्यादि प्रश्न।

१२ उत्तर-हे गौतम ! पूर्ववत् जानना चाहिये। इसी प्रकार ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक के विषय में भी जानना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि ऊर्ध्व-लोक में अरूपी के छह भेद ही हैं, क्योंकि वहां अद्धासमय नहीं है।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! लोक में जीव हैं, इत्यादि प्रश्न।

१३ उत्तर-हे गौतम ! दूसरे शतक के दसवें अस्ति उद्देशक में लोकाकाश के विषय-वर्णन के अनुसार जानना चाहिये, विशेष में यहाँ अरूपी के सात भेद कहने चाहिये, यावत् अधर्मास्तिकाय के प्रदेश, आकाशास्तिकाय का देश, आकाशास्तिकाय के प्रदेश और अद्धासमय। शेष पूर्ववत् जानना चाहिये।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! अलोक में जीव हैं, इत्यादि प्रश्न।

१४ उत्तर-हे गौतम ! दूसरे शतक के दसवें अस्तिकाय उद्देशक में जिस प्रकार अलोकाकाश के विषय में कहा, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये, यावत् वह सर्वाकाश के अनन्तवें भाग न्यून है।

विवेचन-अधोलोक क्षेत्रलोक तिपाई के आकार का है, तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक झालर के आकार का है, ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक खड़ीमृदंग के आकार का है और लोक का आकार सुप्रतिष्ठक (शराव) जैसा है, अर्थात् नीचे एक उलटा शराव रखा जाय, उसके ऊपर एक शराव सीधा रखा जाय और उसके ऊपर एक शराव उल्टा रखा जाय, इसका जो आकार बनता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है, वह लोक का आकार है। लोक का विस्तार मूल में सातरज्जु है। ऊपर क्रम से घटते हुए सातरज्जु की ऊँचाई पर विस्तार एक रज्जु है। फिर क्रम से बढ़ कर साढ़े नव से साढ़े दस रज्जु की ऊँचाई पर विस्तार पांच रज्जु है। फिर क्रम से घटकर मूल से चौदह रज्जु की ऊँचाई पर विस्तार एक रज्जु का है। ऊर्ध्व और अधो दिशा में ऊँचाई चौदह रज्जु है। अलोक का संस्थान पोले गोले के आकार है।

अधोलोक में जीव भी हैं, जीव के देश भी हैं, जीव के प्रदेश भी हैं, अजीव भी हैं, अजीव के देश भी हैं और अजीव के प्रदेश भी हैं। इसी प्रकार तिर्यग्-लोक में भी कहना चाहिए। ऊर्ध्वलोक में काल को छोड़कर अरूपी अजीव के छह बोल कहना चाहिए। क्योंकि ऊर्ध्व-लोक में सूर्य के प्रकाश से प्रकटित काल नहीं है।

लोक में धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय के प्रदेश, अधर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय के प्रदेश, आकाशास्तिकाय का देश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश और काल, ये अरूपी के सात भेद हैं। इनमें पहला धर्मास्तिकाय है, क्योंकि वह सम्पूर्ण लोक में व्याप्त है। लोक में धर्मास्तिकाय का देश नहीं है, क्योंकि लोक में अखण्ड धर्मास्तिकाय है। धर्मास्तिकाय, के प्रदेश हैं, क्योंकि धर्मास्तिकाय उन प्रदेशों का समुदाय रूप है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के भी दो भेद लोक में है। लोक में सम्पूर्ण आकाशास्तिकाय नहीं, किंतु उसका एक भाग है। इसीलिए कहा गया है कि आकाशास्तिकाय का देश है तथा आकाशास्तिकाय के प्रदेश हैं। लोक में काल द्रव्य भी हैं।

अलोक में जीव, जीव के देश और जीव के प्रदेश नहीं है और अजीव, अजीव के देश, और अजीव के प्रदेश भी नहीं हैं। एक अजीव द्रव्य का देश रूप अलोकाकाश है। वह भी अगुरुलघु है। अनन्त अगुरुलघु गुणों से संयुक्त आकाश के अनन्तवें भाग न्यून है।

१५ प्रश्न-अहेलोयखेत्तलोयस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे किं जीवा जीवदेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीवदेसा अजीव-पएसा ?

१५ उत्तर-गोयमा ! णो जीवा, जीवदेसा वि जीवपएसा वि अजीवा वि अजीवदेसा वि अजीवपएसा वि। जे जीवदेसा ते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णियमा १ एगिंदिय देसा, २ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियस्स देसे, ३ अहवा एगिंदियदेसा य बेइंदियाण य देसा। एवं मज्झिल्ल-विरहिओ जाव–अणिंदिएसु, जाव–अहवा एगिंदियदेसा य अणिं-दियदेसा य। जे जीवपएसा ते णियमा १ एगिंदियपएसा, २ अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियस्स पएसा, ३ अहवा एगिंदियपएसा य बेइंदियाण य पएसा, एवं आइल्लविरहिओ जाव पंचिंदिएसु, अणिं-दिएसु तियभंगो। जे अजीवा ते दुविहा पण्णत्ता, तंजहा–रूवी अजीवा य अरूवी अजीवा य। रूवी तहेव, जे अरूवी अजीवा ते पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा–१ णोधम्मत्थिकाए धम्मत्थिकायस्स देसे, २ धम्मत्थिकायस्स पएसे, एवं ४ अहम्मत्थिकायस्स वि, ५ अद्धासमए।

भावार्थ–१५ प्रश्न–हे भगवन् ! अधोलोक क्षेत्रलोक के एक आकाश-प्रदेश में जीव हैं, जीवों के देश हैं, जीवों के प्रदेश हैं, अजीव हैं, अजीवों के देश हैं, अजीवों के प्रदेश हैं ?

१५ उत्तर–हे गौतम ! जीव नहीं, किंतु जीवों के देश हैं, जीवों के प्रदेश हैं, अजीव हैं, अजीवों के देश हैं और अजीवों के प्रदेश हैं। इनमें जो जीवों के देश हैं, वे नियम से १ एकेन्द्रिय जीवों के देश हैं। अथवा २ एकेन्द्रिय जीवों के देश और बेइन्द्रिय जीव का एक देश है। ३ अथवा एकेन्द्रिय जीवों के देश और बेइंद्रिय जीवों के देश हैं। इस प्रकार मध्यम भंग रहित (एकेन्द्रिय जीवों के देश और बेइंद्रिय जीव के देश, इस मध्यम भंग से रहित) शेष भंग यावत् अनि-न्द्रिय तक जानना चाहिये यावत् एकेन्द्रिय जीवों के देश और अनिन्द्रिय जीवों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के देश हैं। इनमें जो जीव के प्रदेश हैं, वे नियम से एकेन्द्रिय जीवों के प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवों के प्रदेश और एक बेइन्द्रिय जीव के प्रदेश हैं, अथवा एकेन्द्रिय जीवों के प्रदेश और बेइन्द्रिय जीवों के प्रदेश हैं। इस प्रकार यावत् पञ्चेन्द्रिय तक प्रथम भंग के सिवाय दो दो भंग कहना चाहिये। अनिन्द्रिय में तीनों भंग कहना चाहिये। उनमें जो अजीव हैं, वे दो प्रकार के कहे हैं। यथा-रूपी अजीव और अरूपी अजीव। रूपी अजीवों का वर्णन पूर्ववत् जानना चाहिये। अरूपी अजीव पांच प्रकार के कहे गये हैं। यथा-१ धर्मास्तिकाय का देश, २ धर्मास्तिकाय का प्रदेश, ३ अधर्मास्तिकाय का देश ४ अधर्मास्तिकाय का प्रदेश और ५ अद्धा समय।

१६ प्रश्न-तिरियलोयखेत्तलोयस्स णं भंते ! एगंमि आगास-पएसे किं जीवा० ?

१६ उत्तर-एवं जहा अहोलोयखेत्तलोयस्स तहेव, एवं उड्ढलोय-खेत्तलोयस्स वि, णवरं अद्धासमओ णत्थि, अरूवी चउव्विहा। लोयस्स जहा अहोलोयखेत्तलोयस्स एगंमि आगासपएसे।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक के एक आकाश-प्रदेश में जीव हैं, इत्यादि प्रश्न।

१६ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार अधोलोक क्षेत्रलोक के विषय में कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिये और इसी प्रकार ऊर्ध्वलोक क्षेत्र-लोक के एक आकाश प्रदेश के विषय में भी जानना चाहिये, किन्तु वहाँ अद्धा समय नहीं है, इसलिये वहाँ चार प्रकार के अरूपी अजीव हैं। लोक के एक आकाशप्रदेश का कथन अधोलोक क्षेत्रलोक के एक आकाश प्रदेश के कथन के समान जानना चाहिये।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१७ प्रश्न-अलोयस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे पुच्छा ।

१७ उत्तर-गोयमा ! णो जीवा, णो जीवदेसा, तं चेव जाव अणंतेहिं अगरुयलहुयगुणेहिं संजुत्ते सव्वागासस्स अणंतभागूणे ।

१८-दव्वओ णं अहेलोयखेत्तलोए अणंताइं जीवदव्वाइं, अणंताइं अजीवदव्वाइं, अणंता जीवाजीवदव्वा । एवं तिरिय-लोयखेत्तलोए वि एवं उड्ढलोयखेत्तलोए वि । दव्वओ णं अलोए णेवत्थि जीवदव्वा, णेवत्थि अजीवदव्वा, णेवत्थि जीवाजीवदव्वा, एगे अजीवदव्वदेसे जाव सव्वागासअणंतभागूणे । कालओ णं अहेलोयखेत्तलोए ण कयाइ णासि, जाव णिच्चे, एवं जाव अलोए । भावओ णं अहेलोयखेत्तलोए अणंता वण्णपज्जवा, जहा खंदए, जाव अणंता अगरुयलहुयपज्जवा, एवं जाव लोए । भावओ णं अलोए णेवत्थि वण्णपज्जवा, जाव णेवत्थि अगरुयलहुयपज्जवा, एगे अजीवदव्वदेसे, जाव अणंतभागूणे ।

कठिन शब्दार्थ-णेवत्थि-नहीं ।

भावार्थ-१७ प्रश्न-हे भगवन् ! अलोक के एक आकाशप्रदेश में जीव हैं, इत्यादि प्रश्न ।

१७ उत्तर-हे गौतम ! वहाँ 'जीव नहीं, जीवों के देश नहीं,' इत्यादि पूर्ववत् जानना चाहिये, यावत् अलोक अनन्त अगुरुलघु गुणों से संयुक्त है और सर्वाकाश के अनन्तवें भाग न्यून है ।

१८-द्रव्य से अधोलोक क्षेत्रलोक में अनन्त जीव द्रव्य हैं, अनन्त अजीव द्रव्य हैं और अनन्त जीवाजीव द्रव्य हैं । इसी प्रकार तिर्यग्लोक क्षेत्रलोक में और

ऊर्ध्वलोक क्षेत्रलोक में भी जानना चाहिये । द्रव्य से अलोक में जीव द्रव्य नहीं, अजीव द्रव्य नहीं और जीवाजीव द्रव्य भी नहीं, किन्तु अजीव द्रव्य का एक देश है यावत् सर्वाकाश के अनन्तवें भाग न्यून है । काल से अधोलोक क्षेत्रलोक किसी समय नहीं था-ऐसा नहीं, यावत् वह नित्य है । इस प्रकार यावत् अलोक के विषय में भी कहना चाहिये । भाव से अधोलोक क्षेत्रलोक में 'अनन्त वर्ण पर्याय हैं,' इत्यादि दूसरे शतक के प्रथम उद्देशक में स्कन्दक वर्णित प्रकरण के अनुसार जानना चाहिये, यावत् अनन्त अगुरुलघु पर्याय हैं । इस प्रकार यावत् लोक तक जानना चाहिये । भाव से अलोक में वर्ण पर्याय नहीं, यावत् अगुरुलघु पर्याय नहीं है, परन्तु एक अजीव द्रव्य का देश अनन्त अगुरुलघुगुणों से संयुक्त है और वह सर्वाकाश के अनन्तवें भाग न्यून है ।

विवेचन-यहाँ पर अलोक में जो अगुरुलघु पर्यायों का निषेध किया गया है वह अन्य द्रव्यों की पर्यायों की अपेक्षा समझना चाहिये । क्योंकि अलोक में अन्य द्रव्य है ही नहीं । आगमकारों की वर्णन शैली ही इस प्रकार की है कि पहले आधेय द्रव्यों का वर्णन करके बाद में आधार द्रव्य का वर्णन करते हैं । जैसा कि द्रव्य आदि के वर्णन में भी जीव अजीव आदि आधेय द्रव्यों का निषेध करके फिर एक अजीव द्रव्य देश के रूप में अलोक को बताया है । इसी प्रकार यहाँ पर भी आधेय द्रव्यों के अगुरुलघु पर्यन्त पर्यायों का निषेध करके अलोक को एक अजीव द्रव्य के देश रूप और अनन्त अगुरुलघु गुणों से संयुक्त बताया है ।

लोक की विशालता

१९ प्रश्न-लोए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?

१९ उत्तर-गोयमा ! अयण्णं जंबुद्दीवे दीवे सव्वदीव० जाव-परिक्खेवेणं । तेणं कालेणं तेणं समएणं छ देवा महिड्ढीया जाव-महेसक्खा जंबुद्दीवे दीवे मंदरे पव्वए मंदरचूलियं सव्वओ समंता संपरिक्खित्ता णं चिट्ठेज्जा, अहे णं चत्तारि दिसाकुमारीओ महत्तरि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याओ चत्तारि वलिपिंडे गहाय जंबुद्दीवस्स दीवस्स चउसु वि दिसासु वहिया अभिमुहीओ ठिच्चा ते चत्तारि वलिपिंडे जमगसमगं वहियाभिमुहे पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा ! तओ एगमेगे देवे ते चत्तारि बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाए, एवं दाहिणाभिमुहे, एवं पच्चत्थाभिमुहे, एवं उत्तराभिमुहे, एवं उड्ढाभि० एगे देवे अहोभिमुहे पयाए, तेणं कालेणं तेणं समएणं वाससहस्साउए दारए पयाए, तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो पहीणा भवंति, णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति । तएणं तस्स दारगस्स आउए पहीणे भवइ, णो चेव णं जाव संपाउणंति. तएणं तस्स दारगस्स अट्ठिमिंजा पहीणा भवंति, णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति । तएणं तस्स दारगस्स आसत्तमे वि कुलवंसे पहीणे भवइ, णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति । तएणं तस्स दारगस्स णामगोए वि पहीणे भवइ, णो चेव णं ते देवा लोगंतं संपाउणंति, तेसि णं भंते ! देवाणं किं गए वहुए अगए बहुए ? गोयमा ! गए वहुए णो अगए बहुए, गयाउ से अगए असंखेज्जइभागे, अगयाउ से गए असंखेज्जगुणे, लोए णं गोयमा ! एमहालए पण्णत्ते ।

कठिन शब्दार्थ-**महालए**-बड़ा, **चिट्ठेज्जा**-खड़े रहे, **जमगसमगं**-एक साथ, **पडिसाहरित्तए**-ग्रहण कर सके, **पयाए**-गया, उत्पन्न हुआ, **दारए**-बालक, **पहीणा**-नष्ट हुए, मर गए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! लोक कितना बड़ा कहा है ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! जम्बूद्वीप नामक यह द्वीप, समस्त द्वीप और समुद्रों के मध्य में है। इसकी परिधि तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस (३१६२२७) योजन, तीन कोस एक सौ अट्ठाईस धनुष और साढ़े तेरह अंगुल से कुछ अधिक है। यदि महर्द्धिक यावत् महासुख सम्पन्न छह देव, मेरु पर्वत पर उसकी चूलिका के चारों तरफ खड़े रहें और नीचे चार दिशाकुमारी देवियां चार बलिपिण्ड लेकर जम्बूद्वीप की जगती पर चारों दिशाओं में बाहर की ओर मुँह करके खड़ी होवें, फिर वे देवियां एक साथ चारों बलिपिण्डों को बाहर फेंके। उसी समय उन देवों में से प्रत्येक देव चारों बलिपिण्डों को पृथ्वी पर गिरने के पहले ही ग्रहण करने में समर्थ हैं-ऐसी तीव्र गति वाले उन देवों में से एक देव उत्कृष्ट यावत् तीव्र गति से पूर्व में, एक देव पश्चिम में, एक देव उत्तर में, एक देव दक्षिण में, एक देव ऊर्ध्वदिशा में और एक देव अधोदिशा में जावे, उसी दिन, उसी समय एक गाथापति के, एक हजार वर्ष की आयुष्य वाला एक बालक हुआ। बाद में उस बालक के माता-पिता कालधर्म को प्राप्त हो गये, उतने समय में भी वे देव, लोक का अन्त प्राप्त नहीं कर सकते। वह बालक स्वयं आयुष्य पूर्ण होने पर काल-धर्म को प्राप्त हो गया, उतने समय में भी वे देव, लोक का अन्त प्राप्त नहीं कर सकते। उस बालक के हाड़ और हाड़ की मज्जा विनष्ट हो गई, तो भी वे देव, लोक का अन्त प्राप्त नहीं कर सकते। उस बालक की सात पीढ़ी तक कुलवंश नष्ट हो गया, तो उतने समय में भी वे देव, लोक का अन्त प्राप्त नहीं कर सकते। पश्चात् उस बालक के नाम-गोत्र भी नष्ट हो गये, उतने समय तक चलते रहने पर भी वे देव, लोक के अन्त को प्राप्त नहीं कर सकते।

(प्रश्न) हे भगवन् ! उन देवों का गत (गया हुआ-उल्लंघन किया हुआ) क्षेत्र अधिक है, या अगत (नहीं गया हुआ) क्षेत्र अधिक है ?

(उत्तर) हे गौतम ! गत-क्षेत्र अधिक है। अगत-क्षेत्र थोड़ा है। अगत-क्षेत्र, गत-क्षेत्र के असंख्यातवें भाग है। अगत-क्षेत्र से गत-क्षेत्र असंख्यात गुणा है। हे गौतम ! लोक इतना बड़ा है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन-लोक की विशालता को बतलाने के लिये असत् कल्पना से यह रूपक परिकल्पित किया गया है।

शंका-मेरुपर्वत की चूलिका से पूर्वादि चारों दिशाओं में लोक का विस्तार अर्द्ध रज्जु प्रमाण है अधोलोक में सात रज्जु से कुछ अधिक है और ऊर्ध्वलोक में किञ्चिन्न्यून सात रज्जु है। वे सभी देव छहों दिशाओं में समान गति से जाते हैं, फिर छहों दिशाओं में गत क्षेत्र से अगत क्षेत्र असंख्यातवें भाग एवं अगत क्षेत्र से गत क्षेत्र असंख्यात गुणा कैसे बतलाया गया है? क्योंकि चारों दिशाओं की अपेक्षा ऊर्ध्व और अधो दिशा में क्षेत्र परिमाण की विषमता है।

समाधान-शंका उचित है, किन्तु यहाँ घन-कृत (वर्गीकृत) लोक की विवक्षा करके यह रूपक कल्पित किया गया है, इसलिये कोई दोष नहीं। ऐसा करके मेरु पर्वत को मध्य में रखने पर सभी ओर साढ़े तीन-साढ़े तीन रज्जु रह जाता है।

शंका-यदि उक्त स्वरूप वाली गति से गमन करते हुए वे देव, इतने लम्बे समय में भी जब लोक के अन्त को प्राप्त नहीं कर सकते, तो तीर्थंकर भगवान् के जन्म-कल्याणादिक में ठेठ अच्युत देवलोक तक से देव यहाँ कैसे शीघ्र आ जाते हैं? क्योंकि क्षेत्र बहुत लम्बा है और अवतरण काल (उन देवों के आने का समय) अत्यल्प है?

समाधान-शंका उचित है, किन्तु तीर्थंकर भगवान् के जन्म कल्याणादि में आने की गति शीघ्रतम है। उस गति की अपेक्षा इस प्रकरण में बतलाई हुई देवों की गति अति-मन्द है *।

अलोक की विशालता

२० प्रश्न-अलोए णं भंते ! के महालए पण्णत्ते ?

२० उत्तर-गोयमा ! अयण्णं समयखेत्ते पणयालीसं जोयणसय-सहस्साइं आयामविक्खंभेणं, जहा खंदए, जाव परिक्खेवेणं। तेणं कालेणं तेणं समएणं दस देवा महिड्ढिया तहेव जाव संपरिक्खित्ता

* वे देव भी कदाचित् तिर्छलोक के होंगे ?-डोशी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णं संचिट्ठेज्जा, अहे णं अट्ठ दिसाकुमारीओ महत्तरियाओ अट्ठ बलिपिंडे गहाय माणुसुत्तरस्स पव्वयस्स चउसु वि दिसासु चउसु वि विदिसासु बहियाभिमुहीओ ठिच्चा ते अट्ठ बलिपिंडे जमगसमगं बहियाभिमुहे पक्खिवेज्जा, पभू णं गोयमा ! तओ एगमेगे देवे ते अट्ठ बलिपिंडे धरणितलमसंपत्ते खिप्पामेव पडिसाहरित्तए, ते णं गोयमा ! देवा ताए उक्किट्ठाए जाव देवगईए लोगंते ठिच्चा असब्भावपट्ठवणाए एगे देवे पुरच्छाभिमुहे पयाए, एगे देवे दाहिण-पुरच्छाभिमुहे पयाए, एवं जाव उत्तरपुरच्छाभिमुहे, एगे देवे उड्ढा-भिमुहे, एगे देवे अहोभिमुहे पयाए। तेणं कालेणं तेणं समएणं वाससयसहस्साउए दारए पयाए। तएणं तस्स दारगस्स अम्मा-पियरो पहीणा भवंति, णो चेव णं ते देवा अलोयंतं संपाउणंति, तं चेव जाव तेसिं णं भंते ! देवाणं किं गए बहुए अगए बहुए ? गोयमा ! णो गए बहुए अगए बहुए, गयाउ से अगए अणंतगुणे, अगयाउ से गए अणंतभागे, अलोए णं गोयमा ! एमहालए पण्णत्ते।

कठिन शब्दार्थ—समयखेत्ते—समय क्षेत्र—मनुष्य लोक।

भावार्थ—२० प्रश्न—हे भगवन् ! अलोक कितना बड़ा है ?

२० उत्तर—हे गौतम ! इस मनुष्य क्षेत्र की लम्बाई और चौड़ाई पैंता-लीस लाख (४५०००००) योजन है, इत्यादि स्कन्दक प्रकरण के अनुसार जानना चाहिये, यावत् वह परिधि युक्त है। उस समय में दस महद्धिक देव इस मनुष्य लोक को चारों ओर घेर कर खड़े हों, उनके नीचे आठ दिशा कुमारियाँ आठ बलिपिण्डों को ग्रहण कर मानुषोत्तर पर्वत की चारों दिशाओं और चारों विदि-

शाओं में बाह्याभिमुख खड़ी रहें, पश्चात् वे उन आठों बलिपिण्डों को एक साथ ही मानुषोत्तर पर्वत की बाहर की दिशाओं में फेंके, तो उन खड़े हुए देवों में से प्रत्येक देव उन बलिपिण्डों को पृथ्वी पर गिरने के पूर्व ही ग्रहण करने में समर्थ हैं,-ऐसी शीघ्र गति वाले वे दसों देव, लोक के अन्त से, यावत् (यह असत् कल्पना है जो संभव नहीं है) पूर्वादि चार दिशाओं में और चारों विदिशाओं में तथा एक ऊर्ध्व-दिशा में और एक अधो-दिशा में जावे। उसी समय एक गाथापति के घर एक लाख वर्ष की आयुष्य वाला एक बालक उत्पन्न हुआ। क्रमशः उस बालक के माता-पिता दिवंगत हुए, उसका भी आयुष्य क्षीण हो गया, उसकी अस्थि और मज्जा नष्ट हो गई और उसकी सात पीढ़ियों के पश्चात् वह कुलवंश भी नष्ट हो गया और उसके नाम-गोत्र भी नष्ट हो गये, इतने समय तक चलते रहने पर भी वे देव अलोक के अन्त को प्राप्त नहीं कर सकते।

(प्रश्न) हे भगवन् ! उन देवों द्वारा गत-क्षेत्र अधिक है, या अगत-क्षेत्र अधिक है ?

(उत्तर) हे गौतम ! गत-क्षेत्र थोड़ा है और अगत-क्षेत्र अधिक है। गत-क्षेत्र से अगत-क्षेत्र अनन्त गुण है। अगत-क्षेत्र से गत-क्षेत्र अनन्तवें भाग है। हे गौतम ! अलोक इतना बड़ा कहा गया है।

आकाश के एक प्रदेश पर जीव-प्रदेश

नर्तकी का दृष्टांत

२१ प्रश्न-लोगस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे जे एगिंदिय-पएसा जाव पंचिंदियपएसा अणिंदियपएसा अण्णमण्णबद्धा, अण्ण-मण्णपुट्ठा, जाव अण्णमण्णसमभरघडत्ताए चिट्ठंति ? अत्थि णं भंते !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अण्णमण्णस्स किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पायंति, छविच्छेदं वा करेंति ?

२१ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

(प्रश्न) से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-लोयस्स णं एगंमि आगासपएसे जे एगिंदियपएसा जाव चिट्ठंति, णत्थि णं भंते ! अण्णमण्णस्स किंचि आबाहं वा जाव करेंति ?

(उत्तर) गोयमा ! से जहाणामए णट्टिया सिया सिंगारागारचारुवेसा, जाव कलिया रंगट्ठाणंसि जणसयाउलंसि जणसयसहस्साउलंसि बत्तीसइविहस्स णट्टस्स अण्णयरं णट्टविहिं उवदंसेज्जा, से णूणं गोयमा ! ते पेच्छगा तं णट्टियं अणिमिसाए दिट्ठीए सव्वओ समंता समभिलोएंति ? हंता समभिलोएंति, ताओ णं गोयमा ! दिट्ठिओ तंसि णट्टियंसि सव्वओ समंता संणिपडियाओ ? हंता सण्णिपडियाओ, अत्थि णं गोयमा ! ताओ दिट्ठीओ तीसे णट्टियाए किंचि वि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति, छविच्छेदं वा करेंति ? णो इणट्ठे समट्ठे । अहवा सा णट्टिया तासिं दिट्ठिणं किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएइ, छविच्छेदं वा करेइ ? णो इणट्ठे समट्ठे । ताओ वा दिट्ठीओ अण्णमण्णाए दिट्ठीए किंचि आबाहं वा वाबाहं वा उप्पाएंति, छविच्छेदं वा करेंति ? णो इणट्ठे समट्ठे । से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-तं चेव जाव छविच्छेदं वा करेंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-आबाहं-आबाधा-पीड़ा, **वाबाहं**-व्याबाधा-विशेष पीड़ा, **छविच्छेदं**-छविच्छेद-अवयव का छेद, **णट्टिया**-नर्तकी-नृत्य करने वाली, **अण्णमण्णसमभरघडत्ताए**-परस्पर सम्बद्ध, **सिंगारागारचारुवेसा**-शृंगार सुन्दर आकार और सुन्दर वेश युक्त, **जणसयाउलंसि**-सैकड़ों मनुष्यों से, **पेच्छगा**-प्रेक्षक।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! लोक के एक आकाशप्रदेश पर एकेन्द्रिय जीवों के जो प्रदेश हैं, यावत् पंचेंद्रिय जीवों के और अनिन्द्रिय जीवों के जो प्रदेश हैं, क्या वे सभी अन्योन्य बद्ध हैं, अन्योन्य स्पृष्ट हैं, यावत् अन्योन्य संबद्ध हैं ? हे भगवन् ! वे परस्पर एक दूसरे को आबाधा (पीड़ा) और व्याबाधा (विशेष पीड़ा) उत्पन्न करते हैं, तथा उनके अवयवों का छेद करते हैं ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं।

(प्र०) हे भगवन् ! इसका क्या कारण है, यावत् वे पीड़ा नहीं पहुँचाते और अवयवों का छेद नहीं करते ?

(उ०) हे गौतम ! जिस प्रकार कोई शृंगारित और उत्तम वेषवाली यावत् मधुर कण्ठवाली नर्तकी सैकड़ों और लाखों व्यक्तियों से परिपूर्ण रंगस्थली में बत्तीस प्रकार के नाट्यों में से कोई एक नाट्य दिखाती है, तो हे गौतम ! क्या दर्शक लोग, उस नर्तकी को अनिमेष दृष्टि से चारों ओर से देखते हैं और उनकी दृष्टियां उस नर्तकी के चारों ओर गिरती हैं ? हाँ, भगवन् ! वे दर्शक लोग उसे अनिमेष दृष्टि से देखते हैं और उनकी दृष्टियाँ उसके चारों ओर गिरती हैं। हे गौतम ! क्या उन दर्शकों की वे दृष्टियाँ उस नर्तकी को किसी प्रकार की पीड़ा पहुँचाती है, या उसके अवयव का छेद करती है ? हे भगवन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं। हे गौतम ! वे दृष्टियाँ परस्पर एक दूसरे को किसी प्रकार की पीड़ा उत्पन्न करती है, या उनके अवयव का छेद करती है ? हे भगवन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं। हे गौतम ! इसी प्रकार जीवों के आत्म-प्रदेश परस्पर बद्ध, स्पृष्ट और संबद्ध होने पर भी आबाधा, व्याबाधा उत्पन्न नहीं करते और न अवयव का छेद करते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२२ प्रश्न-लोयस्स णं भंते ! एगंमि आगासपएसे जहण्णपए जीवपएसाण उक्कोसपए जीवपएसाणं, सव्वजीवाणं य कयरे कयरे० जाव विसेसाहिया वा ?

२२ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा लोयस्स एगंमि आगासपएसे जहण्णपए जीवपएसा, सव्वजीवा असंखेज्जगुणा, उक्कोसपए जीवपएसा विसेसाहिया ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ एक्कारससए दसमोद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-२२ प्रश्न-हे भगवन् ! लोक के एक आकाश प्रदेश पर जघन्य पद में रहे हुए जीव-प्रदेश, उत्कृष्ट पद में रहे हुए जीव-प्रदेश और सभी जीव, इनमें कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! लोक के एक आकाश-प्रदेश पर जघन्य पद में रहे हुए जीव-प्रदेश सब से थोड़े हैं । उससे सभी जीव असंख्यात गुण हैं, उससे एक आकाशप्रदेश पर उत्कृष्ट पद से रहे हुए जीव-प्रदेश विशेषाधिक हैं ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतमस्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का दसवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक ११ उद्देशक ११

सुदर्शन सेठ के काल विषयक प्रश्नोत्तर

१—तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियग्गामे णामं णयरे होत्था, वण्णओ। दूइपलासए चेइए, वण्णओ, जाव पुढविसिलापट्टओ। तत्थ णं वाणियग्गामे णयरे सुदंसणे णामं सेट्ठी परिवसइ, अड्ढे, जाव अपरिभूए समणोवासए अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ। सामी समोसढे, जाव परिसा पज्जुवासइ। तएणं से सुदसणे सेट्ठी इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ-तुट्ठे ण्हाए कय—जाव पायच्छित्ते सव्वालंकारविभूसिए साओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, साओ० सकोरेंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं पायविहारचारेणं महयापुरिसवग्गुरापरिक्खित्ते वाणियग्गामं णयरं मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव दूइपलासे चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० समणं भगवं महावीरं पंचविहेणं अभिगमेणं अभिगच्छइ, तंजहा—सचित्ताणं दव्वाणं० जहा उसभदत्तो, जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ। तएणं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स सेट्ठिस्स तीसे य महतिमहालयाए जाव आराहए भवइ। तएणं से सुदंसणे सेट्ठी समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा, णिसम्म हट्ठ-तुट्ठे उट्ठाए उट्ठेइ, उट्ठाए० समणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव णमंसित्ता एवं वयासी-

कठिन शब्दार्थ—परिवसइ—रहता था, **अड्ढे**—आढ्य-धनाढ्य, **अपरिभूए**—किसी से नहीं दबने वाला (दृढ़)।

भावार्थ-१-उस काल उस समय में वाणिज्यग्राम नामक नगर था (वर्णन)। द्युतिपलाश नामक उद्यान था (वर्णन)। उसमें एक पृथ्वी-शिलापट्ट था। उस वाणिज्यग्राम नगर में सुदर्शन नामक सेठ रहता था। वह आढ्य यावत् अपरिभूत था। वह जीवाजीवादि तत्त्वों का जाननेवाला श्रमणोपासक था। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहां पधारे, यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी। भगवान् का आगमन सुनकर सुदर्शन सेठ बहुत हर्षित एवं संतुष्ट हुआ। वह स्नानादि कर एवं वस्त्रालंकारों से विभूषित होकर, कोरण्ट पुष्प की मालायुक्त छत्र धारण कर, अनेक व्यक्तियों के साथ पैदल चल कर भगवान् के दर्शनार्थ गया। नौवें शतक के तेतीसवें उद्देशक में ऋषभदत्त के प्रकरण में कथित पांच अभिगम करके वह सुदर्शन सेठ, भगवान् की तीन प्रकार की पर्युपासना करने लगा। भगवान् ने उस महापरिषद् को और सुदर्शन सेठ को 'आराधक बनने' जैसी धर्म-कथा कही। धर्म-कथा सुनकर सुदर्शन सेठ अत्यन्त हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए। उन्होंने खड़े होकर भगवान् को तीन बार प्रदक्षिणा की और वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार पूछा।

२ प्रश्न-कइविहे णं भंते ! काले पण्णत्ते ?

२ उत्तर-सुदंसणा ! चउव्विहे काले पण्णत्ते, तंजहा-१ पमाणकाले २ अहाउणिव्वत्तिकाले ३ मरणकाले ४ अद्धाकाले।

३ प्रश्न-से किं तं पमाणकाले ?

३ उत्तर-पमाणकाले दुविहे पण्णत्ते, तंजहा-दिवसप्पमाणकाले

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

राइप्पमाणकाले य । चउपोरिसिए दिवसे चउपोरिसिया राई भवइ । उक्कोसिआ अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! काल कितने प्रकार का कहा है ?

२ उत्तर-हे सुदर्शन ! काल चार प्रकार का कहा है । यथा-१ प्रमाण काल, २ यथायुनिर्वृत्ति काल, ३ मरण काल और ४ अद्धा काल ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रमाण काल कितने प्रकार का कहा है ?

३ उत्तर-हे सुदर्शन ! प्रमाण काल दो प्रकार का कहा है । यथा-दिवस-प्रमाण काल और रात्रि प्रमाणकाल । चार पौरुषी (प्रहर) का दिवस होता है और चार पौरुषी की रात्रि होती है । दिवस और रात्रि की पौरुषी उत्कृष्ट साढ़े चार मुहूर्त की और जघन्य तीन मुहूर्त की होती है ।

४ प्रश्न-जया णं भंते ! उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, तया णं कइभागमुहुत्तभागेणं परिहायमाणी परिहायमाणी जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ? जया णं जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, तया णं कइभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी परिवड्ढमाणी उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?

४ उत्तर-सुदंसणा ! जया णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ तया णं बावीससयभागमुहुत्त-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भागेणं परिहायमाणी परिहायमाणी जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ। जया णं जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, तया णं बावीससयभागमुहुत्तभागेणं परिवड्ढमाणी परिवड्ढमाणी उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ।

५ प्रश्न-कया णं भंते ! उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ, कया वा जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ ?

५ उत्तर-सुदंसणा ! जया णं उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ तया णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ, जहण्णिया तिमुहुत्ता राईए पोरिसी भवइ। जया णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्तिया राई भवइ, जहण्णिए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ, तया णं उक्कोसिया अद्धपंचममुहुत्ता राईए पोरिसी भवइ, जहण्णिया तिमुहुत्ता दिवसस्स पोरिसी भवइ।

कठिन शब्दार्थ-जया णं-जब, कया णं-कब।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! जब दिवस की अथवा रात्रि की पौरुषी उत्कृष्ट साढ़े चार मुहूर्त की होती है, तब उस मुहूर्त का कितना भाग घटते-घटते (कम होते हुए) दिवस और रात्रि की जघन्य तीन मुहूर्त की पौरुषी होती है, और जब दिवस अथवा रात्रि की पौरुषी जघन्य तीन मुहूर्त की होती है, तब

मुहूर्त का कितने भाग बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट साढ़े चार मुहूर्त की पौरुषी होती है ?

४ उत्तर-हे सुदर्शन ! जब दिवस और रात्रि की पौरुषी उत्कृष्ट साढ़े चार मुहूर्त की होती है, तब मुहूर्त का एक सौ बाईसवां भाग घटते-घटते जघन्य पौरुषी तीन मुहूर्त की होती है और जब जघन्य पौरुषी तीन मुहूर्त की होती है, तब मुहूर्त का एक सौ बाईसवां भाग बढ़ते-बढ़ते उत्कृष्ट पौरुषी साढ़े चार मुहूर्त की होती है।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! दिवस की अथवा रात्रि की उत्कृष्ट साढ़े चार मुहूर्त की पौरुषी कब होती है और जघन्य तीन मुहूर्त की पौरुषी कब होती है ?

५ उत्तर-हे सुदर्शन ! जब अठारह मुहूर्त का बड़ा दिन होता है और बारह मुहूर्त की छोटी रात्रि होती है तब साढ़े चार मुहूर्त की दिवस की उत्कृष्ट पौरुषी होती है और रात्रि की तीन मुहूर्त की सबसे छोटी पौरुषी होती है। जब अठारह मुहूर्त की बड़ी रात्रि होती है और बारह मुहूर्त का छोटा दिन होता है, तब साढ़े चार मुहूर्त की उत्कृष्ट रात्रि-पौरुषी होती है और तीन मुहूर्त की जघन्य दिवस-पौरुषी होती है।

६ प्रश्न-कया णं भंते ! उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ, कया वा उक्कोसिया अट्ठारस-मुहुत्ता राई भवइ, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ ?

६ उत्तर-सुदंसणा ! आसाढपुण्णिमाए उक्कोसए अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवइ, जहण्णिया दुवालसमुहुत्ता राई भवइ । पोसस्स पुण्णि-माए णं उक्कोसिया अट्ठारसमुहुत्ता राई भवइ, जहण्णए दुवालसमुहुत्ते दिवसे भवइ ।

७ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! दिवसा य राइओ य समा चेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भवंति ?

७ उत्तर-हंता, अत्थि ।

८ प्रश्न-कया णं भंते ! दिवसा य राईओ य समा चेव भवंति?

८ उत्तर-सुदंसणा ! चित्ता-सोयपुण्णिमासु णं एत्थ णं दिवसा य राईओ य समा चेव भवंति, पण्णरसमुहुत्ते दिवसे पण्णरसमुहुत्ता राई भवइ । चउभागमुहुत्तभागूणा चउमुहुत्ता दिवसस्स वा राईए वा पोरिसी भवइ । सेत्तं पमाणकाले ।

भावार्थ-६ प्रश्न-अठारह मुहूर्त का उत्कृष्ट दिवस और बारह मुहूर्त की जघन्य रात्रि कब होती है ? तथा अठारह मुहूर्त की उत्कृष्ट रात्रि और बारह मुहूर्त का जघन्य दिवस कब होता है ?

६ उत्तर-हे सुदर्शन ! आषाढ़ की पूर्णिमा को अठारह मुहूर्त का उत्कृष्ट दिवस तथा बारह मुहुर्त की जघन्य रात्रि होती है । पौष मास की पूर्णिमा को अठारह मुहूर्त की उत्कृष्ट रात्रि तथा बारह मुहूर्त का जघन्य दिन होता है ।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! दिवस और रात्रि ये दोनों समान भी होते हैं ?

७ उत्तर-हाँ, सुदर्शन ! होते हैं ।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! दिवस और रात्रि-ये दोनों समान कब होते हैं ?

८ उत्तर-हे सुदर्शन ! चैत्र की पूर्णिमा और आश्विन की पूर्णिमा को दिवस और रात्रि दोनों बराबर होते हैं । उस दिन पन्द्रह मुहुर्त का दिवस तथा पन्द्रह मुहूर्त की रात्रि होती है और दिवस एवं रात्रि की पौने चार मुहूर्त की पौरुषी होती है । इस प्रकार प्रमाण काल कहा गया है ।

विवेचन-जिससे दिवस, वर्ष आदि का प्रमाण जाना जाय, उसे 'प्रमाण काल' कहते हैं।

यहां अषाढ़ी पूर्णिमा को अठारह मुहूर्त का दिवस और पौष पूर्णिमा को अठारह मुहूर्त की रात्रि बतलाई गई है । यह पांच संवत्सर परिमाण युग के अन्तिम वर्ष की अपेक्षा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

समझना चाहिये। दूसरे वर्षों में तो जब कर्क संक्रान्ति होती है, तब ही अठारह मुहूर्त का दिवस और जब मकर संक्रान्ति होती है तब अठारह मुहूर्त की रात्रि होती है। जितने मुहूर्त का दिन या रात्रि होती है उसका चतुर्थ भाग पौरुषी कहलाता है। चैत्र और आश्विन पूर्णिमा को दिन और रात्रि पन्द्रह पन्द्रह मुहूर्त की समान होती है। यह कथन भी व्यवहार नय की अपेक्षा है। निश्चय में तो कर्क संक्रान्ति और मकर संक्रान्ति से जो ९२ वां दिवस होता है, उस समय दिवस और रात्रि समान होती है।

९ प्रश्न-से किं तं अहाउणिव्वत्तिकाले ?

९ उत्तर-अहाउणिव्वत्तिकाले जण्णं जेणं णेरइएण वा तिरिक्ख-जोणिएण वा मणुस्सेण वा देवेण वा अहाउयं णिव्वत्तियं सेत्तं पाले-माणे अहाउणिव्वत्तिकाले।

१० प्रश्न-से किं तं मरणकाले ?

१० उत्तर-मरणकाले जीवो वा सरीराओ सरीरं वा जीवाओ सेत्तं मरणकाले।

११ प्रश्न-से किं तं अद्धाकाले ?

११ उत्तर-अद्धाकाले अणेगविहे पण्णत्ते। से णं समयट्ठयाए आवलियट्ठयाए जाव उस्सप्पिणीट्ठयाए। एस णं सुदंसणा ! अद्धा-दोहारच्छेएणं छिज्जमाणी जाहे विभागं णो हव्वमागच्छइ सेत्तं समए। समयट्ठयाए असंखेज्जाणं समयाणं समुदयसमिइसमागमेणं सा एगा 'आवलिय' त्ति पवुच्चइ। संखेज्जाओ आवलियाओ जहा सालिउद्देसए जाव सागरोवमस्स उ एगस्स भवे परिमाणं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१२ प्रश्न-एएहि णं भंते ! पलिओवम-सागरोवमेहिं किं पओयणं ?

१२ उत्तर-सुदंसणा ! एएहिं पलिओवम-सागरोवमेहिं णेरइय-तिरिक्खजोणिय-मणुस्स-देवाणं आउयाइं मविज्जंति ।

१३ प्रश्न-णेरइयाणं भंते ! केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?

१३ उत्तर-एवं ठिइपयं णिरवसेसं भाणियव्वं जाव अजहण्ण-मणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ।

कठिन शब्दार्थ---**अहाउणिव्वत्तिकाले**-यथायुनिवृत्ति काल, **मविज्जंति**-माप किया जाता है, **अद्धादोहारच्छेएणं**-जिस समय के दो विभाग करने पर, **समुदयसमिइसमागमेणं**-समुदाय-समूह के मिलने मे ।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! यथायुनिर्वृत्ति काल कितने प्रकार का कहा है ?

९ उत्तर-हे सुदर्शन ! जिस किसी नैरयिक, तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य या देव ने स्वयं जैसा आयुष्य बांधा है, उसी प्रकार उसका पालन करना-भोगना, 'यथायुनिर्वृत्ति काल' कहलाता है ।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! मरण काल किसे कहते हैं ?

१० उत्तर-हे सुदर्शन ! शरीर से जीव का अथवा जीव से शरीर का वियोग होता है, उसे 'मरण काल' कहा जाता है ।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! अद्धाकाल कितने प्रकार का कहा है ?

११ उत्तर-हे सुदर्शन ! अद्धाकाल अनेक प्रकार का कहा है । यथा-समय रूप, आवलिका रूप यावत् उत्सर्पिणी रूप । हे सुदर्शन ! काल के सब से छोटे भाग को 'समय' कहते हैं, जिसके फिर दो विभाग न हो सकें । असंख्य समयों के समुदाय से एक आवलिका होती है । संख्यात आवलिका का एक उच्छ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वास होता है, इत्यादि छठे शतक के सातवें शालि उद्देशक में कहे अनुसार यावत् सागरोपम तक जानना चाहिये ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! पल्योपम और सागरोपम का क्या प्रयोजन है ?

१२ उत्तर-हे सुदर्शन ! पल्योपम और सागरोपम के द्वारा नैरयिक, तिर्यञ्चयोनिक, मनुष्य तथा देवों का आयुष्य मापा जाता है ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिकों की स्थिति कितने काल की कही है ?

१३ उत्तर-हे सुदर्शन ! यहाँ प्रज्ञापना सूत्र का चौथा स्थिति पद सम्पूर्ण कहना चाहिये यावत् सर्वार्थसिद्ध देवों की अजघन्य अनुत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की स्थिति कही है ।

विवेचन-जिस जीव ने जितना आयुष्य बांधा है, उतना आयुष्य भोगना 'यथायु-निर्वृत्तिकाल' कहलाता है ।

शरीर में जीव का पृथक् हो जाना अथवा जीव से शरीर का पृथक् हो जाना 'मरण काल' कहलाता है ।

समय, आवलिका आदि 'अद्धाकाल' कहलाता है । पल्योपम, सागरोपम से चार गति के जीवों की आयु मापी जाती है । यह उपमा काल है ।

महाबल चरित्र

१४ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! एएसिं पलिओवमसागरोवमाणं खएइ वा अवचएइ वा ?

१४ उत्तर-हंता, अत्थि ।

१५ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'अत्थि णं एएसि णं पलिओवम-सागरोवमाणं जाव अवचएइ वा' ?

१५ उत्तर-एवं खलु सुदंसणा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हत्थिणापुरे णामं णयरे होत्था, वण्णओ । सहसंबवणे उज्जाणे, वण्णओ । तत्थ णं हत्थिणापुरे णयरे बले णामं राया होत्था, वण्णओ । तस्स णं बलस्स रण्णो पभावई णामं देवी होत्था । सुकुमाल० वण्णओ जाव विहरइ । तएणं सा पभावई देवी अण्णया कयाइ तंसि तारिसगंसि वासघरंसि अब्भिंतरओ सचित्तकम्मे, बाहिरओ दूमिय-घट्ठ-मट्ठे, विचित्तउल्लोय-चिल्लियतले, मणि-रयण-पणासियंधयारे, बहुसम-सुविभत्तदेसभाए, पंचवण्ण-सरस-सुरभिमुक्क-पुप्फपुंजोवयारकलिए, कालागरुपवर-कुंदुरुक्क-तुरुक्कधूवमघमघंत-गंधुद्धुयाभिरामे, सुगंध-वरगंधिए, गंधवट्टिभूए तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगणवट्टिए, उभओविब्बोयणे, दुहओ उण्णए, मज्झे णय-गंभीरे, गंगा-पुलिण-वालुय-उद्दालसालिसए, उवचिय-खोमिय-दुगुल्लपट्टपडिच्छायणे, सुविरइयरयत्ताणे, रत्तं-सुय-संवुए, सुरम्मे, आइणग-रूय-बुर-णवणीय-तूलफासे, सुगंध-वरकुसुम-चुण्ण-सयणोवयारकलिए, अद्धरत्तकालसमयंसि सुत्त-जागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी अयमेयारूवं ओरालं, कल्लाणं, सिवं, धण्णं, मंगल्लं सस्सिरियं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा ।

कठिन शब्दार्थ–**उल्लोग**–उल्लोक–उपरिभाग, **चिल्लियतले**–प्रकाशित अधोभागवाला, **खएइ**–क्षय होता है, **अवचएइ**–अपचय होता है, **सचित्तकम्मे**–चित्र कर्म वाले, **दूमिय**–धवल, **घट्ठमट्ठे**–घिसकर मुलायम किये, **मणिरयणपणासियंधयारे**–मणि और रत्नों के प्रकाश से अन्धकार रहित, **सालिंगणवट्टिए**–तकिये सहित, **उभओविब्बोयणे**–दोनों ओर तकिये रखे हुए,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मज्झेणयगंभीरे-मध्य में नमी हुई एवं गम्भीर, **गंगापुलिणवालुयउद्दालसालिए**-गंगा के किनारे की रेती के अवदाल (धँसती हुई) के समान, **उवचिय-खोमियदुगुल्लपट्ट-पडिच्छायणे**-भरे हुए रेशमी दुकूल पट से आच्छादित, **सुविरइयरयत्ताणे** -रजस्त्राण से ढकी हुई, **रत्तंसुयसंवुए**-रक्तांशुक की मच्छरदानी युक्त, **आइणग**-आजिनक (चर्म का कोमल वस्त्र), **सयणो-वयारकलिए**-शयनोपचार युक्त ।

भावार्थ-१४ प्रश्न-हे भगवन् ! इन पल्योपम और सागरोपम का क्षय या अपचय होता है ?

१४ उत्तर-हाँ, सुदर्शन ! होता है ।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहते हैं कि पल्योपम और सागरोपम का क्षय और अपचय होता है ?

१५ उत्तर-हे सुदर्शन ! (इस बात को एक उदाहरण द्वारा समझाया जाता है) उस काल उस समय हस्तिनापुर नामक एक नगर था । (वर्णन) । वहाँ सहस्राम्रवन नामक उद्यान था । (वर्णन) । उस हस्तिनापुर नगर में बल नामक राजा था (वर्णन) । उस बल राजा के प्रभावती नाम की रानी थी । उसके हाथ पैर सुकुमाल थे, इत्यादि वर्णन जानना चाहिये । किसी दिन उस प्रकार के भवन में जो भीतर से चित्रित, बाहर से सफेदी किया हुआ और घिसकर कोमल बनाया हुआ था । जिसका उपरिभाग विविध चित्र युक्त था और नीचे का भाग सुशोभित था । वह मणि और रत्नों के प्रकाश से अन्धकार रहित, बहुसमान, सुविभक्त भागवाला, पांच वर्ण के सरस और सुगन्धित पुष्प-पुञ्जों के उपचार से युक्त, उत्तम कालागुरु, कुन्दरुक्क और तुरुष्क (शिलारस) के धूप से चारों ओर सुगन्धित, सुगन्धी पदार्थों से सुवासित एवं सुगन्धी द्रव्य की गुटिका के समान था । ऐसे वासगृह (भवन) में शय्या थी, जो तकिया सहित, सिरहाने और पगोतिये के दोनों ओर तकिया युक्त, दोनों ओर से उन्नत, मध्य में कुछ नमी हुई (झुकी हुई) विशाल, गंगा के किनारे की रेती के अवदाल (पैर रखने से फिसलजाने) के समान कोमल, क्षोमिक-रेशमी दुकूलपट से आच्छादित, रजस्त्राण (उड़ती हुई धूल को रोकने वाले वस्त्र) से ढकी हुई, रक्तांशुक (मच्छर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दानी) सहित, सुरम्य आजिनक (एक प्रकार का चमड़े का कोमल वस्त्र) रुई, बूर, नवनीत (मक्खन) अर्कतूल (आक की रुई) के समान कोमल स्पर्श वाली, सुगन्धित उत्तम पुष्प, चूर्ण और अन्य शयनोपचार से युक्त थी। ऐसी शय्या में सोती हुई प्रभावती रानी ने अर्द्ध निद्रित अवस्था में अर्द्ध रात्रि के समय इस प्रकार का उदार, कल्याण, शिव, धन्य, मंगलकारक और शोभायुक्त महास्वप्न देखा और जागृत हुई।

१६-हार-रयय-खीरसागर-ससंककिरण-दगरय-रययमहासेलपंडुर-तरोरुरमणिज्ज-पेच्छणिज्जं, थिर-लट्ठ-पउट्ठ-वट्ट-पीवर-सुसिलिट्ठ-विसिट्ठ-तिक्खदाढाविडंबियमुहं, परिकम्मियजच्चकमलकोमल-माइअसोभंतलट्ठ-उट्ठं, रत्तुप्पलपत्तमउअसुकुमालतालुजीहं, मूसागयपवरकणगताविय-आवत्तायंत-वट्ट-तडिविमलसरिसणयणं, विसालपीवरोरुं, पडिपुण्णवि-पुलखंधं, मिउविसयसुहुमलक्खण-पसत्थ-विच्छिण्णकेसरसडोवसोभियं, ऊसिय-सुणिम्मिय-सुजाय-अप्फोडियलंगूलं, सोमं, सोमाकारं, लीला-यंतं, जंभायंतं, णहयलाओ ओवयमाणं णिययवयणमइवयंतं, सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा।

कठिन शब्दार्थ--ओवयमाणं-नीचे उतरते हुए, ससंककिरण-चन्द्रमा की किरण, दगरय-जल बिन्दु, रययमहासेल-रजत के बड़े पर्वत जैसा, पंडुरतरोरुरमणिज्ज-अत्यंत श्वेत एवं रमणीय, पेच्छणिज्जं-देखने योग्य, पउट्ठ-प्रकोष्ठ (हाथ की कोहनी से लगाकर पहुँचे तक का भाग) णहयलाओ-नभ-आकाश से, णिययवयणमइवयंत-अपने मुंह में प्रवेश करते, पडिबुद्धा-जाग्रत हुई।

भावार्थ-१६-प्रभावती रानी ने स्वप्न में एक सिंह देखा, जो मोतियों के हार, रजत (चाँदी), क्षीर समुद्र, चन्द्र-किरण पानी की बिन्दु और रजत-महाशैल

वैताढ्य) पर्वत के समान श्वेत वर्ण वाला था। वह विशाल, रमणीय और दर्शनीय था। उसके प्रकोष्ठ स्थिर और सुन्दर थे। वह अपने गोल, पुष्ट, सुश्लिष्ट विशिष्ट और तीक्ष्ण दाढ़ाओं से युक्त मुंह को फाड़े हुए था। उसके ओष्ठ संस्कारित उत्तम कमल के समान कोमल, प्रमाणोपेत, अत्यन्त सुशोभित था। उसका तालु और जीभ रक्त-कमल के पत्र के समान, अत्यंत कोमल थी। उसकी आंखें मूस में रहे हुए एवं अग्नि से तपाये हुए तथा आवर्त करते हुए उत्तम स्वर्ण के समान वर्ण वाली, गोल और बिजली के समान निर्मल थी। उसकी जंघा विशाल और पुष्ट थी। वह सम्पूर्ण और विपुल स्कन्ध वाला था। उसकी केशरा कोमल विशद, सूक्ष्म एवं प्रशस्त लक्षण वाली थी। वह सिंह अपनी सुन्दर तथा उन्नत पूंछ को पृथ्वी पर फटकारता हुआ सौम्य, सौम्य आकार वाला, लीला करता हुआ, उबासी लेता हुआ और आकाश से नीचे उतर कर अपने मुख में प्रवेश करता हुआ दिखाई दिया। यह स्वप्न देखकर प्रभावती रानी जाग्रत हुई।

१७-तएणं सा पभावई देवी अयमेयारूवं ओरालं जाव-सस्सिरियं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुद्धा समाणी हट्ठ-तुट्ठ जाव हियया धाराहयकलंबपुप्फगं पिव समूसियरोमकूवा तं सुविणं ओगिण्हइ, ओगिण्हित्ता सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सय० अतुरियमचवलमसंभंताए अविलंबियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव बलस्स रण्णो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव० बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं पियाहिं मणुण्णाहिं मणामाहिं ओरालाहिं कल्लाणाहिं सिवाहिं धण्णाहिं मंगल्लाहिं सस्सिरीयाहिं मिय-महुर-मंजुलाहिं गिराहिं संलवमाणी संलवमाणी पडिबोहेइ, पडि० बलेणं रण्णा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अब्भणुण्णाया समाणी णाणामणिरयणभत्तिचित्तंसि भद्दासणंसि णिसीयइ, णिसीयित्ता आसत्था वीसत्था सुहासणवरगया बलं रायं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव-संलवमाणी संलवमाणी एवं वयासी-

कठिन शब्दार्थ—सस्सिरियं-श्री (शोभा) युक्त, महासुविणं-महास्वप्न, **अब्भणुण्णाया**—आज्ञा होने पर, **धाराहयकलंबपुप्फगंपिव**-मेघ की धारा से विकसित कदम्ब-पुष्प के समान, **समूसियरोमकूवा**—रोम कूप विकसित (रोमांचित) हुए, **गिराहिं**—वाणी से, **संलवमाणी**-बोलती हुई, **आसत्था वीसत्था**-आश्वस्त एवं विश्वस्त होकर।

भावार्थ-१७-प्रभावती रानी इस प्रकार के उदार यावत् शोभा वाले महा स्वप्न को देखकर जाग्रत हुई। वह हर्षित, सन्तुष्ट हृदय यावत् मेघ की धारा से विकसित कदम्ब-पुष्प के समान रोमाञ्चित होती हुई स्वप्न का स्मरण करने लगी। फिर रानी अपनी शय्या से उठी और शीघ्रता रहित, चपलता, संभ्रम एवं विलम्ब रहित, राजहंस के समान उत्तम गति से चलकर, बलराजा के शयनगृह में आई और इष्ट, कान्त, प्रिय, मनोज्ञ, मनाम, उदार, कल्याण शिव, धन्य, मंगल, सुन्दर, मित, मधुर और मञ्जुल (कोमल) वाणी से बोलती हुई बलराजा को जगाने लगी। राजा जाग्रत हुआ। राजा की आज्ञा होने पर, रानी विचित्र मणि और रत्नों की रचना से चित्रित भद्रासन पर बैठी। सुखासन पर बैठने के बाद स्वस्थ और शान्त बनी हुई प्रभावती रानी इष्ट, प्रिय यावत् मधुर वाणी से इस प्रकार बोली।

१८-एवं खलु अहं देवाणुप्पिया ! अज्ज तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिंगण० तं चेव जाव-णियगवयणमइवयंतं सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा, तण्णं देवाणुप्पिया ! एयस्स ओरालस्स जाव महासुविणस्स के मण्णे कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्सइ ? तएणं से बले राया पभावईए देवीए अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० जाव हयहियए धाराहयणीवसुरभिकुसुमचंचु-मालइयतणुयऊसवियरोमकूवे तं सुविणं ओगिण्हइ, ओगिण्हित्ता ईहं पविस्सइ, ईहं पविसित्ता अप्पणो साभाविएणं मइपुव्वएणं बुद्धिविण्णा-णेणं तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेइ, तस्स० पभावइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव मंगल्लाहिं मिय-महुर-सस्सिरि० संलवमाणे संलवमाणे एवं वयासी-

भावार्थ-१८-'हे देवानुप्रिय ! आज तथाप्रकार की (उपरोक्त वर्णन वाली) सुखशय्या में सोती हुई मैंने, अपने मुख में प्रवेश करते हुए सिंह के स्वप्न को देखा है। हे देवानुप्रिय ! इस उदार महास्वप्न का क्या फल होगा ? प्रभावती रानी की यह बात सुनकर और हृदय में धारण कर राजा हर्षित तुष्ट और संतुष्ट हृदयवाला हुआ। मेघ की धारा से विकसित कदम्ब के सुगं-धित पुष्प के समान रोमाञ्चित बना हुआ बल राजा, उस स्वप्न का अवग्रह (सामान्य विचार) तथा ईहा (विशेष विचार) करने लगा। ऐसा करके अपने स्वाभाविक बुद्धि-विज्ञान से उस स्वप्न के फल का निश्चय किया। तत्पश्चात् राजा इष्ट, कान्त, मंगल, मित यावत् मधुर वाणी से बोलता हुआ इस प्रकार कहने लगा।

१९-ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे, कल्लाणे णं तुमे जाव सस्सिरीए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे, आरोग्ग-तुट्ठि-दीहाउ-कल्लाण-मंगल्लकारए णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे, अत्थलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए !

रज्जलाभो देवाणुप्पिए ! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए ! णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीइक्कंताणं अम्हं कुलकेउं, कुलदीवं, कुलपव्वयं, कुलवडेंसयं, कुलतिलगं, कुलकित्तिकरं, कुलणंदिकरं, कुलजसकरं, कुलाधारं, कुलपायवं, कुलविवद्धणकरं, सुकुमालपाणि-पायं, अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं, जाव ससिसोमाकारं, कंतं, पियदंसणं, सुरूवं, देवकुमारसमप्पभं दारगं पयाहिसि ।

कठिन शब्दार्थ—कुलवडेंसयं–कुल में शिखर के समान, **कुलपायवं**–कुल में पादप (वृक्ष) के समान, **दारगं**–बालक, **ससिसोमाकारं**–चन्द्र के समान सौम्य आकार वाला ।

भावार्थ–१९–'हे देवी ! तुमने उदार स्वप्न देखा है । हे देवी ! तुमने कल्याण कारक स्वप्न देखा है । यावत् हे देवी ! तुमने शोभायुक्त स्वप्न देखा है । हे देवी ! तुमने आरोग्य, तुष्टि, दीर्घायुष्य, कल्याण और मंगलकारक स्वप्न देखा है । हे देवानुप्रिये ! तुम्हें अर्थलाभ, भोगलाभ, पुत्रलाभ और राज्य-लाभ होगा । हे देवानुप्रिये ! नव मास और साढ़े सात दिन बीतने के बाद तुम अपने कुल में ध्वज समान, दीपक समान, पर्वत समान, शिखर समान, तिलक समान तथा कुल की कीर्ति करनेवाले, कुल को आनन्द देने वाले, कुल का यश करने वाले, कुल के लिये आधारभूत, कुल में वृक्ष समान, कुल की वृद्धि करने वाले, सुकुमाल हाथ-पाँववाले, अंग हीनता रहित, सम्पूर्ण पञ्चेन्द्रिय युक्त शरीर वाले यावत् चन्द्र के समान सौम्य आकृति वाले, कान्त, प्रियदर्शन, सुरूप एवं देवकुमार के समान कान्तिवाले पुत्र को तुम जन्म दोगी ।

२०–से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे विण्णायपरिणयमेत्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सूरे वीरे विक्कंते वित्थिण्ण-विउलबल-वाहणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रज्जवई राया भविस्सइ। तं उराले णं तुमे देवी! सुमिणे दिट्ठे जाव आरोग्ग-तुट्ठि० जाव मंगल्लकारए णं तुमे देवी! सुविणे दिट्ठे त्ति कट्टु पभावइं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव वग्गूहिं दोच्चं पि तच्चं पि अणुवूहइ। तएणं सा पभावई देवी बलस्स रण्णो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० करयल० जाव एवं वयासी-'एवमेयं देवाणुप्पिया! तहमेयं देवाणुप्पिया! अवितहमेयं देवाणुप्पिया! असंदिद्धमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया! से जहेयं तुज्झे वयह' त्ति कट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता बलेणं रण्णा अब्भणुण्णाया समाणी णाणामणि-रयणभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवल० जाव गईए जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि णिसीयइ, णिसीइत्ता एवं वयासी-'मा मे से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सुविणे अण्णेहिं पावसुमिणेहिं पडिहम्मिस्सइ' त्ति कट्टु देव-गुरुजणसंबद्धाहिं पसत्थाहिं मंगल्लाहिं धम्मियाहिं कहाहिं सुविणजागरियं पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरइ।

कठिन शब्दार्थ-विक्कंते-पराक्रमी, पडिहम्मिस्सइ-प्रतिहत होजाय, असंदिद्धमेयं-संदेह रहित, पहाणे-प्रधान।

भावार्थ २०-वह बालक बालभाव से मुक्त होकर विज्ञ और परिणत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होकर युवावस्था को प्राप्त करके शूरवीर, पराक्रमी, विस्तीर्ण और विपुल बल (सेना) तथा वाहनवाला, राज्य का स्वामी होगा। हे देवी ! तुमने उदार (प्रधान) स्वप्न देखा है। हे देवी ! तुमने आरोग्य, तुष्टि यावत् मंगलकारक स्वप्न देखा है। इस प्रकार बल राजा ने इष्ट यावत् मधुर वचनों से प्रभावती देवी को यही बात दो बार और तीन बार कही। बलराजा की पूर्वोक्त बात सुनकर और अवधारण कर प्रभावती देवी हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई और हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोली-'हे देवानुप्रिय ! आपने जो कहा वह यथार्थ है, सत्य है, सन्देह रहित है। मुझे इच्छित और स्वीकृत है, पुनः पुनः इच्छित और स्वीकृत है।' इस प्रकार स्वप्न के अर्थ को स्वीकार कर बलराजा की अनुमति से भद्रासन से उठी और शीघ्रता एवं चपलता रहित गति से अपने शयनागार में आकर शय्या पर बैठी। रानी विचार करने लगी-'यह मेरा उत्तम, प्रधान और मंगलरूप स्वप्न, दूसरे पाप-स्वप्नों से विनष्ट न हो जाय, अतः वह देव-गुरु सम्बन्धी प्रशस्त और मंगल रूप धार्मिक कथाओं और विचारणाओं से स्वप्न जागरण करती हुई बैठी रही।

२१-तएणं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अज्ज सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं गंधोदय-सित्त-सुइअ-संमज्जिओवलित्तं सुगंधवरपंचवण्णपुप्फोवयारकलियं कालागरुपवर-कुंदुरुक्क० जाव गंधवट्टिभूयं करेह य करावेह य, करित्ता करावित्ता सीहासणं रएह, सीहासणं रयावित्ता ममेयं जाव पच्चप्पिणह। तएणं ते कोडुंबिय० जाव पडिसुणित्ता खिप्पामेव सविसेसं बाहिरियं उवट्ठाणसालं जाव पच्चप्पिणंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-२१ इसके बाद बलराजा ने कौटुम्बिक (सेवक) पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा-'हे देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र ही बाहर की उपस्थानशाला में, विशेष रूप से गन्धोदक का छिड़काव कर के स्वच्छ करो और लींप कर शुद्ध करो। सुगन्धित और उत्तम पांच वर्ण के पुष्पों से अलंकृत करो। उत्तम कालागुरु और कुन्दरुक के धूप से यावत् सुगन्धित गुटिका के समान करो-कराओ, फिर सिंहासन रखो और मुझे निवेदन करो। कौटुम्बिक पुरुषों ने राजा की आज्ञानुसार कार्य करके निवेदन किया।

२२-तएणं से बले राया पच्चूसकालसमयंसि सयणिज्जाओ अब्भुट्ठेइ, सय० पायपीढाओ पच्चोरुहइ, पाय० जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, अट्टणसालं अणुपविसइ, जहा उववाइए तहेव अट्टणसाला तहेव मज्जणघरे जाव ससिव्व पियदंसणे णरवई मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ तेणेव उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ णिसीइत्ता अप्पणो उत्तरपुरत्थिमे दिसीभाए अट्ठ भद्दासणाइं सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थगकयमंगलोवयाराइं रयावेइ, रयावेत्ता अप्पणो अदूरसामंते णाणामणिरयणमंडियं, अहियपेच्छणिज्जं, महग्घ-वरपट्टणुग्गयं, सण्हपट्टबहुभत्तिसयचित्तताणं, ईहामिय-उसभ० जाव भत्तिचित्तं, अब्भितरियं जवणियं अंछावेइ, अंछावेत्ता णाणामणि-रयणभत्तिचित्तं अत्थरय-मउयमसूरगोत्थयं, सेयवत्थपच्चुत्थुयं, अंगसुहफासुयं, सुमउयं पभावईए देवीए भद्दासणं

रयावेइ, रयावित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावेत्ता एवं वयासी-

कठिन शब्दार्थ-पच्चूसकालसमयंसि-प्रातः काल के समय, **जवणियं**-यवनिका-पर्दा, **अट्टणसाला**-व्यायामशाला, **सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं**-श्वेत वस्त्र से आच्छादित, **सिद्धत्थगकयमंगलोवयाराइं**-सरसों से मंगल उपचार किया है जिसका, **अहियपेच्छणिज्जं**-अत्यधिक देखने योग्य, **महग्घ**-मूल्यवान, **वरपट्टणुग्गयं**-महा नगर में निर्मित, **सण्हपट्टबहुभत्तिसयचित्तताणं**-बारिक सूत के और सैकड़ों प्रकार की कला से विचित्र तानेवाली, **अंछावेइ**-लगवाते हैं, **अत्थरयमउयमसूरगोत्थयं**-गादी तथा कोमल तकियों से युक्त, **सुमउयं**-सुकोमल ।

भावार्थ-२२ प्रातः काल के समय बलराजा अपनी शय्या से उठे और पादपीठ से नीचे उतरे । फिर वे व्यायामशाला में गये । वहां के कार्य का तथा स्नान घर के कार्य का वर्णन औपपातिकसूत्र से जानना चाहिये, यावत् चन्द्र के समान प्रियदर्शनी बनकर वह राजा स्नान घर से निकलकर बाहरी उपस्थानशाला में आया और पूर्व दिशा की ओर मुंह करके सिंहासन पर बैठा । फिर अपनी बांयी ओर ईशान-कोण में, श्वेत वस्त्र से आच्छादित तथा सरसों आदि मांगलिक पदार्थों से उपचरित आठ भद्रासन रखवाये । तत् पश्चात् प्रभावती देवी के लिए अनेक प्रकार के मणि-रत्नों से सुशोभित, बहुमूल्य, विचित्र कला-कौशल युक्त दर्शनीय, ऐसी सूक्ष्म वस्त्र की एक यवनिका (पर्दा) लगवाई । उसके भीतर अनेक प्रकार के मणि रत्नों से रचित, विचित्र, गद्दीयुक्त, श्वेत वस्त्र से आच्छादित तथा सुकोमल एक भद्रासन रखवाया । फिर बलराजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार कहा-

२३-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अट्ठंगमहाणिमित्तसुत्तत्थधारए, विविहसत्थकुसले, सुविणलक्खणपाढए सद्दावेह' तएणं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पडिसुणित्ता बलस्स रण्णो अंतियाओ पडि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता सिग्घं तुरियं चवलं चंडं वेइयं हत्थिणाउरं णयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव तेसिं सुविणलक्खणपाढगाणं गिहाइं तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता ते सुविणलक्खणपाढए सद्दावेंति। तएणं ते सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रण्णो कोडुंबियपुरिसेहिं सद्दाविया समाणा हट्ठ-तुट्ठ० ण्हाया कय० जाव सरीरा सिद्धत्थग-हरियालियाकयमंगलमुद्धाणा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो णिग्गच्छंति, सएहिं सएहिं० हत्थिणाउरं णयरं मज्झंमज्झेणं जेणेव बलस्स रण्णो भवणवरवडेंसए तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता भवणवरवडेंसगपडिदुवारंसि एगओ मिलंति, एगओ मिलित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव बले राया तेणेव उवागच्छंति, तेणेव उवागच्छित्ता करयल बलं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति। तएणं ते सुविणलक्खणपाढगा बलेणं रण्णा वंदिय-पूइअ-सक्कारिअसंमाणिआ समाणा पत्तेयं पत्तेयं पुव्वण्णत्थेसु भद्दासणेसु णिसीयंति। तएणं से बले राया पभावइं देविं जवणियंतरियं ठावेइ, ठावेत्ता पुप्फ-फल पडिपुण्णहत्थे परेणं विणएणं ते सुविणलक्खणपाढए एवं वयासी—

'एवं खलु देवाणुप्पिया! पभावई देवी अज्ज तंसि तारिसगंसि वासघरंसि जाव सीहं सुविणे पासित्ता णं पडिबुद्धा, तण्णं देवाणुप्पिया! एयस्स ओरालस्स जाव के मण्णे कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविस्सइ?

कठिन शब्दार्थ—हरियालियाकयमंगलमुद्धाणा-हरी दूब का मंगल करके।

भावार्थ-२३-'हे देवानुप्रियो ! तुम शीघ्र जाओ और ऐसे स्वप्न-पाठकों को बुलाओ-जो अष्टांग महानिमित्त के सूत्र एवं अर्थ के ज्ञाता हो और विविध शास्त्रों में कुशल हों।' राजाज्ञा को स्वीकार कर कौटुम्बिक पुरुष शीघ्र, चपलता युक्त, वेगपूर्वक एवं तीव्र गति से हस्तिनापुर नगर के मध्य होकर स्वप्न-पाठकों के घर पहुँचे और उन्हें राजाज्ञा सुनाई। स्वप्न-पाठक प्रसन्न हुए। उन्होंने स्नान करके शरीर को अलंकृत किया। वे मस्तक पर सर्षप और हरी दूब से मंगल करके अपने-अपने घर से निकले और राज्य-प्रसाद के द्वार पर पहुँचे। वे सभी स्वप्न-पाठक-एकत्रित होकर बाहर की उपस्थान शाला में बल-राजा के पास आये। उन्होंने हाथ जोड़कर जय-विजय शब्दों से बलराजा को बधाया। बल राजा से वन्दित, पूजित, सत्कृत और सम्मानित किये हुए वे स्वप्न पाठक, पहले से रखे हुए उन भद्रासनों पर बैठे। बल राजा ने प्रभावती देवी को बुलाकर यवनिका के भीतर बिठाया। तत्पश्चात् हाथों में पुष्प और फल लेकर बलराजा ने अतिशय विनयपूर्वक उन स्वप्न-पाठकों से इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियो ! आज प्रभावती देवी ने तथारूप के वासगृह में शयन करते हुए सिंह का स्वप्न देखा। हे देवानुप्रियो ! इस उदार स्वप्न का क्या फल होगा ?"

तएणं ते सुविणलक्खणपाढगा बलस्स रण्णो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० तं सुविणं ओगिण्हंति, ओगिण्हित्ता ईहं अणुप्पविसंति, अणुप्पविसित्ता तस्स सुविणस्स अत्थोग्गहणं करेंति, तस्स० अण्णमण्णेणं सद्धिं संचालेंति, संचालित्ता तस्स सुविणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभिगयट्ठा बलस्स रण्णो पुरओ सुविणसत्थाइं उच्चारेमाणा उच्चारेमाणा एवं वयासी-'एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं सुविणसत्थंसि बायालीसं सुविणा, तीसं महासुविणा, बावत्तरिं सव्वसुविणा दिट्ठा । तत्थणं देवाणुप्पिया ! तित्थयरमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा तित्थयरंसि वा चक्कवट्टिंसि वा गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं तीसाए महासुविणाणं इमे चोद्दस महासुविणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति । तं जहा–

"गय-वसह-सीह-अभिसेय-दाम-ससि-दिणयरं झयं कुंभं ।
पउमसर-सागर-विमाण-भवण-रयणुच्चय-सिहिं च" ।।

वासुदेवमायरो वा वासुदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अण्णयरे सत्त महासुविणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति । बलदेवमायरो वा बलदेवंसि गब्भं वक्कममाणंसि एएसिं चोद्दसण्हं महासुविणाणं अण्णयरे चत्तारि महासुविणे पासित्ता णं पडिबुज्झंति । मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गब्भं वक्कम-माणंसि एएसिं णं चउदसण्हं महासुविणाणं अण्णयरं एगं महासुविणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति । इमे य णं देवाणुप्पिया ! पभावईए देवीए एगे महासुविणे दिट्ठे, तं ओराले णं देवाणुप्पिया ! पभावईए देवीए सुविणे दिट्ठे, जाव आरोग्ग-तुट्ठि० जाव मंगल्लकारए णं देवाणु-प्पिया ! पभावईए देवीए सुविणे दिट्ठे, अत्थलाभो देवाणुप्पिया ! भोगलाभो देवाणुप्पिया ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिया ! रज्जलाभो देवाणु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्पिया ! एवं खलु देवाणुप्पिया ! पभावई देवी णवण्हं मासाणं बहु-पडिपुण्णाणं जाव वीइक्कंताणं तुम्हं कुलकेउं जाव पयाहिइ । से वि य णं दारए उम्मुक्कबालभावे जाव रज्जवई राया भविस्सइ, अणगारे वा भावियप्पा । तं ओराले णं देवाणुप्पिया ! पभावईए देवीए सुविणे दिट्ठे, जाव आरोग्ग-तुट्ठि-दीहाउअ-कल्लाण० जाव दिट्ठे ।

कठिन शब्दार्थ—कुलकेउं—कुल-केतु (कुल में ध्वजा के समान) ।

भावार्थ—बलराजा से प्रश्न सुनकर, अवधारण कर, वे स्वप्न-पाठक प्रसन्न हुए । उन्होंने उस स्वप्न के विषय में सामान्य विचार किया, विशेष विचार किया, स्वप्न के अर्थ का निश्चय किया, परस्पर एक दूसरे के साथ विचार-विमर्श किया और स्वप्न का अर्थ स्वयं जानकर, दूसरे से ग्रहण कर तथा शंका समाधान करके अर्थ का निश्चय किया और बलराजा को सम्बोधित करते हुए इस प्रकार बोले—"हे देवानुप्रिय ! स्वप्न-शास्त्र में बयालीस सामान्य स्वप्न और तीस महा स्वप्न—इस प्रकार कुल बहत्तर प्रकार के स्वप्न कहे हैं । इनमें से तीर्थंकर तथा चक्रवर्ती की माताएँ, जब तीर्थंकर या चक्रवर्ती गर्भ में आते हैं, तब ये चौदह महास्वप्न देखती हैं । यथा—१ हाथी, २ बैल, ३ सिंह, ४ अभिषेक की हुई लक्ष्मी ५ पुष्पमाला, ६ चन्द्र, ७ सूर्य, ८ ध्वजा, ९ कुम्भ (कलश), १० पद्मसरोवर, ११ समुद्र, १२ विमान अथवा भवन, १३ रत्नराशि और १४ निर्धूम अग्नि । इन चौदह महास्वप्नों में से वासुदेव की माता, जब वासुदेव गर्भ में आते हैं, तब सात स्वप्न देखती हैं, बलदेव की माता, जब बलदेव गर्भ में आते हैं, तब इन चौदह महास्वप्नों में से चार महास्वप्न देखती हैं और माण्डलिक राजा की माता, इन चौदह महास्वप्नों में से कोई एक महा स्वप्न देखती है । हे देवानुप्रिय ! प्रभावती ने एक महास्वप्न देखा है । यह स्वप्न उदार, कल्याणकारी, आरोग्य,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तुष्टि एवं मंगलकारी है, सुख समृद्धि का सूचक है। इससे आपको अर्थ लाभ, भोग लाभ, पुत्र लाभ और राज्य लाभ होगा। नव मास और साढ़े सात दिन व्यतीत होने पर प्रभावती देवी, आपके कुल में ध्वज समान पुत्र को जन्म देगी। वह बालक बाल्यावस्था को पारकर युवक होने पर राज्य का अधिपति होगा, अथवा भावितात्मा अनगार होगा। अतः हे देवानुप्रिय! प्रभावती देवी ने यह स्वप्न उदार यावत् महाकल्याणकारी देखा है।"

विवेचन—तीर्थंकर या चक्रवर्ती के गर्भ में आने पर उनकी माताएँ चौदह महा-स्वप्न देखती हैं। उनमें से बारहवें स्वप्न में 'विमान और भवन' ये दो शब्द दिये हैं। जिसका आशय यह है कि जो जीव, देवलोक से आकर तीर्थंकर रूप से जन्म लेता है, उसकी माता, स्वप्न में विमान देखती है और जो जीव नरक से आकर तीर्थंकर रूप में जन्म लेता है, उसकी माता स्वप्न में भवन देखती है।

२४–तएणं से बले राया सुविणलक्खणपाढगाणं अंतिए एय-मट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० करयल० जाव कट्टु ते सुविणलक्खण-पाढगे एवं वयासी–'एवमेयं देवाणुप्पिया! जाव से जहेयं तुब्भे वयह' त्ति कट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ, तं० सुविणलक्खणपाढए विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइम-पुप्फ-वत्थ-गंध-मल्लालंकारेणं सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारित्ता, सम्माणित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ, विउलं० जीवियारिहं पीइदाणं दलयित्ता पडि-विसज्जेइ, पडिविसज्जेत्ता सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ, सी० जेणेव पभावई देवी तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता पभावइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव संलवमाणे-संलवमाणे एवं वयासी–एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खलु देवाणुप्पिए ! सुविणसत्थंसि बायालीसं सुविणा तीसं महा- सुविणा बावत्तरिं सव्वसुविणा दिट्ठा । तत्थ णं देवाणुप्पिए ! तित्थ- यरमायरो वा चक्कवट्टिमायरो वा तं चेव जाव अण्णयरं एगं महा- सुविणं पासित्ता णं पडिबुज्झंति । इमे य णं तुमे देवाणुप्पिए ! एगे महासुविणे दिट्ठे, तं ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे, जाव रज्जवई राया भविस्सइ, अणगारे वा भावियप्पा, तं ओराले णं तुमे देवी ! सुविणे दिट्ठे, जाव दिट्ठे त्ति कट्टु पभावइं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव दोच्चं पि तच्चं पि अणुवूहइ ।

कठिन शब्दार्थ—जीवियारिहं—जीविका के योग्य, पीइदाणं—प्रीतिदान ।

भावार्थ-२४-स्वप्नपाठकों से उपरोक्त स्वप्न-फल सुनकर एवं अवधारण करके बलराजा हर्षित हुआ, संतुष्ट हुआ और हाथ जोड़ कर यावत् स्वप्न-पाठकों से इस प्रकार बोला-"हे देवानुप्रियों ! जैसा आपने स्वप्नफल बताया वह उसी प्रकार है-" इस प्रकार कह कर स्वप्न का अर्थ भली प्रकार से स्वीकार किया । इसके बाद स्वप्नपाठकों को विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम, पुष्प, वस्त्र, गन्ध, माला और अलंकारों से सत्कृत किया, सम्मानित किया और जीविका के योग्य बहुत प्रीतिदान दिया और उन्हें जाने की आज्ञा दी । इसके बाद अपने सिंहासन से उठकर बलराजा प्रभावती रानी के पास आया और स्वप्नपाठकों से सुना हुआ स्वप्न का अर्थ कह सुनाया । यावत् "हे देवानुप्रिये ! तुमने एक उदार महास्वप्न देखा है, जिससे तुम्हारे एक पुत्र उत्पन्न होगा । वह राज्याधिपति होगा अथवा भावितात्मा अनगार होगा । हे देवानुप्रिये ! तुमने एक उदार यावत् मांगलिक स्वप्न देखा है ।" इस प्रकार इष्ट, कान्त, प्रिय यावत् मधुरवाणी से दो तीन बार कहकर प्रभावती देवी की प्रशंसा की ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२५-तएणं सा पभावई देवी बलस्स रण्णो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० करयल० जाव एवं वयासी—'एयमेयं देवाणुप्पिया ! जाव तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ, तं० बलेणं रण्णा अब्भणुण्णाया समाणी णाणामणि-रयणभत्तिचित्त० जाव अब्भुट्ठेइ। अतुरियमचवल० जाव गईए जेणेव सए भवणे तेणेव उवागच्छइ, ते० सयं भवणमणुपविट्ठा।

२६-तएणं सा पभावई देवी ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिया तं गब्भं णाइसीएहिं णाइउण्हेहिं णाइतित्तेहिं णाइकडुएहिं णाइकसाएहिं णाइअंबिलेहिं णाइमहुरेहिं उउभयमाणसुहेहिं भोयण-च्छायण-गंध-मल्लेहिं जं तस्स गब्भस्स हियं मियं पत्थं गब्भपोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहिं सयणासणेहिं पइरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूमीए पसत्थदोहला संपुण्णदोहला सम्माणियदोहला अविमाणियदोहला वोच्छिण्णदोहला विणीयदोहला ववगयरोगसोग-मोह-भय-परित्तासा तं गब्भं सुहं-सुहेणं परिवहइ। तएणं सा पभावई देवी णवण्हं मासाणं बहुपडिपुण्णाणं अद्धट्ठमाणराइंदियाणं वीइक्कंताणं सुकुमालपाणि-पायं अहीणपडिपुण्णपंचिंदियसरीरं लक्खण-वंजणगुणोववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुरूवं दारयं पयाया।

कठिन शब्दार्थ—उउभयमाणसुहेहिं—प्रत्येक ऋतु में सुखकारक, दोहला—दोहद (गर्भ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के प्रभाव से गर्भवती की इच्छा)।

भावार्थ-२५-बलराजा से उपर्युक्त अर्थ सुनकर, अवधारण कर प्रभावती देवी हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई, यावत् हाथ जोड़ कर इस प्रकार बोली-"हे देवानुप्रिय ! जैसा आप कहते हैं वैसा ही है।" इस प्रकार कहकर स्वप्न के अर्थ को भली प्रकार ग्रहण किया और बलराजा की अनुमति से अनेक प्रकार के मणि-रत्नों की कारीगरी से युक्त उस भद्रासन से उठी और शीघ्रता तथा चपलता रहित यावत् हंसगति से चलकर अपने भवन में आई।

२६-स्नान आदि कर के प्रभावती देवी अलंकृत एवं विभूषित हुई। वह गर्भ का पालन करने लगी। वह अत्यन्त शीतल, अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त-तिक्ख (तीखा), अत्यन्त कटु, अत्यन्त कषैला, अत्यन्त खट्टा और अत्यन्त मधुर पदार्थ नहीं खाती, परन्तु ऋतु योग्य सुखकारक भोजन करती। वह गर्भ के लिये हितकारी, पथ्यकारी, मित और पोषण करने वाले पदार्थ यथा-समय ग्रहण करने लगी तथा वैसे ही वस्त्र और माला, पुष्प, आभरण आदि धारण करने लगी। यथा-समय उसे जो जो दोहद उत्पन्न हुए, वे सभी सम्मान के साथ पूर्ण किये गये। वह रोग, शोक, मोह, भय और परित्रास रहित होकर गर्भ का सुख-पूर्वक पोषण करने लगी। इस प्रकार नवमास और साढ़े सात दिन पूर्ण होने पर प्रभावती देवी ने सुकुमाल हाथ पैर वाले दोष रहित, प्रतिपूर्ण पञ्चेन्द्रिय युक्त शरीर वाले तथा लक्षण, व्यञ्जन और गुणों से युक्त यावत् चन्द्र समान सौम्य आकृति वाले, कान्त, प्रिय-दर्शन और सुन्दर रूप वाले पुत्र को जन्म दिया।

२७-तएणं तीसे पभावईए देवीए अंगपडियारियाओ पभावइं देविं पसूयं जाणेत्ता जेणेव बले राया तेणेव उवागच्छंति तेणेव उवागच्छित्ता करयल० जाव बलं रायं जएणं विजएणं वद्धावेंति, जएणं विजएणं वद्धावेत्ता एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! पभावई०

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पियट्ठयाए पियं णिवेदेमो, पियं भे भवउ ।' तएणं से बले राया अंगपडियारियाणं अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठ० जाव धाराहयणीव० जाव रोमकूवे तासिं अंगपडियारियाणं मउडवज्जं जहामालियं ओमोयं दलयइ, दलयित्ता सेयं रययामयं विमलसलिल-पुण्णं भिंगारं च गिण्हइ, गिण्हित्ता मत्थए धोवइ, मत्थए धोवित्ता विउलं जीवियारिहं पीइदाणं दलयइ, पीइदाणं दलयित्ता सक्कारेइ सम्माणेइ, सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता पडिविसज्जइ ।

कठिन शब्दार्थ-अंगपडियारियाओ-अंगप्रतिचारिका (सेवा करने वाली दासियाँ) पसूयं-प्रसव हुआ, मउडवज्जं-मुकुट छोड़कर, जहामालियं-पहने हुए अलंकार, ओमोयं-उतार कर, भिंगार-भृंगार (कलश) ।

भावार्थ-२७-पुत्र जन्म होने पर प्रभावती देवी की सेवा करने वाली दासियाँ, पुत्र-जन्म जानकर बल राजा के पास आई और हाथ जोड़कर जय विजय शब्दों से बधाया । उन्होंने राजा से निवेदन किया-"हे देवानुप्रिय ! प्रभावती देवी ने यथा समय पुत्र जन्म दिया है । आप को प्रीति के लिये हम आपसे पुत्र-जन्मरूप प्रिय समाचार निवेदन करती हैं । यह आपके लिये प्रिय होवें ।" दासियों से प्रिय सम्वाद सुनकर बल राजा हर्षित एवं सन्तुष्ट हुआ, यावत् मेघ की धारा से सिंचित कदम्ब-पुष्प के समान रोमाञ्चित हुआ । नरेश ने अपने मुकुट को छोड़कर धारण किये हुए शेष सभी अलंकार उन दासियों को पारितोषिक स्वरूप दे दिये । फिर श्वेत रजतमय और निर्मल पानी से भरा हुआ कलश लेकर दासियों का मस्तक धोया और जीविका के योग्य बहुत-सा प्रीतिदान देकर उन्हें सत्कृत और सम्मानित कर विसर्जित किया ।

२८-तएणं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, सद्दावित्ता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एवं वयासी-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हत्थिणाउरे णयरे चारग-सोहणं करेह, चारग० माणुम्माणवड्ढणं करेह, मा० हत्थिणाउरं णयरं सब्भिंतरबाहिरियं आसिय-संमज्जिओ-वलित्तं जाव करेह कारवेह, करेत्ता य कारवेत्ता य जूवसहस्सं वा चक्कसहस्सं वा पूया-महामहिमसक्कारं वा उस्सवेह० ममेयमाणत्तियं पच्चप्पिणह'। तएणं ते कोडुंबियपुरिसा बलेणं रण्णा एवं वुत्ता० जाव पच्चप्पिणंति। तएणं से बले राया जेणेव अट्टणसाला तेणेव उवागच्छइ, तेणेव उवागच्छित्ता तं चेव जाव मज्जणघराओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता उस्सुक्कं उक्करं उक्किट्ठं अदिज्जं अमिज्जं अभडप्पवेसं अदंडकोदंडिमं अधरिमं गणियावरणाडइज्जकलियं अणेगतालाचराणुचरियं अणुद्धुयमुइंगं अमिलायमल्लदामं पमुइय-पक्कीलियं सपुरजणजाणवयं दसदिवसे ठिइवडियं करेइ। तएणं से बले राया दसाहियाए ठिइवडियाए वट्टमाणीए सइए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य जाए य दाए य भाए य दलमाणे य दवावेमाणे य, सइए य साहस्सिए य सयसाहस्सिए य लंभे पडिच्छेमाणे य पडिच्छावेमाणे य एवं विहरइ। तएणं तस्स दारगस्स अम्मा-पियरो पढमे दिवसे ठिइवडियं करेइ, तईए दिवसे चंदसूरदंसणियं करेइ, छट्ठे दिवसे जागरियं करेइ, एक्कारसमे दिवसे विइक्कंते णिव्वत्ते असुइयजायकम्मकरणे संपत्ते बारसाहदिवसे विउलं असणं पाणं खाइमं

साइमं उवक्खडाविंति, उवक्खडावेत्ता जहा सिवो जाव खत्तिए य आमंतेंति आ० तओ पच्छा ण्हाया कय० तं चेव जाव सक्कारेंति सम्माणेंति, सक्का० तस्सेव मित्त-णाइ जाव राईण य खत्तियाण य पुरओ अज्जय-पज्जय पिउपज्जयागयं बहुपुरिसपरंपरप्परूढं कुलाणुरूवं कुलसरिसं कुलसंताणतंतुवद्धणकरं अयमेयारूवं गोण्णं गुणणिप्फण्णं णामधेज्जं करेंति-'जम्हा णं अम्हं इमे दारए बलस्स रण्णो पुत्ते पभावईए देवीए अत्तए, तं होउ णं अम्हं एयस्स दारगस्स णामधेज्जं महब्बले,' तएणं तस्स दारगस्स अम्मापियरो णामधेज्जं करेंति 'महब्बले' त्ति ।

कठिन शब्दार्थ-**चारगसोहणं**-कारागार खाली करो (बन्दी छोड़ो), **उस्सुक्कं**-शुल्क रहित, **उक्करं**-कर रहित, **उक्किट्ठं**-उत्कृष्ट, **अदिज्जं**-नहीं देने योग्य, **अमिज्जं**-नहीं नापने योग्य, **अभडप्पवेसं**-सुभट के प्रवेश रहित, **अदंडकोदंडिमं**-दंड तथा कुदंड रहित, **अधरिमं**-ऋण लेने का और लौटाने में होते हुए झगड़े को रोकना, **गणियावरणाडइज्जकलियं**-उच्च प्रकार की गणिकाओं और नटों से युक्त, **अणेगतालचराणुचरियं**-अनेक तालानुचरों से युक्त, **अणुद्धुयमुइंगं**-निरंतर मृदंग बजते हुए, **पमुइयपक्कीलियं**-प्रमोद एवं क्रीड़ा युक्त, **ठिईवडियं**-स्थिति पतित, **जाए**-व्यय किया, **दाए**-दान, **भाए**-भाग, **असुइयजायकम्मकरणे**-अशुचिजात कर्म करने ।

२८ **भावार्थ**-इसके बाद बलराजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया और कहा-"हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही बन्दियों को मुक्त करो, मान (नाप) और उन्मान (तोल) की वृद्धि करो । हस्तिनापुर नगर के बाहर और भीतर छिड़काव करो, स्वच्छ करो, सम्मार्जित करो, शुद्धि करो, कराओ । तत्पश्चात् यूपसहस्र और चक्रसहस्र को पूजा महिमा और सत्कार के योग्य करो । यह सब कार्य करके मुझे निवेदन करो । इसके बाद बलराजा की आज्ञानुसार कार्य करके उन

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सेवक पुरुषों ने आज्ञा पालन का निवेदन किया। राजा ने व्यायामशाला में जाकर व्यायाम किया और स्नान किया। दस दिन के लिए प्रजा से शुल्क (मूल्य या कर विशेष) और कर लेना रोक दिया। क्रय, विक्रय, मान, उन्मान का निषेध किया, और ऋणियों को ऋण-मुक्त किया तथा दण्ड और कुदण्ड का निषेध किया। प्रजा के घर में सुभटों के प्रवेश को बन्द कर दिया और धरणा देने का निषेध कर दिया। इसके अतिरिक्त उत्तम गणिकाओं और नाटिकाओं से युक्त तथा अनेक तालानुचरों से निरन्तर बजाई जाती हुई मृदंगों से युक्त तथा प्रमोद एवं क्रीड़ापूर्वक सभी लोगों के साथ दस दिन तक पुत्र महोत्सव मनाया जाता रहा। इन दस दिनों में बलराजा सैकड़ों, हजारों, लाखों रुपयों के खर्चवाले कार्य करता हुआ, दान देता हुआ, दिलवाता हुआ एवं इसी प्रकार सैकड़ों, हजारों लाखों रुपयों की भेंट स्वीकार करता हुआ विचरता रहा। फिर बालक के माता-पिता ने पहले दिन कुल मर्यादा के अनुसार क्रिया की। तीसरे दिन बालक को चन्द्र और सूर्य के दर्शन कराये। छठे दिन जागरणारूप उत्सव विशेष किया। ग्यारह दिन व्यतीत होने पर अशुचिकर्म की निवृत्ति की। बारहवें दिन विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम तैयार कर (ग्यारहवें शतक के नौवें उद्देशक में कथित शिवराजा के समान) सभी क्षत्रिय ज्ञातिजनों को निमंत्रित कर भोजन कराया। फिर उन सब के समक्ष अपने बाप-दादा आदि से चली आती हुई कुल परम्परा के अनुसार कुल के योग्य, कुलोचित, कुलरूप सन्तान की वृद्धि करनेवाला, गुणयुक्त और गुण निष्पन्न नाम देते हुए कहा—'क्योंकि यह बालक, बलराजा का पुत्र और प्रभावती देवी का आत्मज है, इसलिए इसका नाम 'महाबल' रखा जाय। अतएव बालक के माता-पिता न उसका नाम महाबल रखा।'

२९ तएणं से महब्बले दारए पंचधाईपरिग्गहिए, तंजहा—खीरधाईए, एवं जहा दढपइण्णे, जाव णिवाय-णिव्वाघायंसि सुहं-सुहेणं परिवड्ढइ। तएणं तस्स महब्बलस्स दारगस्स अम्मा-पियरो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अणुपुव्वेणं ठिइवडियं वा चंदसूरदंसावणियं वा जागरियं वा णामकरणं वा परंगामणं वा पयचंकमणं वा जेमामणं वा पिंडवद्धणं वा पजंपावणं वा कण्णवेहणं वा संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं च उवणयणं च अण्णाणि य बहूणि गब्भाधाण-जम्मणमाइयाइं कोउयाइं करेंति।

कठिन शब्दार्थ—पिंडवद्धणं—भोजन बढ़ाना, कण्णवेहणं-कर्ण वेधन, चोलोयणगं—चोटी रखवाना, उवणयणं—संस्कारित करना, कोउयाइं—कौतुक ।

भावार्थ-२९-महाबलकुमार का-१ क्षीरधात्री, २ मज्जनधात्री, ३ मण्डनधात्री, ४ क्रीडनधात्री और ५ अंकधात्री-इन पांच धात्रियों द्वारा राजप्रश्नीय सूत्र में वर्णित दृढ़प्रतिज्ञ कुमार के समान पालन किया जाने लगा। वह कुमार, वायु और व्याघात रहित स्थान में रही हुई चम्पक वृक्ष के समान अत्यन्त सुख पूर्वक बढ़ने लगा। महाबल कुमार के माता-पिता ने अपनी कुल-मर्यादा के अनुसार जन्म-दिन से लेकर क्रमशः सूर्य-चन्द्र दर्शन, जागरण, नामकरण, घुटनों के बल चलाना, पैरों से चलाना, अन्न भोजन प्रारंभ करना, ग्रास बढ़ाना, संभाषण करना, कान बिधाना, वर्षगांठ मनाना, चोटी रखवाना, उपनयन (संस्कृत) करना, इत्यादि बहुत से गर्भधारण जन्म-महोत्सव आदि कौतुक किये।

३०-तएणं तं महब्बलं कुमारं अम्मापियरो साइरेगट्ठवासगं जाणित्ता सोभणंसि तिहि-करण-णक्खत्त मुहुत्तंसि० एवं जहा दढप्पइण्णो, जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था। तएणं तं महब्बलं कुमारं उम्मुक्कबालभावं जाव अलं भोगसमत्थं वियाणित्ता अम्मापियरो अट्ठ पासायवडेंसए करेंति, अब्भुग्गय-मूसिय-पहसिए

इव वण्णओ जहा रायप्पसेणइज्जे, जाव पडिरूवे, तेसि णं पासायवडेंसगाणं बहुमज्झदेसभागे एत्थ णं महेगं भवणं करेंति अणेगखंभसयसंणिविट्ठं, वण्णओ जहा रायप्पसेणइज्जे पेच्छाघरमंडवंसि जाव पडिरूवे।

भावार्थ-३०-जब महाबल कुमार आठ वर्ष से कुछ अधिक उम्र का हुआ, तो माता-पिता ने प्रशस्त, तिथि, करण, नक्षत्र और मुहूर्त में पढ़ने के लिये कलाचार्य के यहाँ भेजा, इत्यादि सारा वर्णन दृढ़प्रतिज्ञ कुमार के अनुसार कहना चाहिये यावत् महाबल कुमार भोग भोगने में समर्थ हुआ। महाबल कुमार को भोग योग्य जानकर माता-पिता ने उसके लिये उत्तम आठ प्रासाद बनवाये। वे प्रासाद 'राजप्रश्नीय' सूत्र में उल्लिखित वर्णन के अनुसार अतिशय ऊंचे यावत् अत्यन्त सुन्दर थे। उनके ठीक मध्य में एक बड़ा भवन तैयार करवाया। उस भवन के सैकड़ों खम्भे लगे हुए थे, इत्यादि राजप्रश्नीय सूत्र के प्रेक्षागृह मण्डप वर्णन के समान जान लेना चाहिये यावत् वह अत्यन्त सुन्दर था।

३१-तएणं तं महब्बलं कुमारं अम्मापियरो अण्णया कयाइ सोभणंसि तिहि-करण-दिवस-णक्खत्त-मुहुत्तंसि ण्हायं कयबलिकम्मं कयकोउय-मंगलपायच्छित्तं सव्वालंकारविभूसियं पमक्खणग-ण्हाण-गीय-वाइय-पसाहण-ट्ठंगतिलग-कंकणअविहववहुउवणीयं मंगलसुजंपिएहि य वरकोउयमंगलोवयारकयसंतिकम्मं सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं सरिसलावण्ण-रूव-जोव्वणगुणोववेयाणं विणीयाणं कयकोउय-मंगलपायच्छित्ताणं सरिसएहिं रायकुलेहिंतो

आणिल्लियाणं अट्ठण्हं रायवरकण्णाणं एगदिवसेणं पाणिं गिण्हाविंसु ।

कठिन शब्दार्थ-पमक्खणग-अभ्यञ्जन (विलेपन)।

भावार्थ-३१-शुभ तिथि, करण, दिवस, नक्षत्र और मुहूर्त में महाबल कुमार को स्नानादि करवा कर अलंकारों से अलंकृत एवं विभूषित किया । फिर सधवा स्त्रियों के द्वारा अभ्यंगन, विलेपन, मण्डन, गीत, तिलक आदि मांगलिक कार्य किये गये । तत्पश्चात् समान त्वचा वाली, समान उम्र वाली, समान रूप, लावण्य, यौवन और गुणों से युक्त एवं समान राजकुल से लाई हुई उत्तम आठ राजकन्याओं के साथ एक ही दिन में पाणिग्रहण करवाया गया ।

३२-तएणं तस्स महाबलस्स कुमारस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं पीइदाणं दलयंति, तंजहा-अट्ठ हिरण्णकोडीओ, अट्ठ सुवण्णकोडीओ, अट्ठ मउडे मउडप्पवरे, अट्ठ कुंडलजुए कुंडलजुयप्पवरे, अट्ठ हारे हारप्पवरे, अट्ठ अद्धहारे अद्धहारप्पवरे, अट्ठ एगावलीओ एगावलिप्पवराओ, एवं मुत्तावलीओ, एवं कणगावलीओ, एवं रयणावलीओ, अट्ठ कडगजोए कडगजोयप्पवरे, एवं तुडियजोए, अट्ठ खोमजुयलाइं खोमजुयलप्पवराइं, एवं वडगजुयलाइं, एवं पट्टजुयलाइं, एवं दुगुल्लजुयलाइं अट्ठ सिरीओ, अट्ठ हिरीओ, एवं धिईओ, कित्तीओ, बुद्धीओ, लच्छीओ, अट्ठ णंदाइं, अट्ठ भद्दाइं, अट्ठ तले तलप्पवरे, सव्वरयणामए, णियगवरभवणकेऊ अट्ठ झए झयप्पवरे, अट्ठ वये वयप्पवरे, दसगोसाहस्सिएणं वएणं, अट्ठ णाडगाइं णाड-

गप्पवराइं बत्तीसबद्धेणं णाडएणं, अट्ठ आसे आसप्पवरे, सव्वरयणामए, सिरिघरपडिरूवए, अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे, सव्वरयणामए सिरिघरपडिरूवए, अट्ठ जाणाइं जाणप्पवराइं, अट्ठ जुगाइं जुगप्पवराइं. एवं सिबियाओ, एवं संदमाणीओ, एवं गिल्लीओ थिल्लीओ, अट्ठ वियडजाणाइं वियडजाणप्पवराइं, अट्ठ रहे पारिजाणिए, अट्ठ रहे संगामिए, अट्ठ आसे आसप्पवरे, अट्ठ हत्थी हत्थिप्पवरे, अट्ठ गामे गामप्पवरे, दसकुलसाहस्सिएणं गामेणं, अट्ठ दासे दासप्पवरे, एवं चेव दासीओ, एवं किंकरे, एवं कंचुइज्जे, एवं वरिसधरे, एवं महत्तरए, अट्ठ सोवण्णिए ओलंबणदीवे, अट्ठ रूप्पामए ओलंबणदीवे, अट्ठ सुवण्णरूप्पामए ओलंबणदीवे, अट्ठ सोवण्णिए उक्कंचणदीवे, एवं चेव तिण्णि वि अट्ठ सोवण्णिए पंजरदीवे एवं चेव तिण्णि वि।

कठिन शब्दार्थ-**मउडे**-मुकुट, **कडगजोए**-कड़ों की जोड़ी, **किंकरे**-अनुचर, **कंचुइज्जे**-द्वारपाल (प्रतिहार) **महत्तरए**-अन्तःपुर के कार्य के विचारक, **वरिसधरे**-अन्तःपुर रक्षक, कृत नपुंसक।

भावार्थ-३२-विवाहोपरान्त महाबलकुमार के माता-पिता ने अपनी आठों पुत्रवधुओं के लिए प्रीतिदान दिया। यथा-आठ कोटि हिरण्य (चाँदी के सिक्के), आठ कोटि सौनैया (सोने के सिक्के), आठ श्रेष्ठ मुकुट, आठ श्रेष्ठ कुण्डलयुगल, आठ उत्तम हार, आठ उत्तम अर्द्ध हार, आठ उत्तम एकसरा हार, आठ मुक्तावली हार, आठ कनकावली हार, आठ रत्नावली हार, आठ उत्तम कड़ों की जोड़ी, आठ उत्तम त्रुटित (बाजुबन्द) की जोड़ी, उत्तम आठ रेशमी वस्त्र युगल, आठ उत्तम सूती वस्त्रयुगल, आठ टसर वस्त्र युगल, आठ पट्ट युगल, आठ दुकूल युगल, आठ श्री, आठ ह्री, आठ धी, आठ कीर्ति, आठ बुद्धि और आठ लक्ष्मी देवियों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की प्रतिमा, आठ नन्द, आठ भद्र, आठ ताड़ वृक्ष, ये सब रत्नमय जानने चाहिए। अपने भवन में केतु (चिन्ह रूप) आठ उत्तम ध्वज, दस हजार गायों का एक व्रज (गोकुल) ऐसे आठ उत्तम गोकुल, बत्तीस मनुष्यों द्वारा किया जाने वाला एक नाटक होता है,-ऐसे आठ उत्तम नाटक, आठ उत्तम घोड़े, ये सब रत्नमय जानना चाहिए। भाण्डागार समान आठ रत्नमय उत्तमोत्तम हाथी, भाण्डागार -श्रीधर समान सर्व रत्नमय आठ उत्तम यान, आठ उत्तम युग्म (एक प्रकार का का वाहन), आठ शिविका, आठ स्यन्दमानिका, आठ गिल्ली (हाथी की अम्बाड़ी), आठ थिल्लि (घोड़े का पलाण-काठी), आठ उत्तम विकट (खुले हुए) यान, आठ पारियानिक (क्रीड़ा करने के) रथ, आठ संग्रामिक रथ, आठ उत्तम अश्व, आठ उत्तम हाथी, दस हजार कुल-परिवार जिसमें रहते हों ऐसे आठ गांव, आठ उत्तम दास, आठ उत्तम दासियाँ, आठ उत्तम किंकर, आठ कंचुकी (द्वार रक्षक), आठ वर्षधर (अन्तःपुर के रक्षक खोजा), आठ महत्तरक (अन्तःपुर के कार्य का विचार करनेवाले), आठ सोने के, आठ चाँदी के और आठ सोने-चाँदी के अवलम्बनदीपक (लटकने वाले दीपक-हण्डियाँ), आठ सोने के, आठ चाँदी के, आठ सोने-चाँदी के उत्कञ्चन दीपक (दण्ड युक्त दीपक-मशाल), इसी प्रकार सोना, चाँदी और सोना-चाँदी, इन तीनों प्रकार के आठ पञ्जर दीपक।

अट्ठ सोवण्णिए थाले, अट्ठ रूप्पमए थाले, अट्ठ सुवण्ण-रूप्पमए थाले, अट्ठ सोवण्णियाओ पत्तीओ ३ +, अट्ठ सोवण्णियाइं थासयाइं ३, अट्ठ सोवण्णियाइं मल्लगाइं ३, अट्ठ सोव-ण्णियाओ तलियाओ ३, अट्ठ सोवण्णियाओ कविचिआओ ३,

+ जहां '३' का अंक है, वहां पूर्व पाठ के समान स्वर्ण के बाद 'रजत' तथा 'स्वर्ण-रजतमय' समझना चाहिये। जैसे-'अट्ठ सोवण्णियाओ पत्तीओ' के आगे 'अट्ठ रूप्पमइय पत्तीओ, अट्ठ सोवण्ण रूप्प-मयाओ पत्तीओ' इस प्रकार जहां-जहां '३' का अंक है, वहां-वहां पढ़ना चाहिए।—डोशी।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अट्ठ सोवण्णिए अवएडए ३, अट्ठ सोवण्णियाओ अवयक्काओ ३, अट्ठ सोवण्णिए पायपीढए ३, अट्ठ सोवण्णियाओ भिसियाओ ३, अट्ठ सोवण्णियाओ करोडियाओ ३, अट्ठ सोवण्णिए पल्लंके ३, अट्ठ सोवण्णियाओ पडिसेज्जाओ ३, अट्ठ हंसासणाइं, अट्ठ कोंचासणाइं, एवं गरुलासणाइं, उण्णयासणाइं, पणयासणाइं, दीहासणाइं, भद्दासणाइं, पक्खासणाइं, मगरासणाइं, अट्ठ पउमासणाइं, अट्ठ दिसासोवत्थियासणाइं, अट्ठ तेल्लसमुग्गे, जहा रायप्पसेणइज्जे, जाव अट्ठ सरिसवसमुग्गे, अट्ठ खुज्जाओ, जहा उववाइए, जाव अट्ठ पारिसीओ, अट्ठ छत्ते, अट्ठ छत्तधारिओ चेडीओ, अट्ठ चामराओ, अट्ठ चामरधारीओ चेडीओ, अट्ठ तालियंटे, अट्ठ तालियंटधारीओ चेडीओ, अट्ठ करोडियाओ, अट्ठ करोडियाधारीओ चेडीओ, अट्ठ खीरधाईओ, जाव अट्ठ अंकधाईओ, अट्ठ अंगमद्दियाओ, अट्ठ उम्मद्दियाओ, अट्ठ ण्हावियाओ, अट्ठ पसाहियाओ, अट्ठ वण्णगपेसीओ, अट्ठ चुण्णगपेसीओ, अट्ठ कोट्ठागारीओ, अट्ठ दवकारीओ, अट्ठ उवत्थाणियाओ, अट्ठ णाडइज्जाओ, अट्ठ कोडुंबिणीओ, अट्ठ महाणसिणीओ, अट्ठ भंडागारिणीओ, अट्ठ अज्झाधारिणीओ, अट्ठ पुप्फधारणीओ, अट्ठ पाणिधारणीओ, अट्ठ बलिकारीओ, अट्ठ सेज्जाकारीओ, अट्ठ अब्भितरियाओ पडिहारीओ, अट्ठ बाहिरियाओ

पडिहारीओ, अट्ठ मालाकारीओ, अट्ठ पेसणकारीओ, अण्णं वा सुबहुं हिरण्णं वा सुवण्णं वा कंसं वा दूसं वा विउलधण-कणग० जाव संतसारसावएज्जं, अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं दाउं, पकामं भोत्तुं, पकामं परिभाएउं। तएणं से महब्बले कुमारे एगमेगाए भज्जाए एगमेगं हिरण्णकोडिं दलयइ, एगमेगं सुवण्णकोडिं दलयइ, एगमेगं मउडं मउडप्पवरं दलयइ, एवं तं चेव सव्वं जाव एगमेगं पेसणकारिं दलयइ, अण्णं वा सुबहुं हिरण्णं वा जाव परिभाएउं। तएणं से महब्बले कुमारे उप्पिं पासायवरगए जहा जमाली जाव विहरइ।

कठिन शब्दार्थ—भीसियाओ—आसन विशेष, भज्जाए—भार्या को।

भावार्थ—सोना, चाँदी और सोना-चाँदी के आठ थाल, आठ थालियाँ, आठ स्थासक (तसलियाँ), आठ मल्लक (कटोरे), आठ तलिका (रकाबियाँ), आठ कलाचिका (चम्मच), आठ तापिकाहस्तक (संडासियाँ), आठ तवे, आठ पादपीठ (पैर रखने के बाजोठ), आठ भीषिका (आसन विशेष), आठ करोटिका (लोटा), आठ पलंग, आठ प्रतिशय्या (छोटे पलंग), आठ हंसासन, आठ क्रौंचासन, आठ गरुडासन, आठ उन्नतासन, आठ अवनतासन, आठ दीर्घासन, आठ भद्रासन, आठ पक्षासन, आठ मकरासन, आठ पद्मासन, आठ दिक्स्वस्तिकासन, आठ तेल के डिब्बे, इत्यादि सभी राजप्रश्नीय सूत्र के अनुसार जानना चाहिये, यावत् आठ सर्षप के डिब्बे, आठ कुब्जा दासियाँ इत्यादि सभी औपपातिक सूत्र के अनुसार जानना चाहिये, यावत् आठ पारस देश की दासियाँ, आठ छत्र, आठ छत्रधारिणी दासियाँ, आठ चामर, आठ चामरधारिणी दासियाँ, आठ पंखे, आठ पंखाधारिणी दासियाँ, आठ करोटिका (ताम्बूल के करण्डिए) आठ करोटिका

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

धारिणी दासियाँ, आठ क्षीर धात्रियाँ (दूध पिलाने वाली धाय), यावत् आठ अङ्कधात्रियाँ, आठ अंगमर्दिका (शरीर का अल्प मर्दन करने वाली दासियाँ), आठ उन्मर्दिका (शरीर का अधिक मर्दन करनेवाली दासियाँ), आठ स्नान कराने वाली दासियाँ, आठ अलङ्कार पहनाने वाली दासियाँ, आठ चन्दन घिसने वाली दासियाँ, आठ ताम्बूलचूर्ण पीसने वाली, आठ कोष्ठागार की रक्षा करने वाली, आठ परिहास करने वाली, आठ सभा में पास रहने वाली, आठ नाटक करने वाली, आठ कौटुम्बिक (साथ जाने वाली), आठ रसोई बनाने वाली, आठ भण्डार की रक्षा करने वाली, आठ तरुणियाँ, आठ पुष्प धारण करने वाली (मालिन), आठ पानी भरने वाली, आठ बलि करने वाली, आठ शय्या बिछाने वाली, आठ आभ्यन्तर और आठ बाह्य प्रतिहारियाँ, आठ माला बनाने वाली और आठ पेषण करने वाली दासियाँ दी । इसके अतिरिक्त बहुतसा हिरण्य, सुवर्ण कांस्य, वस्त्र तथा विपुल धन, कनक यावत् सारभूत धन दिया, जो सात पीढ़ी तक इच्छा पूर्वक देने और भोगने के लिये पर्याप्त था । इसी प्रकार महाबल कुमार ने भी प्रत्येक स्त्री को एक-एक हिरण्य कोटि, एक-एक स्वर्ण कोटि, इत्यादि पूर्वोक्त सभी वस्तुएँ दी, यावत् एक-एक पेषणकारी दासी, तथा बहुतसा हिरण्य-सुवर्णादि विभक्त कर दिया । वह महाबल कुमार, नौवें शतक के तेतीसवें उद्देशक में कथित जमालि कुमार के वर्णन के अनुसार उस उत्तम प्रासाद में अपूर्व भोग भोगता हुआ रहने लगा ।

३३-तेणं कालेणं तेणं समएणं विमलस्स अरहओ पओप्पए धम्मघोसे णामं अणगारे जाइसंपण्णे, वण्णओ जहा केसिसामिस्स, जाव पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुग्गामं दूइज्जमाणे जेणेव हत्थिणाउरे णयरे, जेणेव सहसंबवणे

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उज्जाणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अहापडिरूवं उग्गहं ओगिण्हइ, ओगिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तएणं हत्थिणाउरे णयरे सिंघाडग-तिय० जाव परिसा पज्जुवासइ।

कठिन शब्दार्थ—पओप्पए—प्रपौत्र—प्रशिष्य।

भावार्थ—३३—उस काल उस समय में तेरहवें तीर्थंकर भगवान् विमलनाथ स्वामी के प्रपौत्र (प्रशिष्य—शिष्यानुशिष्य) धर्मघोष नामक अनगार थे। वे जाति-सम्पन्न इत्यादि केशी स्वामी के समान थे, यावत् पांच सौ साधुओं के परिवार के साथ अनुक्रम से एक गांव से दूसरे गांव विहार करते हुए हस्तिनापुर नगर के सहस्राम्र वन नामक उद्यान में पधारे और यथायोग्य अवग्रह ग्रहण करके संयम और तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। हस्तिनापुर निवासियों को मुनि आगमन ज्ञात हुआ, यावत् पर्युपासना करने लगी।

३४—तएणं तस्स महब्बलस्स कुमारस्स तं महयाजणसद्दं वा जणवूहं वा एवं जहा जमाली तहेव चिंता, तहेव कंचुइज्जपुरिसं सद्दावेइ, कंचुइज्जपुरिसो वि तहेव अक्खाइ, णवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स आगमणगहियविणिच्छए करयल० जाव णिग्गच्छइ। एवं खलु देवाणुप्पिया ! विमलस्स अरहओ पउप्पए धम्मघोसे णामं अणगारे, सेसं तं चेव जाव सो वि तहेव रहवरेणं णिग्गच्छइ। धम्मकहा जहा केसिसामिस्स। सो वि तहेव अम्मापियरं आपुच्छइ, णवरं धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए, तहेव वुत्तपडिवुत्तया, णवरं इमाओ य ते जाया !

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विउलरायकुलबालियाओ कला० सेसं तं चेव जाव ताहे अम्मापियरो एवं वयासी-'तं इच्छामो ते जाया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए' । तएणं से महब्बले कुमारे अम्मापियराण वयणमणुयत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ । तएणं से बले राया कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, एवं जहा सिवभद्दस्स तहेव रायाभिसेओ भाणियव्वो, जाव अभिसिंचइ, करयलपरिग्गहियं महब्बलं कुमारं जएणं विजएणं वद्धावेंति, जएणं विजएणं वद्धावित्ता जाव एवं वयासी-'भण जाया ! किं देमो, किं पयच्छामो,' सेसं जहा जमालिस्स तहेव, जाव तएणं से महब्बले अणगारे धम्मघोसस्स अणगारस्स अंतियं सामाइयमाइयाइं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ, अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ० जाव विचित्तेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, बहु० मासियाए संलेहणाए सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए० आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा उड्ढं चंदिम-सूरिय० जहा अम्मडो, जाव बंभलोए कप्पे देवत्ताए उववण्णे । तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, तत्थणं महब्बलस्स वि देवस्स दस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । से णं तुमं सुदंसणा ! बंभलोए कप्पे दस सागरोवमाइं दिव्वाइं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरित्ता ताओ चेव देवलोगाओ आउक्खएणं ३ अणंतरं चयं चइत्ता इहेव

वाणियग्गामे णयरे सेट्ठिकुलंसि पुत्तत्ताए पच्चायाए ।

कठिन शब्दार्थ-वुत्तपडिवुत्तया-उत्तर-प्रत्युत्तर ।

भावार्थ-३४-दर्शनार्थ जाते हुए बहुत से मनुष्यों का कोलाहल सुनकर जमालिकुमार के समान महाबलकुमार ने अपने कञ्चुकी पुरुषों को बुलाकर इसका कारण पूछा । कञ्चुकी पुरुषों ने महाबलकुमार से हाथ जोड़कर विनय पूर्वक निवेदन किया-'हे देवानुप्रिय ! तीर्थङ्कर विमलनाथ भगवान् के प्रशिष्य धर्मघोष अनगार यहां पधारे हैं ।' महाबलकुमार भी वन्दना करने गया और केशी स्वामी के समान धर्मघोष अनगार ने धर्मोपदेश दिया । धर्मोपदेश सुनकर महाबलकुमार को वैराग्य उत्पन्न हुआ । घर आकर माता-पिता से कहा-'हे माता-पिता ! मैं धर्मघोष अनगार के पास, अनगार-धर्म स्वीकार करना चाहता हूं । जमालिकुमार के समान महाबल कुमार और उसके माता-पिता में उत्तर-प्रत्युत्तर हुए, यावत् उन्होंने कहा-'हे पुत्र ! यह विपुल धन और उत्तम राज-कुल में उत्पन्न हुई, कलाओं में कुशल, आठ बालाओं को छोड़कर तुम कैसे दीक्षा लेते हो, इत्यादि यावत् माता-पिता ने अनिच्छापूर्वक महाबलकुमार से इस प्रकार कहा-"हे पुत्र ! हम एक दिन के लिये भी तुम्हारी राज्य-लक्ष्मी को देखना चाहते हैं ।" माता-पिता की बात सुनकर महाबलकुमार चुप रहे । इसके पश्चात् माता-पिता ने ग्यारहवें शतक के नौवें उद्देशक में वर्णित शिवभद्र के समान, महाबल का राज्याभिषेक किया और महाबल कुमार को जय-विजय शब्दों से वधाया, तथा इस प्रकार कहा-'हे पुत्र ! कहो हम तुम्हें क्या देवें ? तुम्हारे लिये क्या करें,' इत्यादि वर्णन जमालि के समान जानना चाहिये । महाबलकुमार ने धर्मघोष अनगार के पास प्रव्रज्या अंगीकार कर सामायिक आदि चौदह पूर्वो का ज्ञान पढ़ा और उपवास, बेला, तेला आदि विचित्र तप द्वारा आत्मा को भावित करते हुए सम्पूर्ण बारह वर्ष तक श्रमण-पर्याय का पालन किया और मासिक संलेखना से साठ भक्त अनशन का छेदन कर, आलोचना प्रतिक्रमण कर, एवं समाधि युक्त काल के समय काल करके ऊर्ध्वलोक में चन्द्र और सूर्य से भी ऊपर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बहुत दूर, अम्बड़ के समान यावत् ब्रह्मदेवलोक में देवपने उत्पन्न हुआ। वहाँ कितने ही देवों की दस सागरोपम की स्थिति कही गई है, तदनुसार महाबल देव की भी दस सागरोपम की स्थिति कही गई है। 'हे सुदर्शन ! पूर्वभव में तेरा जीव महाबल था। वहाँ ब्रह्म देवलोक की दस सागरोपम की स्थिति पूर्ण कर और देवलोक का आयुष्य, भव और स्थिति का क्षय होने पर वहाँ से चवकर सीधे इस वाणिज्यग्राम नगर के सेठ कुल में तू पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ है।'

३५-तएणं तुमे सुदंसणा ! उम्मुक्कबालभावेणं विण्णायपरिणयमेत्तेणं जोव्वणगमणुप्पत्तेणं तहारूवाणं थेराणं अंतियं केवलिपण्णत्ते धम्मे णिसंते, सेवि य धम्मे इच्छिए, पडिच्छिए, अभिरुइए; तं सुट्ठुणं तुमं सुदंसणा ! इयाणिं पकरेसि। से तेणट्ठेणं सुदंसणा ! एवं वुच्चइ-अत्थि णं एएसिं पलिओवम-सागरोवमाणं खएइ वा अवचएइ वा। तएणं तस्स सुदंसणस्स सेट्ठिस्स समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म सुभेणं अज्झवसाणेणं सुभेणं परिणामेणं लेस्साहिं विसुज्झमाणीहिं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खओवसमेणं ईहा-पोह-मग्गण-गवेसणं करेमाणस्स सण्णीपुव्वजाईसरणे समुप्पण्णे, एयमट्ठं सम्मं अभिसमेइ। तएणं से सुदंसणे सेट्ठी समणेणं भगवया महावीरेणं संभारियपुव्वभवे दुगुणाणीयसड्ढसंवेगे आणंदंसुपुण्णणयणे समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, आ० वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

'एवमेयं भंते ! जाव से जहेयं तुज्झे वयह' त्ति कट्टु उत्तरपुरच्छिमं दिसिभागं अवक्कमइ, सेसं जहा उसभदत्तस्स, जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, णवरं चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जइ, बहुपडिपुण्णाइं दुवालसवासाइं सामण्णपरियागं पाउणइ, सेसं तं चेव ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति । महब्बलो समत्तो ❀

॥ एक्कारसमे सए एक्कारसमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-दुगुणाणीय सड्डसंवेगे-श्रद्धा एवं संवेग दुगुना होगया ।

भावार्थ-३५-'हे सुदर्शन ! बालभाव से मुक्त होकर तू विज्ञ और परिणत वयवाला हुआ, यौवन वय प्राप्त होकर तथा प्रकार के स्थविरों के पास केवलिप्ररूपित धर्म सुना । वह धर्म तुझे इच्छित प्रतीच्छित और रुचिकर हुआ। हे सुदर्शन ! अभी जो तू कर रहा है वह अच्छा कर रहा है। हे सुदर्शन ! इसलिये ऐसा कहा जाता है कि पल्योपम और सागरोपम का क्षय और अपचय होता है।

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्म सुनकर और हृदय में धारण कर सुदर्शन सेठ को शुभ अध्यवसाय, शुभ परिणाम और विशुद्ध लेश्या से तदावरणीय कर्मों का क्षयोपशम हुआ और ईहा, अपोह, मार्गणा और गवेषणा करते हुए संज्ञी पूर्वजातिस्मरण (ऐसा ज्ञान जिससे निरंतर संलग्न अपने संज्ञी रूप से किये हुए पूर्वभव देखे जा सकें) ज्ञान उत्पन्न हुआ, जिससे भगवन् द्वारा कहे हुए अपने पूर्वभव को स्पष्ट रूप से जानने लगा । इससे सुदर्शन सेठ को दुगुनी श्रद्धा और संवेग उत्पन्न हुआ । उसके नेत्र आनन्दाश्रुओं से परिपूर्ण हो गये । तत्पश्चात् श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को तीन बार आदक्षिण प्रदक्षिणा एवं वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार बोला-"हे भगवन् ! आप जैसा कहते हैं, वैसा ही है, सत्य है, यथार्थ है ।" इस प्रकार कहकर सुदर्शन सेठ ने, नौवें शतक के तेतीसवें उद्देशक में वर्णित ऋषभदत्त की तरह प्रव्रज्या अंगीकार की । चौदह

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पूर्व का ज्ञान पढ़ा। सम्पूर्ण बारह वर्ष तक श्रमण-पर्याय का पालन किया यावत् समस्त दुःखों से रहित हुए।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कह कर यावत् गौतम स्वामी विचरते हैं।

विवेचन-शंका-चौदह पूर्वधारी जीवों का जघन्य उपपात छठे लान्तक देवलोक तक कहा गया है, यहाँ महाबल अनगार ने भी चौदह पूर्व का ज्ञान पढ़ा था, फिर उनका उपपात पांचवें ब्रह्मदेवलोक में ही कैसे हुआ ?

समाधान-शंका उचित है, किन्तु उस समय चौदह पूर्व के ज्ञान में से कुछ ज्ञान विस्मृत हो जाना अथवा चौदह पूर्व में कुछ कम ज्ञान होना सम्भव है, उन्हें परिपूर्ण चौदह पूर्व का ज्ञान नहीं हुआ था।

॥ ग्यारहवें शतक का ग्यारहवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक ११ उद्देशक १२

श्रमणोपासक ऋषिभद्रपुत्र की धर्मचर्चा

१ तेणं ... णं आलभिया णामं णयरी होत्था। वण्णओ। ... आलभियाए णय- रीए बहवे ... जाव अप ... समणोव

सण्णिविट्ठाणं सण्णिसण्णाणं अयमेयारूवे मिहो कहासमुल्लावे समुप्पज्जित्था-देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ? तएणं से इसिभद्दपुत्ते समणोवासए देवट्ठिइगहियट्ठे ते समणोवासए एवं वयासी-देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दस-वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया, दुसमयाहिया, जाव दससमयाहिया, संखेज्जसमयाहिया, असंखेज्जसमयाहिया, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य । तएणं ते समणोवासया इसिभद्दपुत्तस्स समणोवासगस्स एवमाइक्खमाणस्स जाव एवं परूवेमाणस्स एयमट्ठं णो सद्दहंति, णो पत्तियंति, णो रोयंति, एयमट्ठं असद्दहमाणा अपत्तियमाणा, अरोएमाणा जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ।

२-तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव समोसढे, जाव परिसा पज्जुवासइ । तएणं ते समणोवासया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणा हट्ठ-तुट्ठा एवं जहा तुंगिउद्देसए जाव पज्जुवासंति । तएणं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति० धम्मकहा, जाव आणाए आराहए भवइ ।

कठिन शब्दार्थ—मिहो कहासमुल्लावे—परस्पर वार्तालाप में ।

भावार्थ-१-उस काल उस समय में आलभिका नाम की नगरी थी

(वर्णन)। वहां शंखवन नामक उद्यान था (वर्णन)। उस आलभिका नगरी में 'ऋषिभद्रपुत्र' प्रमुख बहुत-से श्रमणोपासक रहते थे। वे आढ्य यावत् अपरिभूत थे। वे जीवाजीवादि तत्त्वों के ज्ञाता थे। किसी समय एक स्थान पर एकत्रित होकर बैठे हुए उन श्रमणोपासकों में इस प्रकार का वार्तालाप हुआ-"हे आर्यो! देवलोकों में देवों की कितनी स्थिति कही गई है ?" प्रश्न सुनकर देवों की स्थिति के विषय का ज्ञाता 'ऋषिभद्रपुत्र' ने उन श्रमणोपासकों को इस प्रकार कहा-"हे आर्यों ! देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है। उसके बाद एक समय अधिक, दो समय अधिक यावत् दस समय अधिक, संख्यात समय अधिक और असंख्यात समय अधिक, इस प्रकार बढ़ते हुए उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की स्थिति कही गई है। इसके आगे अधिक स्थिति वाले देव और देवलोक नहीं हैं।" ऋषिभद्रपुत्र श्रमणोपासक के उपरोक्त कथन पर उन श्रमणोपासकों ने श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की और अपने-अपने स्थान पर चले गये।

२-उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहां पधारे यावत् परिषद् उपासना करती है। तुंगिका नगरी के श्रावकों के समान वे श्रमणोपासक भी भगवान् का आगमन सुनकर हर्षित और सन्तुष्ट हुए, यावत् भगवान् की पर्युपासना करने लगे। भगवान् ने उन श्रमणोपासकों को और आई हुई महापरिषद् को यावत् 'आज्ञा के आराधक होते हैं'-यहां तक धर्मोपदेश दिया।

३-तएणं ते समणोवासया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठा उट्ठाए उट्ठेइ, उ० समणं भगवं महावीरं वंदंति, णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-(प्र०) एवं खलु भंते ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए अम्हं एवं आइक्खइ, जाव परूवेइ-देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दस वास-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सहस्साइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया, जाव तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य, से कहमेयं भंते ! एवं ? (उ०)'अज्जो' त्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी–जण्णं अज्जो ! "इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तुज्झं एवं आइक्खइ, जाव परूवेइ–देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया जाव तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य," सच्चे णं एसमट्ठे, अहं पि णं अज्जो ! एवमाइक्खामि, जाव परूवेमि 'देवलोएसु णं अज्जो ! देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं तं चेव जाव तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य,' सच्चे णं एसमट्ठे । तएणं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति; वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव इसिभद्दपुत्ते समणोवासए तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता इसिभद्दपुत्तं समणोवासगं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेंति । तएणं ते समणोवासया पसिणाइं पुच्छंति, प० अट्ठाइं परियाइयंति, अ० समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, वं० जामेव दिसं पाउब्भूया तामेव दिसं पडिगया ।

कठिन शब्दार्थ–भुज्जो भुज्जो–बार-बार, अट्ठाइं परियाइयंति–अर्थ ग्रहण किया ।

भावार्थ–३–श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्मोपदेश सुनकर और

हृदय में धारण कर वे श्रमणोपासक हर्षित एवं सन्तुष्ट हुए। उन्होंने खड़े होकर भगवान् को वन्दना नमस्कार किया और इस प्रकार पूछा--"हे भगवन् ! ऋषिभद्रपुत्र श्रमणोपासक हमें इस प्रकार कहता है यावत् प्ररूपणा करता है कि 'देव लोकों में देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है, इसके पश्चात् एक-एक समय अधिक यावत् उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम की कही गई है। इसके बाद देव और देवलोक व्युच्छिन्न हो जाते हैं,' तो हे भगवन् ! यह बात किस प्रकार है ?"

श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने उन श्रमणोपासकों से कहा--"हे आर्यो ! ऋषिभद्रपुत्र श्रमणोपासक तुम्हें कहता है यावत् प्ररूपणा करता है कि 'देवलोकों में देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है यावत् समयाधिक करते हुए उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम की कही गई है। इसके पश्चात् देव और देवलोक व्युच्छिन्न हो जाते हैं'--यह बात सत्य है। हे आर्यो ! मैं भी इसी प्रकार कहता हूँ यावत् प्ररूपणा करता हूँ कि 'देवलोकों में देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है यावत् उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम की है। इसके पश्चात् देव और देवलोक व्युच्छिन्न हो जाते हैं,' यह बात सत्य है।" भगवान् से समाधान सुनकर, अवधारण कर और भगवान् को वन्दन नमस्कार कर वे श्रमणोपासक, ऋषिभद्रपुत्र श्रमणोपासक के समीप आये। उसे वन्दना नमस्कार किया और उसकी सत्य बात को न मानने रूप अपने अपराध के लिये विनय पूर्वक बारंबार क्षमायाचना करने लगे। फिर उन श्रमणोपासकों ने भगवान् से कई प्रश्न पूछे, उनके अर्थ ग्रहण किये और भगवान् को वन्दना नमस्कार कर अपने-अपने स्थान पर चले गये।

४ प्रश्न--'भंते !' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ, णमंसइ, वं० एवं वयासी--पभू णं भंते ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

देवाणुप्पियाणं अंतियं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइ-त्तए ?

४ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे, गोयमा ! इसिभद्दपुत्ते समणोवासए बहूहिं सीलव्वय-गुणव्वय-वेरमण-पच्चक्खाण-पोसहोववासेहिं अहा-परिग्गहिएहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणे बहूइं वासाइं समणोवासगपरियागं पाउणिहिइ, व० मासियाए संलेहणाए अत्ताणं झूसेहिइ, मा० सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदेहिइ, छेदेत्ता आलोइय-पडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोहम्मे कप्पे अरुणाभे विमाणे देवत्ताए उववज्जिहिइ। तत्थ णं अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता। तत्थ णं इसिभद्दपुत्तस्स वि देवस्स चत्तारि पलिओवमाइं ठिई भविस्सइ।

५ प्रश्न-से णं भंते ! इसिभद्दपुत्ते देवे ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भव० ठिइक्खएणं जाव कहिं उववज्जिहिइ ?

५ उत्तर-गोयमा ! महाविदेहे वासे सिज्झिहिइ, जाव अंतं काहेइ। 'सेवं भंते ! सेवं भंते !' त्ति भगवं गोयमे जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तएणं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइ आलभियाओ णयरीओ संखवणाओ चेइयाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

भावार्थ-४ प्रश्न-तदुपरान्त भगवान् गौतम स्वामी ने, श्रमण भगवान्

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! क्या श्रमणोपासक ऋषिभद्रपुत्र अगारवास को त्याग कर आपके समीप अनगार प्रव्रज्या स्वीकार करने में समर्थ है ?

४ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं, किन्तु बहुत से शीलव्रत, गुणव्रत, विरमणव्रत, प्रत्याख्यान और पौषधोपवासों से तथा यथा-योग्य स्वीकृत तपस्या द्वारा अपनी आत्मा को भावित करता हुआ, बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक पर्याय का पालन करेगा। फिर मासिक संलेखना द्वारा साठ भक्त अनशन का छेदन कर, आलोचना और प्रतिक्रमण कर एवं समाधि प्राप्त कर, काल के समय काल करके सौधर्म कल्प में अरुणाभ नामक विमान में देवरूप से उत्पन्न होगा। वहाँ कितने ही देवों की चार पल्योपम की स्थिति कही गई है, उनमें ऋषिभद्रपुत्र देव की भी चार पल्योपम की स्थिति होगी।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! वह ऋषिभद्रपुत्र देव, उस देवलोक का आयुष्य, भव और स्थिति क्षय होने पर कहां जायगा, कहां उत्पन्न होगा ?

५ उत्तर-हे गौतम ! वह महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा यावत् सभी दुःखों का अन्त करेगा।

"हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवान् ! यह इसी प्रकार है"-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे। पश्चात् किसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी आलभिका नगरी के शंखवन उद्यान से निकलकर बाहर जनपद में विचरण करने लगे।

पुद्गल परिव्राजक

६-तेणं कालेणं तेणं समएणं आलभिया णामं णयरी होत्था। वण्णओ। तत्थ णं संखवणे णामं चेइए होत्था। वण्णओ। तस्स णं संखवणस्स चेइयस्स अदूरसामंते पोग्गले णामं परिव्वायए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिवसइ, रिउव्वेद-जजुव्वेद० जाव णएसु सुपरिणिट्ठिए छट्ठं-छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं उड्ढं बाहाओ० जाव आयावेमाणे विहरइ। तएणं तस्स पोग्गलस्स परिव्वायगस्स छट्ठं-छट्ठेणं जाव आयावेमाणस्स पगइभद्दयाए जहा सिवस्स जाव विब्भंगे णामं अण्णाणे समुप्पण्णे। से णं तेणं विब्भंगेणं अण्णाणेणं समुप्पण्णेणं बंभलोए कप्पे देवाणं ठिइं जाणइ पासइ। तएणं तस्स पोग्गलस्स परिव्वायगस्स अयमेया-रूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था—'अत्थि णं ममं अइसेसे णाण-दंसणे समुप्पण्णे, देवलोएसु णं देवाणं जहण्णेणं दसवाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया, दुसमयाहिया जाव असंखेज्जसमया-हिया, उक्कोसेणं दससागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य'—एवं संपेहेइ, एवं संपेहेत्ता आयावणभूमीओ पच्चोरुहइ, आ० तिदंडकुंडिया जाव धाउरत्ताओ य गेण्हइ, गेण्हेत्ता जेणेव आलभिया णयरी, जेणेव परिव्वायगावसहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता भंडणिक्खेवं करेइ, भं० आलभियाए णयरीए सिंघा-डग० जाव पहेसु अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ, जाव परूवेइ—'अत्थि णं देवाणुप्पिया ! ममं अइसेसे णाण-दंसणे समुप्पण्णे, देवलोएसु णं देवाणं जहण्णेणं दसवाससहस्साइं, तहेव जाव वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य। तएणं आलभियाए णयरीए एएणं अभिलावेणं जहा सिवस्स, तं चेव जाव से कहमेयं मण्णे एवं ? सामी समोसढे, जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिसा पडिगया। भगवं गोयमे तहेव भिक्खायरियाए तहेव बहुजणसद्दं णिसामेइ, तहेव० तहेव सव्वं भाणियव्वं, जाव अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि एवं भासामि जाव परूवेमि-'देवलोएसु णं देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं समयाहिया दुसमयाहिया जाव उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता, तेण परं वोच्छिण्णा देवा य देवलोगा य।

कठिन शब्दार्थ---सुपरिणिट्ठिए-सुपरिनिष्ठित (कुशल)।

भावार्थ-६-उस काल उस समय में आलभिका नगरी थी (वर्णन)। वहाँ शंखवन नाम का उद्यान था। (वर्णन) उस शंखवन उद्यान से थोड़ी दूर 'पुद्गल' नामक परिव्राजक रहता था। वह ऋग्वेद, यजुर्वेद, आदि यावत् बहुत से ब्राह्मण विषयक नयों में कुशल था। वह निरन्तर बेले-बेले की तपस्या करता हुआ आतापना भूमि में दोनों हाथ ऊँचे कर के आतापना लेता था। इस प्रकार तपस्या करते हुए उस 'पुद्गल' परिव्राजक को प्रकृति की सरलता आदि से शिव परिव्राजक के समान विभंग नामक अज्ञान उत्पन्न हुआ। उस विभंगज्ञान से पांचवें ब्रह्म देवलोक में रहे हुए देवों की स्थिति जानने देखने लगा। फिर उस 'पुद्गल' परिव्राजक को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ-"मुझे अतिशेष ज्ञानदर्शन उत्पन्न हुआ है, जिससे मैं जानता हूं कि देवलोकों में देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है। फिर एक समय अधिक, दो समय अधिक यावत् असंख्य समय अधिक, इस प्रकार करते हुए उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है। उसके बाद देव और देवलोक व्युच्छिन्न हो जाते हैं,"-इस प्रकार विचार करके वह आतापना भूमि से नीचे उतरा। त्रिदण्ड, कुण्डिका यावत् भगवां वस्त्रों को ग्रहण कर आलभिका नगरी में तापसों के आश्रम में आया और वहाँ अपने उपकरण रख कर आलभिका नगरी के शृंगाटक, त्रिक, राजमार्ग आदि में इस प्रकार कहने लगा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यावत् प्ररूपणा करने लगा-"हे देवानुप्रियो ! मुझे विशिष्ट ज्ञान-दर्शन उत्पन्न हुआ है, जिससे मैं यह जानता और देखता हूँ कि देवलोकों में जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की है, इससे आगे देव और देवलोक नहीं हैं।" इस बात को सुनकर आलभिका नगरी के लोग परस्पर जैसे शिव राजर्षि के संबंध में कहने लगे थे वैसे ही यहाँ पर भी कहने लगे कि-"हे देवानुप्रियो ! यह बात कैसे मानी जाय ?" कुछ काल बाद श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे, यावत् गौतम स्वामी भिक्षा के लिये नगरी में गये। वहाँ लोगों से उपरोक्त बात सुनकर अपने स्थान पर आये और भगवान् से इस विषय में पूछा। भगवान् ने फरमाया-"हे गौतम ! पुद्गल परिव्राजक का कथन असत्य है। मैं इस प्रकार कहता हूँ और प्ररूपणा करता हूँ कि देवलोकों में देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है, इसके बाद एक समयाधिक, द्वि समयाधिक यावत् उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम की है। इसके बाद देव और देवलोक व्युच्छिन्न हो गये हैं।"

७ प्रश्न-अत्थि णं भंते ! सोहम्मे कप्पे दव्वाइं सवण्णाइं पि अवण्णाइं पि ?

७ उत्तर-तहेव जाव हंता अत्थि, एवं ईसाणे वि, एवं जाव अच्चुए, एवं गेवेज्जविमाणेसु, अणुत्तरविमाणेसु वि, ईसिपब्भाराए वि जाव हंता अत्थि। तएणं सा महतिमहालिया जाव पडिगया।

८-तएणं आलभियाए णयरीए सिंघाडग-तिय० अवसेसं जहा सिवस्स, जाव सव्वदुक्खप्पहीणे, णवरं तिदंड-कुंडियं जाव धाउरत्तवत्थपरिहिए परिवडियविब्भंगे आलभियं णयरिं मज्झं-मज्झेणं णिग्गच्छइ, जाव उत्तरपुरत्थिमं दिसिभागं अवक्कमइ,

अवक्कमित्ता तिदंडकुंडियं च जहा खंदओ, जाव पव्वइओ सेसं जहा सिवस्स, जाव "अव्वाबाहं सोक्खं अणुभवंति सासयं सिद्धा" ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ दुवालसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ समत्तं एगारसमं सयं ॥

कठिन शब्दार्थ-अव्वाबाहं-अव्याबाध (किसी भी प्रकार की बाधा से रहित)।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! सौधर्म देवलोक में वर्ण सहित और वर्ण रहित द्रव्य है, इत्यादि प्रश्न ।

७ उत्तर-हां, गौतम ! हैं । इसी प्रकार ईशान देवलोक में यावत् अच्युत देवलोक में, ग्रैवेयक विमानों में, अनुत्तर विमानों में और ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी में वर्णादि सहित और वर्णादि रहित द्रव्य हैं । धर्मोपदेश सुनकर वह महापरिषद् चली गई ।

८-आलभिका नगरी के मनुष्यों द्वारा पुद्गल परिव्राजक को अपनी मान्यता मिथ्या ज्ञात हुई और वे भी शिवराजर्षि के समान शङ्कित, कांक्षित, हुए, जिससे उनका विभंगज्ञान नष्ट हो गया । वे अपने उपकरण लेकर भगवान् के पास आये । भगवान् के द्वारा अपनी शंका निवारण हो जाने पर स्कन्दक की तरह त्रिदण्ड, कुण्डिका एवं भगवाँ वस्त्र छोड़कर प्रव्रजित हुए और शिवराजर्षि के समान आराधक होकर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुए । वे सिद्ध अव्याबाध, शाश्वत सुख का अनुभव करते हैं ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

॥ ग्यारहवें शतक का बारहवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

॥ ग्यारहवां शतक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२

१ संखे २ जयंती ३ पुढवी ४ पोग्गल ५ अइवाय ६ राहु ७ लोगे य।
८ णागे य ९ देव १० आया, बारसमसए दसुद्देसा ॥ १ ॥

भावार्थ–बारहवें शतक में दस उद्देशक हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं,–
१ शंख, २ जयन्ती, ३ पृथ्वी, ४ पुद्गल, ५ अतिपात, ६ राहु, ७ लोक, ८ नाग,
९ देव और १० आत्मा।

उद्देशक १

श्रमणोपासक शंख पुष्कली

१–तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी णामं णयरी होत्था, वण्णओ। कोट्ठए चेइए, वण्णओ। तत्थ णं सावत्थीए णयरीए बहवे संखप्पामोक्खा समणोवासगा परिवसंति, अड्ढा जाव अपरिभूया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति। तस्स णं संखस्स समणोवासगस्स उप्पला णामं भारिया होत्था, सुकुमाल० जाव सुरूवा समणोवासिया अभिगयजीवाजीवा जाव विहरइ। तत्थ णं सावत्थीए णयरीए पोक्खली णामं समणोवासए परिवसइ, अड्ढे, अभिगय० जाव विहरइ। तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे। परिसा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णिग्गया, जाव पज्जुवासइ। तएणं ते समणोवासगा इमीसे कहाए जहा आलभियाए जाव पज्जुवासंति। तएणं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं तीसे य महति० धम्मकहा, जाव परिसा पडिगया। तएणं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ० समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता पसिणाइं पुच्छंति प० अट्ठाइं परियाइयंति, अ० उट्ठाए उट्ठेंति, उ० समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियाओ कोट्ठयाओ चेइयाओ पडिणिक्खमंति, पडिणिक्खमित्ता जेणेव सावत्थी णयरी तेणेव पहारेत्थ गमणाए।

भावार्थ-१-उस काल उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी, वर्णन। कोष्ठक नामक उद्यान था, वर्णन। उस श्रावस्ती नगरी में शंख प्रमुख बहुत-से श्रमणोपासक रहते थे। वे आढ्य यावत् अपरिभूत थे। वे जीव-अजीवादि तत्त्वों के जानकार यावत् विचरते थे। शंख श्रमणोपासक की स्त्री का नाम उत्पला था। वह सुकुमाल हाथ-पाँव वाली यावत् सुरूप और जीव-अजीवादि तत्त्वों की जानने वाली श्रमणोपासिका थी। उस श्रावस्ती नगरी में पुष्कली नाम का एक श्रमणोपासक भी रहता था। वह आढ्य यावत् अपरिभूत था तथा जीव-अजीवादि तत्त्वों का ज्ञाता था।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी, श्रावस्ती पधारे। परिषद् वन्दन के लिये गई यावत् पर्युपासना करने लगी। भगवान् के आगमन को जानकर वे श्रावक भी, आलभिका नगरी के श्रावकों के समान वन्दनार्थ गये, यावत् पर्युपासना करने लगे। भगवान् ने उस महा परिषद् को और उन श्रमणोपासकों को धर्मोपदेश दिया यावत् परिषद् वापिस चली गई। वे श्रमणोपासक

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भगवान् के पास धर्मोपदेश सुनकर और अवधारण करके हर्षित और सन्तुष्ट हुए। भगवान् को वन्दना नमस्कार कर प्रश्न पूछे। उनके अर्थ को ग्रहण किया। फिर खड़े होकर भगवान् को वन्दना नमस्कार कर, कोष्ठक उद्यान से निकल कर श्रावस्ती नगरी की ओर जाने का विचार किया।

२-तएणं से संखे समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी-"तुज्झे णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेह, तएणं अम्हे तं विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा विसाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणा विहरिस्सामो।" तएणं ते समणोवासगा संखस्स समणोवासगस्स एयमट्ठं विणएणं पडिसुणेंति। तएणं तस्स संखस्स समणोवासगस्स अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था-'णो खलु मे सेयं तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणस्स विसाएमाणस्स परिभाएमाणस्स परिभुंजेमाणस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, सेयं खलु मे पोसहसालाए पोसहियस्स बंभयारिस्स उम्मुक्कमणि सुवण्णस्स ववगयमाला-वण्णग-विलेवणस्स णिक्खित्तसत्थ-मुसलस्स एगस्स अविइयस्स दब्भसंथारोवगयस्स पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणस्स विहरित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहेत्ता जेणेव सावत्थी णयरी, जेणेव सए गिहे, जेणेव उप्पला समणोवासिया, तेणेव उवागच्छइ, ते० उप्पलं समणोवासियं आपुच्छइ,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आपुच्छित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ, ते० पोसहसालं अणुपविस्सइ, अणुपविस्सित्ता पोसहसालं पमज्जइ, पो० उच्चार-पासवणभूमिं पडिलेहेइ, उ० दब्भसंथारगं संथरइ, द०भ० दब्भसंथारगं दुरूहइ, द० पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव पक्खियं पोसहं पडिजागरमाणे विहरइ ।

कठिन शब्दार्थ-अज्झत्थिए-अध्यवसाय ।

भावार्थ-२-इसके पश्चात् शंख श्रमणोपासक ने दूसरे श्रमणोपासकों से इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रियो ! तुम पुष्कल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार कराओ । अपन सभी उस पुष्कल अशन, पान, खादिम और स्वादिम का आस्वादन करते हुए, विशेष आस्वादन करते हुए, परस्पर देते हुए और खाते हुए, पाक्षिक पौषध का अनुपालन करते हुए रहेंगे।" उन श्रमणोपासकों ने शंख श्रमणोपासक के वचन को विनय पूर्वक स्वीकार किया ।

इसके बाद उस शंख श्रमणोपासक को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ -"अशनादि यावत् खाते हुए, पाक्षिक पौषध करना मेरे लिये श्रेयस्कर नहीं, परन्तु अपनी पौषधशाला में, ब्रह्मचर्य पूर्वक मणि और स्वर्ण का त्याग कर, माला, उद्वर्तना और विलेपन को छोड़कर तथा शस्त्र और मूसलादि का त्याग करना और डाभ के संथारा सहित, दूसरे किसी की सहायता बिना, मुझ अकेले को पौषध स्वीकार करके विचरना श्रेयस्कर है ।" ऐसा विचार कर वह अपने घर आया और अपनी उत्पला श्रमणोपासिका से पूछकर, अपनी पौषधशाला में आया । पौषधशाला का परिमार्जन करके उच्चार (बड़ीनीत) और प्रस्रवण (लघुनीत) की भूमि का प्रतिलेखन करके, डाभ का संथारा बिछाकर, उस पर बैठा और पौषध ग्रहण करके, पाक्षिक पौषध का पालन करने लगा ।

विवेचन-भगवान् के दर्शन करके वापिस लौटते समय शंख श्रावक ने दूसरे श्रावकों से कहा कि अशनादि आहार तैयार करवाओ । अपन सभी खाते-पीते हुए पाक्षिक पौषध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

करेंगे। शंख श्रावक की बात सुनकर वे सभी श्रावक अपने-अपने घर गए। पीछे शंख श्रावक के मन में बिना खाये-पीये ही पौषध करने का विचार उत्पन्न हुआ। घर आकर उसने अपनी पत्नी उत्पला श्राविका से पूछा और अपनी पौषधशाला में जाकर पौषध अंगीकार किया।

मूलपाठ में 'आसाएमाणा, विसाएमाणा, परिभाएमाणा, परिभुंजेमाणा' पद दिए हैं। इन सभी पदों के अन्त में 'शानच्' प्रत्यय लगा है। संस्कृत और प्राकृत में 'शतृ और शानच्' प्रत्यय वर्तमान में चालू क्रिया के लिये आते हैं। अर्थात् 'जाते हुए, खाते हुए, लाते हुए' इत्यादि वर्तमान में चालू क्रिया को बतलाने के लिये 'शतृ और शानच्' प्रत्यय लगते हैं। 'आसाएमाणा' आदि चारों पद 'शानच्' प्रत्ययान्त हैं। इसलिये इनका अर्थ है कि 'आहारादि खाते-पीते हुए पौषध करना।' इस पौषध का दूसरा नाम अभी 'दयाव्रत' है। पुष्कली आदि श्रावकों ने यही व्रत किया था।

३—तएणं ते समणोवासगा जेणेव सावत्थी णयरी जेणेव साइं साइं गिहाइं, तेणेव उवागच्छंति, ते० विपुलं असणं पाणं खाइमं साइमं उवक्खडावेंति, उवक्खडावित्ता अण्णमण्णं सद्दावेंति, अ० एवं वयासी—'एवं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हेहिं से विउले असण-पाण-खाइम-साइमे उवक्खडाविए, संखे य णं समणोवासए णो हव्वमागच्छइ, तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अम्हं संखं समणोवासगं सद्दावेत्तए'।

४—तएणं से पोक्खली समणोवासए ते समणोवासए एवं वयासी—'अच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सुणिव्वुया वीसत्था, अहं णं संखं समणोवासगं सद्दावेमि' त्ति कट्टु तेसिं समणोवासगाणं अंतियाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता सावत्थीए णयरीए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मज्झं-मज्झेणं जेणेव संखस्स समणोवासगस्स गिहे तेणेव उवागच्छइ, ते० संखस्स समणोवासगस्स गिहं अणुपविट्ठे ।

५-तएणं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठ-तुट्ठ० आसणाओ अब्भुट्ठेइ आ० सत्त-ट्ठ पयाइं अणुगच्छइ अणुगच्छित्ता पोक्खलिं समणोवासगं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता आसणेणं उवणिमंतेइ, आ० एवं वयासी-"संदिसउ णं देवाणुप्पिया ! किमागमणप्पओयणं ?" तएणं से पोक्खली समणोवासए उप्पलं समणोवासियं एवं वयासी-"कहिं णं देवाणुप्पिए ! संखे समणोवासए ?" तएणं सा उप्पला समणोवासिया पोक्खलिं समणोवासयं एवं वयासी-"एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए बंभयारी जाव विहरइ ।"

कठिन शब्दार्थ-उवक्खडावेंति-तैयार करवाते हैं ।

भावार्थ-३-इसके बाद वे श्रमणोपासक श्रावस्ती नगरी में अपने-अपने घर गए और पुष्कल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार करवाया । फिर एक दूसरे को बुलाकर वे इस प्रकार कहने लगे कि-हे देवानुप्रियो ! अपन ने विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार करवा लिया है, परन्तु अभी तक शंख श्रमणोपासक नहीं आये हैं । इसलिए उन्हें बुलवाना चाहिए ।

४-इसके बाद पुष्कली श्रावक ने उन श्रावकों से कहा कि-"हे देवानुप्रियो ! तुम शांतिपूर्वक विश्राम करो, 'मैं शंख श्रावक को बुला लाता हूँ ।" ऐसा कहकर वहां से चले और श्रावस्ती नगरी के मध्य होते हुए शंख श्रावक के घर पहुंचे ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५-पुष्कली श्रावक को आते हुए देखकर, उत्पला श्राविका हर्षित और सन्तुष्ट हुई। वह अपने आसन से उठ कर सात-आठ चरण सामने गई। उसने पुष्कली श्रावक को वन्दना नमस्कार कर बैठने के लिए आसन दिया और इस प्रकार बोली-"हे देवानुप्रिय! कहिये, आपके आने का क्या प्रयोजन है?" पुष्कली श्रावक ने उत्पला से पूछा-"हे देवानुप्रिये! शंख श्रावक कहाँ है?" उत्पला श्राविका ने उत्तर दिया-"वे पौषधशाला में, पौषध करके बैठे हुए हैं।"

६-तएणं से पोक्खली समणोवासए जेणेव पोसहसाला, जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, ते० गमणागमणाए पडिक्कमइ, ग० संखं समणोवासयं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया! अम्हेहिं से विउले असणे० जाव साइमे उवक्खडाविए, तं गच्छामो णं देवाणुप्पिया! तं विउलं असणं जाव साइमं आसाएमाणा जाव पडिजागरमाणा विहरामो।

७-तएणं से संखे समणोवासए पोक्खलिं समणोवासयं एवं वयासी-णो खलु कप्पइ देवाणुप्पिया! तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणस्स जाव पडिजागरमाणस्स विहरित्तए, कप्पइ मे पोसहसालाए पोसहियस्स जाव विहरित्तए, तं छंदेणं देवाणुप्पिया! तुब्भे तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा जाव विहरह।

८-तएणं से पोक्खली समणोवासए संखस्स समणोवासगस्स

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

अंतियाओ पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता सावत्थिं णयरिं मज्झं-मज्झेणं जेणेव ते समणोवासगा तेणेव उवागच्छइ, ते० ते समणोवासए एवं वयासी-'एवं खलु देवाणुप्पिया ! संखे समणोवासए पोसहसालाए पोसहिए जाव विहरइ, तं छंदेणं देवाणुप्पिया ! तुब्भे विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं जाव विहरह, संखे णं समणोवासए णो हव्वमागच्छइ । तएणं ते समणोवासगा तं विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं आसाएमाणा जाव विहरंति ।

कठिन शब्दार्थ-छंदेणं-इच्छा से ।

भावार्थ-६-तब पुष्कली श्रावक, पौषधशाला में शंख श्रावक के समीप आया । गमनागमन का प्रतिक्रमण करके शंख श्रावक को वन्दना नमस्कार किया और इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रिय ! विपुल अशन, पान, खादिम, स्वादिम, तैयार करवाया है, अतः अपन चलें और उस आहारादि को खाते-पीते पौषध करें ।"

७-तब शंख श्रावक ने पुष्कली श्रावक से इस प्रकार कहा-"हे देवानुप्रिय ! आहारादि खाते-पीते हुए पौषध करना योग्य नहीं । ऐसा सोचकर मैंने बिना खाये-पीये पौषध अंगीकार कर लिया है । तुम सब अपनी इच्छानुसार आहारादि खाते-पीते हुए पौषध करो ।

८-तब पुष्कली श्रावक वहां से रवाना होकर श्रावस्ती नगरी के मध्य चलकर उन श्रावकों के पास पहुँचा और इस प्रकार बोला-"हे देवानुप्रियो ! शंख श्रावक ने बिना खाये-पीये पौषध अंगीकार कर लिया है । उन्होंने कहा है कि तुम अपनी इच्छानुसार आहारादि करते हुए पौषध करो, शंख श्रावक नहीं आवेगा । यह सुनकर उन श्रावकों ने आहारादि खाते-पीते हुए पौषध किया ।

विवेचन-अपने-अपने घर जाकर जब उन्होंने अशनादि तैयार करवा लिया, तब

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उन्होंने एक दूसरे को बुलाया। शंख श्रावक को नहीं आते देख कर पुष्कली श्रावक शंख को बुलाने के लिए गया। शंख की धर्मपत्नी उत्पला, पुष्कली श्रावक को आते देख कर हर्षित हुई, तथा सात-आठ कदम सामने जाकर पुष्कली को वन्दना नमस्कार किया और आगमन का कारण पूछा। उत्पला ने शंख के पौषध करने की सारी बात कही। पुष्कली श्रावक पौषधशाला में शंख श्रावक के पास गया। शंख ने कहा-'अशनादि को खाते-पीते हुए पौषध करना मुझे ठीक नहीं लगा। मैंने बिना खाये-पीये ही पौषध कर लिया है।'

९-तएणं तस्स संखस्स समणोवासगस्स पुव्वरत्ता-वरत्तकाल-समयंसि धम्मजागरियं जागरमाणस्स अयमेयारूवे जाव समुप्पज्जित्था-'सेयं खलु मे कल्लं जाव जलंते समणं भगवं महावीरं वंदित्ता णमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता तओ पडिणियत्तस्स पक्खियं पोसहं पारित्तए' त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, एवं संपेहेत्ता कल्लं जाव जलंते पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता सुद्धप्पावेसाइं मंगल्लाइं वत्थाइं पवरपरिहिए सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, स० पायविहारचारेणं सावत्थिं णयरिं मज्झं-मज्झेणं जाव पज्जुवासइ, अभिगमो णत्थि।

१०-तएणं ते समणोवासगा कल्लं पाउ० जाव जलंते ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा सएहिं सएहिं गेहेहिंतो पडिणिक्खमंति, स० एगयओ मिलायंति, एगयओ मिलायित्ता सेसं जहा पढमं जाव पज्जुवासंति। तएणं समणे भगवं महावीरे तेसिं समणोवासगाणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तीसे य धम्मकहा, जाव आणाए आराहए भवइ । तएणं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठा उट्ठाए उट्ठेंति, उ० समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छंति ते० संखं समणोवासयं एवं वयासी-'तुमं देवाणुप्पिया ! हिज्जो अम्हे अप्पणा चेव एवं वयासी, तुम्हे णं देवाणुप्पिया ! विउलं असणं पाणं खाइमं साइमं जाव विहरिस्सामो, तएणं तुमं पोसहसालाए जाव विहरिए, तं सुट्ठु णं तुमं देवाणुप्पिया ! अम्हे हीलसि । 'अज्जो' त्ति समणे भगवं महावीरे ते समणोवासए एवं वयासी-'मा णं अज्जो ! तुब्भे संखं समणोवासयं हीलह, णिंदह, खिंसह, गरहह, अवमण्णह, संखे णं समणोवासए पियधम्मे चेव, दढधम्मे चेव, सुदक्खुजागरियं जागरिए ।'

कठिन शब्दार्थ—हिज्जो—गया कल ।

भावार्थ-९-रात्रि के पिछले भाग में धर्म जागरणा करते हुए शंख श्रावक को इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ कि कल प्रातःकाल सूर्योदय होने पर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार यावत् पर्युपासना करके, वहाँ से लौटने पर पाक्षिक पौषध पालना मेरे लिये श्रेयस्कर है । ऐसा विचार कर वह दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने पर, पौषधशाला से बाहर निकला और बाहर जाने योग्य शुद्ध तथा मंगल रूप वस्त्रों को उत्तम रीति से पहन कर, अपने घर से पैदल चलते हुए श्रावस्ती नगरी के मध्य में होकर भगवान् की सेवा में पहुँचा, यावत् भगवान् की पर्युपासना करने लगा । यहां अभिगम नहीं कहना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१०-वे पुष्कली आदि सभी श्रावक, दूसरे दिन प्रातःकाल सूर्योदय होने पर स्नानादि करके यावत् शरीर को अलंकृत कर अपने-अपने घर से निकले और एक स्थान पर एकत्रित होकर भगवान् की सेवा में पहुँचे यावत् पर्युपासना करने लगे। भगवान् ने महा परिषद् को और उन श्रावकों को "आज्ञा के आराधक हो" वैसा धर्मोपदेश दिया। वे सभी श्रावक धर्मोपदेश सुनकर और हृदय में धारण करके हृष्ट-तुष्ट हुए। तत्पश्चात् खड़े होकर भगवान् को वन्दना नमस्कार किया। इसके पश्चात् वे शंख श्रावक के पास आकर इस प्रकार कहने लगे-"हे देवानुप्रिय ! आपने कल हमें विपुल अशन, पान, खादिम और स्वादिम तैयार करने के लिये कहा था और कहा था कि अपन अशनादि खाते-पीते हुए पौषध करेंगे। तदनुसार हमने अशनादि तैयार करवाया, किन्तु फिर आप नहीं आये और आपने बिना खाये-पीये पौषध कर लिया। हे देवानुप्रिय ! आपने हमारी अच्छी हंसी की।" उन श्रावकों की इस बात को सुनकर श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने इस प्रकार कहा-"हे आर्यो ! तुम शंख श्रावक की हेलना, निन्दा, खिसना, गर्हा और अवमानना (अपमान) मत करो। क्योंकि शंख श्रावक प्रियधर्मा और दृढ़धर्मा है। इसने प्रमाद और निद्रा का त्याग करके सुदर्शन जागरिका जाग्रत की है।"

विवेचन-पौषध के चार भेद हैं। यथा:-आहार पौषध, शरीर पौषध, ब्रह्मचर्य पौषध और अव्यापार पौषध।

आहार का त्याग करके धर्म का पोषण करना 'आहार पौषध' है। स्नान, उबटन, वर्णक, विलेपन, पुष्प, गंध, ताम्बूल, वस्त्र और आभरण रूप शरीर सत्कार का त्याग करना 'शरीर पौषध' है। अब्रह्म (मैथुन) का त्याग कर कुशल अनुष्ठानों के सेवन द्वारा धर्म वृद्धि करना 'ब्रह्मचर्य पौषध' है। कृषि, वाणिज्यादि सावद्य व्यापारों का तथा शस्त्रादि का त्याग कर धर्म का पोषण करना 'अव्यापार पौषध' है। शंखजी ने इन चारों का त्याग करके पौषध किया था। दूसरे दिन प्रातःकाल वस्त्र बदलने रूप शरीर पौषध को पालकर शेष पौषधों सहित भगवान् की सेवा में गये थे। इसके लिये मूलपाठ में लिखा है कि 'अभिगमो णत्थि' इसका आशय यह है कि उनके पास सचित्त द्रव्य नहीं थे, इसलिये सचित्त द्रव्य त्याग रूप अभिगम नहीं किया था, शेष चार अभिगम तो किये थे।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ प्रश्न-'भंते!' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-कइविहा णं भंते! जागरिया पण्णत्ता?

११ उत्तर-गोयमा! तिविहा जागरिया पण्णत्ता, तं जहा-बुद्धजागरिया अबुद्धजागरिया सुदक्खुजागरिया।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते! एवं वुच्चइ-तिविहा जागरिया पण्णत्ता, तं जहा-बुद्धजागरिया, अबुद्धजागरिया, सुदक्खुजागरिया?

उत्तर-गोयमा! जे इमे अरिहंता भगवंतो उप्पण्णणाण-दंसण-धरा जहा खंदए जाव सव्वण्णू सव्वदरिसी, एए णं बुद्धा बुद्ध-जागरियं जागरंति। जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया भासासमिया जाव गुत्तबंभचारी एए णं अबुद्धा अबुद्धजागरियं जागरंति। जे इमे समणोवासगा अभिगयजीवाजीवा जाव विहरंति, एए णं सुदक्खुजागरियं जागरंति, से तेणट्ठेणं गोयमा! एवं वुच्चइ 'तिविहा जागरिया जाव सुदक्खुजागरिया'।

कठिन शब्दार्थ—जागरिया—जागरणा।

भावार्थ-११ प्रश्न-'हे भगवन्!' इस प्रकार कह कर भगवान् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार करके इस प्रकार पूछा-"हे भगवन्! जागरिका कितने प्रकार की कही गई है?"

११ उत्तर-हे गौतम! जागरिका तीन प्रकार की कही गई है। यथा-बुद्धजागरिका, अबुद्धजागरिका और सुदर्शनजागरिका।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-हे भगवन् ! तीन प्रकार की जागरिका कहने का क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जो उत्पन्न हुए केवलज्ञान केवलदर्शन के धारक अरिहंत भगवान् हैं, इत्यादि दूसरे शतक के प्रथम उद्देशक के स्कन्दक प्रकरण के अनुसार सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं वे 'बुद्ध' हैं, उनकी प्रमाद रहित अवस्था को 'बुद्धजागरिका' कहते हैं। जो अनगार ईर्या आदि पाँच समिति, तीन गुप्ति यावत् गुप्त ब्रह्मचारी हैं, वे सर्वज्ञ न होने के कारण 'अबुद्ध' कहलाते हैं। उनकी जागरणा को 'अबुद्ध जागरिका' कहते हैं। श्रावक, जीव अजीव आदि तत्त्वों के जानकार होते हैं, इसलिए इनकी जागरणा 'सुदर्शनजागरिका' कहलाती है। इसलिए हे गौतम ! इस तरह तीन प्रकार की जागरिका कही गई है।

१२ प्रश्न-तएणं से संखे समणोवासए समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-कोहवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधइ, किं पगरेइ, किं चिणाइ, किं उवचिणाइ ?

१२ उत्तर-संखा ! कोहवसट्टे णं जीवे आउयवज्जाओ सत्त कम्मपगडीओ सिढिलबंधणबद्धाओ एवं जहा पढमसए असंवुडस्स अणगारस्स जाव अणुपरियट्टइ।

१३-माणवसट्टे णं भंते ! जीवे एवं चेव, एवं मायावसट्टेवि एवं लोभवसट्टेवि जाव अणुपरियट्टइ।

१४-तएणं ते समणोवासगा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म भीया तत्था तसिया संसारभउव्विग्गा समणं भगवं महावीरं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

संखे समणोवासए तेणेव उवागच्छंति ते० संखं समणोवासयं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एयमट्ठं सम्मं विणएणं भुज्जो भुज्जो खामेंति। तएणं ते समणोवासगा सेसं जहा आलभियाए जाव पडिगया।

१५ प्रश्न-'भंते!' त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-पभू णं भंते! संखे समणोवासए देवाणुप्पियाणं अंतियं०।

१५ उत्तर-सेसं जहा इसिभद्दपुत्तस्स, जाव अंतं काहेइ।

❀ सेवं भंते! सेवं भंते! त्ति जाव विहरइ ❀

॥ पढमो उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१२ प्रश्न-इसके बाद उस शंख श्रमणोपासक ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार पूछा-"हे भगवन्! क्रोध के वश आर्त्त बना हुआ जीव, क्या बांधता है? क्या करता है? किसका चय करता है और किसका उपचय करता है?

१२ उत्तर-हे शंख! क्रोध के वश आर्त्त बना हुआ जीव आयुष्य कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों को शिथिल बंधन से बंधी हुई प्रकृतियों को दृढ़ बन्धन वाली करता है, इत्यादि सब पहले शतक के पहले उद्देशक में कथित संवर रहित अनगार के समान जान लेना चाहिए। यावत् वह संसार में परिभ्रमण करता है।

१३ प्रश्न-हे भगवन्! मान के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या बांधता है, इत्यादि प्रश्न।

१३ उत्तर-हे शंख! पूर्व कहे अनुसार जानना चाहिए। इसी प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

माया और लोभ के वश आर्त्त बने हुए जीव के विषय में भी जानना चाहिए, यावत् वह संसार में परिभ्रमण करता है ।

१४–श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से क्रोधादि कषाय का ऐसा तीव्र और कटु फल सुन कर और अवधारण कर के कर्म-बन्ध से भयभीत हुए वे श्रावक त्रास पाये, त्रसित हुए और संसार के भय से उद्विग्न बने हुए वे भगवान् को वन्दना नमस्कार करके शंख श्रावक के समीप आये । उन्हें वन्दना नमस्कार करके अपने अविनयरूप अपराध के लिये विनयपूर्वक बार-बार क्षमा-याचना करने लगे । इसके पश्चात् वे सभी श्रावक यावत् अपने-अपने घर गये । शेष वर्णन आलभिका के श्रमणोपासकों के समान जानना चाहिये ।

१५ प्रश्न–'हे भगवन् !' ऐसा कहकर भगवान् गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार पूछा–'हे भगवन् ! क्या शंख श्रमणोपासक आपके पास प्रव्रज्या लेने में समर्थ है ?'

१५ उत्तर–हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । शेष वर्णन ऋषिभद्र-पुत्र के समान कहना चाहिये, यावत् सर्वदुःखों का अन्त करेगा ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है–ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन–पुष्कली आदि श्रावकों को जो थोड़ा-सा क्रोध उत्पन्न हो गया था, उसको उपशमाने की दृष्टि से शंख श्रावक ने क्रोधादि कषाय का फल पूछा और भगवान् ने क्रोधादि कषाय का कटु-फल बतलाया, जिसे सुनकर वे श्रावक शांत हो गये और अपने अपराध के लिये शंख श्रावक से क्षमा याचना की । शंख श्रावक यहाँ का आयुष्य पूर्ण कर देवलोक में उत्पन्न होगा और वहाँ से महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होगा ।

।। बारहवें शतक का प्रथम उद्देशक सम्पूर्ण ।।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२ उद्देशक २

जयंती श्रमणोपासिका

१-तेणं कालेणं तेणं समएणं कोसंवी णामं णयरी होत्था। वण्णओ। चंदोवतरणे चेइए। वण्णओ। तत्थ णं कोसंबीए णयरीए सहस्साणीयस्स रण्णो पोत्ते सयाणीयस्स रण्णो पुत्ते चेडगस्स रण्णो णत्तुए मियावईए देवीए अत्तए जयंतीए समणोवासियाए भत्तिज्जए उदायणे णामं राया होत्था। वण्णओ। तत्थ णं कोसंबीए णयरीए सहस्साणीयस्स रण्णो सुण्हा सयाणीयस्स रण्णो भज्जा चेडगस्स रण्णो धूया उदायणस्स रण्णो माया जयंतीए समणोवासियाए भाउज्जा मियावई णामं देवी होत्था। वण्णओ। सुकुमाल० जाव सुरूवा समणोवासिया जाव विहरइ। तत्थ णं कोसंबीए णयरीए सहस्साणीयस्स रण्णो धूया सयाणीयस्स रण्णो भगिणी उदायणस्स रण्णो पिउच्छा मियावईए देवीए णणंदा वेसालीसावयाणं अरहंताणं पुव्वसिज्जायरी जयंती णामं समणोवासिया होत्था, सुकुमाल० जाव सुरूवा अभिगय० जाव विहरइ।

कठिन शब्दार्थ--सुण्हा--पुत्रवधू, पिउच्छा--पितृश्वसा-भूआ, णत्तुए--नप्तृक--दोहित्र, भाउज्जा--भोजाई।

भावार्थ--१ उस काल उस समय में कौशाम्बी नामकी नगरी थी (वर्णन)। चन्द्रावतरण उद्यान था (वर्णन)। उस कौशाम्बी नगरी में सहस्रानीक राजा का पौत्र, शतानीक राजा का पुत्र, चेटक राजा का दोहित्र, मृगावती रानी का

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आत्मज, जयन्ती श्रमणोपासिका का भतीज, उदायन नामक राजा था, वर्णन। उसी नगरी में सहस्रानीक राजा की पुत्रवधू, शतानीक राजा की पत्नी, चेटक राजा की पुत्री, उदायन राजा की माता और जयन्ती श्रमणोपासिका की भोजाई मृगावती देवी थी। वह सुकुमाल हाथ-पांव वाली थी, इत्यादि वर्णन जानना चाहिए यावत् सुरूप थी और श्रमणोपासिका थी। उसी नगरी में जयंती नाम की श्रमणोपासिका थी। वह सहस्रानीक राजा की पुत्री, शतानीक राजा की बहिन, उदायन राजा की भूआ, मृगावतीदेवी की ननन्द और श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के साधुओं की प्रथम शय्यातर थी। वह सुकुमाल यावत् सुरूप और जीवाजीव आदि तत्त्वों की जानकार, यावत् विचरती थी।

२-तेणं कालेणं तेणं समएणं सामी समोसढे, जाव परिसा पज्जुवासइ। तएणं से उदायणे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठ-तुट्ठे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, को० एवं वयासी-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! कोसंबिं णयरिं सब्भितर-बाहिरियं० एवं जहा कूणिओ तहेव सव्वं जाव पज्जुवासइ। तएणं सा जयंती समणोवासिया इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठ-तुट्ठा जेणेव मियावई देवी तेणेव उवागच्छइ, ते० मियावइं देविं एवं वयासी-एवं जहा णवमसए *उसभदत्तो जाव भविस्सइ। तएणं सा मियावई देवी जयंतीए* समणोवासियाए जहा देवाणंदा जाव पडिसुणेइ। तएणं सा मियावई देवी कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ, को० एवं वयासी-'खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! लहुकरण-जुत्तजोइय० जाव धम्मियं जाणप्पवरं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

जुत्तामेव उवट्ठवेह' जाव उवट्ठवेंति, जाव पच्चप्पिणंति । तएणं सा मियावई देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं ण्हाया कयबलिकम्मा जाव सरीरा बहूहिं खुज्जाहिं जाव अंतेउराओ णिग्गच्छइ, अं० जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव धम्मिए जाणप्पवरे तेणेव उवागच्छइ, ते० जाव दुरूढा । तएणं सा मियावई देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं धम्मियं जाणप्पवरं दुरूढा समाणी णियग-परियाल० जहा उसभदत्तो जाव धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चो-रुहइ । तएणं सा मियावई देवी जयंतीए समणोवासियाए सद्धिं बहूहिं खुज्जाहिं जहा देवाणंदा जाव वंदइ णमंसइ वं० २,उदायणं रायं पुरओ कट्टु ठिइया चेव जाव पज्जुवासइ । तएणं समणे भगवं महा-वीरे उदायणस्स रण्णो मियावईए देवीए जयंतीए समणोवासियाए तीसे य महतिमहा० जाव धम्मं परिकहेइ, जाव परिसा पडिगया, उदायणे पडिगए, मियावई देवी वि पडिगया ।

भावार्थ--२--उस काल उस समय में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहां पधारे यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी । श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के आगमन की बात सुनकर उदायन राजा हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाकर उसने इस प्रकार कहा--"हे देवानुप्रियो ! कौशाम्बी नगरी को अन्दर और बाहर साफ करवाओ, इत्यादि कोणिक राजा के समान जानना चाहिए, यावत् वह पर्युपासना करने लगा । भगवान् के आगमन की बात सुनकर जयन्ती श्रमणोपासिका हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई और मृगावती देवी के पास आकर बोली--"हे देवानुप्रिये ! श्रमण भगवान् महावीर यहाँ कौशाम्बी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नगरी के चन्द्रावतरण उद्यान में पधारे हैं। उनका नाम, गौत्र सुनने से भी महाफल होता है, तो दर्शन और वन्दन का तो कहना ही क्या ? उनका एक भी धर्म-वचन सुनने मात्र से महाफल मिलता है, तो तत्त्व-ज्ञान संबंधी विपुल अर्थ सीखने के महाफल का तो कहना ही क्या है ? अतः अपन चले और वन्दन-नमस्कार करें। यह कार्य हमारे लिए इस भव, परभव और दोनों भवों के लिए कल्याणप्रद और श्रेयस्कर होगा। जिस प्रकार देवानन्दा ने ऋषभदत्त के वचन को स्वीकार किया था, उसी प्रकार मृगावती ने भी जयन्ती श्राविका के वचन स्वीकार किये। फिर सेवक पुरुषों को बुलाकर वेगवान् यावत् धार्मिक श्रेष्ठ रथ जोड़ कर लाने की आज्ञा दी। सेवक पुरुषों ने आज्ञा का पालन किया और रथ लाकर उपस्थित किया। मृगावती देवी और जयन्ती श्राविका ने स्नानादि करके शरीर को अलंकृत किया। फिर बहुत-सी कुब्जा दासियों के साथ अन्तःपुर से बाहर निकली और फिर बाहरी उपस्थानशाला में आई और रथारूढ़ होकर उद्यान में पहुँची। रथ से नीचे उतर कर देवानन्दा के समान वन्दना नमस्कार कर, उदायन राजा को आगे करके चली और उसके पीछे ठहर कर पर्युपासना करने लगी। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने उदायन राजा, मृगावती देवी, जयन्ती श्रमणोपासिका और उस महा परिषद् को धर्मोपदेश दिया यावत् परिषद् लौट गई। उदायन राजा और मृगावती भी चले गये।

विवेचन—जयन्ती श्रमणोपासिका साधुओं को स्थान देने में प्रसिद्ध थी। इसलिए जो साधु प्रथम बार कोशांबी में आते थे, वे उसी से वसति (ठहरने का स्थान) की याचना करते थे। इसलिए वह 'पूर्वशय्यातर' के नाम से प्रसिद्ध थी।

जयन्ती श्रमणोपासिका के प्रश्न

३—तएणं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठा समणं भगवं महा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वीरं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-

प्रश्न-कहं णं भंते ! जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति ?

उत्तर-जयंती ! पाणाइवाएणं जाव मिच्छादंसणसल्लेणं, एवं खलु जीवा गरुयत्तं हव्वमागच्छंति । एवं जहा पढमसए जाव वीईवयंति ।

४ प्रश्न-भवसिद्धियत्तणं भंते ! जीवाणं किं सभावओ, परिणामओ ?

४ उत्तर-जयंती ! सभावओ, णो परिणामओ ।

५ प्रश्न-सव्वे वि णं भंते ! भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति ?

५ उत्तर-हंता, जयंती ! सव्वे वि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति ।

६ प्रश्न-जइ णं भंते ! सव्वे वि भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति, तम्हा णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?

६ उत्तर-णो इणट्ठे समट्ठे ।

प्रश्न-से केणं खाइएणं अट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'सव्वे वि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति, णो चेव णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ ?

उत्तर-जयंती ! से जहाणामए सव्वागासस्सेढी सिया, अणाईया अणवंदग्गा परित्ता परिवुडा, सा णं परमाणुपोग्गलमेत्तेहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

खंडेहिं समए समए अवहीरमाणी अवहीरमाणी अणंताहिं ओस-प्पिणी-अवसप्पिणीहिं अवहीरंति, णो चेव णं अवहिया सिया, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ-'सव्वे वि णं भवसिद्धिया जीवा सिज्झिस्संति, णो चेव णं भवसिद्धियविरहिए लोए भविस्सइ।

कठिन शब्दार्थ-अणवदग्गा-अनन्त, परित्ता-परिमित, परिवुडा-परिवृत-घिरी हुई।

भावार्थ-३ प्रश्न-जयन्ती श्रमणोपासिका श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से धर्मोपदेश सुनकर एवं अवधारण करके हर्षित और सन्तुष्ट हुई और भगवान् को वन्दना-नमस्कार कर, इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! जीव किस कारण से गुरुत्व-भारीपन को प्राप्त होते हैं ?"

३ उत्तर-"हे जयन्ती ! जीव प्राणातिपात आदि अठारह पापस्थानों का सेवन करके गुरुत्व को प्राप्त होते हैं और इनसे निवृत्त होकर जीव हलका होता है। इस प्रकार प्रथम शतक के नौवें उद्देशक में कहे अनुसार जानना चाहिए यावत् वे संसार समुद्र से पार हो जाते हैं।"

४ प्रश्न-हे भगवन् ! जीवों का भवसिद्धिकपन स्वाभाविक है या पारिणामिक ?

४ उत्तर-हे जयन्ती ! स्वाभाविक है, पारिणामिक नहीं।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे ?

५ उत्तर-हाँ, जयन्ती ! सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध हो जायेंगे, तो लोक भवसिद्धिक जीवों से रहित हो जायगा ?

६ उत्तर-हे जयन्ती ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि सभी भवसिद्धिक जीवों के सिद्ध होने पर भी लोक, भवसिद्धिक जीवों से रहित नहीं होगा ?

उत्तर-हे जयन्ती ! जिस प्रकार सर्वाकाश की श्रेणी जो अनादि अनन्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है और एक प्रदेशी होने से दोनों ओर से परिमित तथा अन्य श्रेणियों द्वारा परिवृत है, उसमें से प्रत्येक समय में एक एक परमाणु पुद्गल जितना खण्ड निकालते हुए, अनन्त उत्सर्पिणी और अनन्त अवसर्पिणी तक निकाला जाय, तो भी वह श्रेणी खाली नहीं होती। इसी प्रकार हे जयन्ती! ऐसा कहा जाता है कि सब भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे, परन्तु लोक भवसिद्धिक जीवों से रहित नहीं होगा।

७ प्रश्न-सुत्तत्तं भंते ! साहू, जागरियत्तं साहू ?

७ उत्तर-जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू, अत्थेगइयाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'अत्थेगइयाणं जाव साहू ?'

उत्तर-जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया अहम्माणुया अहम्मिट्ठा अहम्मक्खाई अहम्मपलोई अहम्मपलज्जणा अहम्मसमुदायारा अहम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, एएसिं णं जीवाणं सुत्तत्तं साहू। एए णं जीवा सुत्ता समाणा णो बहूणं पाणाणं भूयाणं जीवाणं सत्ताणं दुक्खणयाए सोयणयाए जाव परियावणयाए वट्टंति, एए णं जीवा सुत्ता समाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा णो बहूहिं अहम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति, एएसिं णं जीवाणं सुत्तत्तं साहू। जयंती ! जे इमे जीवा धम्मिया धम्माणुया जाव धम्मेणं चेव वित्तिं कप्पेमाणा विहरंति, एएसिं णं जीवाणं जागरियत्तं साहू। एए णं जीवा जागरा समाणा बहूणं पाणाणं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सत्ताणं अदुक्खणयाए, जाव अपरियावणयाए वट्टंति, तेणं जीवा जागरमाणा अप्पाणं वा परं वा तदुभयं वा बहूहिं धम्मियाहिं संजोयणाहिं संजोएत्तारो भवंति। एए णं जीवा जागरमाणा धम्म-जागरियाए अप्पाणं जागरइत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं जाग-रियत्तं साहू; से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ-'अत्थेगइयाणं जीवाणं सुत्तत्तं साहू, अत्थेगइयाणं जीवाणं जागरियत्तं साहू' ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! जीवों का सुप्त रहना अच्छा है या जाग्रत रहना ?

७ उत्तर-हे जयन्ती ! कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है और कुछ जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे जयन्ती ! जो ये अधार्मिक, अधर्म का अनुसरण करने वाले, अधर्मप्रिय, अधर्म का कथन करनेवाले, अधर्म का अवलोकन करनेवाले, अधर्म में आसक्त, अधर्माचरण करनेवाले और अधर्म से ही अपनी आजीविका करने वाले हैं, उन जीवों का सुप्त रहना अच्छा है। क्योंकि वे जीव सुप्त हों तो अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों के दुःख, शोक और परिताप आदि के कारण नहीं बनते तथा अपने को, दूसरों को और स्वपर को अनेक अधार्मिक संयो-जनाओं (प्रपञ्चों) में नहीं फँसाते। अतः ऐसे जीवों का सुप्त रहना अच्छा है।

जो जीव धार्मिक, धर्मानुसारी, धर्मप्रिय, धर्म का कथन करनेवाले, धर्म का अवलोकन करनेवाले, धर्मासक्त, धर्माचरण करनेवाले और धर्मपूर्वक आजी-विका चलानेवाले हैं, उन जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है। क्योंकि वे जाग्रत हों, तो अनेक प्राण, भूत जीव और सत्त्वों के दुःख, शोक और परिताप आदि के कारण नहीं बनते तथा अपने आप को, दूसरों को और स्वपर को

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनेक धार्मिक संयोजनाओं में लगाते रहते हैं, तथा धार्मिक जागरिका द्वारा जाग्रत रहते हैं, इसलिए इन जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है। इसलिए हे जयन्ती ! ऐसा कहा जाता है कि कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है और कुछ जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है।

विवेचन–जयन्ती श्रमणोपासिका ने भगवान् से प्रश्न पूछे हैं। भवसिद्धिक जीवों का भवसिद्धिकपना स्वाभाविक है। जैसे पुद्गल में मूर्त्तत्व धर्म स्वाभाविक है, वैसे ही भवसिद्धिक जीवों का भवसिद्धिकपना स्वाभाविक है। जो मुक्ति के योग्य हैं अर्थात् जिन में मुक्ति जाने की योग्यता है, वे भवसिद्धिक कहलाते हैं। सभी भवसिद्धिक जीव सिद्धि प्राप्त करेंगें, अन्यथा उनका भवसिद्धिकपना ही घटित नहीं हो सकता।

शंका–यदि सभी भवसिद्धिक जीव सिद्ध हो जावेंगे, तो क्या लोक, भवसिद्धिक जीवों से शून्य नहीं हो जायगा ?

समाधान–नहीं, ऐसा नहीं होगा। जैसे कि–जितना भी भविष्यत्काल है, वह सब वर्तमान होगा। तो क्या कभी ऐसा समय आयेगा कि संसार, भविष्यत्काल से शून्य हो जायेगा ? ऐसा कभी नहीं होगा। इसी दृष्टान्त के अनुसार यह समझना चाहिए कि लोक भवसिद्धिक जीवों से कदापि शून्य नहीं होगा।

इस प्रश्न का दूसरा आशय ऐसा भी निकलता है कि जितने भी जीव सिद्ध होंगे, वे सभी भवसिद्धिक ही होंगे, एक भी अभवसिद्धिक जीव सिद्ध नहीं होगा–ऐसा मानने पर भी प्रश्न वही उपस्थित रहता है कि क्रमशः सभी भवसिद्धिक जीवों के सिद्ध हो जाने पर, लोक की भव्यों से शून्यता कैसे नहीं होगी ? जयन्ती श्रमणोपासिका की इस शंका का समाधान करने के लिये, आकाश-श्रेणी का दृष्टांत देकर यह बतलाया गया है कि जैसे समस्त आकाश की श्रेणी अनादि-अनन्त है, उसमें से एक-एक परमाणु जितना खण्ड प्रति समय निकाला जाय, तो इस प्रकार निकालते-निकालते अनन्त उत्सर्पिणियाँ और अनन्त अवसर्पिणियाँ वीत जाने पर भी वह आकाश-श्रेणी खाली नहीं होती। इसी प्रकार भवसिद्धिक जीवों के मोक्ष जाते रहने पर भी यह लोक, भवसिद्धिक जीवों से खाली नहीं होगा। इसके लिये दूसरा दृष्टान्त यह भी दिया गया है कि जैसे–दो प्रकार के पत्थर हैं। एक वे जिनमें प्रतिमा बनने की योग्यता है। दूसरे वे टोल पत्थरादि जिनमें प्रतिमा बनने की योग्यता नहीं हैं। जिन पत्थरों में प्रतिमा बनने की योग्यता है, वे सभी पत्थर प्रतिमा नहीं बन जाते, किन्तु जिन पत्थरों को तथाप्रकार के कलाकार आदि का संयोग मिल जाता है, वे प्रतिमापन की

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सम्प्राप्ति कर लेते हैं। जिन पत्थरों को प्रतिमापन की सम्प्राप्ति नहीं होती, इतने मात्र से उनमें प्रतिमापन की अयोग्यता नहीं होती, किन्तु तथाविध संयोग न मिलने से वे प्रतिमापन की सम्प्राप्ति नहीं कर सकते। यही बात भवसिद्धिक जीवों के लिये भी समझनी चाहिये+।

जाग्रत जीव ही सिद्धि को प्राप्त होते हैं, इसलिये इसके आगे सुप्त-जाग्रत विषयक प्रश्न किया गया है। अधर्मी जीव सोते हुए अच्छे हैं और धर्मी पुरुष जागते हुए अच्छे हैं। क्योंकि ये दोनों इन अवस्थाओं में प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःख शोक और परिताप नहीं पहुंचाते।

८ प्रश्न-बलियत्तं भंते ! साहू, दुब्बलियत्तं साहू ?

८ उत्तर-जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं बलियत्तं साहू, अत्थेगइयाणं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-जाव साहू ?

उत्तर-जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति एएसि णं जीवाणं दुब्बलियत्तं साहू। एए णं जीवा एवं जहा सुत्तस्स तहा दुब्बलियत्तस्स वत्तव्वया भाणियव्वा। बलियस्स जहा जागरस्स तहा भाणियव्वं, जाव संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं बलियत्तं साहू, से तेणट्ठेणं जयंती ! एवं वुच्चइ-तं चेव जाव साहू।

९ प्रश्न-दक्खत्तं भंते ! साहू, आलसियत्तं साहू ?

+ कुछ पूर्वाचार्य यहाँ 'जाति-भव्य' की कल्पना करते हैं। वे मानते हैं कि जीवों का एक वर्ग ऐसा है जो जाति से ही भवसिद्धिक है, वे कभी सिद्ध नहीं होंगे। किन्तु मूलपाठ में सभी भव्य जीवों के सिद्ध होने का उल्लेख है। अतएव यह जाति भव्य भेद समझ में नहीं आता। दुर्भव्य हो सकते हैं। जाति-भव्य-जो कभी सिद्ध नहीं हो-मानने पर तो वे भी अभव्य के समान होंगे और सभी भव्यों के मुक्त होने के बाद मुक्तिगमन रुकने का प्रश्न उत्पन्न हो जायेगा। अतएव सूत्रोक्त समाधान ही ठीक लगता है-डोशी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९ उत्तर-जयंती ! अत्थेगइयाणं जीवाणं दक्खत्तं साहू, अत्थेगइयाणं जीवाणं आलसियत्तं साहू ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-तं चेव जाव साहू ।

उत्तर-जयंती ! जे इमे जीवा अहम्मिया जाव विहरंति, एएसि णं जीवाणं आलसियत्तं साहू । एए णं जीवा आलसा समाणा णो बहूणं, जहा सुत्ता तहा आलसा भाणियव्वा, जहा जागरा तहा दक्खा भाणियव्वा, जाव संजोएत्तारो भवंति। एए णं जीवा दक्खा समाणा बहूहिं आयरियवेयावच्चेहिं, जाव उवज्झाय०, थेर०, तवस्सि०, गिलाण०, सेह०, कुल०, गण०, संघ०, साहम्मियवेयावच्चेहिं अत्ताणं संजोएत्तारो भवंति, एएसि णं जीवाणं दक्खत्तं साहू, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव साहू ।

१० प्रश्न-सोइंदियवसट्टे णं भंते ! जीवे किं बंधइ ?

१० उत्तर-एवं जहा कोहवसट्टे तहेव जाव अणुपरियट्टइ । एवं चक्खिंदियवसट्टे वि, एवं जाव फासिंदियवसट्टे वि, जाव अणुपरियट्टइ।

११-तएणं सा जयंती समणोवासिया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतियं एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठ-तुट्ठा सेसं जहा देवाणंदा तहेव पव्वइया, जाव सव्वदुक्खप्पहीणा ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ बीओ उद्देसो समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-दक्खत्तं-दक्षता-उद्यमीपन, आलसियत्तं-आलसीपन ।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! जीवों की सबलता अच्छी है या दुर्बलता ?

८ उत्तर-हे जयन्ती ! कुछ जीवों की सबलता अच्छी है और कुछ जीवों की दुर्बलता ।

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि कुछ जीवों की सबलता अच्छी है और कुछ जीवों की दुर्बलता ?

उत्तर-हे जयन्ती ! जो जीव अधार्मिक यावत् अधर्म द्वारा ही आजीविका करते हैं, उनकी दुर्बलता अच्छी है । उन जीवों के दुर्बल होने से वे किसी जीव को दुःख आदि नहीं पहुँचा सकते, इत्यादि 'सुप्त' के समान दुर्बलता का भी कथन करना चाहिए और जाग्रत के समान सबलता का कथन करना चाहिए । इसलिए धार्मिक जीवों की सबलता अच्छी है । इस कारण हे जयन्ती ! ऐसा कहा जाता है कि कुछ जीवों की सबलता अच्छी है और कुछ जीवों की दुर्बलता ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! जीवों की दक्षता (उद्यमीपन) अच्छी है या आलसीपन ?

९ उत्तर-हे जयन्ती ! कुछ जीवों की दक्षता अच्छी है और कुछ जीवों का आलसीपन ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे जयन्ती ! जो जीव अधार्मिक यावत् अधर्म द्वारा आजीविका करते हैं, उन जीवों का आलसीपन अच्छा है । यदि वे आलसी होंगे, तो प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःख, शोक, परितापादि उत्पन्न नहीं करेंगे, इत्यादि सब सुप्त के समान कहना चाहिए । दक्षता (उद्यमीपन) का कथन जाग्रत के समान कहना चाहिए, यावत् वे स्व-पर और उभय को धर्म के साथ जोड़ने वाले होते हैं । वे जीव दक्ष हों, तो आचार्य, उपाध्याय, स्थविर, तपस्वी, ग्लान, शैक्ष (नवदीक्षित) कुल, गण, संघ और साधर्मिक की वैयावृत्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(सेवा) करने वाले होते हैं। इसलिए इन जीवों की दक्षता अच्छी है। इस कारण हे जयन्ती ! ऐसा कहा जाता है कि कुछ जीवों की दक्षता और कुछ जीवों का आलसीपन अच्छा है।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! श्रोत्रेन्द्रिय के वश आर्त्त (पीड़ित) बना हुआ जीव, क्या बाँधता है, इत्यादि प्रश्न।

१० उत्तर-हे जयन्ती ! जिस प्रकार क्रोध के वश आर्त्त बने हुए जीव के विषय में कहा गया है, उसी प्रकार यहाँ भी जानना चाहिए, यावत् वह संसार में परिभ्रमण करता है। इसी प्रकार चक्षुइन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय के वश आर्त्त बने हुए जीव के विषय में भी कहना चाहिए, यावत् संसार में परिभ्रमण करता है।

११-इसके पश्चात् जयन्ती श्रमणोपासिका श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से उपरोक्त अर्थों को सुनकर और हृदय में धारण करके हर्षित एवं सन्तुष्ट हुई, इत्यादि सब वर्णन नौवें शतक के तेतीसवें उद्देशक में कथित देवानन्दा के वर्णन के समान कहना चाहिए, यावत् जयन्ती ने प्रव्रज्या ग्रहण की और सभी दुःखों से मुक्त हुई।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ बारहवें शतक का द्वितीय उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १२ उद्देशक ३

सात पृथ्वियाँ

१ प्रश्न-रायगिहे जाव एवं वयासी-कइ णं भंते ! पुढवीओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पण्णत्ताओ ?

१ उत्तर-गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, तं जहा-पढमा, दोच्चा, जाव सत्तमा ।

२ प्रश्न-पढमा णं भंते ! पुढवी किंणामा किंगोत्ता पण्णत्ता ?

२ उत्तर-गोयमा ! घम्मा णामेणं, रयणप्पभा गोत्तेणं, एवं जहा जीवाभिगमे पढमो णेरइयउद्देसओ सो चेव णिरवसेसो भाणियव्वो, जाव अप्पाबहुगं ति ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ तइओ उद्देसो समत्तो ॥

भावार्थ-१ प्रश्न-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी कही गई हैं ?"

१ उत्तर-हे गौतम ! पृथ्वियां सात कही गई हैं । यथा-प्रथमा, द्वितीया यावत् सप्तमी ।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रथम पृथ्वी का क्या नाम और गौत्र है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम पृथ्वी का नाम 'घम्मा' है और गोत्र रत्नप्रभा है । इस प्रकार जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के प्रथम नैरयिक उद्देशक में कहे अनुसार यावत् अल्पबहुत्व तक जानना चाहिए ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-अपनी इच्छानुसार किसी पदार्थ का जो कुछ नाम रखना 'नाम' कहलाता है और उसके अर्थ के अनुकूल नाम रखना 'गोत्र' कहलाता है । तात्पर्य यह है कि सार्थक और निरर्थक जो कुछ नाम रखा जाता है, उसे 'नाम' कहते हैं । सार्थक एवं तदनु-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कूल गुणों के अनुसार जो नाम रखा जाता है, उसे गोत्र कहते हैं। सात नरकों के नाम क्रमशः इस प्रकार है–घम्मा, वंसा, सीला, अंजना, रिट्ठा, मघा और माघवई। इन सातों के गोत्र इस प्रकार हैं–रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा और तमस्तमःप्रभा, (महातमःप्रभा) इनका विस्तृत वर्णन जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति में है।

॥ बारहवें शतक का तीसरा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १२ उद्देशक ४

परमाणु और स्कन्ध के विभाग

१ प्रश्न–रायगिहे जाव एवं वयासी–दो भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, एगयओ साहण्णित्ता किं भवइ ?

१ उत्तर–गोयमा ! दुप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा कज्जइ, एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ।

२ प्रश्न–तिण्णि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, साहण्णित्ता किं भवइ ?

२ उत्तर–गोयमा ! तिपएसिए खंधे भवइ। से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणे तिण्णि परमाणु-पोग्गला भवंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ प्रश्न-चत्तारि भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, जाव पुच्छा ।

३ उत्तर-गोयमा ! चउपएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि कज्जइ, दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा दो दुपएसिया खंधा भवंति । तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ, चउहा कज्जमाणे चत्तारि परमाणुपोग्गला भवंति ।

४ प्रश्न-पंच भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा ।

४ उत्तर-गोयमा ! पंचपएसिए खंधे भवइ । से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि चउहा वि पंचहा वि कज्जइ; दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति; चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुप्पएसिए खंधे भवइ, पंचहा कज्जमाणे पंच परमाणुपोग्गला भवंति ।

कठिन शब्दार्थ-साहण्णंति-एक रूप में इकट्ठे होते हैं, **भिज्जमाणे**-भेदन किया

जाने पर।

भावार्थ—१ प्रश्न—राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा—हे भगवन् ! दो परमाणु संयुक्त रूप में जब इकट्ठे होते हैं, तब उनका क्या होता है ?

१ उत्तर—हे गौतम ! उनका द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है। यदि उसके विभाग किये जाय तो उसके दो विभाग होते हैं—एक ओर एक परमाणु पुद्गल रहता है और दूसरी ओर भी एक परमाणु पुद्गल होता है।

२ प्रश्न—हे भगवन् ! जब तीन परमाणु पुद्गल संयुक्त रूप में इकट्ठे होते हैं, तब उनका क्या होता है ?

२ उत्तर—हे गौतम ! उनका त्रिप्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसके विभाग किये जाय, तो दो या तीन विभाग होते हैं। यदि दो विभाग हों तो एक ओर एक परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध रहता है। यदि तीन विभाग हों, तो तीन परमाणु पुद्गल पृथक्-पृथक् रहते हैं।

३ प्रश्न—हे भगवन् ! चार परमाणु पुद्गल जब इकट्ठे होते हैं, तब उनका क्या होता है ?

३ उत्तर—हे गौतम ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है। यदि उसके विभाग किये जाय, तो दो, तीन या चार विभाग होते हैं। यदि दो विभाग हों, तो एक ओर एक परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध रहता है। अथवा एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और दूसरी ओर भी द्विप्रदेशी स्कन्ध रहता है। यदि तीन विभाग हों, तो एक ओर भिन्न-भिन्न दो परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध रहता है। चार विभाग होने पर पृथक्-पृथक् चार परमाणु पुद्गल रहते हैं।

४ प्रश्न—हे भगवन् ! पाँच परमाणु पुद्गल जब संयुक्त रूप में इकट्ठे होते हैं, तब क्या होता है ?

४ उत्तर—हे गौतम ! पंच प्रदेशी स्कन्ध होता है। यदि उसके विभाग किये जाय, तो दो, तीन, चार और पांच विभाग होते हैं। दो विभाग होने पर

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक ओर एक परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध रहता है। अथवा एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और दूसरी ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध रहता है। यदि उसके तीन विभाग किये जाय, तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध रहता है-१-१-३। अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध रहते हैं-१-२-२। यदि उसके चार विभाग किये जाय तो एक ओर पृथक्-पथक् तीन परमाणु पुद्गल और दूसरी ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध रहता है-१-१-१-२। यदि उसके पांच विभाग किये जाय तो पृथक्-पृथक् पांच परमाणु होते हैं। यथा-१-१-१-१-१।

विवेचन-द्विप्रदेशी स्कन्ध में एक विकल्प (भंग) है। यथा-१-१। त्रिप्रदेशी के दो विकल्प हैं, १-२। १-१-१। चतुष्प्रदेशी स्कन्ध के चार विकल्प हैं, यथा-१-३। २-२। १-१-२। १-१-१-१। पंच प्रदेशी स्कन्ध के छह विकल्प होते हैं, यथा-१-४। २-३। १-१-३। १-२-२। १-१-१-२। १-१-१-१-१।

५ प्रश्न-छब्भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा।

५ उत्तर-गोयमा ! छप्पएसिए खंधे भवइ, से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि जाव छव्विहा वि कज्जइ। दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, अहवा दो तिपएसिया खंधा भवंति। तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति। चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुप्पएसिया खंधा भवंति। पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ। छहा कज्जमाणे छ परमाणुपोग्गला भवंति।

कठिन शब्दार्थ—एगयओ—एक ओर।

भावार्थ—५ प्रश्न—हे भगवन् ! छह परमाणु पुद्‌गल जब इकट्ठे होते हैं, तो क्या बनता है ?

५ उत्तर—हे गौतम ! षट् प्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसका विभाग किया जाय, तो दो, तीन, चार, पाँच या छह विभाग होते हैं। जब उसके दो विभाग होते हैं, तब एक ओर एक परमाणु पुद्‌गल और एक ओर एक पञ्च प्रदेशी स्कन्ध रहता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध रहता है, अथवा दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब उसके तीन विभाग होते हैं, तब एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्‌गल और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्‌गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब चार विभाग होते हैं, तब एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु पुद्‌गल और एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्‌गल और एक ओर द्विप्रदेशी दो स्कन्ध होते हैं। जब उसके पाँच विभाग होते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणुपुद्‌गल और एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है। जब उसके छह विभाग होते हैं, तब उसके पृथक्-पृथक् छह परमाणुपुद्‌गल होते हैं।

६ प्रश्न—सत्त भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा।

६ उत्तर—गोयमा ! सत्तपएसिए खंधे भवइ; से भिज्जमाणे दुहा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वि जाव सत्तहा वि कज्जइ । दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिप्पएसिए खंधे एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ । तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ । चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणु-पोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति । पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणु-पोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति । छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ । सत्तहा कज्जमाणे सत्त परमाणुपोग्गला भवंति ।

भावार्थ-६ प्रश्न-हे भगवन् ! सात परमाणु-पुद्गल जब इकट्ठे होते हैं, तब क्या बनता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

६ उत्तर—हे गौतम ! सप्त प्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसके विभाग किये जायँ, तो दो तीन यावत् सात विभाग होते हैं। जब दो विभाग किये जायँ तो एक ओर एक परमाणु पुद्गल और एक ओर छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर दो प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है। जब उसके तीन विभाग किये जायँ तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्गल और एक ओर पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल, एक ओर दो प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल और एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, जब उसके चार विभाग किये जायँ, तब एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु पुद्गल और एक ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। उसके पाँच विभाग किये जायँ तब एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणुपुद्-गल और एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब उसके छह विभाग किये जाय तो एक ओर पृथक्-पृथक् पांच परमाणु पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है। यदि उसके सात विभाग किये जाय तो पृथक्-पृथक् सात परमाणु पुद्गल होते हैं।

विवेचन—छह प्रदेशी स्कन्ध के दस विकल्प होते हैं। यथा—१–५। २–४। ३–३। १–१–४। १–२–३। २–२–२। १–१–१–३। १–१–२–२। १–१–१–१–२। १–१–१–१–१–१।

सात प्रदेशी स्कन्ध के चौदह विकल्प होते हैं। यथा—१–६। २–५। ३–४। १–१–५। १–२–४। १–३–३। २–२–३। १–१–१–४। १–१–२–३। १–२–२–२। १–१–१–१–३। १–१–१–२–२। १–१–१–१–१–२। १–१–१–१–१–१–१।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

७ प्रश्न-अट्ठ भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा ।

७ उत्तर-गोयमा ! अट्ठपएसिए खंधे भवइ; जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा दो चउप्पएसिया खंधा भवंति । तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला भवंति, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुप्पएसिए खंधे एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति । चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दोण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति । पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति। छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला; एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति। सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ। अट्ठहा कज्जमाणे अट्ठ परमाणुपोग्गला भवंति।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! आठ परमाणु इकट्ठे होने पर क्या बनता है ?

७ उत्तर-हे गौतम ! अष्ट प्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसके विभाग किये जायें तो दो, तीन, यावत् आठ विभाग होते हैं। जब उसके दो विभाग किये जायें तो एक ओर एक परमाणु पुद्गल और एक ओर सप्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब उसके तीन विभाग किये जायें, तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु पुद्गल और एक ओर छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब उसके चार विभाग किये जाते हैं, तब एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक पञ्च-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कंध होता है, अथवा चार द्विप्रदेशी स्कंध होते हैं। जब उसके पांच विभाग किये जायँ, तो एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध तथा एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। यदि उसके छह विभाग किये जायँ, तो एक ओर पृथक्-पृथक् पांच परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं। यदि उसके सात विभाग किये जायँ तो एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है। यदि उसके आठ विभाग किये जायँ, तो पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल होते हैं।

विवेचन-अष्ट प्रदेशी स्कन्ध के इक्कीस विकल्प होते हैं। यथा-१-७। २-६। ३-५। ४-४। १-१-६। १-२-५। १-३-४। २-२-४। २-३-३। १-१-१-५। १-१-२-४। १-१-३-३। १-२-२-३। २-२-२-२। १-१-१-१-४। १-१-१-२-३। १-१-२-२-२। १-१-१-१-१-३। १-१-१-१-२-२। १-१-१-१-१-१-२। १-१-१-१-१-१-१-१।

८ प्रश्न-णव भंते ! परमाणुपोग्गला पुच्छा।

८ उत्तर-गोयमा ! जाव णवविहा कज्जंतिः दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ, एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक्केक्कं संचारंतेहिं जाव अहवा एगयओ चउप्पएसिए खंधे; एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ। तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणु-पोग्गले, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति, अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ; अहवा तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-८ प्रश्न-हे भगवन् ! नौ परमाणु-पुद्गलों के मिलने पर क्या बनता है ?

८ उत्तर-हे गौतम ! नौ प्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसके विभाग किये जायें, तो दो तीन यावत् नौ विभाग होते हैं। जब दो विभाग किये जायें, तब एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अष्टप्रदेशी स्कन्ध होता है। इस प्रकार एक-एक का संचार (वृद्धि) करना चाहिए। यावत् अथवा एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कंध होता है। जब उसके तीन विभाग किये जायें, तब एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक सप्त-प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कंध और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कंध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो चतुःप्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कंध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कंध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कंध होता है, अथवा तीन त्रिप्रदेशी स्कंध होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ छप्पएसिए **खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला**, एगयओ दुपएसिए खंधे, **एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ**; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, **एगयओ तिपएसिए खंधे**, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा **एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ** दो दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ तिण्णि दुप्पएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ।

भावार्थ-जब उसके चार विभाग किये जायं, तब एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणुपुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है।

पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला; एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ दुपएसिए खंधे; एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब नौ प्रदेशी स्कन्ध के पाँच विभाग किये जायें, तब एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर चार द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुप्पएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुप्पएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब नौप्रदेशी स्कन्ध के छह विभाग किये जायें तब एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ--नौ प्रदेशी स्कन्ध के सात विभाग किये जायँ तब एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ। णवहा कज्जमाणे णव परमाणुपोग्गला भवंति।

जब उसके आठ विभाग किये जायँ तब एक ओर पृथक्-पृथक् सात परमाणु पुद्गल और एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध होता है।

जब उसके नौ विभाग किये जायँ, तब पृथक्-पृथक् नौ परमाणु-पुद्गल होते हैं।

विवेचन--नौप्रदेशी स्कन्ध के २८ विकल्प होते हैं। यथा--१-८। २-७। ३-६। ४-५। १-१-७। १-२-६। १-३-५। १-४-४। २-३-४। ३-३-३। १-१-१-६। १-१-२-५। १-१-३-४। १-२-२-४। १-२-३-३। २-२-२-३। १-१-१-१-५। १-१-१-२-४। १-१-१-३-३। १-१-२-२-३। १-२-२-२-२। १-१-१-१-१-४। १-१-१-१-२-३। १-१-१-२-२-२। १-१-१-१-१-१-३। १-१-१-१-१-२-२। १-१-१-१-१-१-१-२। १-१-१-१-१-१-१-१-१।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९ प्रश्न-दस भंते ! परमाणुपोग्गला-

९ उत्तर-जाव दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ णवपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ; एवं एक्केक्कं संचारेयव्वं ति, जाव अहवा दो पंच पएसिया खंधा भवंति ।

भावार्थ-९ प्रश्न-हे भगवन् ! दस परमाणु मिलकर क्या बनता है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! उनका एक दस प्रदेशी स्कन्ध बनता है । यदि उसके विभाग किये जायँ, तो दो, तीन यावत् दस विभाग होते हैं । जब उसके दो विभाग किये जायँ, तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक नौ प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अष्ट प्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार एक-एक का संचार करना चाहिये । यावत् दो पञ्चप्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ अट्ठपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ चउप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दो तिपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-जब उसके तीन विभाग किये जाते हैं, तब एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अष्ट प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक सप्तप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पञ्च-प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है।

चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ सत्तपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो चउप्पएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ दुपएसिए खंधे एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि तिपएसिया खंधा भवंति। अहवा एगयओ दो

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

दुपएसिया खंधा, एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके चार विभाग किये जाते हैं तो एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक सप्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पंचप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुःप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

पंचहा कज्जमाणे एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ छप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ परमाणु-पोग्गले, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा पंच दुपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ--जब उसके पांच विभाग किये जाय, तब एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु पुद्गल और एक ओर एक छह प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक पञ्च प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर तीन परमाणु पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर दो परमाणु पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा पांच द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

छहा कज्जमाणे एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ पंचपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ चउपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला; एगयओ दो तिपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ दो दुपएसिया खंधा, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ चत्तारि दुपएसिया खंधा भवंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ—जब उसके छह विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक पञ्च प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो त्रिप्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल, एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर चार द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

सत्तहा कज्जमाणे एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ चउप्पएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ पंच परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ चत्तारि परमाणुपोग्गला, एगयओ तिण्णि दुपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ—जब उसके सात विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् पाँच परमाणु पुद्गल और एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध तथा एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् चार परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन द्विप्रदेशी स्कन्ध होता हैं।

अट्ठहा कज्जमाणे एगयओ सत्त परमाणुपोग्गला, एगयओ तिपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ छ परमाणुपोग्गला, एगयओ **दो दुपएसिया खंधा** भवंति।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ--जब उसके आठ विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् सात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् छह परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो द्विप्रदेशी स्कंध होते हैं।

णवहा कज्जमाणे एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए खंधे भवइ। दसहा कज्जमाणे दस परमाणुपोग्गला भवंति।

भावार्थ--जब उसके नौ विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल और एक द्वि प्रदेशी स्कंध होता है।

जब उसके दस विभाग किये जाते हैं, तो पृथक्-पृथक् दस परमाणु-पुद्गल होते हैं।

विवेचन--दस प्रदेशी स्कन्ध के ३९ विकल्प होते हैं। यथा--१-९। २-८। ३-७। ४-६। ५-५। १-१-८। १-२-७। १-३-६। १-४-५। २-३-५। २-४-४। ३-३-४। १-१-१-७। १-१-२-६। १-१-३-५। १-१-४-४। १-२-३-४। १-३-३-३। २-२-२-४। २-२-३-३। १-१-१-१-६। १-१-१-२-५। १-१-१-३-४। १-१-२-२-४। १-१-२-३-३। १-२-२-२-३। २-२-२-२-२। १-१-१-१-१-५। १-१-१-१-२-४। १-१-१-१-३-३। १-१-१-२-२-३। १-१-२-२-२-२। १-१-१-१-१-१-४। १-१-१-१-१-२-३। १-१-१-१-२-२-२। १-१-१-१-१-१-१-३। १-१-१-१-१-१-२-२। १-१-१-१-१-१-१-१-२। १-१-१-१-१-१-१-१-१-१।

दो परमाणु-पुद्गल से लेकर दस परमाणु-पुद्गल के सब मिला कर १२५ भंग होते हैं। इनमें से तीन भंग शून्य हैं। नौ प्रदेशी में २-२-५ और दस प्रदेशी में २-२-६ तथा १-२-२-५। शून्य भंग इसमें नहीं गिने गये हैं।

१० प्रश्न--संखेज्जा णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

साहण्णंति, एगयओ साहणित्ता किं भवइ ?

१० उत्तर-गोयमा ! संखेज्जपएसिए खंधे भवइ । से भिज्जमाणे दुहाऽवि, जाव दसहाऽवि संखेज्जहाऽवि कज्जइ । दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; एगयओ तिपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति ।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! संख्यात परमाणु-पुद्गल एक साथ मिलने पर क्या बनता है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! वह संख्यात प्रदेशी स्कन्ध बनता है । यदि उसके विभाग किये जायँ, तो दो तीन यावत् दस और संख्यात विभाग होते हैं । जब उसके दो विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है । इस प्रकार यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एग-

यओ परमाणुपोग्गले एगयओ तिपएसिए खंधे एगयओ संखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ; एवं जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एग-यओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खधा भवंति; अहवा तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके तीन विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है। इस प्रकार यावत् अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु पुद्गल और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कंध होते हैं, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कंध और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कंध होते हैं। इस प्रकार यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कंध और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कंध होते हैं, अथवा तीन संख्यात प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ तिप्पएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; एवं जाव अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला; एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दसपएसिए खंधे एगयओ दो संखेज्जपएसिया खंधा भवंति, अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ तिण्णि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा चत्तारि संखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके चार विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कंध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक त्रिप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है। इस प्रकार यावत् एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गल, एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल, और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। इस प्रकार यावत् एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर तीन संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर तीन संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। इस प्रकार यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर तीन संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा चारों संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

एवं एएणं कमेणं पंचगसंजोगो वि भाणियव्वो, जाव णवगसंजोगो। दसहा कज्जमाणे एगयओ णव परमाणुपोग्गला, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ अट्ठ परमाणुपोग्गला, एगयओ दुपएसिए, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे भवइ। एएणं कमेणं एक्केक्को पूरेयव्वो, जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे; एगयओ णव संखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा दस संखेज्जपएसिया खंधा भवंति। संखेज्जहा कज्जमाणे संखेज्जा परमाणुपोग्गला भवंति।

भावार्थ--इस प्रकार इस क्रम से पंच संयोगी भी कहना चाहिये, यावत् नौ संयोगी तक कहना चाहिये। जब उसके दस विभाग किये जाते हैं तो एक ओर पृथक्-पृथक् नौ परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता

है, अथवा एक ओर पृथक्-पृथक् आठ परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है। इस क्रम से एक-एक की संख्या बढ़ाते जाना चाहिये, यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर नौ संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा दस संख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। जब उसके संख्यात विभाग किये जाते हैं तो पृथक्-पृथक् संख्यात परमाणु-पुद्गल होते हैं।

विवेचन-संख्यात प्रदेशी स्कन्ध में पहले ग्यारह कहकर फिर दस-दस बढ़ाना चाहिये। इस प्रकार इसके कुल ४६० भंग होते हैं। यथा:—दो संयोगी ११, तीन संयोगी २१, चार संयोगी, ३१, पाँच संयोगी ४१, छह संयोगी ५१, सात संयोगी ६१, आठ संयोगी ७१, नौ संयोगी ८१, दस संयोगी ९१, और संख्यात संयोगी १। इस प्रकार कुल ४६० भंग होते हैं।

११ प्रश्न-असंखेज्जा णं भंते ! परमाणुपोग्गला एगयओ साहण्णंति, एगयओ साहणित्ता किं भवइ ?

११ उत्तर-गोयमा ! असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; से भिज्ज-माणे दुहा ऽ वि; जाव दसहा ऽ वि, संखेज्जहा ऽ वि, असंखेज्जहा ऽ वि कज्जइ। दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे भवइ; एगयओ असंखिज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! असंख्यात परमाणु-पुद्गल मिलकर क्या बनता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ उत्तर-हे गौतम ! उनका असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध बनता है। यदि उसके विभाग किये जायें तो तीन यावत् दस संख्यात और असंख्यात विभाग होते हैं। जब उसके दो विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा दो असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ असंखिज्जपएसिए खंधे भवइ; जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ, दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति, एवं जाव अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ दो असंखिज्जपएसिया खंधा भवंति; अहवा तिण्णि असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके तीन विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत् एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। इस प्रकार यावत् एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा तीन असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ, एवं चउक्कगसंजोगो, जाव दसग-संजोगो, एए जहेव संखेज्जपएसियस्स, णवरं असंखेज्जगं एगं अहिगं भाणियव्वं, जाव अहवा दस असंखेज्जपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके चार विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, इस प्रकार चार संयोगी यावत् दस संयोगी तक जानना चाहिये। इन सब का कथन संख्यात प्रदेशी के अनुरूप जानना चाहिये, परन्तु एक 'असंख्यात' शब्द अधिक कहना चाहिये, यावत् अथवा दस असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

संखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ संखेज्जा परमाणुपोग्गला, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ, अहवा एगयओ संखेज्जा दुपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; एवं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अहवा एगयओ संखेज्जा दसपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्ज-पएसिए खंधे भवइ अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे भवइ; अहवा संखेज्जा असंखेज्ज-पएसिया खंधा भवंति। असंखेज्जहा कज्जमाणे असंखेज्जा पर-माणुपोग्गला भवंति।

भावार्थ--जब उसके संख्यात विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् संख्यात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर संख्यात द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है। इस प्रकार यावत् एक ओर संख्यात दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर संख्यात संख्यात-प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा संख्यात, असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

जब उसके असंख्यात विभाग किये जाते हैं, तो पृथक्-पृथक् असंख्य पर-माणु पुद्गल होते हैं।

विवेचन--असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध में पहले बारह कहकर फिर ग्यारह-ग्यारह बढ़ाने चाहिए। इसके कुल भंग पाँच सो सतरह होते हैं। यथा;--दो संयोगी १२, तीन संयोगी २३, चार संयोगी ३४, पाँच संयोगी ४५, छह संयोगी ५६, सात संयोगी ६७, आठ संयोगी ७८, नौ संयोगी ८९, दस संयोगी १००, संख्यात संयोगी १२ और असंख्यात संयोगी एक। ये सब ५१७ भंग होते हैं।

१२ प्रश्न--अणंता णं भंते ! परमाणुपोग्गला जाव किं भवइ ?

१२ उत्तर--गोयमा ! अणंतपएसिए खंधे भवइ; से भिज्जमाणे दुहा वि तिहा वि जाव दसहा वि संखेज्जा-असंखेज्जा-अणंतहा वि

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कज्जइ । दुहा कज्जमाणे एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; जाव अहवा दो अणंतपएसिया खंधा भवंति ।

भावार्थ-१२ प्रश्न-हे भगवन् ! अनन्त परमाणु-पुद्गल इकट्ठे होकर क्या बनता है ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है । यदि उसके विभाग किये जायें, तो दो, तीन यावत् दस, संख्यात, असंख्यात और अनन्त विभाग होते हैं । जब दो विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत् दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं ।

तिहा कज्जमाणे एगयओ दो परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दुपएसिए, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; जाव अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ परमाणुपोग्गले, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ दुपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति, एवं जाव अहवा एगयओ दसपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ संखेज्जपएसिए खंधे, एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति; अहवा एगयओ असंखेज्जपएसिए खंधे एगयओ दो अणंतपएसिया खंधा भवंति; अहवा तिण्णि अणंतपएसिया खंधा भवंति ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

भावार्थ-जब उसके तीन विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् दो परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत् एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर एक परमाणु-पुद्गल और एक ओर दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक द्विप्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं। इस प्रकार यावत् एक ओर एक दस प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक संख्यात प्रदेशी स्कंध और एक ओर दो अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं, अथवा एक ओर एक असंख्यात प्रदेशी स्कन्ध और एक ओर दो अनन्त प्रदेशी स्कंध होते हैं, अथवा तीनों अनंत प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

चउहा कज्जमाणे एगयओ तिण्णि परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; एवं चउक्कसंजोगो, जाव असंखेज्जग-संजोगो, एए सव्वे जहेव असंखेज्जाणं भणिया तहेव अणंताणवि भाणियव्वं; णवरं एक्कं अणंतगं अब्भहियं भाणियव्वं, जाव अहवा एगयओ संखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ संखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा, एग-यओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा संखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति।

भावार्थ-जब उसके चार विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् तीन परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अनंत प्रदेशी स्कंध होता है। इस प्रकार

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चार संयोगी यावत् संख्यात संयोगी तक कहना चाहिए। ये सब भंग असंख्यात के अनुरूप कहना चाहिए, परंतु यहाँ एक 'अनन्त' शब्द अधिक कहना चाहिए, यावत् एक ओर संख्यातप्रदेशी स्कन्ध, संख्यात होते हैं और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर असंख्यात प्रदेशी स्कंध, संख्यात होते हैं और एक ओर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा अनन्त प्रदेशो स्कन्ध संख्यात होते हैं।

असंखेज्जहा कज्जमाणे एगयओ असंखेज्जा परमाणुपोग्गला, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ असंखेज्जा दुपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; जाव अहवा एगयओ असंखेज्जा संखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा एगयओ असंखेज्जा असंखेज्जपएसिया खंधा, एगयओ अणंतपएसिए खंधे भवइ; अहवा असंखेज्जा अणंतपएसिया खंधा भवंति। अणंतहा कज्जमाणे अणंता परमाणुपोग्गला भवंति।

भावार्थ-जब उसके असंख्यात विभाग किये जाते हैं, तो एक ओर पृथक्-पृथक् असंख्यात परमाणु-पुद्गल और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, अथवा एक ओर द्विप्रदेशी स्कन्ध, असंख्यात होते हैं और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होता है, यावत् एक ओर संख्यात प्रदेशी स्कन्ध असंख्यात होते हैं और एक ओर अनन्त प्रदेशी स्कन्ध एक होता है, अथवा एक ओर असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध असंख्यात होते हैं और एक ओर एक अनन्त प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा असंख्यात अनन्त प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

अब उसके अनन्त विभाग किये जाते हैं, तो पृथक्-पृथक् अनंत परमाणु-पुद्गल होते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विवेचन-अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में पहले तेरह कहकर फिर बारह बढ़ाने चाहिये। इस प्रकार अनन्त प्रदेशी स्कन्ध के पांच सो छिहत्तर भंग होते हैं। यथा-दो संयोगी १३, तीन संयोगी २५, चार संयोगी ३७, पांच संयोगी ४९, छह संयोगी ६१, सात संयोगी ७३, आठ संयोगी ८५, नौ संयोगी ९७, दस संयोगी १०९, संख्यात संयोगी १३, असंख्यात संयोगी १३ और अनन्त संयोगी १। ये कुल मिलाकर ५७६ भंग होते हैं।

पुद्गल परिवर्तन के भेद

१३ प्रश्न-एएसि णं भंते ! परमाणुपोग्गलाणं साहणणा-भेयाणुवाएणं अणंताणंता पोग्गलपरियट्टा समणुगंतव्वा भवंतीति मक्खाया ?

१३ उत्तर-हंता, गोयमा ! एएसि णं परमाणुपोग्गलाणं साहणणा० जाव मक्खाया।

१४ प्रश्न-कइविहे णं भंते ! पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?

१४ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते, तं जहा-१ ओरालियपोग्गलपरियट्टे २ वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे, ३ तेयापोग्गलपरियट्टे ४ कम्मापोग्गलपरियट्टे ५ मणपोग्गलपरियट्टे ६ वइपोग्गलपरियट्टे ७ आणापाणुपोग्गलपरियट्टे।

१५ प्रश्न-णेरइयाणं भंते ! कइविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते ?

१५ उत्तर-गोयमा ! सत्तविहे पोग्गलपरियट्टे पण्णत्ते, तंजहा-१ ओरालियपोग्गलपरियट्टे २ वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे जाव ७

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आणापाणुपोग्गलपरियट्टे, एवं जाव वेमाणियाणं ।

१६ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

१६ उत्तर-अणंता, (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) कस्सइ अत्थि, कस्सइ णत्थि; जस्सत्थि जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा ।

१७ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स केवइया ओरालियपोग्गल० ?

१७ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव वेमाणियस्स ।

कठिन शब्दार्थ-साहणणा-संघातसंयोग, पुरेक्खडा-पुरस्कृत-अनागत-भविष्यत्काल ।

भावार्थ-१३ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या परमाणु पुद्गलों के संयोग और विभाग से होने वाले अनन्तानन्त पुद्गल परिवर्तन जानने योग्य हैं ?

१३ उत्तर-हाँ, गौतम ! संयोग और विभाग से होने वाले परमाणु पुद्गलों के अनन्तानन्त पुद्गल परिवर्तन जानने योग्य हैं ।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! पुद्गल परिवर्तन कितने प्रकार का कहा गया है ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! सात प्रकार का कहा गया है । यथा-१ औदारिक पुद्गल परिवर्तन, २ वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन, ३ तैजस पुद्गल परिवर्तन, ४ कार्मण पुद्गल परिवर्तन, ५ मनः पुद्गल परिवर्तन, ६ वचन पुद्गल परिवर्तन और ७ आनप्राण पुद्गल परिवर्तन ।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों के कितने प्रकार के पुद्गल परिवर्तन कहे गये हैं ?

१५ उत्तर-हे गौतम ! सात पुद्गल परिवर्तन कहे गये हैं । यथा-औदा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रिक पुद्गल परिवर्तन, वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन। इस प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना चाहिये।

१६ प्रश्न--हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के भूतकाल में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं।

१६ उत्तर--हे गौतम ! अनंत हुए हैं। (प्रश्न) हे भगवन् ! भविष्यत्काल में कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! किसी के होंगे और किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे उनके जघन्य एक, दो, तीन होंगे और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात या अनंत होंगे।

१७ प्रश्न--हे भगवन् ! प्रत्येक असुरकुमार के भूतकाल औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

१७ उत्तर--हे गौतम ! पूर्ववत् जानना चाहिये। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक जानना चाहिये।

१८ प्रश्न--एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स केवइया वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा, अतीता० ?

१८--उत्तर--अणंता, एवं जहेव ओरालियपोग्गलपरियट्टा तहेव वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा वि भाणियव्वा, एवं जाव वेमाणियस्स, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा, एए एगत्तिया सत्त दंडगा भवंति।

१९ प्रश्न--णेरइयाणं भंते ! केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

१९ उत्तर--गोयमा ! अणंता, (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) अणंता, एवं जाव वेमाणियाणं, एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वि, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टा, जाव वेमाणियाणं एवं एए पोहत्तिया सत्त चउव्वीसदंडगा।

२० प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स णेरइयत्ते केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

२० उत्तर-णत्थि एक्को वि। (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) णत्थि एक्को वि।

२१ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स असुरकुमारत्ते केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा० ?

२१ उत्तर-एवं चेव, एवं जाव थणियकुमारत्ते जहा असुरकुमारत्ते।

२२ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स पुढविक्काइयत्ते केवइया ओरालियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

२२ उत्तर-अणंता, (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) कस्सइ अत्थि, कस्सइ णत्थि; जस्सत्थि तस्स जहण्णेणं एक्को वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं संखेज्जा वा असंखेज्जा वा अणंता वा, एवं जाव मणुस्सत्ते, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियत्ते जहा असुरकुमारत्ते।

कठिन शब्दार्थ-एगत्तिया-एक वचन सम्बन्धी, पोहत्तिया-बहु वचन सम्बन्धी।

भावार्थ-१८ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के भूतकाल में वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त हुए हैं। जिस प्रकार औदारिक पुद्गल

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परिवर्तन के विषय में कहा, उसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन के विषय में भी जानना चाहिए, यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए। इसी प्रकार यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन तक कहना चाहिए। इस प्रकार प्रत्येक जीव की अपेक्षा सात दण्डक होते हैं।

१९ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों के भूतकाल में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त हुए हैं। (प्रश्न) हे भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! अनन्त होंगे। इस प्रकार यावत् वैमानिक तक कहना चाहिए। इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन, यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन के विषय में यावत् वैमानिकों तक कहना चाहिये। इस प्रकार सातों पुद्गल परिवर्तन के विषय में बहुवचन सम्बन्धी सात दण्डक के चौवीस दण्डक कहना चाहिये।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के, नैरयिक अवस्था में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२० उत्तर-हे गौतम ! एक भी नहीं हुआ। (प्रश्न) हे भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! एक भी नहीं होगा।

२१ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के, असुरकुमारपने में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२१ उत्तर-हे गौतम ! पूर्वोक्त वक्तव्यतानुसार जानना चाहिए। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक कहना चाहिए।

२२ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के पृथ्वीकायपने औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त हुए हैं। (प्रश्न) हे भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! किसी के होंगे और किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे, उसके जघन्य एक, दो, तीन और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात और अनन्त

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

होंगे और इसी प्रकार यावत् मनुष्य भव तक में कहना चाहिए। जिस प्रकार असुरकुमार के विषय में कहा, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक के विषय में भी कहना चाहिए।

विवेचन--परमाणु पुद्गलों के संयोग और वियोग (विभाग) से अनन्तानन्त (अनन्त को अनन्त से गुणा करने पर जितने होते हैं, वे अनन्तानन्त कहलाते हैं) परिवर्तन होते हैं। एक परमाणु द्व्यणुकादि द्रव्यों के साथ संयुक्त होने पर अनन्त परिवर्तनों को प्राप्त करता है, क्योंकि परमाणु अनन्त हैं और प्रति परमाणु उसका परिवर्तन हो जाता है। इस प्रकार परमाणु पुद्गल परिवर्तन अनन्तानन्त हो जाते हैं।

पुद्गल परिवर्तन के औदारिक पुद्गल परिवर्तन आदि सात भेद ऊपर बतलाये गये हैं। औदारिक शरीर में रहता हुआ जीव, जब लोक के सभी पुद्गलों को औदारिक शरीर के रूप में ग्रहण करलेता है, तब उसे औदारिक पुद्गल परिवर्तन कहते हैं। इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन आदि का भी अर्थ समझना चाहिये।

अनादिकाल से संसार में परिभ्रमण करते हुए नैरयिक जीवों के सात प्रकार को पुद्गल परिवर्तन कहे गये हैं। प्रत्येक नैरयिक जीव के औदारिक पुद्गल परिवर्तन आदि अतीत-काल सम्बन्धी अनन्त हैं। क्योंकि अतीत काल अनादि है और जीव भी अनादि है। तथा पुद्गलों को ग्रहण करने का उसका स्वभाव है।

अभव्य जीव के औदारिकादि पुद्गल परिवर्तन होते ही रहेंगे, जो नरकादि गति से निकल कर मनुष्य भव को प्राप्त करके सिद्धि को प्राप्त कर लेगा, या जो सख्यात और असंख्यात भवों से भी सिद्धि को प्राप्त करेगा, उसके पुद्गल परिवर्तन नहीं होगा। जिसका संसार परिभ्रमण अधिक होगा, वह एक या अनेक पुद्गल परिवर्तन करेगा। एक पुद्गल परिवर्तन भी अनन्त काल में पूरा होता है।

एकवचन सम्बन्धी औदारिकादि सात प्रकार के पुद्गल परिवर्तन होने से, सात दण्डक (विकल्प) होते हैं। ये सात दण्डक नैरयिकादि चौवीस दण्डकों में कहना चाहिये और इसी प्रकार बहुवचन से भी कहना चाहिये। एकवचन और बहुवचन सम्बन्धी दण्डकों में अन्तर यह है कि एकवचन सम्बन्धी दण्डकों में भविष्यत्कालीन पुद्गल परिवर्तन किसी जीव के होते हैं और किसी जीव के नहीं होते। बहुवचन संबंधी दण्डकों में तो होते ही हैं, क्योंकि उसमें जीव सामान्य का ग्रहण है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२३ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! असुरकुमारस्स णेरइयत्ते केव-इया ओरालियपोग्गलपरियट्टा ?

२३ उत्तर-एवं जहा णेरइयस्स वत्तव्वया भणिया, तहा असुर-कुमारस्स वि भाणियव्वा, जाव वेमाणियत्ते, एवं जाव थणियकुमा-रस्स, एवं पुढविक्काइयस्स वि, एवं जाव वेमाणियस्स, सव्वेसिं एक्को गमो ।

२४ प्रश्न-एगमेगस्स णं भंते ! णेरइयस्स णेरइयत्ते केवइया वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा अतीता ?

२४ उत्तर-अणंता, (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) एको-त्तरिया जाव अणंता वा, एवं जाव थणियकुमारत्ते ।

२५ प्रश्न-पुढविकाइयत्ते पुच्छा ।

२५ उत्तर-णत्थि एक्को वि, (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) णत्थि एक्को वि, एवं जत्थ वेउव्वियसरीरं अत्थि तत्थ एगु-त्तरिओ, जत्थ णत्थि तत्थ जहा पुढविकाइयत्ते तहा भाणियव्वं, जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते । तेयापोग्गलपरियट्टा, कम्मापोग्गल-परियट्टा य सव्वत्थ एकोत्तरिया भाणियव्वा । मणपोग्गलपरियट्टा सव्वेसु पंचिंदिएसु एकोत्तरिया, विगलिंदिएसु णत्थि । वइपोग्गल-परियट्टा एवं चेव, णवरं एगिंदिएसु णत्थि भाणियव्वा । आणापाणु-पोग्गलपरियट्टा सव्वत्थ एकोत्तरिया, जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-एकोत्तरिया-एक से लेकर अनन्त तक ।

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक असुरकुमार के नैरयिक भव में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार नैरयिकों का कथन किया है, उसी प्रकार असुरकुमार के विषय में यावत् वैमानिक भव पर्यंत कहना चाहिये । इसी प्रकार यावत् स्तनित कुमारों तक कहना चाहिये और इसी प्रकार पृथ्वीकाय से लेकर यावत् वैमानिक पर्यन्त एक समान कहना चाहिए ।

२४ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के, नैरयिक भव में वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन कितने हुए है ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त हुए हैं । (प्रश्न) हे भगवन् ! भविष्य में कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! होंगे या नहीं, यदि होंगे तो एक से लेकर यावत् अनन्त होंगे । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारभव तक कहना चाहिए ।

२५ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रत्येक नैरयिक जीव के पृथ्वीकायिक भव में वैक्रिय पुदगल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! एक भी नहीं हुआ। (प्रश्न) हे भगवन् ! आगे कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! एक भी नहीं होगा । इस प्रकार जहां वैक्रिय शरीर है, वहां एकादि पुद्गल परिवर्तन जानना चाहिये और जहाँ वैक्रिय शरीर नहीं है, वहाँ पृथ्वीकायिकपने में कहा, उसी प्रकार कहना चाहिए, यावत् वैमानिक जीवों के वैमानिकभव पर्यन्त कहना चाहिए । तैजस पुद्गल परिवर्तन और कार्मण पुद्गल परिवर्तन सर्वत्र एक से लगाकर अनन्त तक कहना चाहिए । मन पुद्गल परिवर्तन सभी पञ्चेन्द्रिय जीवों में एक से लेकर अनन्त तक कहना चाहिए, किंतु विकलेन्द्रियों (एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइन्द्रिय) में मनःपुद्गल परिवर्तन नहीं होता । इस प्रकार वचन पुद्गल परिवर्तन का भी कहना चाहिये, किंतु विशेषता यह है कि वह एकेन्द्रिय जीवों में नहीं होता । आन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्राण (श्वासोच्छ्वास) पुद्गल परिवर्तन सभी जीवों में एक से लेकर अनन्त तक जानना चाहिये, यावत् वैमानिक के वैमानिक भव तक कहना चाहिये ।

२६ प्रश्न-णेरइयाणं भंते ! णेरइयत्ते केवइया ओरालियपोग्गल-परियट्टा अतीता ?

२६ उत्तर-णत्थि एक्को वि । (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) णत्थि एक्को वि, एवं जाव थणियकुमारत्ते ।

२७ प्रश्न-पुढविकाइयत्ते पुच्छा ।

२७ उत्तर-अणंता । (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) अणंता, एवं जाव मणुस्सत्ते । वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणियत्ते जहा णेरइयत्ते, एवं जाव वेमाणियस्स वेमाणियत्ते, एवं सत्त वि पोग्गलपरियट्टा भाणि-यव्वा; जत्थ अत्थि तत्थ अतीता वि पुरेक्खडा वि अणंता भाणियव्वा, जत्थ णत्थि तत्थ दो वि णत्थि भाणियव्वा । जाव (प्र०) वेमाणि-याणं वेमाणियत्ते केवइया आणापाणुपोग्गलपरियट्टा अतीता ? (उ०) अणंता । (प्र०) केवइया पुरेक्खडा ? (उ०) अणंता ।

२८ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'ओरालियपोग्गल-परियट्टे ओरालियपोग्गलपरियट्टे ?'

२८ उत्तर-गोयमा ! जण्णं जीवेणं ओरालियसरीरे वट्टमाणेणं ओरालियसरीरपाओग्गाइं दव्वाइं ओरालियसरीरत्ताए गहियाइं,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

बद्धाइं, पुट्ठाइं, कडाइं, पट्ठवियाइं, णिविट्ठाइं, अभिणिविट्ठाइं, अभिसमण्णागयाइं, परियाइयाइं, परिणामियाइं, णिज्जिणाइं, णिसिरियाइं, णिसिट्ठाइं भवंति; से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-'ओरालियपोग्गलपरियट्टे ओरालियपोग्गलपरियट्टे ।' एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे वि, णवरं वेउव्वियसरीरे वट्टमाणेणं वेउव्वियसरीरप्पायोग्गाइं, सेसं तं चेव सव्वं, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे, णवरं आणापाणुपायोग्गाइं सव्वदव्वाइं आणापाणुत्ताए, सेसं तं चेव ?

भावार्थ-२६ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों के नैरयिकभव में कितने औदारिक पुद्गल परिवर्तन हुए हैं ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! एक भी नहीं हुआ । (प्रश्न) हे भगवन् ! आगे कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! एक भी नहीं होगा । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारपने तक कहना चाहिये ।

२७ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों के पृथ्वीकायपने में औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने हुए हैं ?

२७ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त हुए हैं । (प्रश्न) हे भगवन् ! आगे कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! अनन्त होंगे । इसी प्रकार यावत् मनुष्यभव तक कहना चाहिए । जिस प्रकार नैरयिकभव में कहे हैं, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिकभव में कहना चाहिए । इसी प्रकार यावत् वैमानिकों के वैमानिकभव तक सातों ही पुद्गल परिवर्तन कहना चाहिए । जहाँ जो पुद्गल परिवर्तन हों, वहाँ अतीत (बीते हुए) और पुरस्कृत (भविष्यकालीन) अनन्त कहना चाहिए और जहाँ नहीं हों, वहाँ अतीत और पुरस्कृत दोनों में नहीं कहना चाहिए । यावत् (प्रश्न) हे भगवन् ! वैमानिकों के वैमानिकभव में कितने आनप्राणपुद्गल परिवर्तन हुए हैं ? (उत्तर) हे गौतम ! अनन्त हुए हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

(प्रश्न) हे भगवन् ! आगे कितने होंगे ? (उत्तर) हे गौतम ! अनन्त होंगे।

२८ प्रश्न-हे भगवन् ! 'औदारिक पुद्गल परिवर्तन' यह औदारिक पुद्गल परिवर्तन क्यों कहलाता है ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! औदारिक शरीर में रहते हुए जीव ने, औदारिक शरीर योग्य द्रव्यों को औदारिक शरीरपने ग्रहण किये हैं, बद्ध किये हैं अर्थात् जीव प्रदेशों के साथ एकमेक किये हैं, शरीर पर रेणु के समान स्पष्ट किये हैं, अथवा नवीन नवीन ग्रहण कर उन्हें पुष्ट किया है, उन्हें किया है, अर्थात् पूर्व परिणाम की अपेक्षा परिणामान्तर किया है । प्रस्थापित (स्थिर) किया है, स्थापित किया है, अभिनिविष्ट (सर्वथा लगे हुए) किये हैं, अभिसमन्वागत (सर्वथा प्राप्त) किये हैं, सभी अवयवों से उन्हें ग्रहण किया है, परिणामित (रसानुभूति से परिणामान्तर प्राप्त) किया है, निर्जीर्ण (क्षीण रसवाले) किया है, निःश्रित (जीव प्रदेशों से पृथक्) किया है, निःसृष्ट (अपने प्रदेशों से परित्यक्त) किया है, इसलिए हे गौतम ! 'औदारिक पुद्गल परिवर्तन' औदारिक पुद्गल परिवर्तन कहलाता है । इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन भी कहना चाहिए, परन्तु इतनी विशेषता है कि 'वैक्रिय शरीर में रहते हुए जीव ने वैक्रिय शरीर योग्य ग्रहण आदि किया है,' इत्यादि कहना चाहिए। शेष पूर्ववत् कहना चाहिए। इसी प्रकार यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन तक कहना चाहिए । किंतु वहां 'आनप्राण योग्य सर्व द्रव्यों को आनप्राणपने ग्रहणादि किया,' इत्यादि कहना चाहिए । शेष पूर्ववत् जानना चाहिए ।

विवेचन-नैरयिक भव में रहते हुए अनन्त वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन हुए हैं और भविष्यत्काल में किसी के होंगे और किसी के नहीं होंगे । जिसके होंगे, उसके जघन्य एक दो, तीन और उत्कृष्ट संख्यात, असंख्यात अथवा अनन्त होंगे ।

वायुकाय, मनुष्य, तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय और व्यन्तरादि में वैक्रिय शरीर है । वहाँ वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन एकोत्तरिक कहने चाहिये और जहाँ अप्कायादि में वैक्रिय शरीर नहीं हैं, वहाँ वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन भी नहीं है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तैजस् और कार्मण शरीर सभी संसारी जीवों में होते हैं, इसलिये सभी नारकादि जीवों में तैजस् कार्मण पुद्गल परिवर्तन भविष्यत्काल सम्बन्धी एकोत्तरिक कहने चाहिये।

विकलेन्द्रियों में मनःपुद्गल परिवर्तन नहीं होता। 'विकलेन्द्रिय' शब्द यद्यपि बेइंद्रिय तेइंद्रिय और चौइंद्रिय जीवों के लिए रूढ है, तथापि यहाँ 'विकलेन्द्रिय' शब्द से एकेन्द्रिय जीवों का भी ग्रहण करना चाहिये, क्योंकि उनमें भी इन्द्रियों की परिपूर्णता नहीं है और मन का अभाव है। अतः उनमें मनपुद्गल परिवर्तन नहीं है।

वचन पुद्गल परिवर्तन नारकादि जीवों में हैं, केवल एकेन्द्रिय जीवों में नहीं है।

औदारिक पुद्गल परिवर्तन का अर्थ बतलाते हुए मूल पाठ में 'गहियाइं, बद्धाइं' आदि तेरह पद दिये हैं जिनका अर्थ भावार्थ में कर दिया गया है। इनमें से पहले के चार पद औदारिक पुद्गलों को ग्रहण करने विषयक हैं। उनसे आगे के 'पट्ठवियाइं' आदि पाँच पद स्थिति विषयक हैं। उनसे आगे के 'परिणामियाइं' आदि चार पद औदारिक पुद्गलों को आत्म-प्रदेशों से पृथक् करने विषयक हैं।

२९ प्रश्न-ओरालियपोग्गलपरियट्टे णं भंते ! केवइकालस्स णिव्वत्तिज्जइ ?

२९ उत्तर-गोयमा ! अणंताहिं उस्सप्पिणि-ओसप्पिणीहिं एवइकालस्स णिव्वत्तिज्जइ; एवं वेउव्वियपोग्गलपरियट्टे वि, एवं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टे वि।

३० प्रश्न-एयस्स णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टणिव्वत्तणाकालस्स, वेउव्वियपोग्गल० जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टणिव्वत्तणाकालस्स कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

३० उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवे कम्मगपोग्गलपरियट्टणिव्वत्तणाकाले, तेयापोग्गलपरियट्टणिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे, ओरा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

लियपोग्गल० अणंतगुणे, आणापाणुपोग्गल० अणंतगुणे, मणपोग्गल० अणंतगुणे, वइपोग्गल० अणंतगुणे, वेउव्वियपोग्गलपरियट्टणिव्वत्तणाकाले अणंतगुणे ।

३१ प्रश्न-एएसि णं भंते ! ओरालियपोग्गलपरियट्टाणं जाव आणापाणुपोग्गलपरियट्टाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

३१ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा वेउव्वियपोग्गलपरियट्टा, वइपो० अणंतगुणा, मणपो० अणंतगुणा, आणापाणुपो० अणंतगुणा, ओरालियपो० अणंतगुणा, तेयापो० अणंतगुणा कम्मगपो० अणंतगुणा ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं जाव विहरइ ❀

॥ चउत्थो उद्देसो सम्मत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-णिव्वत्तिज्जइ-निर्वर्तित-निष्पन्न होता है ।

भावार्थ-२९ प्रश्न-हे भगवन् ! औदारिक पुद्गल परिवर्तन कितने काल में निर्वर्तित-निष्पन्न होता है ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! अनन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल में निष्पन्न होता है । इसी प्रकार वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन तक जानना चाहिए ।

३० प्रश्न-हे भगवन् ! औदारिक पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल, वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल, इनमें कौनसा काल किस काल से अल्प यावत् विशेषाधिक है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३० उत्तर-हे गौतम ! सब से थोड़ा कार्मण-पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल है, उससे तैजस पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है, उससे औदारिक पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है, उससे आनप्राण पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है, उससे मनःपुद्गलपरिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है, उससे वचनपुद्गलपरिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है और उससे वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है।

३१ प्रश्न-हे भगवन् ! औदारिक पुद्गल परिवर्तन यावत् आनप्राण पुद्गल परिवर्तन, इनमें कौन पुद्गल परिवर्तन किससे अल्प यावत् विशेषाधिक है ?

३१ उत्तर-हे गौतम ! सबसे थोड़ा वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन है। उससे वचन पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है, उससे मनःपुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है, उससे आनप्राण पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है, उससे औदारिक पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है, उससे तैजस पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है और उससे कार्मण पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण है।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कह कर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-औदारिक पुद्गल परिवर्तन आदि अनन्त उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल में निष्पन्न होते हैं। क्योंकि पुद्गल अनन्त हैं और उनका ग्राहक एक जीव होता है। तथा पुद्गल परिवर्तन में पूर्व गृहीत पुद्गलों की गणना नहीं की जाती।

इन पुद्गल परिवर्तनों के निष्पत्ति काल का अल्प-बहुत्व बतलाते हुए कहा गया है कि कार्मण पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल (निर्वर्तनाकाल) सब से थोड़ा है। क्योंकि कार्मण पुद्गल सूक्ष्म हैं और बहुत-से परमाणुओं से निष्पन्न होता है, इसलिये वे एक ही बार में बहुत से ग्रहण किये जाते हैं तथा नैरयिकादि सभी अवस्था में रहा हुआ जीव, प्रति समय उनको ग्रहण करता है, इसलिये स्वल्पकाल में ही उन सभी पुद्गलों का ग्रहण हो जाता है। उससे तैजस पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है, क्योंकि तैजस् पुद्गल स्थूल है, अतः उनमें एक बार में अल्प पुद्गल का ग्रहण होता है। अल्प प्रदेशों से निष्पन्न होने के कारण एक बार में भी उन अल्प अणुओं का ही ग्रहण होता है, इसलिये

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

यह उनसे अनन्त गुण है। उससे औदारिक पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। क्योंकि औदारिक पुद्गल अति स्थूल है, अतः उन में से अल्प का ही ग्रहण होता है और वे प्रदेश भी अल्पतर हैं। अतः उनके ग्रहण करने पर एक समय में अल्प अणु ही गृहीत होते है। दूसरी बात यह है कि वे कार्मण और तैजस पुद्गलों की तरह सर्व संसारी जीवों से निरन्तर गृहीत नहीं होते, किन्तु केवल औदारिक शरीरधारी जीवों द्वारा ही उनका ग्रहण होता है, अतः बहुत काल में उनका ग्रहण होता है। उससे आनप्राण पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। यद्यपि आनप्राण पुद्गल औदारिक पुद्गलों से सूक्ष्म और बहु प्रदेशी हैं, इसलिये उनका अल्पकाल में ही ग्रहण हो सकता है, तथापि अपर्याप्त अवस्था में उनका ग्रहण न होने से तथा पर्याप्त अवस्था में भी औदारिक शरीर पुद्गलों की अपेक्षा उनका अल्प परिमाण में ग्रहण होने से उनका शीघ्र ग्रहण नहीं होता। इसलिये औदारिक पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल से आनप्राण पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। उससे मन पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। यद्यपि आनप्राण पुद्गलों से मन पुद्गल सूक्ष्म और बहुप्रदेशी है, इसलिये अल्पकाल में ही उनका ग्रहण हो सकता है, तथापि एकेन्द्रियादि की कायस्थिति बहुत लम्बी है। उसमें चले जाने पर मन की प्राप्ति बहुत लम्बे समय में होती है। इसलिये मन पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल उनसे अनन्त गुण कहा गया है। उससे वचन पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। यद्यपि मन की अपेक्षा वचन शीघ्र प्राप्त होता है तथा द्वीन्द्रियादि अवस्था में भी वचन होता है, तथापि मन द्रव्यों की अपेक्षा भाषा द्रव्य अति स्थूल है। इसलिये एक समय में उनका अल्प परिमाण में ही ग्रहण होता है, अतः मन पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल से वचन पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। इससे वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन निष्पत्तिकाल अनन्त गुण है। क्योंकि वैक्रिय शरीर बहुत लम्बे समय में प्राप्त होता है।

इसके पश्चात् इन पुद्गल परिवर्तनों का पारस्परिक अल्प-बहुत्व बतलाया गया है। वैक्रिय पुद्गल परिवर्तन सबसे थोड़े हैं, क्योंकि वे बहुत काल में निष्पन्न होते हैं। उससे वचन पुद्गल परिवर्तन अनन्त गुण हैं, क्योंकि वे अल्पतरकाल में ही निष्पन्न होते हैं। इसी रीति से आगे-आगे का भी अल्प-बहुत्व समझ लेना चाहिये।

॥ बारहवें शतक का चतुर्थ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२ उद्देशक ५

पाप कर्म के वर्णादि पर्याय

१ प्रश्न-रायगिहे जाव एवं वयासी-अह भंते ! १ पाणाइवाए, २ मुसावाए, ३ अदिण्णादाणे, ४ मेहुणे, ५ परिग्गहे-एस णं कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे, पण्णत्ते ?

१ उत्तर-गोयमा ! पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, चउफासे, पण्णत्ते।

२ प्रश्न-अह भंते ! १ कोहे, २ कोवे, ३ रोसे, ४ दोसे, ५ अखमा, ६ संजलणे, ७ कलहे, ८ चंडिक्के, ९ भंडणे, १० विवादे-एस णं कइवण्णे, जाव कइफासे पण्णत्ते ?

२ उत्तर-गोयमा ! पंचवण्णे, दुगंधे, पंचरसे, चउफासे पण्णत्ते।

३ प्रश्न-अह भंते ! १ माणे, २ मए, ३ दप्पे, ४ थंभे, ५ गव्वे, ६ अत्तुक्कोसे, ७ परपरिवाए, ८ उक्कासे, ९ अवक्कासे, १० उण्णत्ते, ११ उण्णामे, १२ दुण्णामे-एस णं कइवण्णे ४ ?

३ उत्तर-गोयमा ! पंचवण्णे, जहा कोहे तहेव ।

भावार्थ-१-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-हे भगवन् ! प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह-ये सभी कितने वर्ण गंध, रस और स्पर्श वाले हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! ये पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले कहे हैं ।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! क्रोध, कोप, रोष, दोष, अक्षमा, संज्वलन, कलह,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाण्डिक्य, भण्डन और विवाद-ये सभी कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्शवाले कहे हैं ?

२ उत्तर-हे गौतम ! ये पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और चार स्पर्श वाले कहे हैं ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! मान, मद, दर्प, स्तम्भ, गर्व, अत्युत्क्रोश, परपरिवाद, उत्कर्ष, अपकर्ष, उन्नत, उन्नाम, दुर्नाम-ये सभी कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्शवाले कहे हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! ये पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और चार स्पर्श वाले कहे हैं ।

विवेचन-प्राणातिपात-जीव हिंसा से उत्पन्न होने वाला कर्म अथवा जीव हिंसा को उत्पन्न करनेवाला चारित्र-मोहनीय कर्म भी उपचार से प्राणातिपात कहलाता है । क्रोध, लोभ, भय और हास्य के वश असत्य, अप्रिय अहितकारी वचन कहना 'मृषावाद' है । स्वामी की आज्ञा के बिना कुछ भी लेना 'अदत्तादान' है। विषय वासना से प्रेरित स्त्री-पुरुष के संयोग को 'मैथुन' कहते हैं। धन कञ्चनादि बाह्य परिग्रह है और मूर्च्छा ममत्व होना-भाव परिग्रह है। ये पांचों पाप, पुद्गल रूप होने से इनमें पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और चार (स्निग्ध, रुक्ष, शीत और उष्ण) स्पर्श होते हैं। इसी प्रकार क्रोध और मान में भी होते हैं । यहां क्रोध के दस पर्यायवाची शब्द कहे गये हैं। क्रोध के परिणाम को उत्पन्न करनेवाले कर्म को 'क्रोध' कहते हैं । इन दस नामों में 'क्रोध' यह सामान्य नाम है और कोपादि उसके विशेष नाम हैं । १ क्रोध, २ कोप-क्रोध के उदय से अपने स्वभाव से चलित होना 'कोप' कहलाता है, ३ रोष-क्रोध की परम्परा, ४ दोष-अपने आपको तथा दूसरे को दूषण देना, अथवा द्वेष-अप्रीति, ५ अक्षमा-दूसरे के द्वारा किये हुए अपराध को सहन नहीं करना, ६ संज्वलन-बार-बार क्रोध से प्रज्वलित होना, ७ कलह-वाग्युद्ध अर्थात् परस्पर अनुचित शब्द बोलना, ८ चाण्डिक्य-रौद्र रूप धारण करना, ९ भण्डन-दण्ड, शस्त्र आदि से युद्ध करना और १० विवाद-परस्पर विरुद्ध वचन बोल कर विवाद करना-झगड़ा करना । यह इन शब्दों का शब्दार्थ है, अन्यथा ये सभी शब्द क्रोध के एकार्थक हैं ।

मान-अपने आपको दूसरों से उत्कृष्ट समझना 'मान' कहलाता है । इसके सार्थक बारह नाम हैं-१ मान-अभिमान के परिणाम को उत्पन्न करने वाले कषाय को 'मान' कहते

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हैं। २ मद-मद करना या हर्ष करना, ३ दर्प (दृप्तता) घमण्ड में चूर होना, ४ स्तंभ-नम्र न होना, स्तंभ की तरह कठोर बने रहना। ५ गर्व-अहंकार, ६ अत्युत्कोश-अपने को दूसरों से उत्कृष्ट मानना-बताना, ७ परपरिवाद-दूसरे की निन्दा करना। अथवा 'परपरिपात' दूसरे को उच्च गुणों से पतित करना, ८ उत्कर्ष-क्रिया से अपने आपको उत्कृष्ट मानना। अथवा अभिमान पूर्वक अपनी समृद्धि प्रकट करना, ९ अपकर्ष-अपने से दूसरे को तुच्छ बताना, १० उन्नत-विनय का त्याग करना, 'उन्नय' अभिमान से नीति का त्याग कर अनीति में प्रवृत्त होना, ११ उन्नाम-वन्दन योग्य पुरुष को भी वन्दन न करना, अथवा अपने को नमस्कार करने वाले पुरुष को न नमना एवं सद्भाव न रखना, और १२ दुर्नाम-वन्दनीय पुरुष को भी अभिमानपूर्वक बुरे ढंग से वंदन करना। ये 'स्तंभ' आदि मान के कार्य हैं, अथवा ये सभी शब्द 'मान' के एकार्थक शब्द हैं।

४ प्रश्न-अह भंते ! १ माया, २ उवही, ३ णियडी, ४ वलये, ५ गहणे, ६ णूमे, ७ कक्के, ८ कुरूए, ९ जिम्हे, १० किव्विसे, ११ आयरणया, १२ गूहणया, १३ वंचणया, १४ पलिउंचणया, १५ साइजोगे य-एस णं कइवण्णे ४ पण्णत्ते ?

४ उत्तर-गोयमा ! पंचवण्णे, जहेव कोहे।

५ प्रश्न-अह भंते ! १ लोभे २ इच्छा ३ मुच्छा ४ कंखा ५ गेही ६ तण्हा, ७ भिज्झा ८ अभिज्झा ९ आसासणया १० पत्थणया ११ लालप्पणया १२ कामासा १३ भोगासा १४ जीवियासा १५ मरणासा १६ णंदीरागे-एस णं कइवण्णे ४ ?

५ उत्तर-जहेव कोहे।

६ प्रश्न-अह भंते ! पेज्जे, दोसे, कलहे, जाव मिच्छादंसण-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सल्ले-एस णं कइवण्णे ?

६ उत्तर-जहेव कोहे तहेव चउफासे ।

कठिन शब्दार्थ-पेज्जे-प्रेम-राग, दोसे-द्वेष ।

भावार्थ-४ प्रश्न-हे भगवन् ! माया, उपधि, निकृति, वलय, गहन, नूम, कल्क, कुरूपा, जिह्मता, किल्विष, आदरणता (आचरणता) गूहनता, वञ्चनता, प्रतिकुंचनता और सातियोग-इन सभी में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! इन सभी का कथन क्रोध के समान जानना चाहिए ।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! लोभ, इच्छा, मूर्च्छा, कांक्षा, गृद्धि, तृष्णा, भिध्या, अभिध्या, आशंसना, प्रार्थना, लालपनता, कामाशा, भोगाशा, जीविताशा, मरणाशा और नन्दिराग-इनमें कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ।

५ उत्तर-हे गौतम ! क्रोध के समान समझना चाहिए ।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! प्रेम-राग, द्वेष, कलह यावत् मिथ्यादर्शन शल्य, इनमें कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! क्रोध के समान जानो ।

विवेचन-१ माया-यह 'माया' का सामान्य वाचक नाम है । 'उपधि' आदि उसके भेद हैं । २ उपधि-किसी को ठगने के लिए प्रवृत्ति करना । ३ निकृति-किसी का आदर सत्कार करके फिर उसके साथ 'माया' करना, अथवा एक मायाचार छिपाने के लिए दूसरा मायाचार करना । ४ वलय-किसी को अपने जाल में फँसाने के लिए मीठे वचन बोलना । ५ गहन-दूसरों को ठगने के लिए अव्यक्त शब्दों का उच्चारण करना, अथवा ऐसे गहन (गूढ) अर्थ वाले शब्दों का प्रयोग करके जाल रचना कि दूसरे की समझ में ही न आवे । ६ नूम-मायापूर्वक नीचता का आश्रय लेना । ७ कल्क-हिंसाकारी उपायों से दूसरे को ठगना । ८ कुरूपा-निन्दित रीति से मोह उत्पन्न करके ठगने की प्रवृत्ति करना । ९ जिह्मता-कुटिलता-पूर्वक ठगने की प्रवृत्ति । १० किल्विष-किल्विषी जैसी प्रवृत्ति करना । ११ आदरणता-(आचरणता) मायाचार से किसी का आदर करना, अथवा ठगाई के लिए अनेक प्रकार की क्रियाएँ करना । १२ गूहनता-अपने स्वरूप को छिपाना । १३ वञ्चनता-दूसरे को ठगना ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१४ प्रतिकुञ्चनता-सरल भाव से कहे हुए वाक्य का खण्डन करना या विपरीत अर्थ लगाना और १५ सातियोग-उत्तम पदार्थ के साथ हीन पदार्थ मिला देना। ये सभी शब्द 'माया' के एकार्थक शब्द हैं।

मूर्च्छा-ममत्व को 'लोभ' कहते हैं-१ लोभ-यह 'लोभ' कषाय का सामान्यवाची नाम है। 'इच्छा' आदि इसके विशेष भेद हैं। २ इच्छा-किसी वस्तु को प्राप्त करने की अभिलाषा। ३ मूर्च्छा-प्राप्त की हुई वस्तुओं की रक्षा के लिए निरन्तर अभिलाषा करना। ४ कांक्षा-अप्राप्त वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा। ५ गृद्धि-प्राप्त वस्तुओं पर आसक्ति-भाव। ६ तृष्णा-प्राप्त पदार्थ का व्यय न हो ऐसी इच्छा। ७ भिध्या-विषयों का ध्यान, विषयों में एकाग्रता। ८ अभिध्या-चित्त का चञ्चलता। ९ आशंसना-अपने इष्ट पदार्थ की इच्छा। १० प्रार्थना-दूसरों से इष्ट पदार्थ की याचना। ११ लालपनता-विशेष रूप से बोल कर प्रार्थना करना। १२ कामाशा-इष्ट शब्द और इष्ट रूप को प्राप्त करने की इच्छा। १३ भोगाशा-इष्ट गन्धादि को प्राप्त करने की इच्छा करना। १४ जीविताशा-जीवन की अभिलाषा करना। १५ मरणाशा-विपत्ति के समय मरण की अभिलाषा करना। १६ नन्दी-राग-विद्यमान सम्पत्ति पर राग भाव होना, अथवा नन्दी अर्थात् वांछित अर्थ की प्राप्ति और राग अर्थात् विद्यमान पर रागभाव-ममत्वभाव होना।

'पेज्ज'-प्रेम-पुत्रादि विषयक स्नेह। द्वेष-अप्रीति। कलह-प्रेम हास्यादि से उत्पन्न क्लेश अथवा वाग्युद्ध। अभ्याख्यान-प्रकट रूप से अविद्यमान दोषों का आरोप लगाना-झूठा कलंक लगाना। पैशुन्य-पीठ पीछे किसी के दोष प्रकट करना-चुगली करना। परपरिवाद-दूसरे की बुराई करना-निन्दा करना। अरतिरति-मोहनीय कर्म के उदय से प्रतिकूल विषयों की प्राप्ति होने पर जो उद्वेग होता है, वह 'अरति' है और अनुकूल विषयों के प्राप्त होने पर चित्त में जो आनन्द रूप परिणाम उत्पन्न होता है, वह 'रति' है। जीव को जब एक विषय में रति होती है, तब दूसरे विषय में स्वतः अरति हो जाती है। यही कारण है कि एक वस्तु विषयक रति को ही दूसरे विषय की अपेक्षा से अरति कहते हैं। इसलिये दोनों को एक पापस्थानक गिना है। मायामृषा-मायापूर्वक झूठ बोलना। मिथ्यादर्शन शल्य-श्रद्धा का विपरीत होना। जैसे-शरीर में चुभा हुआ शल्य सदा कष्ट देता है, उसी प्रकार मिथ्यादर्शन भी आत्मा को दुःखी बनाये रखता है।

प्राणातिपात से लेकर मिथ्यादर्शनशल्य तक ये अठारह ही पापस्थान पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विरति आदि आत्मपरिणाम

७ प्रश्न-अह भंते ! १ पाणाइवायवेरमणे, जाव ५ परिग्गहवेरमणे, ६ कोहविवेगे जाव १८ मिच्छादंसणसल्लविवेगे-एस णं कइवण्णे, जाव कइफासे पण्णत्ते ?

७ उत्तर-गोयमा ! अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे पण्णत्ते ।

८ प्रश्न-अह भंते ! १ उप्पत्तिया २ वेणइया ३ कम्मिया ४ पारिणामिया-एस णं कइवण्णा ?

८ उत्तर-तं चेव जाव अफासा पण्णत्ता ।

९ प्रश्न-अह भंते ! १ उग्गहे २ ईहा ३ अवाए ४ धारणा-एस णं कइवण्णा ?

९ उत्तर-एवं चेव जाव अफासा पण्णत्ता ।

१० प्रश्न-अह भंते ! १ उट्ठाणे २ कम्मे ३ बले ४ वीरिए ५ पुरिसक्कारपरक्कमे-एस णं कइवण्णे ?

१० उत्तर-तं चेव जाव अफासे पण्णत्ते ?

कठिन शब्दार्थ--उग्गहे--अवग्रह, उट्ठाणे--उत्थान ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! प्राणातिपात विरमण यावत् परिग्रह विरमण, क्रोधविवेक (क्रोध त्याग) यावत् मिथ्यादर्शनशल्यविवेक-इन सभी के कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! ये सभी वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

८ प्रश्न-हे भगवन् ! औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कार्मिकी और पारिणामिकी बुद्धि में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! ये वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा-ये सभी कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं ?

९ उत्तर-हे गौतम ! ये सभी वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं ।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकारपराक्रम-ये सभी कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं ?

१० उत्तर-हे गौतम ! ये सभी वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं ।

विवेचन—प्राणातिपात विरमणादि जीव के उपयोग स्वरूप हैं और जीव का स्वरूप अमूर्त्त है, इसलिये अठारह पापों का विरमण, वर्णादि रहित है ।

औत्पत्तिकी बुद्धि—जो बुद्धि बिना देखे, सुने और सोचे ही पदार्थों को सहसा ग्रहण कर के कार्य को सिद्ध कर देती है, उसे औत्पत्तिकी बुद्धि कहते हैं ।

वैनयिकी बुद्धि—गुरु महाराज की सेवा-शुश्रूषा करने से प्राप्त होने वाली बुद्धि-वैनयिकी बुद्धि है ।

कार्मिकी बुद्धि—कर्म अर्थात् सतत् अभ्यास और विचार से विस्तृत होने वाली बुद्धि कार्मिकी है । जैसे-सुनार, किसान आदि कर्म करते-करते अपने कार्य में उत्तरोत्तर विशेष दक्ष हो जाते हैं ।

पारिणामिकी बुद्धि—अति दीर्घकाल तक पूर्वापर पदार्थों के देखने आदि से उत्पन्न होने वाला आत्मा का धर्म, परिणाम कहलाता है, उस परिणाम के निमित्त से होने वाली बुद्धि को पारिणामिकी बुद्धि कहते हैं । अर्थात् वयोवृद्ध व्यक्ति को बहुत काल तक संसार के अनुभव से प्राप्त होने वाली बुद्धि पारिणामिकी बुद्धि कहलाती है ।

अवग्रह—इन्द्रिय और पदार्थों के योग्य स्थान में रहने पर, सामान्य प्रतिभास रूप दर्शन के बाद होने वाले अवान्तर सत्ता सहित वस्तु के प्रथम ज्ञान को अवग्रह कहते हैं । जैसे-दूर से किसी चीज का ज्ञान होना ।

ईहा—अवग्रह से जाने हुए पदार्थ के विषय में उत्पन्न हुए संशय को दूर करते हुए विशेष की जिज्ञासा को 'ईहा' कहते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अवाय-ईहा से जाने हुए पदार्थों में निश्चयात्मक ज्ञान होना अवाय कहलाता है।

धारणा-अवाय से जाना हुआ पदार्थों का ज्ञान इतना दृढ़ हो जाय कि कालान्तर में भी उसका विस्मरण न हो, तो उसे धारणा कहते हैं।

वीर्यान्तराय कर्म के क्षय या क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाले जीव के परिणाम विशेषों को उत्थानादि कहते हैं। उत्थान-शारीरिक चेष्टा विशेष, कर्म-भ्रमणादि क्रिया। बल-शारीरिक सामर्थ्य। वीर्य-जीव प्रभाव अर्थात् आत्मिक शक्ति। पुरुषकारपराक्रम-स्वाभिमान विशेष।

औत्पत्तिकी बुद्धि आदि चार, अवग्रहादि चार और उत्थानादि पांच ये सभी जीव के उपयोग विशेष हैं। अतः अमूर्त होने से वर्णादि रहित हैं।

अवकाशान्तरादि में वर्णादि

११ प्रश्न-सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे कइवण्णे ?

११ उत्तर-एवं चेव जाव अफासे पण्णत्ते।

१२ प्रश्न-सत्तमे णं भंते ! तणुवाए कइवण्णे ?

१२ उत्तर-जहा पाणाइवाए, णवरं अट्ठफासे पण्णत्ते, **एवं** जहा सत्तमे तणुवाए तहा सत्तमे घणवाए, घणोदही, पुढवी। छट्ठे उवासंतरे अवण्णे, तणुवाए जाव छट्ठी पुढवी-एयाइं अट्ठफासाइं, एवं जहा सत्तमाए पुढवीए वत्तव्वया भणिया तहा जाव पढमाए पुढवीए भाणियव्वं। जंबुद्दीवे दीवे जाव सयंभुरमणे समुद्दे, सोहम्मे कप्पे, जाव ईसिपब्भारा पुढवी, णेरइयावासा, जाव वेमाणियावासा-एयाणि सव्वाणि अट्ठफासाणि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न-णेरइया णं भंते ! कइवण्णा, जाव कइफासा पण्णत्ता।

१३ उत्तर-गोयमा ! वेउव्विय-तेयाइं पडुच्च पंचवण्णा, पंच-रसा, दुग्गंधा, अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च पंचवण्णा, पंचरसा, दुगंधा, चउफासा पण्णत्ता, जीवं पडुच्च अवण्णा, जाव अफासा पण्णत्ता, एवं जाव थणियकुमारा ।

१४ प्रश्न-पुढविक्काइयाणं पुच्छा ।

१४ उत्तर-गोयमा ! ओरालिय-तेयगाइं पडुच्च पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, कम्मगं पडुच्च जहा णेरइयाणं, जीवं पडुच्च तहेव, एवं जाव चउरिंदिया । णवरं वाउक्काइया ओरालियवेउव्विय-तेयगाइं पडुच्च पंचवण्णा, जाव अट्ठफासा पण्णत्ता; सेसं जहा णेरइयाणं । पंचिंदियतिरिक्खजोणिया जहा वाउक्काइया ।

कठिन शब्दार्थ-उवासंतरे-अवकाशांतर ।

भावार्थ-११ प्रश्न-हे भगवन् ! सातवें अवकाशान्तर में कितने वर्ण, गंध, रस और स्पर्श हैं ?

११ उत्तर-हे गौतम ! वह वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श रहित है ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! सातवां तनुवात, कितने वर्णादि युक्त है ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! प्राणातिपात के समान कहना चाहिये, किंतु इतनी विशेषता है कि यह आठ स्पर्शवाला है। सातवें तनुवात के समान सातवां घनवात घनोदधि और सातवीं पृथ्वी कहनी चाहिये । छठा अवकाशान्तर वर्णादि रहित है। छठा तनुवात, घनवात घनोदधि और छठी पृथ्वी, ये सब आठ स्पर्श वाले हैं। जिस प्रकार सातवीं पृथ्वी की वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार यावत् प्रथम

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पृथ्वी तक जानना चाहिये। जम्बूद्वीप यावत् स्वयम्भूरमण समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी, नैरयिकवास यावत् वैमानिकवास, ये सब आठ स्पर्शवाले हैं।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिकों में कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श हैं?

१३ उत्तर-हे गौतम ! वैक्रिय और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा वे पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्शवाले हैं। कार्मण पुद्गलों की अपेक्षा पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और चार स्पर्शवाले हैं। जीव की अपेक्षा वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श रहित हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिये।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श-वाले हैं ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! औदारिक और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा पांच वर्ण, पाँच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले हैं। कार्मण की अपेक्षा और जीव की अपेक्षा पूर्ववत्-नैरयिकों के कथन के समान जानना चाहिये। इसी प्रकार यावत् चौइन्द्रिय तक जानना चाहिये। परन्तु इतनी विशेषता है कि वायुकायिक औदारिक, वैक्रिय और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले हैं। शेष नैरयिकों के समान जानना चाहिये। पञ्चेन्द्रिय तिर्यंच योनिक जीवों का कथन भी वायुकायिकों के समान जानना चाहिये।

विवेचन-पहली और दूसरी नरक पृथ्वी के बीच का आकाश-खण्ड प्रथम 'अवकाशान्तर' कहलाता है, उसकी अपेक्षा सप्तम नरक पृथ्वी के नीचे का आकाश-खण्ड 'सप्तम अवकाशान्तर' कहलाता है। उसके ऊपर सातवां घनवात है। उसके ऊपर सातवां घनोदधि है और उसके ऊपर सातवीं नरक पृथ्वी है। इसी क्रम से प्रथम नरक पृथ्वी तक जानना चाहिये। तनुवात आदि पौद्गलिक होने से मूर्त है, अतएव वे वर्णादि वाले हैं। बादर परिणाम वाले होने से इनमें आठ स्पर्श होते हैं।

१५ प्रश्न-मणुस्साणं पुच्छा।

१५ उत्तर-ओरालिय-वेउव्विय-आहारग-तेयगाइं पडुच्च पंच-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता; कम्मगं जीवं च पडुच्च जहा णेरइ-याणं, वाणमंतर-जोइसिय-वेमाणिया जहा णेरइया। धम्मत्थिकाए जाव पोग्गलत्थिकाए-एए सव्वे अवण्णा जाव अफासा, णवरं पोग्गलत्थिकाए पंचवण्णे, पंचरसे, दुगंधे, अट्ठफासे पण्णत्ते। णाणा-वरणिज्जे जाव अंतराइए-एयाणि चउफासाणि।

१६ प्रश्न-कण्हलेसा णं भंते ! कइवण्णा-पुच्छा।

१६ उत्तर-दव्वलेसं पडुच्च पंचवण्णा जाव अट्ठफासा पण्णत्ता, भावलेसं पडुच्च अवण्णा ४ एवं जाव सुक्कलेस्सा। सम्मदिट्ठि ३, चक्खुदंसणे ४; आभिणिबोहियणाणे ५ जाव विब्भंगणाणे, आहार-सण्णा, जाव परिग्गहसण्णा-एयाणि अवण्णाणि ४। ओरालिय-सरीरे, जाव तेयगसरीरे-एयाणि अट्ठफासाणि। कम्मगसरीरे चउ-फासे, मणजोगे, वयजोगे य चउफासे कायजोगे अट्ठफासे। सागा-रोवओगे य अणागारोवओगे य अवण्णा।

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! मनुष्य कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाले हैं।

१५ उत्तर-हे गौतम ! औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस पुद्गलों की अपेक्षा पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले हैं। कार्मण पुद्गल और जीव की अपेक्षा नैरयिकों के समान जानना चाहिए और नैरयिकों के समान ही वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिकों का कथन करना चाहिये। धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और काल-ये वर्ण, गन्ध, रस, और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

स्पर्श रहित हैं। पुद्गलास्तिकाय पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाला है। ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय-ये आठ कर्म पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और चार स्पर्श वाले हैं।

१६ प्रश्न-हे भगवन् ! कृष्ण लेश्या कितने वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श वाली है ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! द्रव्य लेश्या की अपेक्षा पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाली है और भाव लेश्या की अपेक्षा वर्णादि रहित है। इसी प्रकार यावत् शुक्ल लेश्या तक जानना चाहिये। सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि सम्यग्मिथ्यादृष्टि, चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन, केवलदर्शन, आभिनिबोधिक (मति) ज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान, केवलज्ञान, मतिअज्ञान, श्रुत-अज्ञान, विभंगज्ञान, आहारसंज्ञा, भयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रहसंज्ञा, ये सभी वर्णादि रहित हैं। औदारिक शरीर, वैक्रियशरीर, आहारक शरीर और तैजस-शरीर ये आठ स्पर्श वाले हैं और कार्मणशरीर, मनयोग और वचनयोग, ये चार स्पर्श वाले हैं। काय योग आठ स्पर्शवाला है। साकारोपयोग और अनाकारोप-योग ये दोनों वर्णादि रहित हैं।

१७ प्रश्न-सव्वदव्वा णं भंते ! कइवण्णा-पुच्छा।

१७ उत्तर-गोयमा ! अत्थेगइया सव्वदव्वा पंचवण्णा, जाव अट्ठफासा पण्णत्ता अत्थेगइया सव्वदव्वा पंचवण्णा चउफासा पण्णत्ता; अत्थेगइया सव्वदव्वा एगवण्णा एगगंधा एगरसा दुफासा पण्णत्ता, अत्थेगइया सव्वदव्वा अवण्णा जाव अफासा पण्णत्ता। एवं सव्वपएसा वि सव्वपज्जवा वि तीयद्धा अवण्णा जाव अफासा पण्णत्ता, एवं अणागयद्धा वि एवं सव्वद्धा वि।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१८ प्रश्न—जीवे णं भंते ! गब्भं वक्कममाणे कइवण्णं, कइ-गंधं, कइरसं, कइफासं परिणामं परिणमइ ?

१८ उत्तर—गोयमा ! पंचवण्णं, पंचरसं, दुगंधं, अट्ठफासं परिणामं परिणमइ ।

भावार्थ—१७ प्रश्न—हे भगवन् ! सभी द्रव्य कितने वर्णादि वाले हैं ?

१७ उत्तर—हे गौतम ! कुछ द्रव्य पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले हैं, कुछ पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और चार स्पर्शवाले हैं और कुछ एक वर्ण, एक रस, एक गन्ध और दो स्पर्श वाले हैं, तथा कुछ द्रव्य वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं। इसी प्रकार सभी प्रदेश, सभी पर्याय, अतीत काल, अनागत काल और समस्त काल—ये सब वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श से रहित हैं।

१८ प्रश्न—हे भगवन् ! गर्भ में उत्पन्न होता हुआ जीव कितने वर्ण, गंध रस और स्पर्श वाले परिणाम से परिणत होता है ?

१८ उत्तर—हे गौतम ! वह पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले परिणाम से परिणत होता है ।

विवेचन—लेश्या दो प्रकार की है;—द्रव्य-लेश्या और भाव-लेश्या । द्रव्य-लेश्या बादर पुद्गल परिणाम रूप होने से वह पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाली होती है । भावलेश्या आन्तरिक परिणामरूप होने से वर्णादि रहित होती है ।

बादर पुद्गल पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और आठ स्पर्श वाले होते है और सूक्ष्म पुद्गल-द्रव्य पांच वर्ण, पांच रस, दो गन्ध और चार स्पर्श वाले होते हैं । परमाणु-पुद्गल एक वर्ण, एक रस, एक गन्ध और दो स्पर्श वाला होता है। दो स्पर्श इस प्रकार है—स्निग्ध और उष्ण अथवा स्निग्ध और शीत अथवा रूक्ष और शीत अथवा रूक्ष और उष्ण ।

द्रव्य के निर्विभाग अंश को 'प्रदेश' कहते हैं और द्रव्य के धर्म को 'पर्याय' कहते हैं । मूर्त्त द्रव्यों के प्रदेश और पर्याय, उन्हीं के समान वर्णादि वाले होते हैं। अमूर्त्त द्रव्यों के प्रदेश और पर्याय भी उन्हीं द्रव्यों के समान वर्णादि रहित होते हैं । अतीत, अनागत और सर्व काल, ये अमूर्त्त होने से वर्णादि रहित हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निष्कर्ष यह है कि १८ पाप, ८ कर्म, कार्मण-शरीर, मनयोग, वचनयोग और सूक्ष्म पुद्गलास्तिकाय का स्कन्ध-ये तीस प्रकार के स्कन्ध, पाँच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और चार स्पर्श (शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष) युक्त होते हैं।

६ द्रव्यलेश्या, ४ शरीर (औदारिक, वैक्रिय, आहारक और तैजस्) घनोदधि, घन-वात, तनुवात, काययोग और बादर पुद्गलास्तिकाय का स्कन्ध, इन पन्द्रह प्रकार के स्कन्धों में पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और आठ स्पर्श पाये जाते हैं।

१८ पाप से विरति, १२ उपयोग (५ ज्ञान, ३ अज्ञान और ४ दर्शन) छह भाव-लेश्या, पाँच द्रव्य (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और काल) चार बुद्धि, चार अवग्रहादि, तीन दृष्टि, पांच शक्ति (उत्थानादि) चार संज्ञा, इन ६१ प्रकार के स्कन्धों में वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श नहीं पाये जाते। ये सभी अरूपी हैं।

गर्भ में आता हुआ जीव (शरीर युक्त जीव) पंच वर्णादि वाला होता है।

कर्म परिणाम से जीव के विविध रूप

१९ प्रश्न-कम्मओ णं भंते ! जीवे णो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ, कम्मओ णं जए णो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ ?

१९ उत्तर-हंता गोयमा ! कम्मओ णं तं चेव जाव परिणमइ, णो अकम्मओ विभत्तिभावं परिणमइ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ पंचमो उद्देसो सम्मत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-विभत्तिभावं-विविध रूप, **जए**-जगत् (जीव समूह)।

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! जीव कर्मों से ही मनुष्य तिर्यञ्चादि विविध रूपों को प्राप्त होता है, कर्मों के बिना विविध रूपों को प्राप्त नहीं होता

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

क्या जगत् कर्मों से विविध रूपों को प्राप्त होता है ? और बिना कर्मों के प्राप्त नहीं होता ?

१९ उत्तर-हां, गौतम ! कर्म से जीव और जगत् (जीवों का समूह) विविध रूपों को प्राप्त होते हैं, किन्तु कर्मों के बिना विविध रूपों को प्राप्त नहीं होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-जीव नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवगति में जिन विविध रूपों को प्राप्त होता है, वह सभी कर्मों के उदय से प्राप्त होता है, बिना कर्मों के जीव विभिन्न रूपों को धारण नहीं कर सकता। सुख-दुःख, सम्पन्नता-विपन्नता, जन्म-मरण, रोग-शोक, संयोग-वियोग, आदि परिणामों को जीव स्वकृत कर्मों के उदय से भोगता है।

॥ बारहवें शतक का पांचवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १२ उद्देशक ६

चन्द्रमा को राहु ग्रसता है ?

१ प्रश्न-रायगिहे जाव एवं वयासी-बहुजणे णं भंते ! अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ जाव एवं परूवेइ-एवं खलु राहू चंदं गेण्हइ, एवं०, से कहमेयं भंते ! एवं ?

१ उत्तर-गोयमा ! जण्णं से बहुजणे अण्णमण्णस्स० जाव मिच्छंते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवमाइक्खामि, जाव एवं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परूवेमि-एवं खलु राहू देवे महिड्ढीए. जाव महेसक्खे, वरवत्थधरे, वरमल्लधरे, वरगंधधरे, वराभरणधारी, राहुस्स णं देवस्स णव णामधेज्जा पण्णत्ता, तं जहा-१ सिंघाडए २ जडिलए ३ खत्तए ४ खरए ५ दद्दुरे ६ मगरे ७ मच्छे ८ कच्छभे ९ कण्हसप्पे।

राहुस्स णं देवस्स विमाणा पंचवण्णा पण्णत्ता, तं जहा-किण्हा, णीला, लोहिया, हालिद्दा, सुक्किल्ला। अत्थि कालए राहुविमाणे खंजणवण्णाभे पण्णत्ते, अत्थि णीलए राहुविमाणे लाउयवण्णाभे पण्णत्ते, अत्थि लोहिए राहुविमाणे मंजिट्ठवण्णाभे पण्णत्ते, अत्थि पीतए राहुविमाणे हालिद्दवण्णाभे पण्णत्ते, अत्थि सुक्किल्लए राहुविमाणे भासरासिवण्णाभे पण्णत्ते। जया णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पुरत्थिमेणं आवरित्ता णं पच्चत्थिमेणं वीईवयइ तया णं पुरत्थिमेणं चंदे उवदंसेइ, पच्चत्थिमेणं राहू, जया णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं पच्चत्थिमेणं आवरित्ता णं पुरत्थिमेणं वीईवयइ तया णं पच्चत्थिमेणं चंदे उवदंसेइ, पुरत्थिमेणं राहू एवं जहा पुरत्थिमेणं पच्चत्थिमेण य दो आलावगा भणिया तहा दाहिणेण य उत्तरेण य दो आलावगा भाणियव्वा, एवं उत्तरपुरत्थिमेण दाहिणपच्चत्थिमेण य दो आलावगा भाणियव्वा, एवं दाहिणपुरत्थिमेणं उत्तरपच्चत्थिमेण य दो

आलावगा भाणियव्वा, एवं चेव जाव तया णं उत्तरपच्चत्थिमेणं चंदे उवदंसेइ, दाहिणपुरत्थिमेणं राहू । जया णं राहू आगच्छमाणे वा गच्छमाणे वा विउव्वमाणे वा परियारेमाणे वा चंदलेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठइ तया णं मणुस्सलोए मणुस्सा वयंति-'एवं खलु राहू चंदं गेण्हइ, एवं०' । जया णं राहू आगच्छमाणे ४ चंदस्स लेस्सं आवरित्ता णं पासेणं वीईवयइ तया णं मणुस्सलोए मणुस्सा वयंति-'एवं खलु चंदेणं राहुस्स कुच्छी भिण्णा, एवं०' । जया णं राहू आगच्छमाणे वा ४ चंदस्स लेस्सं आवरित्ता णं पच्चोसक्कइ तया णं मणुस्सलोए मणुस्सा वयंति-'एवं खलु राहुणा चंदे वंते, एवं०' । जया णं राहू आगच्छमाणे वा जाव परियारेमाणे वा चंदलेस्सं अहे सपक्खिं सपडिदिसिं आवरित्ता णं चिट्ठइ तया णं मणुस्सलोए मणुस्सा वयंति-'एवं खलु राहुणा चंदे घत्थे, एवं०' ।

कठिन शब्दार्थ-सपक्खि-समान दिशा में । सपडिदिसि-समान विदिशा में । घत्थे-ग्रसित किया ।

भावार्थ-१-राजगृह नगर में यावत् गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-हे भगवन् ! बहुत-से मनुष्य इस प्रकार कहते हैं और परूपणा करते हैं कि 'राहु चन्द्रमा को ग्रसता है,' तो हे भगवन् ! 'राहु चन्द्रमा को ग्रसता है' यह किस प्रकार हो सकता है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! बहुत-से मनुष्य परस्पर यों कहते हैं और परूपणा करते हैं कि 'राहु चन्द्रमा को ग्रसता है'-यह मिथ्या है । हे गौतम ! मैं इस प्रकार कहता हूँ तथा परूपणा करता हूँ कि राहु महद्धिक यावत् महासौख्य-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वाला है। वह उत्तम वस्त्र, उत्तम माला, उत्तम सुगंध और उत्तम आभूषणों को धारण करने वाला देव है। उस राहु देव के नौ नाम कहे हैं। यथा-१ शृंगाटक २ जटिलक ३ क्षत्रक ४ खर ५ दर्दुर ६ मकर ७ मत्स्य ८ कच्छप और ९ कृष्णसर्प। राहु के विमान पांच वर्णों वाले कहे हैं। यथा-१ काला २ नीला ३ लाल ४ पीला और ५ श्वेत, इनमें से राहु का जो काला विमान है, वह खंजन (काजल) के समान वर्ण वाला है, जो नीला (हरा) विमान है, वह कच्चे तुम्बे के समान वर्ण वाला है, जो लाल विमान है, वह मजीठ के समान वर्ण वाला है, जो पीला विमान है, वह हल्दी के समान वर्ण वाला है और जो श्वेत विमान है, वह भस्मराशि (राख के ढेर) के समान वर्ण वाला है। जब आता-जाता हुआ, विकुर्वणा करता हुआ, तथा काम-क्रीड़ा करता हुआ राहु देव, पूर्व में रहे हुए चन्द्रमा के प्रकाश को ढक कर पश्चिम की ओर जाता है, तब पूर्व में चन्द्र दिखाई देता है और पश्चिम में राहु दिखाई देता है, जब पश्चिम में चन्द्रमा के प्रकाश को ढक कर पूर्व की ओर जाता है, तब पश्चिम में चन्द्रमा दिखाई देता है और पूर्व में राहु दिखाई देता है। जिस प्रकार पूर्व और पश्चिम के दो आलापक कहे हैं, उसी प्रकार दक्षिण और उत्तर के दो आलापक कहना चाहिये, इसी प्रकार उत्तर-पूर्व (ईशान-कोण) और दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्यकोण) के दो आलापक कहना चाहिये और इसी प्रकार दक्षिण-पूर्व (अग्निकोण) और उत्तर-पश्चिम (वायव्यकोण) के दो आलापक कहना चाहिये। इसी प्रकार यावत् जब उत्तर-पश्चिम में चन्द्र दिखाई देता है और दक्षिण-पूर्व में राहु दिखाई देता है एवं जब गमनागमन करता हुआ, विकुर्वणा करता हुआ अथवा काम-क्रीड़ा करता हुआ राहु, चन्द्रमा के प्रकाश को आवृत करता है, तब मनुष्य कहते हैं कि 'चन्द्रमा को राहु ग्रसता है,' इसी प्रकार जब राहु चन्द्रमा के प्रकाश को आवृत करता हुआ निकट से निकलता है, तब मनुष्य कहते हैं कि 'चन्द्रमा ने राहु की कुक्षि का भेदन कर दिया'। इसी प्रकार राहु जब चन्द्रमा के प्रकाश को ढकता हुआ पीछा लौटता है, तब मनुष्य कहते हैं कि 'राहु ने चन्द्रमा का वमन कर दिया'। इसी प्रकार जब राहु चन्द्रमा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के प्रकाश को नीचे से, चारों दिशाओं से और चारों विदिशाओं से ढक देता है, तब मनुष्य कहते हैं कि 'राहु ने चन्द्रमा को ग्रसित कर लिया है।'

विवेचन-राहु और चन्द्रमा के विमान की अपेक्षा 'ग्रहण' कहलाता है। विमानों में ग्रासक और ग्रसनीय भाव नहीं समझना चाहिये, किन्तु आच्छादक और आच्छाद्य भाव है और इसी को 'ग्रास' होना कहा गया है। यह ग्रास (राहु के द्वारा चन्द्र का आच्छादन) वैस्रसिक (स्वाभाविक) है।

नित्यराहु पर्वराहु

२ प्रश्न-कइविहे णं भंते ! राहू पण्णत्ते ?

२ उत्तर-गोयमा ! दुविहे राहू पण्णत्ते, तं जहा-धुवराहू य पव्वराहू य। तत्थ णं जे से धुवराहू से णं बहुलपक्खस्स पाडिवए पण्णरसइभागेणं पण्णरसइभागं चंदस्स लेस्सं आवरेमाणे २ चिट्ठइ, तंजहा-पढमाए पढमं भागं, बितियाए बितियं भागं, जाव पण्णरसेसु पण्णरसमं भागं, चरिमसमये चंदे रत्ते भवइ, अवसेसे समये चंदे रत्ते य विरत्ते य भवइ; तमेव सुक्कपक्खस्स उवदंसेमाणे २ चिट्ठइ, पढमाए पढमं भागं जाव पण्णरसेसु पण्णरसमं भागं, चरिमसमये चंदे विरत्ते भवइ; अवसेसे समये चंदे रत्ते य विरत्ते य भवइ। तत्थ णं जे से पव्वराहू से जहण्णेणं छण्हं मासाणं उक्कोसेणं बायालीसाए मासाणं चंदस्स, अडयालीसाए संवच्छराणं सूरस्स।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'चंदे ससी', 'चंदे ससी' ?

३ उत्तर-गोयमा ! चंदस्स णं जोइसिंदस्स जोइसरण्णो मियंके विमाणे कंता देवा कंताओ देवीओ कंताइं आसण-सयण-खंभ-भंडमत्तोवगरणाइं, अप्पणा वि य णं चंदे जोइसिंदे जोइसराया सोमे कंते सुभए पियदंसणे सुरूवे, से तेणट्ठेणं जाव ससी।

४ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'सूरे आइच्चे,' 'सूरे आइच्चे' ?

४ उत्तर-गोयमा ! सूरादिया णं समया इ वा आवलिया इ वा जाव उस्सप्पिणी इ वा अवसप्पिणी इ वा, से तेणट्ठेणं जाव आइच्चे।

कठिन शब्दार्थ-मियंके-मृगाङ्क, आइच्चे-आदित्य।

भावार्थ-२ प्रश्न-हे भगवन् ! राहु कितने प्रकार का कहा है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! राहु दो प्रकार का कहा है। यथा-ध्रुव-राहु (नित्य-राहु) और पर्व राहु। जो ध्रुव राहु है, वह कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा से लेकर प्रतिदिन अपने पन्द्रहवें भाग से, चन्द्र-बिम्ब के पन्द्रहवें भाग को ढकता रहता है। यथा-प्रतिपदा को प्रथम भाग ढकता है, द्वितीया के दिन दूसरे भाग को ढकता है, इस प्रकार यावत् अमावस्या के दिन चन्द्रमा के पन्द्रहवें भाग को ढकता है। कृष्ण-पक्ष के अन्तिम समय में चन्द्रमा रक्त (सर्वथा आच्छादित) हो जाता है और दूसरे समय में चन्द्र रक्त (अंश से आच्छादित) और विरक्त अंश से अनाच्छादित रहता है। शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से लेकर प्रतिदिन चन्द्र के प्रकाश का पन्द्रहवां भाग खुला होता जाता है। यथा-प्रतिपदा के दिन पहला भाग खुला होता है यावत् पूर्णिमा के दिन पन्द्रहवां भाग खुला हो जाता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शुक्लपक्ष के अन्तिम समय में चन्द्र विरक्त (सर्वथा अनाच्छादित) हो जाता है और शेष समय में चन्द्र रक्त और विरक्त रहता है। जो पर्वराहु है वह जघन्य छह मास चन्द्र और सूर्य को ढकता है और उत्कृष्ट बयालीस मास में चन्द्रमा को और अड़तालीस वर्ष में सूर्य को ढकता है।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! चन्द्रमा को 'शशी' (सश्री) क्यों कहते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! ज्योतिषियों का इन्द्र, एवं ज्योतिषियों का राजा चन्द्र के मृगाङ्क (मृग के चिन्ह वाला) विमान है। उसमें कान्त (सुन्दर) देव, कांत देवियाँ और कांत आसन, शयन, स्तंभ, पात्र आदि उपकरण हैं, तथा ज्योतिषियों का इंद्र, ज्योतिषियों का राजा चंद्र स्वयं भी सौम्य, कांत, सुभग, प्रियदर्शन और सुरूप है, इसलिये चन्द्र को 'शशी' (सश्री-शोभा सहित) कहते हैं।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! सूर्य को 'आदित्य' (आदि-प्रथम-पहला) क्यों कहते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! समय, आवलिका यावत् उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी आदि कालों का आदिभूत (कारण) सूर्य है, इसलिये इसे 'आदित्य' कहते हैं।

विवेचन-राहु दो प्रकार का है- ध्रुवराहु और पर्वराहु। ध्रुवराहु चन्द्रमा के नीचे नित्य रहता है। चन्द्रमा के सोलह भाग (अंश-कला) हैं। कृष्णपक्ष में राहु प्रतिदिन चन्द्रमा के एक-एक भाग को आच्छादित करता जाता है। अमावस्या तक वह पन्द्रह भागों को आच्छादित कर देता है और शुक्लपक्ष में प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक प्रतिदिन एक-एक भाग को अनावृत (खुला) करता जाता है। पर्वराहु जघन्य छह मास में चन्द्रमा को आवृत करता है और उत्कृष्ट ४२ मास में आवृत करता है। सूर्य को जघन्य छह मास में और उत्कृष्ट ४८ वर्ष में आच्छादित करता है। यही चन्द्र-ग्रहण और सूर्य-ग्रहण कहलाता है। चंद्र सम्बन्धी देव और देवी तथा स्वयं चन्द्र कान्त्यादि से युक्त होने के कारण 'शशी' कहलाता है। समय, आवलिका, दिन, रात आदि का विभाग सूर्य से ही ज्ञात होता है, अर्थात् समयादि का ज्ञान करने में सूर्य 'आदि' (प्रथम) कारण है। इसलिये इसे 'आदित्य' कहते हैं।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्र सूर्य के भोग

५ प्रश्न-चंदस्स णं भंते ! जोइसिंदस्स जोइसरण्णो कइ अग्गमहिसीओ पण्णत्ताओ ?

५ उत्तर-जहा दसमसए जाव णो चेव णं मेहुणवत्तियं । सूरस्स वि तहेव ।

६ प्रश्न-चंदिम-सूरिया णं भंते ! जोइसिंदा जोइसरायाणो केरिसए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ?

६ उत्तर-गोयमा ! से जहाणामए केइ पुरिसे पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थे पढमजोव्वणुट्ठाणबलत्थाए भारियाए सद्धिं अचिरवत्तविवाहकज्जे, अत्थगवेसणयाए सोलसवासविप्पवासिए, से णं तओ लद्धट्ठे, कयकज्जे, अणहसमग्गे पुणरवि णियगगिहं हव्वमागए, ण्हाए कयबलिकम्मे, कयकोउय-मंगलपायच्छित्ते, सव्वालंकारविभूसिए मणुण्णं थालिपागसुद्धं अट्ठारसवंजणाउलं भोयणं भुत्ते समाणे, तंसि तारिसगंसि वासघरंसि, वण्णओ महब्बले कुमारे, जाव सयणोवयारकलिए ताए तारिसियाए भारियाए सिंगारागारचारुवेसाए जाव कलियाए अणुरत्ताए अविरत्ताए मणाणुकूलाए सद्धिं इट्ठे सद्दे फरिसे जाव पंचविहे माणुस्सए कामभोगे पच्चणुब्भवमाणे विहरेज्जा, से णं गोयमा ! पुरिसे विउसमणकालसमयंसि केरिसयं सायासोक्खं पच्चणुब्भ-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

वमाणे विहरइ ? ओरालं समणाउसो ! तस्स णं गोयमा ! पुरिसस्स कामभोगेहिंतो वाणमंतराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा; वाणमंतराणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरिंद-वज्जियाणं भवणवासीणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा; असुरिंदवज्जियाणं भवणवासियाणं देवाणं कामभोगेहिंतो असुरकुमाराणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा; असुरकुमाराणं देवाणं कामभोगेहिंतो गहगण-णक्खत्त-तारा-रूवाणं जोइसियाणं देवाणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा; गहगण-णक्खत्त-जाव कामभोगेहिंतो चंदिम-सूरियाणं जोइसियाणं जोइसराईणं एत्तो अणंतगुणविसिट्ठतरा चेव कामभोगा; चंदिम-सूरिया णं गोयमा ! जोइसिंदा जोइसरायाणो एरिसे कामभोगे पच्चणुब्भवमाणा विहरंति ।

* सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं जाव विहरइ *

॥ छट्ठओ उद्देसओ समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ-पच्चणुब्भवमाणा-अनुभव करते हुए ।

भावार्थ-५ प्रश्न-हे भगवन् ! ज्योतिषियों के इन्द्र, ज्योतिषियों के राजा चन्द्रमा के कितनी अग्रमहिषियां हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार दशवें शतक के दशवें उद्देशक में कहा है, उस प्रकार जानना चाहिये, यावत् "अपनी राजधानी में सिंहासन पर मैथुन-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निमितक भोग भोगने में समर्थ नहीं है"-तक कहना चाहिये। सूर्य के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार कहना चाहिये।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! ज्योतिषियों के इन्द्र, ज्योतिषियों के राजा चन्द्र और सूर्य किस प्रकार के काम-भोग भोगते हुए विचरते हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार प्रथम युवा अवस्था के प्रारम्भ में किसी बलवान् पुरुष ने युवावस्था में प्रविष्ट होती हुई किसी बलशाली कन्या के साथ नया ही विवाह किया और इसके बाद ही वह पुरुष अर्थोपार्जन करने के लिये परदेश चला गया और सोलह वर्ष तक विदेश में रहकर धनोपार्जन करता रहा, फिर सभी कार्यों को समाप्त करके वह निर्विघ्न रूप से लौटकर अपने घर आया। फिर स्नानादि तथा विघ्न निवारणार्थ कौतुक और मंगल रूप प्रायश्चित करे, फिर सभी अलंकारों से अलंकृत होकर, मनोज्ञ स्थालीपाक विशुद्ध अठारह प्रकार के व्यञ्जनों से युक्त भोजन करे, तत्पश्चात् महाबल के उद्देशक में वर्णित वासगृह के समान शयनगृह में, शृंगार की गृहरूप सुन्दर वेषवाली यावत् ललित कलायुक्त, अनुरक्त, अत्यन्त रागयुक्त और मनोऽनुकूल स्त्री के साथ वह इष्ट शब्द-स्पर्शादि पांच प्रकार के मनुष्य सम्बन्धी काम-भोग सेवन करता है। वेदोपशमन (विकार शान्ति) के समय में "हे गौतम ! वह पुरुष किस प्रकार के सुख का अनुभव करता है ?" (गौतम स्वामी कहते हैं कि) "हे भगवन् ! वह पुरुष उदार सुख का अनुभव करता है" (भगवान् फरमाते हैं कि) "हे गौतम ! उस पुरुष के काम-भोगों की अपेक्षा वाणव्यन्तर देवों के काम-भोग अनन्त गुण विशिष्ट होते हैं। वाणव्यन्तर देवों के काम-भोगों से असुरेन्द्र के सिवाय शेष भवनवासी देवों के काम-भोग अनन्तगुण विशिष्ट होते हैं। शेष भवनवासी देवों के काम-भोगों से असुरकुमार देवों के काम-भोग अनन्तगुण विशिष्ट होते हैं। असुरकुमार देवों के काम-भोगों से ज्योतिषी देवरूप ग्रहगण, नक्षत्र और तारा देवों के काम-भोग अनन्त गुण विशिष्ट होते हैं। ज्योतिषी देव रूप ग्रहगण, नक्षत्र और तारा के देवों के कामभोग से ज्योतिषियों के इन्द्र, ज्योतिषियों के राजा चन्द्र और सूर्य

के काम-भोग अनंतगुण विशिष्ट होते हैं। हे गौतम ! ज्योतिषियों के इन्द्र ज्योतिषियों के राजा चन्द्र और सूर्य इस प्रकार के काम भोगों का अनुभव करते हुए विचरते हैं।

"हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है"-- ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-भगवती शतक दस उद्देशक दस में चन्द्र और सूर्य की अग्रमहिषियां, परिवार आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है।

यहाँ काम-भोगों के सुख को जो 'उदार सुख' कहा गया है, वह सांसारिक सामान्य जन की अपेक्षा से कहा गया है। वास्तव में तो काम-भोग सम्बन्धी सुख सुख नहीं है, किन्तु सुखाभास है और दुःख रूप है। संसारी लोगों ने दुःख रूप काम-भोगों को भी सुखरूप मान लिया है। यह केवल उनकी विडम्बना मात्र है।

॥ बारहवें शतक का छठा उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १२ उद्देशक ७

बकरियों के बाड़े का दृष्टांत

१ प्रश्न-तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी-केमहालए णं भंते ! लोए पण्णत्ते ?

१ उत्तर-गोयमा ! महतिमहालए लोए पण्णत्ते, पुरत्थिमेणं असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ, दाहिणेणं असंखिज्जाओ एवं चेव, एवं पच्चत्थिमेण वि, एवं उत्तरेण वि, एवं उड्ढं पि, अहे

असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीओ आयाम-विक्खंभेणं ।

२ प्रश्न-एयंसि णं भंते ! एमहालयंमि लोगंमि अत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा, ण मए वा वि ?

२ उत्तर-गोयमा ! णो इणट्ठे समट्ठे ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ,-एयंसि णं एमहालयंसि लोगंसि णत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा, ण मए वा वि' ?

उत्तर-गोयमा ! से जहाणामए केइ पुरिसे अयासयस्स एगं महं अयावयं करेज्जा; से णं तत्थ जहण्णेणं एक्कं वा दो वा तिण्णि वा, उक्कोसेणं अयासहस्सं पक्खिवेज्जा, ताओ णं तत्थ पउरगोयराओ पउरपाणियाओ जहण्णेणं एगाहं वा दुयाहं वा तियाहं वा उक्कोसेणं छम्मासे परिवसेज्जा, अत्थि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जेणं तासिं अयाणं उच्चारेण वा पासवणेण वा खेलेण वा सिंघाणएण वा वंतेण वा पित्तेण वा पूएण वा सुक्केण वा सोणिएण वा चम्मेहिं वा रोमेहिं वा सिंगेहिं वा खुरेहिं वा णहेहिं वा अणक्कंतपुव्वे भवइ ? णो इणट्ठे समट्ठे, होज्जा वि णं गोयमा ! तस्स अयावयस्स केई परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जे णं तासिं अयाणं उच्चारेण वा जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णहेहिं वा अणक्कंतपुव्वे, णो चेव णं एयंसि एमहालयंसि लोगंसि लोगस्स य सासयं भावं, संसारस्स य अणाइभावं, जीवस्स य णिच्चभावं, कम्मबहुत्तं, जम्मण-मरणबाहुल्लं च पडुच्च णत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्ते वि पएसे, जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा ण मए वा वि, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव ण मए वा वि ।

कठिन शब्दार्थ--अयावयं--अजाव्रज-बकरियों का बाड़ा ।

भावार्थ-१ प्रश्न-उस काल उस समय में गौतम स्वामी ने इस प्रकार पूछा-"हे भगवन् ! लोक कितना बड़ा है ?"

१ उत्तर-हे गौतम ! लोक बहुत बड़ा है । वह पूर्व दिशा में असंख्य कोटा-कोटि योजन है, इसी प्रकार दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा में भी असंख्य कोटा-कोटि योजन है और इसी प्रकार ऊर्ध्वदिशा और अधोदिशा में भी असंख्य कोटा-कोटि योजन आयामविष्कम्भ (लम्बाई चौड़ाई) वाला है ।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! इतने बड़े लोक में क्या कोई परमाणु-पुद्गल जितना भी आकाश-प्रदेश ऐसा है जहाँ पर इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं ।

प्रश्न-हे भगवन् इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! जैसे कोई पुरुष सौ बकरियों के लिये एक विशाल अजाव्रज बनवाये उसमें कम से कम एक, दो, तीन और अधिक से अधिक एक हजार बकरियों को रखे और उसमें उनके लिये घास पानी डाल दे । यदि वे बकरियाँ वहाँ कम से कम एक, दो, तीन दिन और अधिक से अधिक छह महीने तक रहें ।

भगवान् पूछते हैं-"हे गौतम ! उस बाड़े का कोई परमाणु पुद्गल मात्र प्रदेश ऐसा रह सकता है कि जो बकरियों की मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक का मैल, वमन, पित्त, शुक्र, रुधिर, चर्म, रोम, सींग, खुर और नख से स्पर्श न किया गया हो ?'

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गौतम स्वामी उत्तर देते हैं-"हे भगवन् ! यह अर्थ समर्थ नहीं है।"

भगवन् कहते हैं कि-"हे गौतम ! कदाचित् उस बाड़े में कोई एक परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश ऐसा रह भी सकता है कि जो बकरियों के मल यावत् नखों से स्पृष्ट न हुआ हो, तथापि इतने बड़े लोक में, लोक के शाश्वत भाव के कारण, संसार के अनादि होने के कारण, जीव की नित्यता के कारण, कर्म की बहुलता के कारण और जन्म-मरण की बहुलता के कारण कोई भी परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश ऐसा नहीं है कि जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो। इस कारण हे गौतम ! उपर्युक्त बात कही गई है।"

विवेचन-संसार का ऐसा कोई भी परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश शेष नहीं, जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो। इस बात की पुष्टि के लिये पांच कारण दिये गये हैं। विनाशी के लिये यह बात नहीं हो सकती, अतः कहा गया है कि 'लोक शाश्वत है।' लोक के शाश्वत होने पर भी यदि वह सादि (आदि सहित) हो, तो उपर्युक्त बात घटित नहीं हो सकती, इसलिये कहा गया है कि 'लोक अनादि है।' अनेक जीवों की अपेक्षा संसार यदि अनादि हो और विवक्षित जीव अनित्य हो, तो उपर्युक्त अर्थ घटित नहीं हो सकता, इसलिये कहा गया है कि 'जीव नित्य है।' जीव के नित्य होने पर भी यदि कर्म अल्प हो, तो तथाविध संसार परिभ्रमण नहीं हो सकता और उस दशा में उपर्युक्त अर्थ घटित नहीं हो सकता, इसलिये कर्मों की बहुलता बतलाई गई है। कर्मों की बहुलता होने पर भी यदि जन्म-मरण की अल्पता हो, तो उपर्युक्त अर्थ घटित नहीं हो सकता, अतः जन्मादि की बहुलता बतलाई गई है। इन पांच कारणों से इतने बड़े लोक में ऐसा कोई एक भी आकाश प्रदेश नहीं, जहाँ इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया हो।

जीवों का अनन्त जन्म-मरण

३ प्रश्न-कइ णं भंते ! पुढवीओ पण्णत्ताओ ?

३ उत्तर-गोयमा ! सत्त पुढवीओ पण्णत्ताओ, जहा पढमसए

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पंचमउद्देसए तहेव आवासा ठावेयव्वा जाव अणुत्तरविमाणेत्ति, जाव अपराजिए सव्वट्ठसिद्धे ।

४ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए णिरयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि णिरयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए णरगत्ताए णेरइयत्ताए उववण्णपुव्वे ?

४ उत्तर-हंता गोयमा ! असइं अदुवा अणंतखुत्तो ।

५ प्रश्न-सव्वजीवा वि णं भंते ! इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए तीसाए णिरया० ?

५ उत्तर-तं चेव जाव अणंतखुत्तो ।

६ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सक्करप्पभाए पुढवीए पणवीसा० ?

६ उत्तर-एवं जहा रयणप्पभाए तहेव दो आलावगा भाणियव्वा, एवं जाव धूमप्पभाए ।

७ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे तमाए पुढवीए पंचूणे णिरयावाससयसहस्से एगमेगंसि० ?

७ उत्तर-सेसं तं चेव ।

८ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे अहेसत्तमाए पुढवीए पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महाणिरएसु एगमेगंसि णिरयावासंसि० ?

८ उत्तर-सेसं जहा रयणप्पभाए ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

९ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे चउसट्ठीए असुरकुमारावाससय-सहस्सेसु एगमेगंसि असुरकुमारावासंसि पुढविक्काइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए देवत्ताए देवित्ताए आसण-सयण-भंडमत्तोवगरण-त्ताए उववण्णपुव्वे ?

९ उत्तर-हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो। सव्वजीवा वि णं भंते ! एवं चेव, एवं जाव थणियकुमारेसु। णाणत्तं आवासेसु, आवासा पुव्वभणिया।

कठिन शब्दार्थ-असइं-असकृत-अनेक बार, अणंतखुत्तो-अनन्त बार।

भावार्थ-३ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वियाँ कितनी कही है ?

३ उत्तर-हे गौतम ! पृथ्वियाँ सात कही हैं। यहाँ प्रथम शतक के पांचवें उद्देशक में कहे अनुसार नरकादि के आवास कहने चाहिये। इसी प्रकार यावत् अनुत्तरविमान यावत् अपराजित और सर्वार्थसिद्ध तक कहना चाहिये।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में, पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पतिकायिकपने, नरकपने (नरकावास पृथ्वीकायिकरूप) और नैरयिकपने, पहले उत्पन्न हुआ है ?

४ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार पहले उत्पन्न हो चुका है।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! सभी जीव, इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पतिकायिक-पने, नरकपने और नैरयिकपने, पहले उत्पन्न हो चुके हैं ?

५ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार अथवा अनन्त बार उत्पन्न हो चुके हैं।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, शर्कराप्रभा के पच्चीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में, पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पतिकायिकपने यावत

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

पहले उत्पन्न हो चुका है ?

६ उत्तर-हां, गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभा के दो आलापक कहे हैं, उसी प्रकार शर्कराप्रभा के भी दो आलापक (एक जीव और सभी जीव के) कहने चाहिये। इसी प्रकार यावत् धूमप्रभा तक कहना चाहिये।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, तमःप्रभा पृथ्वी के पांच कम एक लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पूर्ववत् उत्पन्न हो चुका है ?

७ उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्ववत् उत्पन्न हो चुका है।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, अधःसप्तम पृथ्वी के पांच अनुत्तर और अति विशाल नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में पूर्ववत् उत्पन्न हो चुका है ?

८ उत्तर-हाँ, गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के समान हो चुका है।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, असुरकुमारों के चौसठ लाख असुरकुमारावासों में से प्रत्येक असुरकुमारावास में, पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पतिकायिकपने, देवपने, देवीपने, आसन, शयन, पात्रादि उपकरण के रूप में पहले उत्पन्न हो चुका है ?

९ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनन्तबार उत्पन्न हो चुका है। सभी जीवों के विषय में भी इसी प्रकार जानना चाहिये। इसी प्रकार स्तनितकुमारों तक जानना चाहिये। किन्तु उनके आवासों की संख्या में भेद है। वह संख्या पहले बताई गई है।

१० प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे असंखेज्जेसु पुढविक्काइयावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि पुढविकाइयावासंसि पुढविकाइयत्ताए जाव वणस्सइकाइयत्ताए उववण्णपुव्वे ?

१० उत्तर-हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो। एवं सव्वजीवा वि, एवं जाव वणस्सइकाइएसु।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे असंखेज्जेसु बेंदियावाससय-सहस्सेसु एगमेगंसि बेंदियावासंसि पुढविक्काइयत्ताए जाव वणस्सइ-काइयत्ताए बेइंदियत्ताए उववण्णपुव्वे ?

११ उत्तर-हंता गोयमा ! जाव खुत्तो । सव्वजीवा वि णं एवं चेव, एवं जाव मणुस्सेसु, णवरं तेंदियएसु जाव वणस्सइकाइयत्ताए तेंदियत्ताए, चउरिंदिएसु चउरिंदियत्ताए, पंचिंदियतिरिक्खजोणिएसु पंचिंदियतिरिक्खजोणियत्ताए, मणुस्सेसु मणुस्सत्ताए, सेसं जहा बेंदियाणं, वाणमंतर-जोइसिय-सोहम्मीसाणेसु य जहा असुर-कुमाराणं ।

१२ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सणंकुमारे कप्पे बारससु विमाणावाससयसहस्सेसु एगमेगंसि वेमाणियावासंसि पुढविकाइय-त्ताए ?

१२ उत्तर-सेसं जहा असुरकुमाराणं जाव अणंतखुत्तो, णो चेव णं देवित्ताए, एवं सव्वजीवा वि; एवं जाव आणय-पाणएसु, एवं आरण-च्चुएसु वि ।

१३ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे तिसु वि अट्ठारसुत्तरेसु गेविज्ज-विमाणावाससयेसु० ?

१३ उत्तर-एवं चेव ।

१४ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे पंचसु अणुत्तरविमाणेसु एग-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

मेगंसि अणुत्तरविमाणंसि पुढवि० ?

१४ उत्तर-तहेव जाव अणंतखुत्तो, णो चेव णं देवत्ताए वा देवित्ताए वा, एवं सव्वजीवा वि ।

भावार्थ-१० प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव असंख्यात लाख पृथ्वीकायिक आवासों में से प्रत्येक पृथ्वीकायिकावास में पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पति-कायिक रूप में उत्पन्न हो चुका है ?

१० उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है । इसी प्रकार सभी जीवों के लिये भी कहना चाहिये । इसी प्रकार यावत् वन-स्पतिकायिकों में भी कहना चाहिये ।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव असंख्यात लाख बेइन्द्रियावासों में से प्रत्येक बेइन्द्रियावास में पृथ्वीकायिकपने यावत् वनस्पतिकायिकपने और बेइन्द्रिय के रूप में पहले उत्पन्न हो चुका है ?

११ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है । इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में भी कहना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि तेइन्द्रियों में यावत् वनस्पतिकायिकपने और तेइन्द्रियपने, चौइन्द्रियों में यावत् चौइन्द्रियपने, पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च योनिकों में यावत् पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च-योनिकपने और मनुष्यों में यावत् मनुष्यपने उत्पत्ति जाननी चाहिये । शेष सभी बेइन्द्रियों के समान कहना चाहिये । जिस प्रकार असुरकुमारों के विषय में कहा है, उसी प्रकार वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, सौधर्म और ईशान देवलोक तक कहना चाहिये ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव सनत्कुमार देवलोक के बारह लाख विमानावासों में से प्रत्येक विमानावास में पृथ्वीकायिकपने यावत् पहले उत्पन्न हो चुका है ?

१२ उत्तर-हाँ, गौतम ! सब कथन असुरकुमारों के समान जानना

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चाहिये । किन्तु वहाँ देवीपने उत्पन्न नहीं हुआ । इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में जानना चाहिए । इसी प्रकार यावत् आनत, प्राणत, आरण और अच्युत तक जानना चाहिये ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव तीन सौ अठारह ग्रैवेयक विमानावासों में से प्रत्येक विमानावास में पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् उत्पन्न हो चुका है ?

१३ उत्तर-हाँ, गौतम ! पूर्ववत् उत्पन्न हो चुका है ।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव पांच अनुत्तर विमानों में से प्रत्येक विमान में पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् पहले उत्पन्न हो चुका है ?

१४ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनन्त बार उत्पन्न हो चुका है, किन्तु वहाँ देव और देवी रूप से उत्पन्न नहीं हुआ । इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में जानना चाहिये ।

विवेचन-पृथ्वीकायिका वास असंख्यात हैं । किन्तु उनकी बहुलता बतलाने के लिये 'सयसहस्स (शतसहस्र-लाख)' शब्द का प्रयोग किया है ।

पहले और दूसरे देवलोक तक ही देवियां उत्पन्न होती हैं, इसलिये उससे आगे के देवलोकों में देवीपने उत्पन्न होने का निषेध किया है ।

अनुत्तर विमानों में तो कोई भी जीव, देव रूप से अनन्त बार उत्पन्न नहीं हो सकता। और देवियों की उत्पत्ति तो वहाँ है ही नहीं । इसलिये अनुत्तर विमानों में देवपने और देवीपने अनन्तबार उत्पन्न होने का निषेध किया गया है ।

१५ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं माइत्ताए, पिइत्ताए, भाइत्ताए, भगिणित्ताए, भज्जत्ताए, पुत्तत्ताए, धूयत्ताए, सुण्हत्ताए उववण्णपुव्वे ?

१५ उत्तर-हंता गोयमा ! असइं, अदुवा अणंतखुत्तो ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१६ प्रश्न-सव्वजीवा वि णं भंते ! इमस्स जीवस्स माइत्ताए जाव उववण्णपुव्वा ?

१६ उत्तर-हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो ।

१७ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं अरित्ताए, वेरियत्ताए, घातगत्ताए, वहगत्ताए, पडिणीयत्ताए, पच्चामित्तत्ताए उववण्णपुव्वे ?

१७ उत्तर-हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो ।

१८ प्रश्न-सव्वजीवा वि णं भंते० !

१८ उत्तर-एवं चेव ।

१९ प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं रायत्ताए, जुवरायत्ताए जाव सत्थवाहत्ताए उववण्णपुव्वे ?

१९ उत्तर-हंता गोयमा ! असइं, जाव अणंतखुत्तो । सव्वजीवाणं एवं चेव ।

२० प्रश्न-अयं णं भंते ! जीवे सव्वजीवाणं दासत्ताए, पेसत्ताए, भयगत्ताए, भाइल्लगत्ताए, भोगपुरिसत्ताए, सीसत्ताए, वेसत्ताए उववण्णपुव्वे ?

२० उत्तर-हंता गोयमा ! जाव अणंतखुत्तो । एवं सव्वजीवा वि अणंतखुत्तो ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ❀

॥ सत्तमो उद्देसओ समत्तो ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

कठिन शब्दार्थ-सुण्हत्ताए-स्नुषा-पुत्र-वधू रूप में, भाइल्लगत्ताए-भागीदार रूप में।

भावार्थ-१५ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, सभी जीवों के मातापने, पिता, भाई, बहन, स्त्री, पुत्र और पुत्रवधू के सम्बन्ध से पहले उत्पन्न हो चुका है ?

१५ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है।

१६ प्रश्न-हे भगवन् ! सभी जीव, इस जीव के मातापने यावत् पुत्र-वधूपने उत्पन्न हो चुके हैं ?

१६ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुके हैं।

१७ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, सभी जीवों के शत्रुपने, वैरी, घातक, वधक, प्रत्यनीक और शत्रुसहायक होकर उत्पन्न हो चुका है।

१७ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है।

१८ प्रश्न-हे भगवन् ! सभी जीव, इस जीव के शत्रुपने यावत् शत्रु-सहायकपने पहले उत्पन्न हो चुके हैं ?

१८ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुके हैं।

१९ प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, सभी जीवों के राजापने, युवराज यावत् सार्थवाहपने पहले उत्पन्न हो चुका है ?

१९ उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है। इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में भी जानना चाहिये।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! यह जीव, सभी जीवों के दासपने, प्रेष्यपने (नौकर होकर) भृतक, भागीदार, भोगपुरुष (दूसरों के उपार्जित धन का भोग करने वाला) शिष्य और द्वेष्य (द्वेषी-ईर्षालू) के रूप में पहले उत्पन्न हो चुका है ?

२० उत्तर-हाँ, गौतम ! अनेक बार या अनंत बार उत्पन्न हो चुका है। इस प्रकार सभी जीव भी इस जीव के प्रति पूर्वोक्त रूप से उत्पन्न हो चुके हैं।

"हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है"-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

॥ बारहवें शतक का सातवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२ उद्देशक ८

देव का नाग आदि में उपपात

१ प्रश्न–तेणं कालेणं तेणं समएणं जाव एवं वयासी–देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव महेसक्खे अणंतरं चयं चइत्ता बिसरीरेसु णागेसु उववज्जेज्जा ?

१ उत्तर–हंता गोयमा ! उववज्जेज्जा।

२ प्रश्न–से णं तत्थ अच्चिय-वंदिय-पूइय-सक्कारिय-सम्माणिए दिव्वे सच्चे सच्चोवाए सण्णिहियपाडिहेरे यावि भवेज्जा ?

२ उत्तर–हंता, भवेज्जा।

३ प्रश्न–से णं भंते ! तओहिंतो अणंतरं उव्वट्टित्ता सिज्झेज्जा बुज्झेज्जा जाव अंतं करेज्जा ?

३ उत्तर–हंता सिज्झेज्जा, जाव अंतं करेज्जा।

४ प्रश्न–देवे णं भंते ! महिड्ढीए एवं चेव जाव बिसरीरेसु मणीसु उववज्जेजा ?

४ उत्तर–एवं चेव जहा णागाणं।

५ प्रश्न–देवे णं भंते ! महिड्ढीए जाव बिसरीरेसु रुक्खेसु उववज्जेज्जा ?

५ उत्तर–हंता, उववज्जेज्जा एवं चेव, णवरं इमं णाणत्तं जाव

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सण्णिहियपाडिहेरे लाउल्लोइयमहिए यावि भवेज्जा ? हंता भवेज्जा, सेसं तं चेव जाव अंतं करेज्जा ।

६ प्रश्न-अह भंते ! गोलंगूलवसभे, कुक्कुडवसभे, मंडुक्कवसभे-एए णं णिस्सीला णिव्वया णिग्गुणा णिम्मेरा णिप्पच्चक्खाण-पोसहोववासा कालमासे कालं किच्चा इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए उक्कोसेणं सागरोवमट्ठिइयंसि णरयंसि णेरइयत्ताए उववज्जेज्जा ?

६ उत्तर-समणे भगवं महावीरे वागरेइ-'उववज्जमाणे उववण्णे' त्ति वत्तव्वं सिया ।

७ प्रश्न-अह भंते ! सीहे वग्घे जहा उस्स(ओस)प्पिणीउद्देसए जाव परस्सरे-एए णं णिस्सीला० ?

७ उत्तर-एवं चेव जाव वत्तव्वं सिया ।

८ प्रश्न-अह भंते ! ढंके कंके विलए मग्गुए सिखी-एए णं णिस्सीला० ?

८ उत्तर-सेसं तं चेव जाव वत्तव्वं सिया ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ❀

॥ अट्ठमो उद्देसो समत्तो ॥

कठिन शब्दार्थ—**गोलंगूलवसभे**—गोलांगुल वृषभ-बड़ा बन्दर । **ढंके**—कौआ । **कंके**—गिद्ध । **बिलए**—बिलक-एक पक्षी । **सिखी**—शिखी-मोर ।

भावार्थ-१ प्रश्न-उस काल उस समय में गौतम स्वामी ने यावत् इस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रकार पूछा-हे भगवन् ! महाऋद्धिवाला, यावत् महासुखवाला देव चवकर (मरकर) तुरन्त ही केवल दो शरीर धारण करने वाले नागों में (सर्प अथवा हाथी में) उत्पन्न होता है ?

१ उत्तर-हां गौतम ! उत्पन्न होता है ।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! वह वहां नाग के भव में अर्चित, वन्दित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य, प्रधान, सत्य, सत्यावपातरूप एवं सन्निहित प्रातिहारिक होता है ?

२ उत्तर-हां, गौतम ! होता है ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! वहां से चवकर अन्तर रहित वह मनुष्य होकर सिद्ध, बुद्ध होता है, यावत् संसार का अन्त करता है ?

३ उत्तर-हां, गौतम ! वह सिद्ध बुद्ध होता है, यावत् संसार का अन्त करता है ।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव, दो शरीर वाली मणियों में उत्पन्न होता है ?

४ उत्तर-हां, गौतम ! नागों की तरह पूरा वर्णन करना चाहिये ।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! महर्द्धिक यावत् महासुख वाला देव दो शरीर धारण करने वाले वृक्षों में उत्पन्न होता है ?

५ उत्तर-हां, गौतम ! होता है, पूर्ववत् । परन्तु इतनी विशेषता है कि जिस वृक्ष में वह उत्पन्न होता है, वह वृक्ष सन्निहित प्रातिहारिक होता है, तथा उस वृक्ष की पीठिका (चबुतरा आदि) गोबरादि से लीपी हुई और खड़िया मिट्टी आदि द्वारा पोती हुई होती है । शेष पूर्ववत्, यावत् वह संसार का अन्त करता है ।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! वानवृषभ (बड़ा बन्दर) कुक्कुट-वृषभ (बड़ा कूकड़ा) मंडूक-वृषभ (बड़ा मेंढक) ये सभी शील रहित, व्रत रहित, गुण रहित, मर्यादा रहित, प्रत्याख्यान पौषधोपवास रहित, काल के समय काल करके इस

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

रत्नप्रभा पृथ्वी में उत्कृष्ट सागरोपम की स्थिति वाले नरकावास में नैरयिक रूप से उत्पन्न होते हैं ?

६ उत्तर-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी कहते हैं कि-हां, गौतम ! नैरयिक रूप से उत्पन्न होता है, क्योंकि 'उत्पन्न होता हुआ, उत्पन्न हुआ कहलाता है।'

७ प्रश्न-हे भगवन् ! सिंह, व्याघ्र आदि सातवें शतक के छट्ठे अवसर्पिणी उद्देशक में कथित जीव यावत् पाराशर-ये सभी शील रहित इत्यादि पूर्वोक्त रूप से उत्पन्न होते हैं ?

७ उत्तर-हाँ, गौतम ! होते हैं।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! कौआ, गिद्ध, बिलक, मद्गुक और मोर-ये सभी शील रहित इत्यादि पूर्वोक्त रूप से उत्पन्न होते हैं ?

८ उत्तर-हां, गौतम ! उत्पन्न होते हैं।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है। ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं।

विवेचन-जो जीव देव भव से चवकर वृक्ष में उत्पन्न होता है, तो उसका पूर्व-संगतिक देव उस वृक्ष की रक्षा करता है और वह उसके समीप रहता है। अतएव वह वृक्ष देवाधिष्ठित कहलाता है। ऐसा देवाधिष्ठित विशिष्ट वृक्ष बद्धपीठ होता है। लोग उस पीठ (चबूतरा) को गोबरादि से लीप कर तथा खड़िया-मिट्टी आदि से पोतकर स्वच्छ रखते हैं।

जो जीव नागादि के शरीर को छोड़कर मनुष्य शरीर को धारण करके मोक्ष को प्राप्त करते हैं। वे दो शरीर को धारण करने वाले नागादि कहलाते हैं।

जिस समय वानरादि हैं, उस समय वे नारकरूप नहीं हैं। फिर नारकरूप से कैसे उत्पन्न हुए ? इस प्रश्न के उत्तर में श्रमण भगवान् महावीर स्वामी कहते हैं कि 'उत्पन्न होता हुआ भी उत्पन्न हुआ कहलाता है।' इसलिये जो वानरादि नारकरूप से उत्पन्न होने वाले हैं, वे 'उत्पन्न हुए' कहलाते हैं।

॥ बारहवें शतक का आठवां उद्देशक सम्पूर्ण ॥

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

शतक १२ उद्देशक ९

भव्यद्रव्यादि पांच प्रकार के देव

१ प्रश्न–कइविहा णं भंते ! देवा पण्णत्ता ?

१ उत्तर–गोयमा ! पंचविहा देवा पण्णत्ता, तं जहा–१ भवियदव्वदेवा २ णरदेवा ३ धम्मदेवा ४ देवाहिदेवा ५ भावदेवा ।

२ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'भवियदव्वदेवा भवियदव्वदेवा' ?

२ उत्तर–गोयमा ! जे भविए पंचिंदियतिरिक्खजोणिए वा मणुस्से वा देवेसु उववज्जित्तए, से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ–'भवियदव्वदेवा भवियदव्वदेवा' ।

३ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'णरदेवा णरदेवा' ?

३ उत्तर–गोयमा ! जे इमे रायाणो चाउरंतचक्कवट्टी उप्पण्णसमत्तचक्करयणप्पहाणा णवणिहिपइणो समिद्धकोसा बत्तीसं रायवरसहस्साणुयायमग्गा सागरवरमेहलाहिवइणो मणुस्सिंदा, से तेणट्ठेणं जाव 'णरदेवा णरदेवा' ।

४ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'धम्मदेवा धम्मदेवा' ?

४ उत्तर–गोयमा ! जे इमे अणगारा भगवंतो ईरियासमिया जाव गुत्तबंभयारी, से तेणट्ठेणं जाव 'धम्मदेवा धम्मदेवा' ।

५ प्रश्न–से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ–'देवाहिदेवा देवाहिदेवा' ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

५ उत्तर-गोयमा ! जे इमे अरिहंता भगवंतो उप्पण्णणाण-दंसणधरा जाव सव्वदरिसी, से तेणट्ठेणं जाव 'देवाहिदेवा देवाहिदेवा'।

६ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'भावदेवा भावदेवा' ?

६ उत्तर-गोयमा ! जे इमे भवणवइ-वाणमंतर-जोइस-वेमाणिया देवा देवगइणामगोयाइं कम्माइं वेदेंति, से तेणट्ठेणं जाव 'भावदेवा भावदेवा'।

कठिन शब्दार्थ-णवणिहिपइणो-नवनिधि पति-नवनिधियों के स्वामी।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! देव कितने प्रकार के कहे हैं ?

१ उत्तर-हे गौतम ! देव पांच प्रकार के कहे हैं। यथा-भव्यद्रव्यदेव, नरदेव, धर्मदेव, देवाधिदेव और भावदेव।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! 'भव्यद्रव्य देव'-ऐसा कहने का कारण क्या है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्च-योनिक अथवा मनुष्य, देवों में उत्पन्न होने योग्य (भव्य) हैं, वे 'भव्यद्रव्यदेव' कहलाते हैं।

३ प्रश्न- हे भगवन् ! 'नरदेव' क्यों कहलाते हैं ?

३ उत्तर-हे गौतम ! जो राजा, पूर्व, पश्चिम और दक्षिण में समुद्र तथा उत्तर में हिमवान् पर्वत पर्यन्त छह खण्ड पृथ्वी के स्वामी चक्रवर्ती हैं। जिनके यहाँ समस्त रत्नों में प्रधान चक्ररत्न उत्पन्न हुआ है, जो नवनिधि के स्वामी हैं, समृद्ध भण्डार वाले हैं, बत्तीस हजार राजा जिनका अनुसरण करते हैं, ऐसे महासागर रूप उत्तम मेखला पर्यन्त पृथ्वी के पति और मनुष्येन्द्र हैं, वे 'नरदेव' कहलाते हैं।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! 'धर्मदेव' क्यों कहलाते हैं ?

४ उत्तर-हे गौतम ! जो ये अनगार भगवान् ईर्यासमिति आदि समितियों

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

से समन्वित यावत् गुप्त ब्रह्मचारी हैं, वे 'धर्मदेव' कहलाते हैं।

५ प्रश्न-हे भगवन् ! 'देवाधिदेव' क्यों कहलाते हैं ?

५ उत्तर-हे गौतम ! उत्पन्न हुए केवलज्ञान और केवलदर्शन को धारण करने वाले यावत् सर्वदर्शी अरिहन्त भगवान् 'देवाधिदेव' कहलाते हैं।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! 'भावदेव' किसे कहते हैं ?

६ उत्तर-हे गौतम ! भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देव, जो देवगति सम्बन्धी नामकर्म और गौत्र-कर्म का वेदन कर रहे हैं, वे 'भावदेव' कहलाते हैं।

विवेचन-जो क्रीड़ादि धर्म वाले हैं अथवा जिनकी आराध्यरूप से स्तुति की जाती है, वे 'देव' कहलाते हैं।

भव्यद्रव्य देव में 'द्रव्य' शब्द अप्राधान्य वाचक है। भूतकाल में देव पर्याय को प्राप्त हुआ अथवा भविष्यत्काल में देवपने को प्राप्त करने वाले, किन्तु वर्तमान में देव के गुणों से शून्य होने के कारण वे अप्रधान हैं। इनमें से जो इस भव के बाद ही देवपने को प्राप्त करने वाले हैं, वे 'भव्यद्रव्यदेव' कहलाते हैं।

मनुष्यों में देवों के समान आराधना करने के योग्य मनुष्येन्द्र-चक्रवर्ती 'नरदेव' कहलाते हैं।

श्रुतादि धर्म द्वारा जो देव तुल्य हैं, अथवा जिनमें धर्म की ही प्रधानता है, ऐसे धार्मिक देवरूप अनगार 'धर्मदेव' कहलाते हैं।

पारमार्थिक देवपना होने से जो देवों से भी अधिक श्रेष्ठ हैं, ऐसे तीर्थंकर भगवान् 'देवाधिदेव' अथवा 'देवातिदेव' कहलाते हैं।

देवगत्यादि कर्म के उदय से देवपने का अनुभव करने वाले 'भावदेव' कहलाते हैं।

७ प्रश्न-भवियदव्वदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति, किं णेरइएहिंतो उववज्जंति, तिरिक्ख० मणुस्स० देवेहिंतो उववज्जंति ?

७ उत्तर-गोयमा ! णेरइएहिंतो उववज्जंति, तिरि० मणु० देवे-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हिंतो वि उववज्जंति, भेओ जहा वक्कंतीए सव्वेसु उववाएयव्वा जाव 'अणुत्तरोववाइय' त्ति, णवरं असंखेज्जावासाउयअकम्मभूमग-अंतरदीवगसव्वट्ठसिद्धवज्जं जाव अपराजियदेवेहिंतो वि उववज्जंति, णो सव्वट्ठसिद्धदेवेहिंतो उववज्जंति ।

८ प्रश्न-णरदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? किं णेरइए० पुच्छा ।

८ उत्तर-गोयमा ! णेरइएहिंतो वि उववज्जंति, णो तिरि०, णो मणु०, देवेहिंतो वि उववज्जंति ।

९ प्रश्न-जइ णेरइएहिंतो उववज्जंति किं रयणप्पभापुढविणेरइएहिंतो उववज्जंति, जाव अहेसत्तमपुढविणेरइएहिंतो उववज्जंति ?

९ उत्तर-गोयमा ! रयणप्पभापुढविणेरइएहिंतो उववज्जंति, णो सक्कर० जाव णो अहेसत्तमपुढविणेरइएहिंतो उववज्जंति ।

१० प्रश्न-जइ देवेहिंतो उववज्जंति किं भवणवासिदेवेहिंतो उववज्जंति, वाणमंतर० जोइसिय० वेमाणियदेवेहिंतो उववज्जंति ?

१० उत्तर-गोयमा ! भवणवासिदेवेहिंतो वि उववज्जंति, वाणमंतर० एवं सव्वदेवेसु उववाएयव्वा, वक्कंतीभेएणं जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति ।

११ प्रश्न-धम्मदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ? किं णेरइएहिंतो० ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ उत्तर-एवं वक्कंतीभेएणं सव्वेसु उववाएयव्वा जाव 'सव्वट्ठसिद्ध' त्ति । णवरं तमा-अहेसत्तमाए णो उववाओ तेउ-वाउ-असंखिज्जवासाउयअकम्मभूमग-अंतरदीवगवज्जेसु ।

१२ प्रश्न-देवाहिदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति, किं णेरइएहिंतो उववज्जंति-पुच्छा ।

१२ उत्तर-गोयमा ! णेरइएहिंतो उववज्जंति, णो तिरि०, णो मणु० देवेहिंतो वि उववज्जंति ।

१३ प्रश्न-जइ णेरइएहिंतो० ?

१३ उत्तर-एवं तिसु पुढवीसु उववज्जंति सेसाओ खोडेयव्वाओ ।

१४ प्रश्न-जइ देवेहिंतो० ?

१४ उत्तर-वेमाणिएसु सव्वेसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति, सेसा खोडेयव्वा ।

१५ प्रश्न-भावदेवा णं भंते ! कओहिंतो उववज्जंति ?

१५ उत्तर-एवं जहा वक्कंतीए भवणवासीणं उववाओ तहा भाणियव्वो ।

कठिन शब्दार्थ-खोडेयव्वा-निषेध करना चाहिये ।

७ प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्य देव किस गति से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते है, अथवा तिर्यञ्चों, मनुष्यों या देवों से

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आकर उत्पन्न होते हैं ?

७ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिकों, तिर्यञ्चों, मनुष्यों और देवों से आकर उत्पन्न होते हैं। यहां प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद में कहे अनुसार भेद (विशेषता) कहना चाहिये। उन सभी के उत्पत्ति के विषय में अनुत्तरौपपातिक तक कहना चाहिये। इसमें इतनी विशेषता है कि असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले अकर्मभूमि और अन्तरद्वीप के जीव तथा सर्वार्थसिद्ध के जीवों को छोड़कर यावत् अपराजित देवों (भवनपति से लगाकर अपराजित नाम के चौथे अनुत्तर विमान तक) से आकर उत्पन्न होते हैं, परन्तु सर्वार्थसिद्ध के देवों से आकर उत्पन्न नहीं होते।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! नरदेव कहाँ से आकर उत्पन्न होते हैं, क्या नैरयिक, तिर्यंच, मनुष्य या देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ?

८ उत्तर-हे गौतम ! वे नैरयिक और देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तिर्यंच और मनुष्यों से आकर उत्पन्न नहीं होते।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या रत्नप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी के नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ?

९ उत्तर-हे गौतम ! वे रत्नप्रभा पृथ्वी के नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, किंतु शर्कराप्रभा यावत् अधःसप्तम पृथ्वी के नैरयिकों से नहीं।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! यदि वे देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक देवों से आकर उत्पन्न होते हैं ?

१० उत्तर-हे गौतम ! वे भवनवासी, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक-सभी देवों से आकर उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार सभी देवों के विषय में यावत् सर्वार्थसिद्ध पर्यंत, व्युत्क्रान्ति पद में कथित विशेषता पूर्वक उपपात कहना चाहिये।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! धर्मदेव नैरयिक आदि किस गति से आकर उत्पन्न होते हैं ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

११ उत्तर-हे गौतम ! यह सभी वर्णन व्युत्क्रान्ति पद में कथित भेद सहित यावत् सर्वार्थसिद्ध तक उपपात कहना चाहिये, परन्तु इतनी विशेषता है कि तमःप्रभा और अधःसप्तम पृथ्वी से तथा तेउकाय, वायुकाय, असंख्यात वर्ष वाले कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज मनुष्य तथा तिर्यंचों से आकर धर्मदेव उत्पन्न नहीं होते हैं।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! देवाधिदेव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं ? क्या नैरयिकादि चारों गति से आकर उत्पन्न होते हैं ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक और देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तिर्यंच और मनुष्य गति से आकर उत्पन्न नहीं होते।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या रत्नप्रभा आदि के नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं ?

१३ उत्तर-हे गौतम ! प्रथम तीन पृथ्वियों से आकर उत्पन्न होते हैं, शेष पृथ्वियों का निषेध है।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि देवों से आकर उत्पन्न होते हैं, तो क्या भवनपति आदि से आकर उत्पन्न होते हैं ?

१४ उत्तर-हे गौतम ! सभी वैमानिक देवों से यावत् सर्वार्थ सिद्ध से आकर उत्पन्न होते हैं। शेष देवों का निषेध करना चाहिये।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेव किस गति से आकर उत्पन्न होते हैं ?

१५ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद में जिस प्रकार भवनवासियों का उपपात कहा है, उसी प्रकार यहां कहना चाहिये।

विवेचन-भव्य द्रव्यदेव की उत्पत्ति में असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज तथा सर्वार्थ सिद्ध के देवों का निषेध किया है, इसका कारण यह है कि असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले जीव तथा अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज तो सीधे भाव देवों में उत्पन्न होते हैं, किन्तु भव्यद्रव्यदेवों (मनुष्य तिर्यञ्च) में उत्पन्न नहीं होते और सर्वार्थसिद्ध के देव तो भव्यद्रव्य सिद्ध हैं। अर्थात् वे तो मनुष्यभव करके सिद्ध हो जाते हैं, अतः वे मनुष्य में उत्पन्न होकर भी भव्यद्रव्यदेवों में उत्पन्न नहीं होते।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तमःप्रभा (छठी नरक) नरक से निकले हुए जीव मनुष्य-भव प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु चारित्र प्राप्त नहीं कर सकते। अधःसप्तम पृथ्वी, तेउकाय, वायुकाय, असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले कर्मभूमिज, अकर्मभूमिज और अन्तरद्वीपज मनुष्य तथा तिर्यञ्च-इनसे निकले हुए जीव तो मनुष्य-भव भी प्राप्त नहीं कर सकते। अतएव वे धर्मदेव(चारित्रयुक्त अनगार) नहीं हो सकते।

पहली, दूसरी और तीसरी नरक से निकले हुए जीव तीर्थंकर पद प्राप्त कर सकते हैं। शेष चार पृथ्वियों से निकले हुए जीव तीर्थंकर नहीं हो सकते। अतः आगे की पृथ्वियों का निषेध किया गया है।

बहुत से स्थानों से आकर जीव भवनपति देवपने उत्पन्न होते हैं, क्योंकि उनमें असंज्ञी जीव भी उत्पन्न होते हैं, इसलिये यहां भवनपति सम्बन्धी उपपात का कथन किया है।

१६ प्रश्न-भवियदव्वदेवाणं भंते! केवइयं कालं ठिई पण्णत्ता ?

१६ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं।

१७ प्रश्न-णरदेवाणं पुच्छा।

१७ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं सत्त वाससयाइं, उक्कोसेणं चउरासीई पुव्वसयसहस्साइं।

१८ प्रश्न-धम्मदेवाणं भंते ! पुच्छा।

१८ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी।

१९ प्रश्न-देवाहिदेवाणं पुच्छा।

१९ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं बावत्तरिं वासाइं, उक्कोसेणं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चउरासीइं पुव्वसयसहस्साइं ।

२० प्रश्न-भावदेवाणं पुच्छा ।

२० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्य देवों की स्थिति कितने काल की कही है ।

१६ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम ।

१७ प्रश्न-हे भगवन् ! नरदेवों की स्थिति कितने काल की है ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य सात सौ वर्ष और उत्कृष्ट चौरासी लाख पूर्व की है ।

१८ प्रश्न-हे भगवन् ! धर्मदेवों की स्थिति कितने काल की है ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट देशोनपूर्वकोटि ।

१९ प्रश्न-हे भगवन् ! देवाधिदेवों की स्थिति कितने काल की है ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य बहत्तर वर्ष और उत्कृष्ट चौरासी लाख पूर्व की है ।

२० प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेवों की स्थिति कितने काल की है ?

२० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य दस हजार वर्ष और उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की है ।

विवेचन-अन्तर्मुहूर्त की आयुष्यवाले पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, देवरूप में उत्पन्न होते हैं, इसलिये भव्यद्रव्यदेव की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त की कही गई है । तीन पल्योपम की स्थिति वाले देवकुरु और उत्तरकुरु के मनुष्य और तिर्यञ्च भी देव होते हैं, इसलिये भव्य-द्रव्यदेव की उत्कृष्ट स्थिति तीन पल्योपम की है ।

नरदेव (चक्रवर्ती) की जघन्य स्थिति सात सौ वर्ष की होती है । ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती की आयु इतनी ही थी । उत्कृष्ट स्थिति चौरासी लाख पूर्व की होती है । भरत चक्रवर्ती

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की आयु इतनी ही थी ।

कोई भी मनुष्य अन्तर्मुहूर्त आयुष्य शेष रहने पर चारित्र स्वीकार करे तो, उसकी अपेक्षा धर्मदेव की जघन्य स्थिति अन्तर्मुहूर्त को कही गई है । कोई पूर्वकोटि वर्ष की आयुष्यवाला मनुष्य, सातिरेक आठ वर्ष की उम्र में चारित्र स्वीकार करे । उसकी अपेक्षा धर्मदेव की उत्कृष्ट स्थिति देशोनपूर्वकोटि कही गई है । पूर्वकोटि वर्ष से अधिक की आयुष्य वाला मनुष्य, चारित्र स्वीकार नहीं कर सकता ।

देवाधिदेव की जघन्य स्थिति बहत्तर वर्ष की है । चरम तीर्थपति भ० महावीर-स्वामी की आयु इतनी ही थी । उत्कृष्ट स्थिति चौरासी लाख पूर्व की होती है । प्रथम तीर्थंकर भ० ऋषभदेव की आयु इतनी ही थी ।

२१ प्रश्न-भवियदव्वदेवा णं भंते ! किं एगत्तं पभू विउव्वित्तए, पुहुत्तं पभू विउव्वित्तए ?

२१ उत्तर-गोयमा ! एगत्तं पि पभू विउव्वित्तए, पुहुत्तं पि पभू विउव्वित्तए, एगत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवं वा जाव पंचिंदियरूवं वा, पुहुत्तं विउव्वमाणे एगिंदियरूवाणि वा, जाव पंचिंदियरूवाणि वा, ताइं संखेज्जाणि वा असंखेज्जाणि वा, संबद्धाणि वा असंबद्धाणि वा, सरिसाणि वा असरिसाणि वा विउव्वंति, विउव्वित्ता तओ पच्छा अप्पणो जहिच्छियाइं कज्जाइं करेंति, एवं णरदेवा वि, एवं धम्मदेवा वि ।

२२ प्रश्न-देवाहिदेवाणं पुच्छा ?

२२ उत्तर-गोयमा ! एगत्तं पि पभू विउव्वित्तए, पुहुत्तं पि पभू विउव्वित्तए, णो चेव णं संपत्तीए विउव्विंसु वा विउव्विंति वा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

विउव्विस्संति वा ।

२३ प्रश्न-भावदेवाणं पुच्छा ।

२३ उत्तर-जहा भवियदव्वदेवा ।

कठिन शब्दार्थ-पुहुत्तं-पृथक्त्व-अनेक ।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव एक रूप अथवा अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

२१ उत्तर-हां गौतम ! भव्यद्रव्यदेव एक रूप और अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है । एक रूप की विकुर्वणा करता हुआ एक एकेन्द्रिय रूप यावत् एक पञ्चेन्द्रियरूप की विकुर्वणा करता है । अथवा अनेक रूपों की विकुर्वणा करता हुआ अनेक एकेंद्रिय रूप यावत् अनेक पञ्चेन्द्रिय रूप विकुर्वणा करता है । वे रूप संख्यात या असंख्यात, सम्बद्ध या असम्बद्ध, समान या असमान होते हैं । उनसे वह अपना यथेष्ट कार्य करता है । इसी प्रकार नरदेव और धर्मदेव के विषय में भी समझना चाहिये ।

२२ प्रश्न-हे भगवन् ! देवाधिदेव एक रूप या अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! एक रूप और अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है । परन्तु उन्होंने (शक्ति होते हुए भी उत्सुकता के अभाव से) सम्प्राप्ति द्वारा कभी विकुर्वणा नहीं की, करते भी नहीं और करेंगे भी नहीं ।

२३ प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेव एक रूप या अनेक रूपों की विकुर्वणा करने में समर्थ है ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार भव्यद्रव्यदेव का कथन किया है, उसी प्रकार इनका भी जानना चाहिये ।

विवेचन-वे ही भव्यद्रव्यदेव (-मनुष्य और तिर्यंच) एक या अनेक रूपों की विकुर्वणा कर सकते हैं, जो वैक्रिय-लब्धि सम्पन्न हों ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२४ प्रश्न-भवियदव्वदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति कहिं उववज्जंति ? किं णेरइएसु उववज्जंति जाव देवेसु उववज्जंति ?

२४ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइएसु उववज्जंति, णो तिरि० णो मणु० देवेसु उववज्जंति, जइ देवेसु उववज्जंति सव्वदेवेसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धत्ति ।

२५ प्रश्न-णरदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता-पुच्छा ।

२५ उत्तर-गोयमा ! णेरइएसु उववज्जंति, णो तिरि० णो मणु० णो देवेसु उववज्जंति, जइ णेरइएसु उववज्जंति० सत्तसु वि पुढवीसु उववज्जंति ।

२६ प्रश्न-धम्मदेवा णं भंते ! अणंतरं०-पुच्छा ।

२६ उत्तर-गोयमा ! णो णेरइएसु उववज्जंति, णो तिरि० णो मणु० देवेसु उववज्जंति ।

२७ प्रश्न-जइ देवेसु उववज्जंति किं भवणवासि०-पुच्छा ।

२७ उत्तर-गोयमा ! णो भवणवासिदेवेसु उववज्जंति, णो वाणमंतर०, णो जोइसिय०, वेमाणियदेवेसु उववज्जंति, सव्वेसु वेमाणिएसु उववज्जंति जाव सव्वट्ठसिद्धअणुत्तरोववाइएसु-जाव उववज्जंति, अत्थेगइया सिज्झंति जाव अंतं करेंति ।

२८ प्रश्न-देवाहिदेवा अणंतरं उव्वट्टित्ता कहिं गच्छंति, कहिं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उववज्जंति ?

२८ उत्तर-गोयमा ! सिज्झंति जाव अंतं करेंति ।

२९ प्रश्न-भावदेवा णं भंते ! अणंतरं उव्वट्टित्ता-पुच्छा ।

२९ उत्तर-जहा वक्कंतीए असुरकुमाराणं उववट्टणा तहा भाणियव्वा ।

कठिन शब्दार्थ-उव्वट्टित्ता-निकल कर ।

भावार्थ-२४ प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव मरकर तुरन्त नैरयिकों में यावत् देवों में उत्पन्न होते हैं ?

२४ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक, तिर्यंच और मनुष्यों में उत्पन्न नहीं होते, देवों में उत्पन्न होते हैं और देवों में भी सभी देवों में यावत् सर्वार्थसिद्ध तक उत्पन्न होते हैं ।

२५ प्रश्न-हे भगवन् ! नरदेव मरने के बाद तत्काल किस गति में उत्पन्न होते हैं ?

२५ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिकों में उत्पन्न होते हैं । तिर्यंच, मनुष्य और देवों में उत्पन्न नहीं होते । नैरयिकों में भी सातों नरक पृथ्वियों में उत्पन्न होते हैं ।

२६ प्रश्न-हे भगवन् ! धर्मदेव आयु पूर्ण कर तत्काल कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

२६ उत्तर-हे गौतम ! वे नरक, तिर्यंच और मनुष्यों में उत्पन्न नहीं होते, देवों में उत्पन्न होते हैं ।

२७ प्रश्न-हे भगवन् ! यदि धर्मदेव, देवों में उत्पन्न होते हैं, तो भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी या वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं ?

२७ उत्तर-हे गौतम ! भवनपति, वाणव्यन्तर और ज्योतिषी देवों में

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उत्पन्न नहीं होते, वैमानिक देवों में उत्पन्न होते हैं। वैमानिकों में वे सभी वैमानिक देवों में यावत् सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरौपपातिक देवों में उत्पन्न होते हैं और कोई-कोई धर्मदेव सिद्ध होकर समस्त दुःखों का अन्त कर देते हैं।

२८ प्रश्न-हे भगवन् ! देवाधिदेव आयु पूर्ण कर तत्काल कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

२८ उत्तर-हे गौतम ! वे सिद्ध होते हैं यावत् समस्त दुःखों का अन्त करते हैं ?

२९ प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेव तत्काल आयु पूर्ण कर कहाँ उत्पन्न होते हैं ?

२९ उत्तर-हे गौतम ! प्रज्ञापना सूत्र के छठे व्युत्क्रान्ति पद में, जिस प्रकार असुरकुमारों की उद्वर्तना कही है, उसी प्रकार यहाँ भावदेवों की भी उद्वर्तना कहनी चाहिये।

विवेचन-यद्यपि कोई चक्रवर्ती देवों में भी उत्पन्न होते हैं, तथापि वे नरदेवपन (चक्रवर्ती पद) छोड़ कर, धर्मदेव पद स्वीकार करके साधु बने, तभी देवों में या सिद्धों में उत्पन्न होते हैं। काम-भोगों का त्याग किये बिना-नरदेव अवस्था में तो वे नरक में ही उत्पन्न होते हैं।

३० प्रश्न-भवियदव्वदेवे णं भंते ! 'भवियदव्वदेवे' त्ति कालओ केवचिरं होइ ?

३० उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं तिण्णि पलिओवमाइं, एवं जच्चेव ठिई सच्चेव संचिट्ठणा वि जाव भावदेवस्स णवरं धम्मदेवस्स जहण्णेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं देसूणा पुव्वकोडी।

३१ प्रश्न-भवियदव्वदेवस्स णं भंते ! केवइयं कालं अंतरं होइ ?

३१ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं दसवाससहस्साइं अंतोमुहुत्तमब्भहियाइं, उक्कोसेणं अणंतं कालं-वणस्सइकालो ।

३२ प्रश्न-णरदेवाणं पुच्छा ।

३२ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं साइरेगं सागरोवमं, उक्कोसेणं अणंतंकालं-अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं ।

३३ प्रश्न-धम्मदेवस्स णं पुच्छा ।

३३ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं पलिओवमपुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं, जाव अवड्ढं पोग्गलपरियट्टं देसूणं ।

३४ प्रश्न-देवाहिदेवाणं पुच्छा ।

३४ उत्तर-गोयमा ! णत्थि अंतरं ।

३५ प्रश्न-भावदेवस्स णं पुच्छा ।

३५ उत्तर-गोयमा ! जहण्णेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेणं अणंतं कालं-वणस्सइकालो ।

कठिन शब्दार्थ-संचिट्ठणा-संस्थिति ।

भावार्थ-३० प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव, भव्यद्रव्यदेव रूप से कितने काल तक रहता है ?

३० उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट तीन पल्योपम तक रहता है । जिस प्रकार भवस्थिति कही, उसी प्रकार संस्थिति भी कहनी चाहिये । विशेषता यह कि धर्मदेव जघन्य एक समय और उत्कृष्ट देशोन पूर्वकोटि वर्ष तक रहता है ।

३१ प्रश्न-हे भगवन् ! भव्यद्रव्यदेव का अंतर कितने काल का होता है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३१ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष तक और उत्कृष्ट अनन्तकाल-वनस्पति काल पर्यन्त अन्तर होता है ।

३२ प्रश्न-हे भगवन् ! नरदेव का अन्तर कितने काल का होता है ?

३२ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य एक सागरोपम से कुछ अधिक और उत्कृष्ट अनन्तकाल, देशोन अपार्द्ध पुद्गल-परावर्तन पर्यन्त अन्तर होता है ।

३३ प्रश्न-हे भगवन् ! धर्मदेव का अन्तर कितने काल का होता है ?

३३ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य पल्योपम पृथक्त्व और उत्कृष्ट अनन्तकाल, देशोन अपार्द्ध पुद्गल-परावर्त्तन पर्यन्त होता है ।

३४ प्रश्न-हे भगवन् ! देवाधिदेव का अन्तर कितने काल का होता है ?

३४ उत्तर-हे गौतम ! देवाधिदेव का अन्तर नहीं होता ।

३५ प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेव का अन्तर कितने काल का होता है ?

३५ उत्तर-हे गौतम ! जघन्य अन्तर्मुहूर्त और उत्कृष्ट अनन्तकाल, वनस्पतिकाल पर्यन्त अन्तर होता है ।

विवेचन--कोई धर्मदेव, अशुभ भाव को प्राप्त करके फिर पीछा एक समय मात्र शुभ भाव को प्राप्त कर तुरन्त मृत्यु को प्राप्त होता है । इसलिये धर्मदेव का जघन्य संचिट्ठणा काल परिणामों की अपेक्षा से एक समय का कहा गया है ।

कोई भव्यद्रव्यदेव होकर दस हजार वर्ष की स्थिति वाले व्यन्तरादि देवों में उत्पन्न हो गया । वहाँ से चवकर शुभ पृथ्वी आदि में चला गया । वहाँ जाकर अन्तर्मुहूर्त तक रहा । फिर भव्यद्रव्यदेव रूप से उत्पन्न हो गया । इस प्रकार अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अन्तर होता है ।

शंका-देवलोक से चवकर तुरन्त भव्यद्रव्यदेव रूप से उत्पत्ति का सम्भव होने से दस हजार वर्ष का अन्तर होता है, परन्तु अन्तर्मुहूर्त अधिक कैसे होता है ?

समाधान-'सर्व जघन्य आयुष्य वाला देव, वहाँ से चवकर शुभ पृथ्वी आदि में उत्पन्न होकर भव्यद्रव्यदेव (तिर्यञ्च पञ्चेन्द्रिय) में उत्पन्न होता है'-ऐसा प्राचीन टीकाकार का आशय मालूम होता है। उस मत के अनुसार अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अंतर होता है । कोई आचार्य इसका समाधान इस प्रकार भी करते हैं-जिसने देव का आयुष्य बाँध लिया है, उसको यहां 'भव्यद्रव्यदेव' रूप से समझना चाहिये । इससे दस हजार वर्ष

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

की स्थिति वाला देव, देवलोक से चवकर भव्यद्रव्यदेवपने उत्पन्न होता है और अन्तर्मुहूर्त के बाद आयुष्य का बंध करता है। इसलिये अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का अन्तर होता है। तथा अपर्याप्त जीव देवगति में उत्पन्न नहीं हो सकता, अतः पर्याप्त होने के बाद ही उसे भव्यद्रव्यदेव गिनना चाहिये। इस प्रकार गिनने से जघन्य अन्तर अन्तर्मुहूर्त अधिक दस हजार वर्ष का होता है। यह मान्यता विशेष संगत ज्ञात होती है। क्योंकि चौबीसवें गमा शतक में जघन्य स्थिति वाले देवों का तिर्यञ्च पंचेन्द्रिय में भव्यद्रव्यदेवपने उत्पन्न होना बताया है। इसलिए यहाँ पर 'बद्धायु' को ही भव्यद्रव्यदेव बताया है। स्थिति द्वार में एक भविक भव्यद्रव्यदेव की स्थिति बताई है। भव्यद्रव्यदेव मरकर देव होता है और वहाँ से चवकर वनस्पति आदि में अनन्त काल तक रहकर फिर भव्यद्रव्यदेव होता है। इस अपेक्षा से उत्कृष्ट अन्तर अनन्त काल का होता है।

कोई नरदेव (चक्रवर्ती) कामभोगों में आसक्त रहता हुआ यहाँ से मरकर पहली नरक में उत्पन्न हो। वहाँ एक सागरोपम की आयुष्य भोगकर पुनः नरदेव हो और जबतक चक्ररत्न उत्पन्न न हो, तबतक उसका जघन्य अन्तर एक सागरोपम से कुछ अधिक होता है। कोई सम्यग्दृष्टि जीव चक्रवर्ती पद प्राप्त करे, फिर वह देशोन अपार्द्ध पुद्गल-परावर्तन काल तक संसार में परिभ्रमण करे, इसके बाद सम्यक्त्व प्राप्त कर चक्रवर्तीपन प्राप्त करे और संयम पालकर मोक्ष जाय, इस अपेक्षा से नरदेव का उत्कृष्ट अन्तर देशोन अपार्द्ध पुद्गलपरावर्तन कहा गया है।

कोई धर्मदेव (चारित्र युक्त साधु) सौधर्म देवलोक में पल्योपम पृथक्त्व की आयुष्य वाला देव होवे और वहाँ से चवकर पुनः मनुष्य भव प्राप्त करे। वहाँ वह साधिक आठ वर्ष की उम्र में चारित्र स्वीकार करे, इस अपेक्षा से धर्मदेव का जघन्य अन्तर पल्योपम पृथक्त्व कहा गया है।

देवाधिदेव (तीर्थंकर भगवान्) मोक्ष में जाते हैं। इसलिये उनका अन्तर नहीं होता है।

३६ प्रश्न-एएसि णं भंते ! भवियदव्वदेवाणं, णरदेवाणं, जाव भावदेवाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

३६ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा णरदेवा, देवाहिदेवा संखेज्ज-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

गुणा, धम्मदेवा संखेज्जगुणा, भवियदव्वदेवा असंखेज्जगुणा, भावदेवा असंखेज्जगुणा ।

३७ प्रश्न-एएसि णं भंते ! भावदेवाणं भवणवासीणं, वाणमंतराणं, जोइसियाणं, वेमाणियाणं सोहम्मगाणं, जाव अच्चुयगाणं, गेवेज्जगाणं, अणुत्तरोववाइयाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

३७ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवा अणुत्तरोववाइया भावदेवा, उवरिमगेवेज्जा भावदेवा संखेज्जगुणा, मज्झिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा, हेट्ठिमगेवेज्जा संखेज्जगुणा, अच्चुए कप्पे देवा संखेज्जगुणा, जाव आणयकप्पे देवा संखेज्जगुणा, एवं जहा जीवाभिगमे तिविहे देवपुरिसे अप्पाबहुयं जाव जोइसिया भावदेवा असंखेज्जगुणा ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति ❀

॥ णवमो उद्देसओ समत्तो ॥

भावार्थ-३६ प्रश्न-हे भगवन् ! इन भव्यद्रव्यदेव, नरदेव यावत् भावदेव में से कौन किससे अल्प, बहुत या विशेषाधिक हैं ?

३६ उत्तर-हे गौतम ! सबसे थोड़े नरदेव होते हैं, उनसे देवाधिदेव संख्यात गुण, उनसे धर्मदेव संख्यात गुण, उनसे भव्यद्रव्यदेव असंख्यात गुण और उनसे भावदेव असंख्यात गुण होते हैं ।

३७ प्रश्न-हे भगवन् ! भावदेव, भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी, वैमा-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

निक, सौधर्म, ईशान यावत् अच्युत, ग्रैवेयक और अनुत्तरौपपातिक-इनमें कौन किससे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं ?

३७ उत्तर-हे गौतम ! सबसे थोड़े अनुत्तरौपपातिक भावदेव हैं, उनसे ऊपर के ग्रैवेयक के भावदेव संख्यात गुण हैं, उनसे मध्यम के भावदेव संख्यात गुण हैं, उनसे नीचे के ग्रैवेयक के भावदेव संख्यात गुण हैं, उनसे अच्युतकल्प के देव संख्यात गुण हैं, यावत् आनतकल्प के देव संख्यात गुण हैं । जिस प्रकार जीवाभिगम सूत्र की दूसरी प्रतिपत्ति के त्रिविध जीवाधिकार में देव पुरुषों का अल्पबहुत्व कहा है, उसी प्रकार यहाँ भी यावत् 'ज्योतिषी भावदेव असंख्यात गुण हैं'-तक कहना चाहिए ।

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है-ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन-नरदेव सबसे थोड़े हैं । इसका कारण यह है कि प्रत्येक अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी काल में प्रत्येक भरत और ऐरवत क्षेत्र में, बारह-बारह ही उत्पन्न होते हैं और महाविदेह क्षेत्रों के विजयों में वासुदेवों के होने से सभी विजयों में वे एक साथ उत्पन्न नहीं होते ।

नरदेवों से देवाधिदेव संख्यात गुण हैं । इसका कारण यह है कि भरतादि क्षेत्रों में वे चक्रवर्तियों से दुगुने-दुगुने होते हैं और महाविदेह क्षेत्र के विजयों में वासुदेवों की मौजूदगी में भी वे उत्पन्न होते हैं ।

देवाधिदेवों से धर्मदेव संख्यात गुण हैं । इसका कारण यह है कि धर्मदेव एक ही समय में जघन्य दो हजार करोड़ और उत्कृष्ट नौ हजार करोड़ पाये जा सकते हैं ।

धर्मदेवों से भव्यद्रव्यदेव असंख्यात गुण हैं । इसका कारण यह है कि देवगति में जाने वाले देशविरत, अविरत सम्यग्दृष्टि आदि (तिर्यंच पंचेन्द्रिय) असंख्यात होते हैं ।

भव्यद्रव्यदेवों से भावदेव असंख्यात गुण हैं । इसका कारण यह है कि भावदेव स्वभावतः ही असंख्यात हैं ।

भावदेवों के अल्प-बहुत्व में जीवाभिगम सूत्र के त्रिविध जीवाधिकार का जो अतिदेश किया है, वहाँ इस प्रकार अल्प-बहुत्व कहा है-आरणकल्प से सहस्रार कल्प में भावदेव असंख्यात गुण हैं, उससे महाशुक्र में असंख्यात गुण, उससे लान्तक में असंख्यात गुण,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उससे ब्रह्मदेवलोक में असंख्यात गुण, उससे माहेन्द्र में असंख्यात गुण, उससे सनत्कुमार में असंख्यात गुण, उससे ईशान में असंख्यात गुण, उससे सौधर्म में संख्यात गुण, उससे भवनपति देव असंख्यात गुण और उससे वाणव्यन्तर देव असंख्यात गुण हैं।

॥ बारहवें शतक का नौवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

शतक १२ उद्देशक १०

आत्मा के आठ भेद और उनका सम्बन्ध

१ प्रश्न-कइविहा णं भंते ! आया पण्णत्ता ?

१ उत्तर-गोयमा ! अट्ठविहा आया पण्णत्ता, तं जहा-१ दवियाया २ कसायाया ३ जोगाया ४ उवओगाया ५ णाणाया ६ दंसणाया ७ चरित्ताया ८ वीरियाया।

२ प्रश्न-जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स कसायाया, जस्स कसायाया तस्स दवियाया ?

२ उत्तर-गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय णत्थि, जस्स पुण कसायाया तस्स दवियाया णियमं अत्थि।

३ प्रश्न-जस्स णं भंते ! दवियाया तस्स जोगाया ?

३ उत्तर-एवं जहा दवियाया कसायाया भणिया तहा दवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

याया जोगाया भाणियव्वा ।

४ प्रश्न-जस्स णं भंते ! दवियाया, तस्स उवओगाया-एवं सव्वत्थ पुच्छा भाणियव्वा ।

४ उत्तर-गोयमा ! जस्स दवियाया तस्स उवओगाया णियमं अत्थि, जस्स वि उवओगाया तस्स वि दवियाया णियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स णाणाया भयणाए जस्स पुण णाणाया तस्स दवियाया णियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स दंसणाया णियमं अत्थि, जस्स वि दंसणाया तस्स दवियाया णियमं अत्थि, जस्स दवियाया तस्स चरित्ताया भयणाए, जस्स पुण चरित्ताया तस्स दवियाया णियमं अत्थि, एवं वीरियायाए वि समं ।

कठिन शब्दार्थ-सव्वत्थ-सर्वत्र-सभी जगह ।

भावार्थ-१ प्रश्न-हे भगवन् ! आत्मा कितने प्रकार की कही है ?

१ उत्तर-हे गौतम ! आत्मा आठ प्रकार की कही है । यथा-द्रव्य आत्मा, कषाय आत्मा, योग आत्मा, उपयोग आत्मा, ज्ञान आत्मा, दर्शन आत्मा, चारित्र आत्मा और वीर्य आत्मा ।

२ प्रश्न-हे भगवन् ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके कषायात्मा होती है और जिसके कषायात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा होती है ?

२ उत्तर-हे गौतम ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके कषायात्मा कदाचित् होती है और कदाचित् नहीं भी होती, परन्तु जिसके कषायात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है ।

३ प्रश्न-हे भगवन् ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके योगात्मा होती है और जिसके योगात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा होती है ?

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

३ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार द्रव्यात्मा और कषायात्मा का सम्बन्ध कहा है, उसी प्रकार द्रव्यात्मा और योगात्मा का सम्बन्ध कहना चाहिये।

४ प्रश्न-हे भगवन् ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके उपयोग आत्मा होती है और जिसके उपयोगात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा होती है ? इस प्रकार सभी आत्माओं के सम्बन्ध में प्रश्न करना चाहिये।

४ उत्तर-हे गौतम ! जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा अवश्य होती है और जिसके उपयोगात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा भजना (विकल्प) से होती है। अर्थात् कदाचित् होती है, कदाचित् नहीं भी होती। जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है। जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा भजना से होती है और जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा भजना से होती है और जिसके वीर्यात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है।

५ प्रश्न-जस्स णं भंते ! कसायाया तस्स जोगाया-पुच्छा।

५ उत्तर-गोयमा ! जस्स कसायाया तस्स जोगाया णियमं अत्थि, जस्स पुण जोगाया तस्स कसायाया सिय अत्थि सिय णत्थि, एवं उवओगायाए वि समं कसायाया णेयव्वा, कसायाया य णाणाया य परोप्परं दो वि भइयव्वाओ, जहा कसायाया य उवओगाया य तहा कसायाया य दंसणाया य कसायाया य चरित्ताया य दो वि परोप्परं भइयव्वाओ, जहा कसायाया य जोगाया य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

तहा कसायाया य वीरियाया य भाणियव्वाओ, एवं जहा कसायाए वत्तव्वया भणिया तहा जोगायाए वि उवरिमाहिं समं भाणियव्वाओ। जहा दवियायाए वत्तव्वया भणिया तहा उवयोगायाए वि उवरिल्लाहिं समं भाणियव्वा। जस्स णाणाया तस्स दंसणाया णियमं अत्थि, जस्स पुण दंसणाया तस्स णाणाया भयणाए, जस्स णाणाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय णत्थि, जस्स पुण चरित्ताया तस्स णाणाया णियमं अत्थि, णाणाया वीरियाया दो वि परोप्परं भयणाए। जस्स दंसणाया तस्स उवरिमाओ दो वि भयणाए, जस्स पुण ताओ तस्स दंसणाया णियमं अत्थि। जस्स चरित्ताया तस्स वीरियाया णियमं अत्थि, जस्स पुण वीरियाया तस्स चरित्ताया सिय अत्थि सिय णत्थि।

६ प्रश्न-एयासि णं भंते ! दवियायाणं, कसायायाणं जाव वीरियायाण य कयरे कयरेहिंतो जाव विसेसाहिया वा ?

६ उत्तर-गोयमा ! सव्वत्थोवाओ चरित्तायाओ, णाणायाओ अणंतगुणाओ, कसायाओ अणंतगुणाओ, जोगायाओ विसेसाहियाओ, वीरियायाओ विसेसाहियाओ, उवयोग-दविय-दंसणायाओ तिण्णि वि तुल्लाओ विसेसाहियाओ।

कठिन शब्दार्थ--परोप्परं--परस्पर।

भावार्थ--५ प्रश्न-हे भगवन् ! जिसके कषायात्मा होती है, उसके

योगात्मा होती है, इत्यादि प्रश्न।

५ उत्तर-हे गौतम ! जिसके कषायात्मा होती है, उसके योगात्मा अवश्य होती है, किंतु जिसके योगात्मा होती है, उसके कषायात्मा कदाचित् होती है और कदाचित् नहीं होती। इसी प्रकार उपयोगात्मा के साथ कषायात्मा का संबंध कहना चाहिये। तथा कषायात्मा और ज्ञानात्मा, इन दोनों का परस्पर सम्बन्ध भजना से कहना चाहिये। कषायात्मा और उपयोगात्मा के सम्बंध के समान कषायात्मा और दर्शनात्मा का सम्बन्ध कहना चाहिये तथा कषायात्मा और चारित्रात्मा का परस्पर सम्बन्ध भजना से कहना चाहिये। कषायात्मा और योगात्मा के सम्बन्ध के समान कषायात्मा और वीर्यात्मा का सम्बन्ध कहना चाहिये। जिस प्रकार कषायात्मा के साथ अन्य छह आत्माओं की वक्तव्यता कही है, उसी प्रकार योगात्मा के साथ आगे की पांच आत्माओं की वक्तव्यता कहनी चाहिये। जिस प्रकार द्रव्यात्मा की वक्तव्यता कही, उसी प्रकार उपयोगात्मा की आगे की चार आत्माओं के साथ वक्तव्यता कहनी चाहिये। जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है और जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा भजना से होती है। जिसके ज्ञानात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा भजना से होती है और जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा अवश्य होती है। ज्ञानात्मा और वीर्यात्मा-इन दोनों का पारस्परिक सम्बन्ध भजना से कहना चाहिये। जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा और वीर्यात्मा-ये दोनों भजना से होती है। जिसके चारित्रात्मा और वीर्यात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है। जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा अवश्य होती है और जिसके वीर्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा कदाचित् होती है और कदाचित् नहीं भी होती।

६ प्रश्न-हे भगवन् ! द्रव्यात्मा, कषायात्मा यावत् वीर्यात्मा-इनमें से कौनसी आत्मा किससे अल्प यावत् विशेषाधिक है ?

६ उत्तर-हे गौतम ! सबसे थोड़ी चारित्रात्मा है, उससे ज्ञानात्मा

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अनंत गुण है, उससे कषायात्मा अनंत गुणी है, उससे योगात्मा विशेषाधिक है, उससे वीर्यात्मा विशेषाधिक है, उससे उपयोगात्मा, द्रव्यात्मा और दर्शनात्मा ये तीनों विशेषाधिक हैं और ये तीनों परस्पर तुल्य हैं।

विवेचन-जो निरन्तर दूसरी-दूसरी स्व-पर पर्यायों को प्राप्त करती रहती है, वह आत्मा है। अथवा जिसमें सदा उपयोग अर्थात् बोधरूप व्यापार पाया जाय, वह आत्मा है। उपयोग की अपेक्षा सामान्य रूप से सभी आत्माएं एक प्रकार की हैं, किन्तु विशिष्ट गुण और उपाधि को प्रधान मानकर आत्मा के आठ भेद बतलाये गये हैं। वे इस प्रकार हैं;-

१ द्रव्य आत्मा-त्रिकालवर्ती द्रव्यरूप आत्मा द्रव्यात्मा है। यह द्रव्यात्मा सभी जीवों के होती है।

२ कषाय आत्मा-क्रोध, मान, माया, लोभरूप कषाय से युक्त आत्मा-कषायात्मा है। उपशान्त-कषाय और क्षीण-कषाय आत्माओं के सिवाय शेष सभी संसारी जीवों के यह आत्मा होती है।

३ योग आत्मा-मन, वचन और काय के व्यापार को योग कहते हैं। इन योगों से युक्त आत्मा-योग-आत्मा कहलाती है। योग वाले सभी जीवों में यह आत्मा होती है। अयोगी केवली और सिद्धों के यह आत्मा नहीं होती।

४ उपयोग आत्मा-ज्ञान और दर्शन रूप उपयोग प्रधान आत्मा उपयोग आत्मा है। उपयोगात्मा सिद्ध और संसारी सभी जीवों के होती है।

५ ज्ञान आत्मा-विशेष अनुभव रूप सम्यग् ज्ञान से विशिष्ट आत्मा को ज्ञान आत्मा कहते हैं। ज्ञानात्मा सम्यग्दृष्टि जीवों के होती है।

६ दर्शन आत्मा-सामान्य अवबोधरूप दर्शन से विशिष्ट आत्मा को दर्शनात्मा कहते हैं। दर्शनात्मा सभी जीवों के होती है।

७ चारित्र आत्मा-चारित्र के विशिष्ट गुण से युक्त आत्मा को चारित्रात्मा कहते हैं। चारित्रात्मा विरति वालों के होती है।

८ वीर्य आत्मा-उत्थानादि रूप कारणों से युक्त वीर्य विशिष्ट आत्मा को वीर्यात्मा कहते हैं। यह सभी संसारी जीवों के होती है। यहाँ वीर्य से 'सकरण अकरण वीर्य' लिया जाता है। सिद्धों में वीर्यात्मा नहीं मानी गई है। क्योंकि वे कृतकार्य हो चुके हैं, अर्थात् उन्हें कोई कार्य करना शेष नहीं रहा है।

आत्मा के आठ भेदों में परस्पर क्या सम्बन्ध है? एक भेद में दूसरा भेद रहता है

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

या नहीं, इसका उत्तर निम्न प्रकार है :-

जिस जीव के द्रव्यात्मा होती है, उसके कषायात्मा होती भी है और नहीं भी होती। सकषायावस्था में द्रव्यात्मा के कषायात्मा होती है और उपशांत-कषाय और क्षीण-कषायावस्था में द्रव्यात्मा के कषायात्मा नहीं होती। किन्तु जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा नियम से होती है। क्योंकि द्रव्यात्मत्व अर्थात् जीवत्व के बिना कषायों का संभव नहीं है।

जिस जीव के द्रव्यात्मा होती है, उसके योगात्मा होती भी है और नहीं भी होती। सयोगी अवस्था में द्रव्यात्मा के योगात्मा होती है, किन्तु अयोगी अवस्था में द्रव्यात्मा के योगात्मा नहीं होती, परन्तु जिस जीव के योगात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा नियम से होती है, क्योंकि द्रव्यात्मा जीव रूप है और जीव के बिना योगों का संभव नहीं है।

जिस जीव के द्रव्यात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा नियम से होती है। और जिसके उपयोगात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा नियम से होती है। द्रव्यात्मा और उपयोगात्मा का परस्पर नित्य सम्बन्ध है। सिद्ध और संसारी सभी जीवों के द्रव्यात्मा भी है और उपयोगात्मा भी है। क्योंकि द्रव्यात्मा जीव रूप है और उपयोग उसका लक्षण है। इसलिए दोनों एक दूसरी में नियम से पाई जाती है।

जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है। क्योंकि सम्यग्दृष्टि द्रव्यात्मा के ज्ञानात्मा होती है और मिथ्यादृष्टि द्रव्यात्मा के ज्ञानात्मा (सम्यग्ज्ञान रूप) नहीं होती, किन्तु जिसके ज्ञानात्मा है, उसके द्रव्यात्मा नियम से है। क्योंकि द्रव्यात्मा के बिना ज्ञानात्मा संभव ही नहीं है।

जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा नियम से होती है। जैसे कि सिद्ध भगवान् को केवल-दर्शन होता है। जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा नियम से होती है। जैसे चक्षुदर्शनादि वाले के द्रव्यात्मा होती है। द्रव्यात्मा और उपयोगात्मा के समान द्रव्यात्मा और दर्शनात्मा में भी नित्य सम्बन्ध है।

जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा की भजना है, क्योंकि विरति वाले द्रव्यात्मा में ही चारित्रात्मा पाई जाती है, विरति रहित संसारी जीव और सिद्ध जीवों में द्रव्यात्मा होने पर भी चारित्रात्मा नहीं पाई जाती। जिस जीव के चारित्रात्मा होती है, उसके द्रव्यात्मा अवश्य होती है। क्योंकि द्रव्यात्मा के बिना चारित्र सम्भव ही नहीं।

जिसके द्रव्यात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा की भजना है, क्योंकि सकरण-अकरण वीर्य रहित

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिद्ध जीवों में द्रव्यात्मा तो है, किन्तु वीर्यात्मा नहीं। संसारी जीवों के द्रव्यात्मा और वीर्यात्मा दोनों ही हैं। जहां वीर्यात्मा है, वहां द्रव्यात्मा अवश्य होती है, वीर्यात्मा वाले सभी संसारी जीवों में द्रव्यात्मा होती ही है। सारांश यह है कि द्रव्यात्मा में कषायात्मा, योगात्मा, ज्ञानात्मा, चारित्रात्मा और वीर्यात्मा की भजना है, परन्तु उक्त आत्माओं में द्रव्यात्मा का रहना निश्चित है। द्रव्यात्मा उपयोगात्मा और दर्शनात्मा का परस्पर नित्य सम्बन्ध है। इस प्रकार द्रव्यात्मा के साथ शेष सात आत्माओं का सम्बन्ध है।

कषायात्मा के साथ आगे की छह आत्माओं का सम्बन्ध इस प्रकार है—

जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके योगात्मा अवश्य होती है, क्योंकि सकषायी आत्मा अयोगी नहीं होती। जिसके योगात्मा होती है, उसके कषायात्मा की भजना है, क्योंकि सयोगी आत्मा सकषायी और अकषायी दोनों प्रकार की होती है।

जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा अवश्य होती है, क्योंकि उपयोग रहित तो जड़ पदार्थ है और उस के कषायों का अभाव है। उपयोगात्मा के कषायात्मा की भजना है, क्योंकि ग्यारहवें से लेकर चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों में तथा सिद्ध जीवों में उपयोगात्मा तो है, परन्तु कषाय का अभाव है।

जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है, मिथ्यादृष्टि के कषायात्मा होते हुए भी ज्ञानात्मा नहीं होती। सकषायी सम्यग्दृष्टि के ज्ञानात्मा होती है। जिस जीव के ज्ञानात्मा होती है, उसके कषायात्मा की भजना है। ज्ञानी कषाय सहित भी होते हैं और कषाय रहित भी।

जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है। दर्शन रहित घटादि जड़ पदार्थों में कषायों का सर्वथा अभाव है। जिसके दर्शनात्मा होती है, उसके कषायात्मा की भजना है, क्योंकि दर्शनात्मा वाले जीव सकषायी और अकषायी दोनों प्रकार के होते हैं। जिस जीव के कषायात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा की भजना है और चारित्रात्मा वाले के भी कषायात्मा की भजना है, कषाय वाले जीव संयत और असंयत दोनों प्रकार के होते है। सामायिकादि चारित्र वालों के कषाय रहती है और यथाख्यात चारित्र वाले कषाय रहित होते हैं। जिस जीव के कषायात्मा है, उसके वीर्यात्मा अवश्य होती है। वीर्यरहित जीवों में कषायों का अभाव पाया जाता है। वीर्यात्मा वाले जीवों के कषायात्मा की भजना है। क्योंकि वीर्यात्मा वाले जीव सकषायी और

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

अकषायी दोनों प्रकार के होते हैं।

योगात्मा के साथ आगे की पांच आत्माओं का पारस्परिक सम्बन्ध इस प्रकार है:—

जिस जीव के योगात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा अवश्य होती है। सभी सयोगी जीवों में उपयोग होता ही है, किन्तु जिसके उपयोगात्मा होती है, उसके योगात्मा होती भी है और नहीं भी होती। चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी केवली और सिद्धात्माओं में उपयोगात्मा होते हुए भी योगात्मा नहीं है।

जिस जीव के योगात्मा होती है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है। मिथ्यादृष्टि जीवों में योगात्मा होते हुए भी ज्ञानात्मा नहीं होती। इसी प्रकार ज्ञानात्मा वाले जीव के भी योगात्मा की भजना है। चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी-केवली और सिद्ध जीवों में ज्ञानात्मा होते हुए भी योगात्मा नहीं होती।

जिस जीव के योगात्मा होती है, उसके दर्शन आत्मा अवश्य होती है। सभी जीवों में सामान्यावबोध रूप दर्शन रहता ही है। किन्तु जिस जीव के दर्शनात्मा होती है, उसके योगात्मा की भजना है। दर्शन वाले जीव योग सहित भी होते हैं और योग रहित भी होते हैं।

जिस जीव के योगात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा की भजना है। योगात्मा होते हुए भी अविरत जीवों में चारित्रात्मा नहीं होती। इसी तरह जिस जीव के चारित्रात्मा होती है, उसके भी योगात्मा की भजना है, क्योंकि चौदहवें गुणस्थानवर्ती अयोगी जीवों के चारित्रात्मा तो है, परन्तु योगात्मा नहीं है। दूसरी वाचना में यह बताया है कि जिसके चारित्रात्मा होती है, उसके नियमपूर्वक योगात्मा होती है। यहाँ प्रत्युपेक्षणादि व्यापाररूप चारित्र की विवक्षा है और यह चारित्र योगपूर्वक ही होता है।

जिसके योगात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा अवश्य होती है। योग होने पर वीर्य अवश्य होता ही है। जिसके वीर्यात्मा होती है, उसके योगात्मा की भजना है, क्योंकि अयोगी केवली में वीर्यात्मा तो है, किन्तु योगात्मा नहीं है। यह बात करण और लब्धि दोनों वीर्यात्माओं को लेकर कही गई है। जहां करण-वीर्यात्मा है, वहाँ योगात्मा अवश्य रहेगी, परन्तु जहाँ लब्धि-वीर्यात्मा है, वहाँ योगात्मा की भजना है।

उपयोगात्मा के साथ ऊपर की चार आत्माओं का सम्बन्ध इस प्रकार है—

जिस जीव के उपयोगात्मा है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है। मिथ्यादृष्टि जीवों में उपयोगात्मा होते हुए भी ज्ञानात्मा नहीं होती। जिस जीव के ज्ञानात्मा है, उसके

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

उपयोगात्मा अवश्य है।

जिस जीव के उपयोगात्मा है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है और जिस जीव के दर्शनात्मा है, उसके उपयोगात्मा अवश्य है।

जिस जीव के उपयोगात्मा है, उसके चारित्रात्मा की भजना है। असंयति जीवों के उपयोगात्मा तो होती है, परन्तु चारित्रात्मा नहीं होती। जिस जीव के चारित्रात्मा होती है, उसके उपयोगात्मा अवश्य होती है।

जिस जीव के उपयोगात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा की भजना है। सिद्धों में उपयोगात्मा के होते हुए भी वीर्यात्मा नहीं पाई जाती।

ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, चारित्रात्मा और वीर्यात्मा में उपयोगात्मा अवश्य रहती है। जीव का लक्षण ही उपयोग है। उपयोग लक्षण वाला जीव ही ज्ञान, दर्शन, चारित्र और वीर्य का धारक होता है। उपयोग-शून्य घटादि में ज्ञानादि नहीं पाये जाते।

ज्ञानात्मा के साथ ऊपर की तीन आत्माओं का सम्बन्ध इस प्रकार है;—

जिस जीव के ज्ञानात्मा है, उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है। ज्ञान (सम्यग्ज्ञान) सम्यग्दृष्टि जीवों के होता है और वह दर्शनपूर्वक ही होता है। जिस जीव के दर्शनात्मा है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है, क्योंकि मिथ्यादृष्टि जीवों के दर्शनात्मा होते हुए भी ज्ञानात्मा नहीं होती।

जिस जीव के ज्ञानात्मा है, उसके चारित्रात्मा की भजना है। अविरति सम्यग्दृष्टि जीव के ज्ञानात्मा होते हुए भी चारित्रात्मा नहीं होती। जिस जीव के चारित्रात्मा है, उसके ज्ञानात्मा अवश्य होती है। ज्ञान के बिना चारित्र का अभाव है।

जिस जीव के ज्ञानात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा की भजना है। सिद्ध जीवों में ज्ञानात्मा के होते हुए भी वीर्यात्मा नहीं होती। जिस जीव के वीर्यात्मा है, उसके ज्ञानात्मा की भजना है। मिथ्यादृष्टि जीवों के वीर्यात्मा होते हुए भी ज्ञानात्मा नहीं होती।

दर्शनात्मा के साथ चारित्रात्मा और वीर्यात्मा का सम्बन्ध इस प्रकार है;—

जिस जीव के दर्शनात्मा होती है उसके चारित्रात्मा और वीर्यात्मा की भजना है, क्योंकि दर्शनात्मा के होते हुए भी असंयति जीवों के चारित्रात्मा नहीं होती और सिद्धों के वीर्यात्मा नहीं होती। जिस जीव के चारित्रात्मा और वीर्यात्मा होती है उसके दर्शनात्मा अवश्य होती है। सामान्यावबोध रूप दर्शन तो सभी जीवों में होता है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

चारित्रात्मा और वीर्यात्मा का सम्बन्ध इस प्रकार है; —

जिस जीव के चारित्रात्मा होती है, उसके वीर्यात्मा अवश्य होती है। वीर्य के बिना चारित्र का अभाव है जिस जीव के वीर्यात्मा होती है, उसके चारित्रात्मा की भजना है, क्योंकि असंयत जीवों में वीर्यात्मा के होते हुए भी चारित्रात्मा नहीं होती।

अल्प-बहुत्व-इन आठ आत्माओं का अल्प-बहुत्व इस प्रकार है। सबसे कम चारित्रात्मा है, क्योंकि चारित्रवान् जीव संख्यात ही है। चारित्रात्मा से ज्ञानात्मा अनन्त गुण है, क्योंकि सिद्ध और सम्यग्दृष्टि जीव चारित्री जीवों से अनन्त गुण हैं। ज्ञानात्मा से कषायात्मा अनन्तगुण है। क्योंकि सिद्ध जीवों की अपेक्षा कषायों के उदय वाले जीव अनन्तगुण है। कषायात्मा से योगात्मा विशेषाधिक है, क्योंकि योगात्मा में कषायात्मा तो सम्मिलित है ही और कषाय रहित योग वाले जीवों का भी इसमें समावेश हो जाता है। योगात्मा से वीर्यात्मा विशेषाधिक हैं, क्योंकि वीर्यात्मा में अयोगी गुणस्थान वाली आत्माओं का समावेश है। उपयोगात्मा, द्रव्यात्मा और दर्शनात्मा-ये तीनों परस्पर तुल्य हैं। ये सभी सामान्य जीव रूप हैं, परन्तु वीर्यात्मा से विशेषाधिक हैं, क्योंकि इन तीन आत्माओं में वीर्यात्मा वाले संसारी जीवों के अतिरिक्त सिद्ध जीवों का भी समावेश होता है।

आत्मा का ज्ञान अज्ञान और दर्शन

७ प्रश्न-आया भंते ! णाणे अण्णाणे ?

७ उत्तर-गोयमा ! आया सिय णाणे सिय अण्णाणे, णाणे पुण णियमं आया।

८ प्रश्न-आया भंते ! णेरइयाणं णाणे, अण्णे णेरइयाणं णाणे ?

८ उत्तर-गोयमा ! आया णेरइयाणं सिय णाणे, सिय अण्णाणे। णाणे पुण से णियमं आया, एवं जाव थणियकुमाराणं।

९ प्रश्न-आया भंते ! पुढविकाइयाणं अण्णाणे, अण्णे पुढवि-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

काइयाणं अण्णाणे ?

९ उत्तर-गोयमा ! आया पुढविकाइयाणं णियमं अण्णाणे, अण्णाणे वि णियमं आया, एवं जाव वणस्सइकाइयाणं, बेइंदिय-तेइंदिय जाव वेमाणियाणं जहा णेरइयाणं ।

१० प्रश्न-आया भंते ! दंसणे, अण्णे दंसणे ?

१० उत्तर-गोयमा ! आया णियमं दंसणे, दंसणे वि णियमं आया ।

११ प्रश्न-आया भंते ! णेरइयाणं दंसणे, अण्णे णेरइयाणं दंसणे ?

११ उत्तर-गोयमा ! आया णेरइयाणं णियमा दंसणे, दंसणे वि से णियमं आया, एवं जाव वेमाणियाणं णिरंतरं दंडओ ।

भावार्थ-७ प्रश्न-हे भगवन् ! आत्मा ज्ञान-स्वरूप है या अज्ञानरूप है ?

७ उत्तर-हे गौतम ! आत्मा कदाचित् ज्ञान-स्वरूप है और कदाचित् अज्ञान स्वरूप है, परन्तु ज्ञान तो अवश्य आत्म-स्वरूप है ।

८ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिकों की आत्मा ज्ञानरूप है या नैरयिक जीवों का ज्ञान उससे भिन्न है ?

८ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक जीवों की आत्मा कदाचित् ज्ञानरूप है और कदाचित् अज्ञान रूप है, परन्तु उनका ज्ञान अवश्य ही आत्मरूप है । इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों तक कहना चाहिये ।

९ प्रश्न-हे भगवन् ! पृथ्वीकायिक जीवों की आत्मा अज्ञान है या आत्मा से अन्य अज्ञान है ?

९ उत्तर-हे गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों की आत्मा अवश्य अज्ञानरूप

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है और उनका अज्ञान भी अवश्य आत्मरूप है । इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक तक कहना चाहिये । बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय यावत् वैमानिक तक जीवों का कथन नैरयिकों के समान जानना चाहिये ।

१० प्रश्न-हे भगवन् ! आत्मा दर्शनरूप है या दर्शन उससे भिन्न है ?

१० उत्तर-हे गौतम ! आत्मा अवश्य दर्शनरूप है और दर्शन भी अवश्य आत्मरूप है ।

११ प्रश्न-हे भगवन् ! नैरयिक जीवों की आत्मा दर्शनरूप है या नैरयिक जीवों का दर्शन उससे भिन्न है ?

११ उत्तर-हे गौतम ! नैरयिक जीवों की आत्मा अवश्य दर्शनरूप है और उनका दर्शन भी अवश्य आत्मरूप है । इस प्रकार यावत् वैमानिकों तक चौवीस ही दण्डक कहना चाहिये ।

पृथ्वी आत्मरूप है ?

१२ प्रश्न-आया भंते ! रयणप्पभापुढवी अण्णा रयणप्पभा पुढवी ?

१२ उत्तर-गोयमा ! रयणप्पभा १ सिय आया २ सिय णो आया ३ सिय अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'रयणप्पभा पुढवी सिय आया, सिय णो आया, सिय अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य'?

उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया, २ परस्स आइट्ठे णो आया, ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं रयणप्पभा पुढवी आयाइ य णो आयाइ य; से तेणट्ठेणं तं चेव जाव णो आयाइ य ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

१३ प्रश्न-आया भंते ! सक्करप्पभा पुढवी ?

१३ उत्तर-जहा रयणप्पभा पुढवी तहा सक्करप्पभा वि, एवं जाव अहेसत्तमा ।

१४ प्रश्न-आया भंते ! सोहम्मे कप्पे पुच्छा ।

१४ उत्तर-गोयमा ! १ सोहम्मे कप्पे सिय आया, २ सिय णो आया जाव णो आयाइ य ।

प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! जाव णो आयाइ य ?

उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया, २ परस्स आइट्ठे णो आया, ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य; से तेणट्ठेणं तं चेव जाव णो आयाइ य । एवं जाव अच्चुए कप्पे ।

१५ प्रश्न-आया भंते ! गेविज्जविमाणे, अण्णे गेविज्जविमाणे ?

१५ उत्तर-एवं जहा रयणप्पभा तहेव, एवं अणुत्तरविमाणा वि, एवं ईसिपब्भारा वि ।

कठिन शब्दार्थ---आइट्ठे---आदिष्ट-उनके द्वारा कहे जाने पर ।

१२ प्रश्न-हे भगवन् ! रत्नप्रभा पृथ्वी आत्मरूप है या अन्य (असद् रूप) ?

१२ उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी कथंचित् आत्मरूप (सद्रूप) है और कथंचित् नोआत्मरूप (असद्रूप) है। सदसद्रूप (उभयरूप) होने से कथंचित् अवक्तव्य है ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि-रत्नप्रभा पृथ्वी कथंचित् सद्रूप, कथंचित् असद्रूप और कथंचित् उभयरूप होने से अवक्तव्य कहते हैं ?

उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी अपने स्वरूप से सद्रूप है, पर स्वरूप से असद्रूप है और उभयरूप की विवक्षा से सद्-असद्रूप होने से अवक्तव्य है । इसलिये पूर्वोक्त रूप से कहा गया है ।

१३ प्रश्न-हे भगवन् ! शर्कराप्रभा पृथ्वी आत्मरूप (सद्रूप) है, इत्यादि प्रश्न ।

१३ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथ्वी का कथन किया है, उसी प्रकार शर्कराप्रभा पृथ्वी के विषय में यावत् अधःसप्तम पृथ्वी तक कहना चाहिये ।

१४ प्रश्न-हे भगवन् ! सौधर्म देवलोक सद्रूप है, इत्यादि प्रश्न ।

१४ उत्तर-हे गौतम ! सौधर्म देवलोक कथंचित् सद्रूप है, कथंचित् असद्रूप है और कथंचित् सदसद्रूप होने से अवक्तव्य है ।

प्रश्न-हे भगवन् ! इसका क्या कारण है ?

उत्तर-हे गौतम ! स्व स्वरूप से सद्रूप है, पर स्वरूप से असद्रूप है और उभय की अपेक्षा अवक्तव्य है । इसलिये उपर्युक्त रूप से कहा है । इसी प्रकार यावत् अच्युत कल्प तक जानना चाहिये ।

१५ प्रश्न-हे भगवन् ! ग्रैवेयक विमान सद्रूप है इत्यादि प्रश्न ।

१५ उत्तर-हे गौतम ! रत्नप्रभा पृथ्वी के समान कहना चाहिये । इसी प्रकार अनुत्तर विमान तथा ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी तक कहना चाहिये ।

विवेचन-यहां ज्ञान से सम्यग्ज्ञान का और अज्ञान से मिथ्या ज्ञान का ग्रहण किया गया है । 'आत्मा का अर्थ है सद्रूप और अनात्मा का अर्थ है असद्रूप ।' किसी भी वस्तु को एक साथ सद्रूप और असद्रूप नहीं कहा जा सकता । उस दशा में वस्तु अवक्तव्य कहलाती है । रत्नप्रभा पृथ्वी अपने वर्णादि पर्यायों द्वारा सद्रूप है, पर-वस्तु की पर्यायों से असद्रूप है, स्व-पर पर्यायों से आत्मस्वरूप और अनात्मरूप अर्थात् सद् और असद्रूप- इन दोनों द्वारा एक बार कहना अशक्य है। इसलिये यहां सद्रूप, असद्रूप और अवक्तव्य- ये तीन भंग होते हैं ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

परमाणु आदि की सद्रूपता

१६ प्रश्न-आया भंते ! परमाणुपोग्गले, अण्णे परमाणुपोग्गले ?

१६ उत्तर-एवं जहा सोहम्मे कप्पे तहा परमाणुपोग्गले वि भाणियव्वे ।

१७ प्रश्न-आया भंते ! दुपएसिए खंधे, अण्णे दुपएसिए खंधे ?

१७ उत्तर-गोयमा ! १ दुपएसिए खंधे सिय आया २ सिय णो आया ३ सिय अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य, ४ सिय आया य णो आया य, ५ सिय आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ६ सिय णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ।

१८ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं तं चेव जाव 'णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य' ?

१८ उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया २ परस्स आइट्ठे णोआया ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं दुपएसिए खंधे आयाइ य णो आयाइ य ४ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य णो आया य ५ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य ६ देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे दुपएसिए खंधे णो आया य अवत्तव्वं

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आयाइ य णो आयाइ य, से तेणट्ठेणं तं चेव जाव 'णोआयाइ य'।

भावार्थ-१६ प्रश्न-हे भगवन् ! परमाणु-पुद्गल सद्रूप है या असद्-रूप है ?

१६ उत्तर-हे गौतम ! जिस प्रकार सौधर्म देवलोक के विषय में कहा है उसी प्रकार परमाणु-पुद्गल के विषय में भी कहना चाहिये ।

१७ प्रश्न-हे भगवान् ! द्विप्रदेशी स्कन्ध सद्रूप है या असद्रूप ?

१७ उत्तर-हे गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् सद्रूप है । कथंचित् असद्रूप है और सदसद्रूप होने से कथंचित् अवक्तव्य है । ४ कथंचित् सद्रूप है और कथंचित् असद्रूप है । ५ कथंचित् सद्रूप है और सदसद्उभयरूप होने से अवक्तव्य है। ६ कथंचित् असद्रूप है और सदसद्उभयरूप होने से अवक्तव्य है।

१८ प्रश्न-हे भगवन् ! क्या कारण है कि यावत् अवक्तव्यरूप है ?

१८ उत्तर-हे गौतम ! द्विप्रदेशी स्कन्ध अपने स्वरूप की अपेक्षा सद्रूप है, परस्वरूप की अपेक्षा असद्रूप है और उभयरूप से अवक्तव्य है । एक देश की अपेक्षा एवं सद्भाव पर्याय की विवक्षा तथा एक देश की अपेक्षा से एवं असद्भाव पर्याय की विवक्षा से द्विप्रदेशी स्कन्ध सद्रूप और असद्रूप है । ५ एक देश की अपेक्षा, सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश की अपेक्षा से सद्-भाव और असद्भाव, इन दोनों पर्यायों की अपेक्षा से द्विप्रदेशी स्कन्ध सद्रूप और सदसद्रूप उभयरूप होने से अवक्तव्य है । ६ एक देश की अपेक्षा, असद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के सद्भाव असद्भावरूप उभय पर्याय की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कन्ध असद्रूप और अवक्तव्यरूप है । इस कारण पूर्वोक्त प्रकार से कहा है ।

विवेचन--द्वि प्रदेशी स्कन्ध के विषय में छह भंग बनते हैं, इनमें से पहले के तीन भंग सम्पूर्ण स्कन्ध की अपेक्षा से बनते हैं जो कि पहले कहे गये हैं। ये असंयोगी हैं । बाकी

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

के तीन भंग देश की अपेक्षा हैं, जो कि द्विसंयोगी है। द्विप्रदेशी स्कन्ध होने से उसके एक देश की स्वपर्यायों द्वारा सद्रूप की विवक्षा की जाय और दूसरे देश की पर पर्यायों द्वारा असद्रूप से विवक्षा की जाय, तो द्विप्रदेशी स्कन्ध अनुक्रम से कथंचित् सद्रूप और कथंचित् असद्रूप होता है। उसके एक देश की स्वपर्यायों द्वारा सद्रूप से विवक्षा की जाय और दूसरे देश से सदसद् उभयरूप से विवक्षा की जाय, तो कथंचित् सद्रूप और कथंचित् अवक्तव्य कहलाता है। उस स्कन्ध के एक देश की पर्यायों द्वारा असद्रूप से विवक्षा की जाय और दूसरे देश की उभयरूप से विवक्षा की जाय, तो असद्रूप और अवक्तव्य कहलाता है। कथंचित् सद्रूप कथंचित् असद्रूप और कथंचित् अवक्तव्य भंग, इस प्रकार सातवां भंग द्विप्रदेशी स्कन्ध में नहीं बनता है। क्योंकि उसके केवल दो अंश ही हैं। त्रिप्रदेशी आदि स्कन्ध में तो ये सातों भंग बनते हैं।

१९ प्रश्न-आया भंते ! तिपएसिए खंधे अण्णे तिपएसिए खंधे ?

१९ उत्तर-गोयमा ! तिपएसिए खंधे १ सिय आया २ सिय णो आया ३ सिय अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ४ सिय आया य णो आया य ५ सिय आया य णो आयाओ य ६ सिय आयाओ य णो आया य ७ सिय आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ८ सिय आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णो आयाओ य ९ सिय आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य १० सिय णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ११ सिय णो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णो आयाओ य १२ सिय णो आयाओ य अवत्तव्वं आया य णो आया य १३ सिय आया य णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

णोआयाइ य ।

२० प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-तिपएसिए खंधे सिय आया एवं चेव उच्चारेयव्वं जाव सिय आया य णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य ?

२० उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया, २ परस्स आइट्ठे णोआया, ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य, ४ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य णोआया य, ५ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य णोआयाओ य, ६ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य णोआया य, ७ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य. ८ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णोआयाओ य, ९ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य, एए तिण्णि भंगा, १० देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे णोआया य, अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य, ११ देसे आइट्ठे

असब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा तिपएसिए खंधे णोआया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णोआयाओ य, १२ देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे तिपएसिए खंधे णोआयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य, १३ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभय-पज्जवे तिपएसिए खंधे आया य णोआया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य। से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-'तिपएसिए खंधे सिय आया तं चेव जाव णोआयाइ य।'

भावार्थ-१९ प्रश्न-हे भगवन् ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा (सद्-रूप) है या उससे अन्य है ?

१९ उत्तर-हे गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध १ कथंचित् आत्मा (विद्यमान) है, २ कथंचित् नो आत्मा है, ३ आत्मा तथा नो आत्मा इस उभयरूप से कथंचित् अवक्तव्य है, ४ कथंचित् आत्मा तथा कथंचित् नो आत्मा है, ५ कथं-चित् आत्मा और नो आत्माएँ हैं, ६ कथंचित् आत्माएँ और नो आत्मा है, ७ कथंचित् आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है, ८ कथंचित् आत्मा और आत्माएँ तथा नो आत्माएँ उभय रूप से अवक्तव्य है, ९ कथंचित् आत्माएँ और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है, १० कथंचित् नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है, ११ कथंचित् नो आत्मा और आत्माएँ तथा नो आत्माएँ उभय रूप से अवक्तव्य है। १२ कथंचित् नो आत्माएँ और आत्माएँ तथा नो आत्माएँ उभय रूप से अवक्तव्य है, १३ कथंचित् आत्मा, नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

२० प्रश्न—हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया कि 'त्रिप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा है,' इत्यादि ?

२० उत्तर—हे गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध १ अपने आदेश (अपेक्षा) से आत्मा है, २ पर के आदेश से नो आत्मा है, ३ उभय के आदेश से आत्मा और नो आत्मा इस उभय रूप से अवक्तव्य है, ४ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा, त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और नो आत्मारूप है, ५ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से वह त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा तथा नोआत्माएँ है, ६ बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्माएँ और नो आत्मा है, ७ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय (सद्भाव और असद्भाव) पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है ८ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से उभय पर्याय की विवक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्मा और आत्माएँ तथा नो आत्माएँ इस उभय रूप से अवक्तव्य है ९ बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध आत्माएँ और आत्मा तथा नो आत्मा इस उभय रूप से अवक्तव्य है। ये तीन भंग जानने चाहिये। १० एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से उभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो आत्मा और आत्मा तथा नो आत्मा से अवक्तव्य है, ११ एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो आत्मा और आत्माएँ तथा नो आत्माएँ इस उभयरूप से अवक्तव्य है। १२ बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध नो आत्माएँ और आत्मा तथा नो आत्मा उभय रूप

Jain Education International   For Personal & Private Use Only   www.jainelibrary.org

से अवक्तव्य है, १३ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से त्रिप्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा, नोआत्मा और आत्मा तथा नोआत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है। इसलिये हे गौतम ! त्रिप्रदेशी स्कन्ध के विषय में उपर्युक्त कथन किया गया है।

विवेचन-त्रिप्रदेशी स्कन्ध के विषय में तेरह भंग होते हैं। उनमें से पहले कहे हुए भंगो में से तीन भंग सम्पूर्ण स्कन्ध की अपेक्षा से असंयोगी है, पीछे नौ भंग द्विसंयोगी हैं। तेरहवां भंग त्रिसंयोगी है।

२१ प्रश्न-आया भंते ! चउप्पएसिए खंधे अण्णे० पुच्छा ?

२१ उत्तर-गोयमा ! चउप्पएसिए खंधे १ सिय आया २ सिय णोआया ३ सिय अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य, ४-७ सिय आया य णोआया य ४, ८-११ सिय आया य अवत्तव्वं ४, १२-१५ सिय णोआया य अवत्तव्वं ४, १६ सिय आया य णोआया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य १७ सिय आया य णोआया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णोआयाओ य १८ सिय आया य णोआयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य १९ सिय आयाओ य णोआया य अवत्तव्वं आयाइ य णोआयाइ य।

२२ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ-'चउप्पएसिए खंधे सिय आया य णोआया य अवत्तव्वं-तं चेव अट्ठे पडिउच्चारेयव्वं ?

२२ उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया २ परस्स

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

आइट्ठे णो आया ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ४ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे चउभंगो, सब्भावपज्जवेणं तदुभएण य चउभंगो, असब्भावेणं तदुभएण य चउभंगो, देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य १६ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा तदुभयपज्जवा चउप्पएसिए खंधे आया य णो आया य अवत्तव्वाइं आयाओ य णोआयाओ य १७ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसा आइट्ठा असब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आया य णो आयाओ य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य १८ देसा आइट्ठा सब्भावपज्जवा देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे तदुभयपज्जवे चउप्पएसिए खंधे आयाओ य णो आया य अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य १९ से तेणट्ठेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ-चउप्पएसिए खंधे सिय आया सिय णो आया सिय अवत्तव्वं णिक्खेवे ते चेव भंगा उच्चारेयव्वा जाव-णो आयाइ य ।

भावार्थ-२१ प्रश्न-हे भगवन् ! चतुःप्रदेशी स्कन्ध आत्मा है या अन्य है, इत्यादि प्रश्न ।

२१ उत्तर-हे गौतम ! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध १ कथंचित् आत्मा है २ कथंचित् नोआत्मा है ३ आत्मा नोआत्मा उभय रूप से कथंचित् अवक्तव्य

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

है। ४-७ कथंचित् आत्मा और नोआत्मा है (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)। ८-११ कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य है (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)। १२-१५ कथंचित् नोआत्मा और अवक्तव्य है (एक वचन और बहुवचन आश्री चार भंग)। १६ कथंचित् आत्मा और नोआत्मा तथा आत्मा, नोआत्मा रूप से अवक्तव्य है। १७ कथंचित् आत्मा, नोआत्मा और आत्माएं तथा नोआत्माएं रूप से अवक्तव्य हैं। १८ कथंचित् आत्मा, नोआत्माएं तथा आत्मा और नोआत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है। १९ कथंचित् आत्माएं, नोआत्मा और आत्मा तथा नोआत्मा रूप से अवक्तव्य है।

२२ प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा कहने का क्या कारण है ?

२२ उत्तर-हे गौतम ! १ अपने आदेश से आत्मा है, २ पर के आदेश से नोआत्मा है, ३ तदुभय के आदेश से आत्मा और नोआत्मा-इस उभय रूप से अवक्तव्य है। ४-७ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन और बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं। ८-११ सद्भाव पर्याय और तदुभय पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं। १२-१५ असद्भाव पर्याय और तदुभय पर्याय की अपेक्षा से (एक वचन बहुवचन आश्री) चार भंग होते हैं। १६ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्मा, नोआत्मा और आत्मा नोआत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है। १७ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और बहुत देशों के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्मा, नोआत्मा और आत्माएँ, नोआत्माएँ उभय रूप से अवक्तव्य है। १८ एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, बहुत देशों के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभयपर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्मा,

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

नो आत्माएँ और आत्मा नोआत्मा उभय रूप से अवक्तव्य है । १९ बहुत देशों के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा से, एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से और एक देश के आदेश से तदुभय पर्याय की अपेक्षा से चतुष्प्रदेशी स्कन्ध आत्माएँ, नोआत्मा और आत्मा नोआत्मा उभयरूप से अवक्तव्य है । इसलिये हे गौतम ! इस कारण ऐसा कहा जाता है कि चतुष्प्रदेशी स्कन्ध कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नोआत्मा है और कथंचित् अवक्तव्य है । इस निक्षेप में पूर्वोक्त सभी भंग यावत् 'नोआत्मा है' तक कहना चाहिये ।

विवेचन-चतुष्प्रदेशी स्कन्ध में भी त्रिप्रदेशी स्कन्ध के समान जानना चाहिये । किन्तु यहाँ उन्नीस भंग बनते हैं । इनमें से तीन भंग सम्पूर्ण स्कन्ध की अपेक्षा से असंयोगी होते हैं । बाद में बारह भंग द्विसंयोगी होते हैं । शेष चार भंग त्रिसंयोगी होते हैं ।

२३ प्रश्न-आया भंते ! पंचपएसिए खंधे, अण्णे पंचपएसिए खंधे ?

२३ उत्तर-गोयमा ! पंचपएसिए खंधे १ सिय आया २ सिय णो आया ३ सिय अवत्तव्वं आयाइ य णो आयाइ य ४-७ सिय आया य णो आया य, ८-११ सिय आया य अवत्तव्वं ४,१२-१५ णो आया य अवत्तव्वेण य ४, तियगसंजोगे एक्को ण पडइ ।

२४ प्रश्न-से केणट्ठेणं भंते ! तं चेव पडिउच्चारेयव्वं ?

२४ उत्तर-गोयमा ! १ अप्पणो आइट्ठे आया २ परस्स आइट्ठे णो आया ३ तदुभयस्स आइट्ठे अवत्तव्वं ४ देसे आइट्ठे सब्भावपज्जवे देसे आइट्ठे असब्भावपज्जवे-एवं दुयगसंजोगे सव्वे पडंति तियगसंजोगे एक्को ण पडइ । छप्पएसियस्स सव्वे पडंति । जहा छप्पए-

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

सिए एवं जाव अणंतपएसिए ।

❀ सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ ❀

॥ बारसमसए दसमो उद्देसो समत्तो ॥

॥ समत्तं बारसमं सयं ॥

भावार्थ-२३ प्रश्न-हे भगवन् ! पञ्चप्रदेशी स्कन्ध आत्मा है या अन्य है ?

२३ उत्तर-हे गौतम ! पञ्चप्रदेशी स्कन्ध १ कथंचित् आत्मा है, २ कथंचित् नोआत्मा है, ३ आत्मा नोआत्मा रूप से कथंचित् अवक्तव्य है, ४-७ कथंचित् आत्मा, नोआत्मा है (एकवचन बहुवचन आश्री ४ भंग) ८-११ कथंचित् आत्मा और अवक्तव्य के चार भंग, १२-१५ कथंचित् नोआत्मा और अवक्तव्य के चार भंग, त्रिक संयोगी आठ भंग में से एक आठवाँ भंग घटित नहीं होता, अर्थात् सात भंग होते है । कुल मिलाकर बावीस भंग होते हैं ।

२४ प्रश्न-हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा गया है कि पञ्चप्रदेशी स्कन्ध आत्मा है, इत्यादि प्रश्न ।

२४ उत्तर-हे गौतम ! १ पञ्चप्रदेशी स्कन्ध अपने आदेश से आत्मा है, २ पर के आदेश से नोआत्मा है, ३ तदुभय के आदेश से अवक्तव्य है, एक देश के आदेश से सद्भाव पर्याय की अपेक्षा और एक देश के आदेश से असद्भाव पर्याय की अपेक्षा से कथंचित् आत्मा है, कथंचित् नोआत्मा है । इस प्रकार द्विक संयोगी सभी भंग पाये जाते हैं । त्रिसंयोगी आठ भंग होते हैं, उनमें से आठवां भंग घटित नहीं होता ।

छह प्रदेशी स्कन्ध के विषय में ये सभी भंग घटित होते हैं । छह प्रदेशी स्कन्ध के समान यावत् अनन्त प्रदेशी तक कहना चाहिये ।

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है । हे भगवन् ! यह इसी प्रकार है—ऐसा कहकर गौतम स्वामी यावत् विचरते हैं ।

विवेचन—पञ्चप्रदेशी स्कन्ध के २२ भंग होते हैं । इनमें से पहले के तीन भंग पूर्ववत् सकलादेश रूप हैं । इसके बाद द्विसंयोगी बारह भंग हैं। त्रिकसंयोगी आठ भंग होते हैं। उसमें से यहाँ प्रथम के सात भंग ग्रहण करने चाहिये । आठवाँ भंग यहाँ असम्भव होने से घटित नहीं हो सकता । छह प्रदेशी स्कन्ध में और इससे आगे यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध तक तेईस तेईस भंग होते है । वे इस प्रकार हैं—

असंयोगी तीन भंग

१ आत्मा, २ नो आत्मा ३ अवक्तव्य ।

दो संयोगी १२ भंग

१ आत्मा एक, नोआत्मा एक
२ आत्मा एक, नोआत्मा बहुत
३ आत्मा बहुत, नोआत्मा एक
४ आत्मा बहुत, नोआत्मा बहुत
५ आत्मा एक, अवक्तव्य एक
६ आत्मा एक, अवक्तव्य बहुत
७ आत्मा बहुत, अवक्तव्य एक
८ आत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत
९ नोआत्मा एक, अवक्तव्य एक
१० नोआत्मा एक, अवक्तव्य बहुत
११ नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य एक
१२ नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत

तीन संयोगी ८ भंग

१ आत्मा एक, नोआत्मा एक, अवक्तव्य एक
२ आत्मा एक, नोआत्मा एक, अवक्तव्य बहुत
३ आत्मा एक, नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य एक
४ आत्मा एक, नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत
५ आत्मा बहुत, नोआत्मा एक, अवक्तव्य एक
६ आत्मा बहुत, नोआत्मा एक, अवक्तव्य बहुत
७ आत्मा बहुत, नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य एक
८ आत्मा बहुत, नोआत्मा बहुत, अवक्तव्य बहुत

परमाणु पुद्गल में तीन असंयोगी भंग पाये जाते हैं । दो प्रदेशी स्कन्ध में ६ भंग पाये जाते हैं, असंयोगी ३ और दो संयोगी ३, (पहला, पांचवां, नौवां) । त्रि प्रदेशी स्कन्ध

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

में १३ भंग पाये जाते हैं यथा—३ असंयोगी, ९ दो संयोगी (चौथा, आठवां और बारहवां, ये तीन भंग छोड़कर, शेष ९)। तीन संयोगी १ (पहला भंग)।

चतुष्प्रदेशी स्कन्ध में १९ भंग पाये जाते हैं, यथा—३ असंयोगी, १२ दो संयोगी और ४ तीन संयोगी, (पहला, दूसरा, तीसरा, पांचवां)।

पञ्चप्रदेशी स्कन्ध में २२ भंग पाये जाते हैं, यथा—३ असंयोगी १२ दोसंयोगी और ७ तीन संयोगी (आठवां भंग छोड़कर शेष सात)।

छह प्रदेशी स्कन्ध में २३ भंग पाये जाते हैं। इसी प्रकार सात प्रदेशी स्कन्ध में आठ प्रदेशी स्कन्ध में यावत् अनन्त प्रदेशी स्कन्ध में, प्रत्येक में तेईस-तेईस भंग पाये जाते हैं।

॥ बारहवें शतक का दसवाँ उद्देशक सम्पूर्ण ॥

बारहवां शतक सम्पूर्ण

चतुर्थ भाग सम्पूर्ण

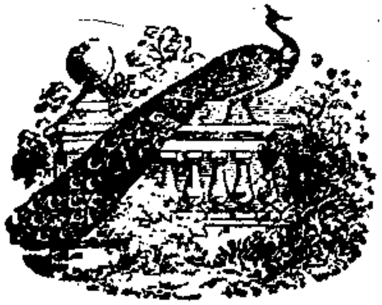

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org

श्री अखिल भारतीय सुधर्म जैन संस्कृति रक्षक संघ

ब्यावर (राज.)

Jain Education International For Personal & Private Use Only www.jainelibrary.org